

गुणाहों का देवता

धर्मवीर आरती



आरतीय साहित्य संग्रह

गुनाहों का देवता

धर्मवीर भारती

धर्मवीर भारती के इस उपन्यास का प्रकाशन और इसके प्रति पाठकों का अटूट सम्मोहन हिन्दी साहित्य-जगत् की एक बड़ी उपलब्धि बन गये हैं। दरअसल, यह उपन्यास हमारे समय में भारतीय भाषाओं की सबसे अधिक बिकने वाली लोकप्रिय साहित्यिक पुस्तकों में पहली पंक्ति में है। लाखों-लाख पाठकों के लिए प्रिय इस अनूठे उपन्यास की माँग आज भी वैसी ही बनी हुई है जैसी कि उसके प्रकाशन के प्रारम्भिक वर्षों में थी।—और इस सबका बड़ा कारण शायद एक समर्थ रचनाकार की कोई अव्यक्त पीड़ा और एकान्त आख्या है, जिसने इस उपन्यास को एक अद्वितीय कृति बना दिया है।

प्रथम खण्ड

1

अगर पुराने जमाने की नगर-देवता की और ग्राम-देवता की कल्पनाएँ आज भी मान्य होतीं तो मैं कहता कि इलाहाबाद का नगर-देवता जरूर कोई रोमेंटिक कलाकार हैं□ ऐसा लगता है कि इस शहर की बनावट, गठन, जिंदगी और रहन-सहन में कोई बँधे-बँधाये नियम नहीं, कहीं कोई कसाव नहीं, हर जगह एक स्वच्छन्द खुलाव, एक बिखरी हुई-सी अनियमितता□ बनारस की गलियों से भी पतली गलियाँ और लखनऊ की सड़कों से चौड़ी सड़कें□ यार्कशायर और ब्राइटन के उपनगरों का मुकाबला करने वाले सिविल लाइन्स और दलदलों की गन्दगी को मात करने वाले मुहल्ले□ मौसम में भी कहीं कोई सम नहीं, कोई सन्तुलन नहीं□ सुबहें मलयजी, दोपहरें अंगारी, तो शामें रेशमी! धरती ऐसी कि सहारा के रेगिस्तान की तरह बालू भी मिले, मालवा की तरह हरे-भरे खेत भी मिलें और ऊसर और परती की भी कमी नहीं□ सचमुच लगता है कि प्रयाग का नगर-देवता स्वर्ण-कुंजों से निर्वासित कोई मनमौजी कलाकार है जिसके सृजन में हर रंग के डॉरे हैं□

और चाहे जो हो, मगर इधर वहार, कार्तिक तथा उधर वसन्त के बाद और होली के बीच के मौसम से इलाहाबाद का वातावरण नैरस्टर्शियम और पैंजी के फूलों से भी ज्यादा खूबसूरत और आम के बौरों की खुशबू से भी ज्यादा मछकदार होता है□ सिविल लाइन्स हो या अल्फ्रेड पार्क, गंगातट हो या खुसरखाना, लगता है कि हवा एक नटखट दोशीजा की तरह कलियों के आँचल और लहरों के मिजाज से हेडखानी करती चलती है□ और अगर आप सर्दी से बहुत नहीं डरते तो आप जरा एक ओवरकोट डालकर सुबह-सुबह घूमने निकल जाएं तो इन खुली हुई जगहों की फिजाँ इठलाकर आपको अपने जादू में बौंध लेगी□ खासतौर से पौं फटने के पहले तो आपको एक बिलकुल नयी अनुभूति होगी□ वसन्त के नये-नये मौसमी फूलों के रंग से मुकाबला करने वाली हल्की सुनहली, बाल-सूर्य की अँगुलियाँ सुबह की राजकुमारी के गुलाबी वक्ष पर बिखरे हुए भौंगले गेसुओं को धीरे-धीरे हटाती जाती हैं और क्षितिज पर सुनहली तरणाई बिखर पड़ती है□ एक ऐसी ही खुशनुमा सुबह थी, और जिसकी कहानी मैं कहने जा रहा हूँ, वह सुबह से भी ज्यादा मासूम युवक, प्रभाती गाकर फूलों को जगाने वाले देवदूत की तरह अल्फ्रेड पार्क के लॉन पर फूलों की सरजमीं के किनारे-किनारे घूम रहा था□ कर्त्थई स्वीटपी के रंग का पश्मीने का लम्बा कोट, जिसका एक कालर उठा हुआ था और दूसरे कालर में सरों की एक पती बटन होल में लगी हुई थी, सफेद मक्खन जीन की पतली पैंट और पैरों में सफेद जरी की पेशावरी सैण्डलें, भरा हुआ गोरा घेहरा और ऊचे चमकते हुए माथे पर झूलती हुई एक रुखी भूरी लट□ चलते-चलते उसने एक रंग-बिरंगा गुच्छा इकट्ठा कर लिया था और रह-रह कर वह उसे सूँघ लेता था□

पूरब के आसमान की गुलाबी पाँखुरियाँ बिखरने लगी थीं और सुनहले पराग की एक बौछार सुबह के ताजे फूलों पर बिछ रही थी □ “अरे सुबह हो गयी?” उसने चौंककर कहा और पास की एक बेंच पर बैठ गया □ सामने से एक माली आ रहा था □ “वयों जी, लाइब्रेरी खुल गयी?” “अभी नहीं बाबूजी!” उसने जवाब दिया □ वह फिर सन्तोष से बैठ गया और फूलों की पाँखुरियाँ नोचकर नीचे फेंकने लगा □ जमीन पर बिछाने वाली सोने की चादर परतों पर परतों बिछाती जा रही थी और पेड़ों की छायाओं का रंग गहराने लगा था □ उसकी बेंच के नीचे फूलों की चुनी हुई पत्तियाँ बिखरी थीं और अब उसके पास सिर्फ एक फूल बाकी रह गया था □ हलके फालसई रंग के उस फूल पर गढ़े बैंजनी डौरे थे □

“छलो कपूर!” सहसा किसी ने पीछे से कन्धे पर हाथ रखकर कहा, “यहाँ क्या झक मार रहे हो सुबह-सुबह?”

उसने मुड़कर पीछे ढेखा, “आओ, ठाकुर साहब! आओ बैठो यार, लाइब्रेरी खुलने का इन्तजार कर रहा हूँ □”

“वयों, यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी चाट डाली, अब इसे तो शरीफ लोगों के लिए छोड़ दो!”

“हाँ, हाँ, शरीफ लोगों ही के लिए छोड़ रहा हूँ; डॉक्टर शुक्ला की लड़की है न, वह इसकी मेम्बर बनना चाहती थी तो मुझे आना पड़ा, उसी का इन्तजार भी कर रहा हूँ □”

“डॉक्टर शुक्ला तो पॉलिटिक्स डिपार्टमेंट में हैं?”

“नहीं, गवर्नमेंट साइकोलॉजिकल ब्यूरो में □”

“और तुम पॉलिटिक्स में रिसर्च कर रहे हो?”

“नहीं, इकनॉमिक्स में!”

“बहुत अच्छे! तो उनकी लड़की को सदस्य बनवाने आये हो?” कुछ अजब स्वर में ठाकुर ने कहा □

“छिः!” कपूर ने हँसते हुए, कुछ अपने को बचाते हुए कहा, “यार, तुम जानते हो कि मेरा उनसे कितना घरेलू सम्बन्ध है □ जब से मैं प्रयाग में हूँ, उन्हीं के सहारे हूँ और आजकल तो उन्हीं के यहाँ पढ़ता-लिखता भी हूँ... □”

ठाकुर साहब हँस पड़े, “अरे भाई, मैं डॉक्टर शुक्ला को जानता नहीं क्या? उनका-सा भला आदमी मिलना मुश्किल है □ तुम सफाई व्यर्थ में दे रहे हो □”

ठाकुर साहब यूनिवर्सिटी के उन विद्यार्थियों में से थे जो बरायनाम विद्यार्थी होते हैं और कब तक वे यूनिवर्सिटी को सुशोभित करते रहेंगे, इसका कोई निश्चय नहीं □ एक अच्छे-खासे लप्पे वाले व्यक्ति थे और घर के ताल्लुकेदार □ हँसमुख, फितियाँ कसने में मजा लेने वाले, मगर दिल के साफ, निगाह के सच्चे □ बोले-

“एक बात तो मैं स्वीकार करता हूँ कि तुम्हारी पढ़ाई का सारा श्रेय डॉ. शुक्ला को है! तुम्हारे घर वाले तो कुछ खर्चा भेजते नहीं?”

“नहीं, उनसे अलग ही होकर आया था □ समझ लो कि इन्होंने किसी-न-किसी बहाने मरठ की है □”

“अच्छा, आओ, तब तक लोटस-पॉड (कमल-सरोवर) तक ही घूम लें □ फिर लाइब्रेरी भी खुल जाएगी!”

दोनों उठकर एक कृत्रिम कमल-सरोवर की ओर चल दिये जो पास ही में बना हुआ था □ सीढ़ियाँ

चढ़कर ही उन्होंने देखा कि एक सज्जन किनारे बैठे कमलों की ओर एकटक देखते हुए ध्यान में तल्लीन हैं। छिपकली से दुबले-पतले, बालों की एक तट माथे पर झूमती हुई-

“कोई प्रेमी हैं, या कोई फिलासफर हैं, देखा ठाकुर?”

“नहीं यार, दोनों से निकृष्ट कोटि के जीव हैं-ये कवि हैं। मैं इन्हें जानता हूँ। ये खींद्र बिसरिया हैं। एम. ए. में पढ़ता है आओ, मिलाएं तुम्हें!”

ठाकुर साहब ने एक बड़ा-सा घास का तिनका तोड़कर पीछे से चुपके-से जाकर उसकी गरदन गुदगुदायी। बिसरिया चौंक उठा-पीछे मुड़कर देखा और बिंदु गया-”यह क्या बदतमीजी है, ठाकुर साहब! मैं कितने गम्भीर विचारों में डूबा था।” और सहसा बड़े विवित्र रूप में आँखें बन्द कर बिसरिया बोला, “आह! कैसा मनोरम प्रभात है! मेरी आत्मा में घोर अनुभूति हो रही थी...।” कपूर बिसरिया की मुद्रा पर ठाकुर साहब की ओर देखकर मुसकराया और इशारे में बोला, “है यार शगत की चीज़। छेड़ो जरा!”

ठाकुर साहब ने तिनका फेंक दिया और बोले, “माफ करना, भाई बिसरिया! बात यह है कि हम लोग कवि तो हैं नहीं, इसलिए समझा नहीं पाते। क्या सोच रहे थे तुम्?”

बिसरिया ने आँखें खोलीं और एक गहरी साँस लेकर बोला, “मैं सोच रहा था कि आखिर प्रेम क्या होता है, क्यों होता है? कविता क्यों लिखी जाती है? फिर कविता के संबंध उतने क्यों नहीं बिकते जितने उपन्यास या कहानी-संबंध?”

“बात तो गम्भीर है।” कपूर बोला, “जहाँ तक मैंने समझा और पढ़ा है-प्रेम एक तरह की बीमारी होती है, मानसिक बीमारी, जो मौसम बदलने के दिनों में होती है, मसलन व्वार-कार्तिक या फागुन-वैत। उसका सम्बन्ध शीढ़ की छड़की से होता है। और कविता एक तरह का सन्निपात होता है। मेरा मतलब आप समझ रहे हैं, मि. सिबरिया?”

“सिबरिया नहीं, बिसरिया?” ठाकुर साहब ने टोका।

बिसरिया ने कुछ उजलत, कुछ परेशानी और कुछ गुस्से से उनकी ओर देखा और बोला, “क्षमा कीजिएगा, आप या तो फ्रायडवादी हैं या प्रगतिवादी और आपके विचार सर्वदा विदेशी हैं। मैं इस तरह के विचारों से घृणा करता हूँ...।”

कपूर कुछ जवाब देने ही वाला था कि ठाकुर साहब बोले, “अरे भाई, बेकार उलझ गये तुम लोग, पहले परिचय तो कर लो आपस में। ये हैं श्री चन्द्रकुमार कपूर, विश्वविद्यालय में रिसर्च कर रहे हैं और आप हैं श्री खींद्र बिसरिया, इस वर्ष एम. ए. में बैठे रहे हैं। बहुत अच्छे कवि हैं।”

कपूर ने हाथ मिलाया और फिर गम्भीरता से बोला, “क्यों साहब, आपको दुनिया में और कोई काम नहीं रहा जो आप कविता करते हैं?”

बिसरिया ने ठाकुर साहब की ओर देखा और बोला, “ठाकुर साहब, यह मेरा अपमान है, मैं इस तरह के सवालों का आदी नहीं हूँ।” और उठ खड़ा हुआ।

“अरे बैठो-बैठो!” ठाकुर साहब ने हाथ खींचकर बिठा लिया, “देखो, कपूर का मतलब तुम समझे नहीं। उसका कहना यह है कि तुम्हें इतनी प्रतिभा है कि तोन तुम्हारी प्रतिभा का आदर करना नहीं जानते। इसलिए उन्होंने सहानुभूति में तुमसे कहा कि तुम और कोई काम क्यों नहीं करते। वरना कपूर साहब तुम्हारी कविता के बहुत शौकीन हैं। मुझसे बराबर तारीफ करते हैं।”

बिसरिया पिघल गया और बोला, “क्षमा कीजिएगा। मैंने गलत समझा, अब मेरा कविता-संबंध

छप रहा है, मैं आपको अवश्य भेंट करूँगा॥” और फिर बिसरिया ठाकुर साहब की ओर मुड़कर बोला, “अब लोग मेरी कविताओं की इतनी माँग करते हैं कि मैं प्रेशान हो गया हूँ॥ अभी कल ‘त्रिवेणी’ के सम्पादक मिले॥ कहने लगे अपना चित्र दे दो॥ मैंने कहा कि कोई चित्र नहीं है तो पीछे पढ़ गये॥ आखिरकार मैंने आइडेप्रिटटी कार्ड उठाकर दे दिया!”

“वाह!” कपूर बोला, “मान गये आपको हम! तो आप राष्ट्रीय कविताएँ लिखते हैं या प्रेम की?”

“जब जैसा अवसर हो!” ठाकुर साहब ने जड़ दिया, “वैसे तो यह वार्षण्ट का कवि-सम्मेलन, शराबबन्दी कॉन्फ्रेन्स का कवि-सम्मेलन, शारी-ब्याह का कवि-सम्मेलन, साहित्य-सम्मेलन का कवि-सम्मेलन सभी जगह बुलाये जाते हैं॥ बड़ा यश है इनका!”

बिसरिया ने प्रशंसा से मुब्द्ध छोकर देखा, मगर फिर एक गर्व का भाव मुँह पर लाकर गम्भीर हो गया॥

कपूर थोड़ी देर चुप रहा, फिर बोला, “तो कुछ हम लोगों को भी सुनाइए न!”

“अभी तो मूड नहीं है॥” बिसरिया बोला॥

ठाकुर साहब बिसरिया को पिछले पाँच सालों से जानते थे, वे अच्छी तरह जानते थे कि बिसरिया किस समय और कैसे कविता सुनाता है॥ अतः बोले, “ऐसे नहीं कपूर, आज शाम को आओ॥ ज़रा गंगाजी चलें, कुछ बोटिंग रहे, कुछ खाना-पीना रहे तब कविता भी सुनना!”

कपूर को बोटिंग का बेहद शौक था॥ फौरन याजी हो गया और शाम का विस्तृत कार्यक्रम बन गया॥

इतने में एक कार उधर से लाइब्रेरी की ओर गुजरी॥ कपूर ने देखा और बोला, “अच्छा, ठाकुर साहब, मुझे तो इजाजत दीजिए॥ अब चलूँ लाइब्रेरी में॥ वो लोग आ गये॥ आप कहाँ चल रहे हैं?”

“मैं ज़रा जिमखाने की ओर जा रहा हूँ॥ अच्छा भाई, तो शाम को पवकी रही॥”

“बिल्कुल पवकी!” कपूर बोला और चल दिया॥

लाइब्रेरी के पोर्टिंग को मैं कार लकी थी और उसके अन्दर ही डॉक्टर साहब की लड़की बैठी थी॥

“क्यों सुधा, अन्दर क्यों बैठी हो?”

“तुम्हें ही देख रही थी, चन्द्र॥” और वह उतर आयी॥ दुबली-पतली, नाटी-सी, साधारण-सी लड़की, बहुत सुन्दर नहीं, केवल सुन्दर, लैकिन बातचीत में बहुत दुलारी॥

“चलो, अन्दर चलो॥” चन्द्र ने कहा॥

वह आगे बढ़ी, फिर ठिठक गयी और गोली, “चन्द्र, एक आदमी को चार किताबें मिलती हैं?”

“हाँ! क्यों?”

“तो...तो...” उसने बड़े भोलेपन से मुसकराते हुए कहा, “तो तुम अपने नाम से मेम्बर बन जाओ और दो किताबें हमें दे दिया करना बस, ज्यादा का हम क्या करेंगे?”

“नहीं!” चन्द्र हँसा, “तुम्हारा तो दिमाग खराब है॥ खुद क्यों नहीं बनतीं मेम्बर?”

“नहीं, हमें शरम लगती है, तुम बन जाओ मेम्बर हमारी जगह पर॥”

“पगली कहीं की!” चन्द्र ने उसका कन्धा पकड़कर आगे ले चलते हुए कहा, “वाह ऐ शरम! अभी कल ब्याह होगा तो कहना, हमारी जगह तुम बैठ जाओ चन्द्र! कॉलेज में पहुँच गयी लड़की; अभी शरम नहीं छूटी इसकी! चल अन्दर!”

और वह हिचकती, ठिठकती, झोंपती और मुँड-मुड़कर चन्द्र की ओर रुठी हुई निंगाहों से देखती

हुई अन्दर चली गयी □

थोड़ी देर बाद सुधा चार किताबें लादे हुए निकली □ कपूर ने कहा, “लाओ, मैं ले लूँ!” तो बाँस की पतली टहनी की तरह लहराकर बोली, “सदस्य मैं हूँ □ तुम्हें क्यों दूँ किताबें?” और जाकर कार के अन्दर किताबें पटक दीं □ फिर बोली, “आओ, बैठो, चन्दर!”

“मैं अब घर जाऊँगा □”

“ऊँहूँ, यह देखो!” और उसने भीतर से कान्जियों का एक बंडल निकाला और बोली, “देखो, यह पापा ने तुम्हारे लिए दिया है □ लखनऊ में कॉन्फ्रेंस है न □ वहीं पढ़ने के लिए यह निबन्ध लिखा है उन्होंने □ शाम तक यह टाइप हो जाना चाहिए □ जहाँ संख्याएँ हैं वहाँ खुद आपको बैठकर बोलना होगा □ और पापा सुबह से ही कहीं गये हैं □ समझे जनाब!” उसने बिल्कुल अल्हड़ बच्चों की तरह गरदन हिलाकर शोख स्वरों में कहा □

कपूर ने बंडल ले लिया और कुछ सोचता हुआ बोला, “लैकिन डॉक्टर साहब का छस्तलेख, इतने पृष्ठ, शाम तक कौन टाइप कर देगा?”

“इसका भी इन्तजाम है,” और अपने ब्लाउज में से एक पत्र निकालकर चन्दर के हाथ में देती हुई बोली, “यह कोई पापा की पुरानी ईसाई छात्रा है □ टाइपिस्ट □ इसके घर मैं तुम्हें पहुँचाये देती हूँ □ मुकर्जी योड पर रहती है यह □ उसी के यहाँ टाइप करवा लेना और यह खत उसे दे देना □”

“लैकिन अभी मैंने चाय नहीं पी □”

“समझ गये, अब तुम सोच रहे होगे कि इसी बहाने सुधा तुम्हें चाय भी पिला देगी □ सो मेरा काम नहीं है जो मैं चाय पिलाऊँ? पापा का काम है यह! चलो, आओ!”

चन्दर जाकर भीतर बैठ गया और किताबें उठाकर देखने लगा, “अे, चारों कविता की किताबें उठा लायी-समझ में आएँगी तुम्हारे? क्यों, सुधा?”

“नहीं!” विड़ते हुए सुधा बोली, “तुम कहो, तुम्हें समझा दें □ इकनॉमिक्स पढ़ने वाले क्या जानें साहित्य?”

“अे, मुकर्जी योड पर ले चलो, डाइवर!” चन्दर बोला, “इधर कहाँ चल रहे हो?”

“नहीं, पहले घर चलो!” सुधा बोली, “चाय पी लो, तब जाना!”

“नहीं, मैं चाय नहीं पिऊँगा □” चन्दर बोला □

“चाय नहीं पिऊँगा, वाह! वाह!” सुधा की हँसी में दूधिया बचपन छलक उठा- ”मुँह तो सूखकर गोभी हो रहा है, चाय नहीं पिएँगे □”

बँगला आया तो सुधा ने महरजिन से चाय बनाने के लिए कहा और चन्दर को स्टडी रूम में बिठाकर प्याले निकालने के लिए चल दी □

वैसे तो यह घर, यह परिवार चन्द्र कपूर का अपना हो चुका था; जब से वह अपनी माँ से झगड़कर प्रयाग भाग आया था पढ़ने के लिए, यहाँ आकर बी. ए. में भरती हुआ था और कम खर्च के खाल से चौक में एक कमरा लेकर रहता था, तभी डॉक्टर शुक्ला उसके सीनियर टीचर थे और उसकी परिस्थितियों से अवगत थे। चन्द्र की अँग्रेजी बहुत ही अच्छी थी और डॉ. शुक्ला उससे अक्सर छोटे-छोटे लेख लिखवाकर पत्रिकाओं में भिजवाते थे। उन्होंने कई पत्रों के आर्थिक स्तम्भ का काम चन्द्र को दिलवा दिया था और उसके बाद चन्द्र के लिए डॉ. शुक्ला का स्थान अपने संरक्षक और पिता से भी ज्यादा हो गया था। चन्द्र शरमीला लड़का था, बेहद शरमीला, कभी उसने यूनिवर्सिटी के वजीफे के लिए भी कोशिश न की थी, लेकिन जब बी. ए. में वह सारी यूनिवर्सिटी में सर्वप्रथम आया तब स्वयं इकनॉमिक्स विभाग ने उसे यूनिवर्सिटी के आर्थिक प्रकाशनों का वैतनिक सम्पादक बना दिया था। एम. ए. में भी वह सर्वप्रथम आया और उसके बाद उसने रिसर्च ले ली। उसके बाद डॉ. शुक्ला यूनिवर्सिटी से हटकर ब्यूरो में चले गये थे। अगर सच पूछा जाय तो उसके सारे कैरियर का श्रेय डॉ. शुक्ला को था जिन्होंने हमेशा उसकी हिम्मत बढ़ायी और उसको अपने लड़के से बढ़कर माना। अपनी सारी मदद के बावजूद डॉ. शुक्ला ने उससे इतना अपनापन बनाये रखा कि कैसे धीरे-धीरे चन्द्र सारी गैरियत खो बैठा; यह उसे खुद नहीं मालूम। यह बँगला, इसके कमरे, इसके लॉन, इसकी किताबें, इसके बिवासी, सभी कुछ जैसे उसके अपने थे और सभी का उससे जाने कितने जन्मों का सम्बन्ध था। और यह नन्ही दुबली-पतली रंगीन चन्द्रकिरण-सी सुधा। जब आज से वर्षों पहले यह सातवीं पास करके अपनी बुआ के पास से यहाँ आयी थी तब से लेकर आज तक कैसे वह भी चन्द्र की अपनी होती रही थी, इसे चन्द्र खुद नहीं जानता था। जब वह आयी थी तब वह बहुत शरमीली थी, बहुत भोली थी, आठवीं में पढ़ने के बावजूद वह खाना खाते वक्त रोती थी, मचलती थी तो अपनी कॉपी फाड़ डालती थी और जब तक डॉक्टर साहब उसे गोदी में बिठाकर नहीं मनाते थे, वह स्कूल नहीं जाती थी। तीन बरस की अवस्था में ही उसकी माँ चल बसी थी और दस साल तक वह अपनी बुआ के पास एक गाँव में रही थी। अब तेरह वर्ष की होने पर गाँव वालों ने उसकी शादी पर जोर देना और शादी न होने पर गाँव की औरतों ने हाथ नचाना और मुँह मटकाना शुरू किया तो डॉक्टर साहब ने उसे इलाहाबाद बुलाकर आठवीं में भर्ती करा दिया। जब वह आयी थी तो आधी जंगली थी, तरकारी में धी कम होने पर वह महराजिन का चौका जूठा कर देती थी और यात में फूल तोड़कर न लाने पर अक्सर उसने माली को ढाँत भी काट खाया था। चन्द्र से जरूर वह बेहद डरती थी, पर न जाने क्यों चन्द्र भी उससे नहीं बोलता था। लेकिन जब दो साल तक उसके ये उपद्रव जारी रहे और अक्सर डॉक्टर साहब गुरसे के मारे उसे न साथ रिलाते थे और न उससे बोलते थे, तो वह रो-रोकर और सिर पटक-पटककर अपनी जान आधी कर देती थी। तब अक्सर चन्द्र ने पिता और पुत्री का समझौता कराया था, अक्सर

सुधा को डॉटा था, समझाया था, और सुधा, घर-भर से अलड़ पुरवाई और विद्रोही झोंके की तरह तोड़-फोड़ मचाती रहने वाली सुधा, चन्द्र की आँख के इशारे पर सुबह की नसीम की तरह शान्त हो जाती थी। कब और क्यों उसने चन्द्र के इशारों का यह मौन अनुशासन खीकार कर लिया था, यह उसे खुद नहीं मालूम था, और यह सभी कुछ इतने खाभाविक ढंग से, इतना अपने-आप होता गया कि दोनों में से कोई भी इस प्रक्रिया से वाकिफ नहीं था, कोई भी इसके प्रति जागरूक न था, दोनों का एक-दूसरे के प्रति अधिकार और आकर्षण इतना खाभाविक था जैसे शरद की पवित्रता या सुबह की रोशनी।

और मजा तो यह था कि चन्द्र की शवल देखकर छिप जाने वाली सुधा इतनी ढीठ हो गयी थी कि उसका सारा विद्रोह, सारी झुँझलाहट, मिजाज की सारी तेजी, सारा तीखापन और सारा लड़ाई-झगड़ा, सभी की तरफ से हटकर चन्द्र की ओर केन्द्रित हो गया था। वह विद्रोहिनी अब शान्त हो गयी थी। इतनी शान्त, इतनी सुशील, इतनी विनम्र, इतनी मिष्टभाषिणी कि सभी को देखकर ताज्जुब होता था, लेकिन चन्द्र को देखकर जैसे उसका बचपन फिर लौट आता था और जब तक वह चन्द्र को खिड़ाकर, छेड़कर लड़ नहीं लेती थी उसे चैन नहीं पड़ता था। अक्सर दोनों में अनबोला रहता था, लेकिन जब दो दिन तक दोनों मुँह फुलाये रहते थे और डॉक्टर साफ्ब के लौटने पर सुधा उत्साह से उनके ब्यूरो का हाल नहीं पूछती थी और खाते वक्त दुलार नहीं दिखाती थी तो डॉक्टर साफ्ब फौरन पूछते थे, “क्या... चन्द्र से लड़ाई हो गयी क्या?” फिर वह मुँह फुलाकर शिकायत करती थी और शिकायतें भी क्या-क्या होती थीं, चन्द्र ने उसकी हेड मिस्ट्रेस का नाम एलीफेंटा (श्रीमती हथिनी) रखा था, या चन्द्र ने उसको डिबेट के भाषण के प्लाइंट नहीं बताये, या चन्द्र कहता है कि सुधा की सखियाँ कोयला बेचती हैं, और जब डॉक्टर साफ्ब कहते हैं कि वह चन्द्र को डॉट देंगे तो वह खुशी से फूल उठती और चन्द्र के आने पर आँखें नचाती हुई चिन्हाती थीं, “कहो, कैसी डॉट पड़ी?”

वैसे सुधा अपने घर की पुराखिन थी। किस मौसम में कौन-सी तरकारी पापा को माफिक पड़ती है, बाजार में चीजों का क्या भाव है, नौकर चोरी तो नहीं करता, पापा कितने सोसायटियों के मेम्बर हैं, चन्द्र के इकनॉमिक्स के कोर्स में क्या है, यह सभी उसे मालूम था। मोटर या बिजली बिगड़ जाने पर वह थोड़ी-बहुत इंजीनियरिंग भी कर लेती थी और मातृत्व का अंश तो उसमें इतना था कि हर नौकर और नौकरानी उससे अपना सुख-दुःख कह देते थे। पढ़ाई के साथ-साथ घर का सारा काम-काज करते हुए उसका खास्थ्य भी कुछ बिगड़ गया था और अपनी उम्र के हिसाब से कुछ अधिक शान्त, संयम, गम्भीर और बुजुर्ग थी, मगर अपने पापा और चन्द्र, इन दोनों के सामने हमेशा उसका बचपन इठलाने लगता था। दोनों के सामने उसका हृदय उन्मुक्त था और रनेह बाधाठीन।

लेकिन हाँ, एक बात थी। उसे जितना रनेह और रनेह-भरी फटकारे और खास्थ्य के प्रति चिन्ता अपने पापा से मिलती थी, वह सब बड़े निःखार्थ भाव से वह चन्द्र को दे डालती थी। खाने-पीने की जितनी परवाह उसके पापा उसकी रखते थे, न खाने पर या कम खाने पर उसे जितने दुलार से फटकारते थे, उतना ही रख्यात वह चन्द्र का रखती थी और खास्थ्य के लिए जो उपदेश उसे पापा से मिलते थे, उसे और भी रनेह में पांगकर वह चन्द्र को दे डालती थी। चन्द्र कै बजे खाना खाता है, यहाँ से जाकर घर पर कितनी देर पढ़ता है, यात को सोते वक्त दूध पीता है या नहीं, इन सबका लेखा-जोखा उसे सुधा को देना पड़ता, और जब कभी उसके खाने-

पीने में कोई कमी रह जाती तो उसे सुधा की डॉट खानी ही पड़ती थी □ पापा के लिए सुधा अभी बच्ची थी; और स्वास्थ्य के मामले में सुधा के लिए चन्द्र अभी बच्चा था □ और कभी-कभी तो सुधा की स्वास्थ्य-चिन्ता इतनी ज्यादा हो जाती थी कि चन्द्र बेवारा जो खुद तन्दुरुस्त था, घबरा उठता था □ एक बार सुधा ने कमाल कर दिया □ उसकी तबीयत खराब हुई और डॉक्टर ने उसे लड़कियों का एक टॉनिक पीने के लिए बताया □ इम्तहान में जब चन्द्र कुछ दुबला-सा हो गया तो सुधा अपनी बची हुई दवा ले आयी □ और लगी चन्द्र से जिद करने कि “पियो इसे!” जब चन्द्र ने किसी अखबार में उसका विज्ञापन दिखाकर बताया कि लड़कियों के लिए है, तब कहीं जाकर उसकी जान बची □

इसीलिए जब आज सुधा ने चाय के लिए कहा तो उसकी रुह काँप गयी क्योंकि जब कभी सुधा चाय बनाती थी तो प्याले के मुँह तक दूध भरकर उसमें दो-तीन चम्मच चाय का पानी डाल देती थी और अगर उसने ज्यादा स्ट्रांग चाय की माँग की तो उसे खालिस दूध पीना पड़ता था □ और चाय के साथ फल और मेवा और खुदा जाने क्या-क्या, और उसके बाद सुधा का इसरार, न खाने पर सुधा का गुस्सा और उसके बाद की लम्बी-चौड़ी मनुष्ठार; इस सबसे चन्द्र बहुत घबराता था □ लेकिन जब सुधा उसे स्टडी रूम में बिठाकर जल्दी से चाय बना लायी तो उसे मजबूर होना पड़ा, और बैठे-बैठे निछायत बेबसी से उसने देखा कि सुधा ने प्याले में दूध डाला और उसके बाद थोड़ी-सी चाय डाल दी □ उसके बाद अपने प्याले में चाय डालकर और दो चम्मच दूध डालकर आप ठाठ से पीने लगे, और बेतकल्लुफी से दूधिया चाय का प्याला चन्द्र के सामने खिसकाकर बोली, “पीजिए, नाश्ता आ रहा है □”

चन्द्र ने प्याले को अपने सामने रखा और उसे चारों तरफ धुमाकर देखता रहा कि किस तरफ से उसे चाय का अंश मिल सकता है □ जब सभी ओर से प्याले में क्षीरसागर नजर आया तो उसने हारकर प्याला रख दिया □

“क्यों, पीते क्यों नहीं?” सुधा ने अपना प्याला रख दिया □

“पीएँ क्या? कहीं चाय भी ढो?”

“तो और क्या खालिस चाय पीजिएगा? दिमानी काम करने वालों को ऐसी ही चाय पीनी चाहिए □”

“तो अब मुझे सोचना पड़ेगा कि मैं चाय छोड़ूँ या रिसर्च □ न ऐसी चाय मुझे पसन्द, न ऐसा दिमानी काम!”

“तो, आपको विश्वास नहीं होता □ मेरी वलासफेलो है गेसू काजमी; सबसे तेज लड़की है, उसकी अम्मी उसे दूध में चाय उबालकर देती है □”

“क्या नाम है तुम्हारी सखी का?”

“गेसू!”

“बड़ा अच्छा नाम है!”

“और क्या! मेरी सबसे धनिष्ठ मित्र है और उतनी ही अच्छी है जितना अच्छा नाम!”

“जर्खर-जर्खर,” मुँह बिचकाते हुए चन्द्र ने कहा, “और उतनी ही काली होनी, जितने काले गेसू □”

“धृत् शरम नहीं आती किसी लड़की के लिए ऐसा कहते हुए!”

“और हमारे दोस्तों की बुराई करती हो तब?”

“तब क्या! वे तो सब हैं ही बुरे! अच्छा तो नाश्ता, पहले फल खाओ,” और वह प्लेट में छील-छीलकर सन्तरा रखने लगी। इतने में ज्यों ही वह झुककर एक गिरे हुए सन्तरे को नीचे से उठाने लगी कि चन्द्र ने झट से उसका प्याला अपने सामने रख लिया और अपना प्याला उधर रख दिया और शान्त चित थे पीने लगा। सन्तरे की फौंके उसकी ओर बढ़ाते हुए ज्यों ही उसने एक धूंट चाय ली तो वह चौंककर बोली, “अे, यह क्या हुआ?”

“कुछ नहीं, हमने उसमें दूध डाल दिया। तुम्हें दिमागी काम बहुत रहता है!” चन्द्र ने ठाठ से चाय धूंटते हुए कहा। सुधा कुछ गयी। कुछ बोली नहीं। चाय खत्म करके चन्द्र ने घड़ी देखी।

“अच्छा लाओ, क्या टाइप करना है? अब बहुत देर हो रही है।”

“बस यहाँ तो एक मिनट बैठना बुरा लगता है आपको! हम कहते हैं कि नाश्ते और खाने के बीच आदमी को जल्दी नहीं करनी चाहिए। बैठिए न!”

“अे, तो तुम्हें कॉलेज की तैयारी नहीं करनी है?”

“करनी क्यों नहीं है? आज तो गेसू को मोटर पर लेते हुए तब जाना है।”

“तुम्हारी गेसू और कभी मोटर पर चढ़ी है?”

“जी, वह साकिर हुसैन काजमी की लड़की है, उसके यहाँ दो मोटरें हैं और योज तो उसके यहाँ दावतें होती रहती हैं।”

“अच्छा, हमारी तो दावत कभी नहीं की?”

“अहा हा, गेसू के यहाँ दावत खाएँगे! इसी मुँह से! जनाब उसकी शादी भी तय हो गयी है, अगले जाड़ों तक शायद हो भी जाय।”

“छि:, बड़ी खराब लड़की हो! कहाँ रहता है ध्यान तुम्हारा?”

सुधा ने मजाक में पराजित कर बहुत विजय-भरी मुसकान से उसकी ओर देखा। चन्द्र ने डोंपकर निगाह नीची कर ली तो सुधा पास आकर चन्द्र का कन्धा पकड़कर बोली—“अे उदास हो गये, नहीं भइया, तुम्हारा भी ब्याह तय कराएँगे, बधारते क्यों हो!” और एक मोटी-सी इकनॉमिक्स की किताब उठाकर बोली, “लो, इस मुटकी से ब्याह करोगे! लो बातचीत कर लो, तब तक मैं वह निबन्ध ले आऊँ, टाइप कराने वाला।”

चन्द्र ने खिसियाकर बड़ी जोर से सुधा का हाथ ढबा दिया। “हाय रे!” सुधा ने हाथ छुड़ाकर मुँह बनाते हुए कहा, “लो बाबा, हम जा रहे हैं, काहे बिंगड़ रहे हैं आप?” और वह चली गयी। डॉक्टर साहब का लिखा हुआ निबन्ध उठा लायी और बोली, “लो, यह निबन्ध की पाण्डुलिपि है।” उसके बाद चन्द्र की ओर बड़े दुलार से देखती हुई बोली, “शाम को आओगे?”

“ना!”

“अच्छा, हम परेशान नहीं करेंगे। तुम चुपचाप पढ़ना। जब रात को पापा आ जाएँ तो उन्हें निबन्ध की प्रतिलिपि देकर चले जाना!”

“नहीं, आज शाम को मेरी दावत है ठाकुर साहब के यहाँ।”

“तो उसके बाद आ जाना। और देखो, अब फरवरी आ गयी है, मास्टर छुँद दो हमें।”

“नहीं, ये सब झूठी बात है। हम कल सुबह आएँगे।”

“अच्छा, तो सुबह जल्दी आना और देखो, मास्टर लाना मत भूलना। ड्राइवर तुम्हें मुकर्जी योड़ पहुँचा देगा।”

ਵਹ ਕਾਰ ਮੈਂ ਬੈਠ ਗਿਆ ਔਰ ਕਾਰ ਸਟਾਰ्ट ਹੋ ਗਿਆ ਕਿ ਫਿਰ ਸੁਧਾ ਨੇ ਪੁਕਾਰਾ □ ਵਹ ਫਿਰ ਤਤਾ □ ਸੁਧਾ ਬੋਲੀ, “ਲੋ, ਯਹ ਲਿਫਾਫਾ ਤੋ ਭੂਲ ਹੀ ਗਿਆ ਥੇ □ ਪਾਪਾ ਨੇ ਲਿਖ ਦਿਯਾ ਹੈ □ ਤਾਂ ਦੇ ਦੇਨਾ □”

“ਅਚਾ □” ਕਹਕਰ ਫਿਰ ਚਨਦਰ ਚਲਾ ਕਿ ਫਿਰ ਸੁਧਾ ਨੇ ਪੁਕਾਰਾ, “ਸੁਨੋ!”

“ਏਕ ਗਾਰ ਮੈਂ ਕਿਧੋ ਨਹੀਂ ਕਹ ਦੇਤੀ ਸਕਾ!” ਚਨਦਰ ਨੇ ਝਾਲਾਕਰ ਕਢਾ □

“ਅਤੇ ਬਡੀ ਗਮਭੀਰ ਬਾਤ ਹੈ □ ਦੇਖੋ, ਵਹੀਂ ਕੁਛ ਐਸੀ-ਵੈਸੀ ਬਾਤ ਮਤ ਕਹਨਾ ਲਡਕੀ ਸੇ, ਵਰਨਾ ਤਾਂ ਉਸਕੇ ਹਾਂਡਾਂ ਟੋ ਬੱਡੇ-ਬੱਡੇ ਬੁਲਡੱਗ ਹੈਂ □” ਕਹਕਰ ਤਾਂ ਜਾਲ ਫੁਲਾਕਰ, ਆੱਖ ਫੈਲਾਕਰ ਐਸੀ ਬੁਲਡੱਗ ਕੀ ਭਾਂਗਿਮਾ ਬਨਾਈ ਕਿ ਚਨਦਰ ਹੱਸ ਪਡਾ □ ਸੁਧਾ ਭੀ ਹੱਸ ਪਡੀ □

ऐਸੀ ਥੀ ਸੁਧਾ, ਔਰ ਐਸਾ ਥਾ ਚਨਦਰ □

सिविल लाइन्स के एक उजाड़ हिस्से में एक पुराने-से बँगले के सामने आकर मोटर रुकी। बँगले का नाम था 'रोजलान' लैकिन सामने के कम्पाउंड में जंगली धास उन रही थी और गुलाब के फूलों के बजाय अहाते में मुरझी के पंख बिखरे पड़े थे। यस्ते पर भी धास उन आयी थी और और फाटक पर, जिसके एक खम्भे की कॉर्निस टूट चुकी थी, बजाय लोहे के दरवाजे के दो आड़े बाँस लगे हुए थे। फाटक के एक ओर एक छोटा-सा लकड़ी का नामपतल लगा था, जो कभी काला रहा होगा, लैकिन जिसे धूत, बरसात और हवा ने चितकबरा बना दिया था। चन्द्र मोटर से उतरकर उस बोर्ड पर लिखे हुए अधिमिटे सफेद अक्षरों को पढ़ने की कोशिश करने लगा, और जाने किसका मुँह देखकर सुबह उठा था कि उसे सफलता भी मिल गयी। उस पर लिखा था, 'ए. एफ. डिक्रूज'। उसने जेब से लिफाफा निकाला और पता मिलाया। लिफाफे पर लिखा था, 'मिस पी. डिक्रूज'। यही बँगला है, उसे सन्तोष हुआ।

"हॉर्न दो!" उसने ड्राइवर से कहा। ड्राइवर ने हॉर्न दिया। लैकिन किसी का बाहर आना तो दूर, एक मुरझा, जो अहाते में कुड़कुड़ा रहा था, उसने मुड़कर बड़े सन्देह और त्रास से चन्द्र की ओर देखा और उसके बाट पंख फड़फड़ाते हुए, चीखते हुए जान छोड़कर भागा। "बड़ा मनहूस बँगला है, यहाँ आदमी रहते हैं या प्रेत?" कपूर ने ऊबकर कहा और ड्राइवर से बोला, "जाओ तुम, हम अन्दर जाकर देखते हैं!"

"अच्छा हुजूर, सुधा बीबी से क्या कह देंगे?"

"कह देना, पहुँचा दिया।"

कार मुड़ी और कपूर बाँस फाँदकर अन्दर घुसा। आगे का पोर्टिको खाली पड़ा था और नीचे की जमीन ऐसी थी जैसे कई साल से उस बँगले में कोई सवारी नहीं न आयी हो। वह बरामदे में गया। दरवाजे बन्द थे और उन पर धूत जमी थी। एक जगह चौखट और दरवाजे के बीच में मकड़ी ने जाला बुन रखा था। 'यह बँगला खाली है क्या?' कपूर ने सोचा। सुबह साढ़े आठ बजे ही वहाँ ऐसा सन्नाटा छाया था कि दिल घबरा जाय। आस-पास चारों ओर आधी फर्लांग तक कोई बँगला नहीं था। उसने सोचा बँगले के पीछे की ओर शायद नौकरों की झोपड़ियाँ हों। वह दायें बाजू से मुड़ा और खुशबू का एक तेज झोंका उसे चूमता हुआ निकल गया। 'ताज्जुब है, यह सन्नाटा, यह मनहूसी और इतनी खुशबू!' कपूर ने कहा और आगे बढ़ा तो देखा कि बँगले के पिछवाड़े गुलाब का एक बहुत खूबसूरत बाग है। कट्टी रविशें और बड़े-बड़े गुलाब, हर रंग के। वह सचमुच 'रोजलान' था।

वह बाग में पहुँचा। उधर से भी बँगले के दरवाजे बन्द थे। उसने खटखटाया लैकिन कोई जवाब नहीं मिला। वह बाग में घुसा कि शायद कोई माली काम कर रहा हो। बीच-बीच में ऊचे-ऊचे जंगली चमेली के झाड़ थे और कहीं-कहीं लोहे की छड़ों के कटघरे। बेगमबेलिया भी फूल रही थी लैकिन चारों ओर एक अजब-सा सन्नाटा था और हर फूल पर किसी खामोशी के फरिश्ते की

छाँठ थी □ फूलों में रंग था, हवा में ताजगी थी, पेड़ों में हरियाली थी, झोंकों में खुशबू थी, लेकिन फिर भी सारा बाग एक ऐसे सितारों का गुलदस्ता लग रहा था जिनकी चमक, जिनकी रोशनी और जिनकी ऊँचाई लुट चुकी हो □ लगता था जैसे बाग का मालिक मौसमी रंगीनी भूत चुका हो, क्योंकि नैस्टरिंग या र्वीटपी या फ्लाक्स, कोई भी मौसमी फूल न था, सिंक गुलाब थे और जंगली चमेली थी और बेगमबेतिया थी जो सालों पहले बोये गये थे □ उसके बाद उन्हीं की काट-छाँट पर बाग चल रहा था □ बागबानी में कोई नवीनता और मौसम का उल्लास न था □

चन्द्र फूलों का बेहद शौकीन था □ सुबह धूमने के लिए उसने दरिया किनारे के बजाय अल्फ्रेड पार्क चुना था क्योंकि पानी की लहरों के बजाय उसे फूलों के बाग के रंग और सौंभ द्वारा लहरों से बेहद प्यार था □ और उसे दूसरा शौक था कि फूलों के पौधों के पास से गुजरते हुए हर फूल को समझने की कोशिश करना □ अपनी नाजुक टहनियों पर हँसते-मुसकराते हुए ये फूल जैसे अपने रंगों की बोली में आदमी से जिंदगी का जाने कौन-सा राज कहना चाहते हैं □ और ऐसा लगता है कि जैसे हर फूल के पास अपना व्यक्तिगत सन्देश है जिसे वह अपने दिल की पाँखुरियों में आहिस्ते से सहेज कर रखे हुए हैं कि कोई सुनने वाला मिले और वह अपनी दास्ताँ कह जाए □ पौधे की ऊपरी फुनगी पर मुसकराता हुआ आसमान की तरफ मुँह किये हुए यह गुलाब जो रात-भर सितारों की मुसकराहट चुपचाप पीता रहा है, यह अपने मौतियों-पाँखुरियों के होठों से जाने क्यों खिलखिलाता ही जा रहा है □ जाने इसे कौन-सा रहस्य मिल गया है □ और वह एक नीचे वाली टहनी में आधा झुका हुआ गुलाब, झुकी हुई पलकों-सी पाँखुरियाँ और दोहरे मखमली तार-सी उसकी डंडी, यह गुलाब जाने क्यों उदास है? और यह तुबली-पतली लम्बी-सी नाजुक कली जो बहुत सावधानी से हरा आँचल लपेटे हैं और प्रथम ज्ञात-यौवना की तरह लाज में जो सिमटी तो सिमटी ही चली जा रही है, लेकिन जिसके यौवन की गुलाबी लपटें सात हरे परदों में से झलकी ही पड़ती हैं, झलकी ही पड़ती हैं □ और फारस के शाहजादे जैसा शान से खिला हुआ पीला गुलाब! उस पीले गुलाब के पास आकर चन्द्र रुक गया और झुककर देखने लगा □ कातिक पूजों के चाँद से झरने वाले अमृत को पीने के लिए व्याकुल किसी सुकुमार, भावुक परी की फैली हुई अंजलि के बराबर बड़ा-सा वह फूल जैसे रोशनी बिखेरे रहा था □ बेगमबेतिया के कुंज से छनकर आनेवाली तोतापंखी धूप ने जैसे उस पर धान-पान की तरह खुशनुमा हरियाली बिखेरे दी थी □ चन्द्र ने सोचा, उसे तोड़ लें लेकिन हिम्मत न पड़ी □ वह झुका कि ये सूँध ही लें □ सूँधने के इरादे से उसने हाथ बढ़ाया ही था कि किसी ने पीछे से गरजकर कहा, “हीयर यू आर, आई हैव काट ऐड-हैण्डेड टुडे!” (यह तुम हो; आज तुम्हें मौके पर पकड़ पाया हूँ)

और उसके बाद किसी ने अपने दोनों हाथों में जकड़ लिया और उसकी गरदन पर सवार हो गया □ वह उछल पड़ा और अपने को छुड़ाने की कोशिश करने लगा □ पहले तो वह कुछ समझ नहीं पाया □ अजब रहस्यमय है यह बँगला □ एक अन्यक्त भय और एक सिंहरन में उसके हाथ-पाँव ढीले हो गये □ लेकिन उसने हिम्मत करके अपना एक हाथ छुड़ा लिया और मुड़कर देखा तो एक बहुत कमजोर, बीमार-सा, पीली आँखों वाला गोरा उसे पकड़े हुए था □ चन्द्र के दूसरे हाथ को फिर पकड़ने की कोशिश करता हुआ वह हाँफता हुआ गोला (अँग्रेजी में), “रोज-रोज यहाँ से फूल गायब होते थे □ मैं कहता था, कहता था, कौन ले जाता है □ हो...हो...,” वह हाँफता जा रहा था, “आज मैंने पकड़ा तुम्हें □ रोज चुपके से चले जाते थे...” वह चन्द्र को कसकर पकड़े था लेकिन उस बीमार गोरे की साँस जैसे छूटी जा रही थी □ चन्द्र ने उसे झटका देकर धकेल

दिया और डॉटकर बोला, “क्या मतलब है तुम्हारा! पागल है क्या! खबरदार जो हाथ बढ़ाया, अभी ढेर कर दूँगा तुझे! गोरा सुअर!” और उसने अपनी आरतीने चढ़ायीं □

वह धक्के से निर गया था, धूल झाड़ते उठ बैठा और बड़ी ही योनी आवाज में बोला, “कितना जुल्म है, कितना जुल्म है! मेरे फूल भी तुम चुरा ले गये और मुझे इतना हक भी नहीं कि तुम्हें धमकाऊँ! अब तुम मुझसे लड़ोगे! तुम जवान हो, मैं बूढ़ा हूँ □ हाय रे मैं!” और सचमुच वह जैसे योने लगा हो □

चन्द्र ने उसका योना देखा और उसका सारा गुस्सा हवा हो गया और हँसी योककर बोला, “गलतफहमी है, जनाब! मैं बहुत दूर रहता हूँ □ मैं चिठ्ठी लेकर मिस डिक्रूज से मिलने आया था □”

उसका योना नहीं रुका, “तुम बहाना बनाते हो, बहाना बनाते हो और अगर मैं विश्वास नहीं करता तो तुम मारने की धमकी देते हो? अगर मैं कमज़ोर न होता...तो तुम्हें पीसकर खा जाता और तुम्हारी खोपड़ी कुचलकर फेंक देता जैसे तुमने मेरे फूल फेंके होंगे?”

“फिर तुमने गाली दी! मैं उठाकर तुम्हें अभी नाले में फेंक दूँगा!”

“अरे बाप रे! दौड़ो, दौड़ो, मुझे मार डाला...पांपी...टॉमी...अरे दोनों कुत्ते मर गये... □” उसने डर के मारे चीखना शुरू किया □

“क्या है, बर्टी? क्यों विल्ला रहे हो?” बाथरूम के अन्दर से किसी ने विल्लाकर कहा □

“अरे मार डाला इसने...दौड़ो-दौड़ो!”

झटके से बाथरूम का दरवाजा खुला बेटिङ-गाउन पहने हुए एक लड़की दौड़ती हुई आयी और चन्द्र को देखकर रुक गयी □

“क्या है?” उसने डॉटकर पूछा □

“कुछ नहीं, शायद पागल मालूम देता है!”

“जबान सँभालकर बोलो, वह मेरा भाई है!”

“ओह! कोई भी हो □ मैं मिस डिक्रूज से मिलने आया था □ मैंने आवाज दी तो कोई नहीं बोला □ मैं बाग में घूमने लगा □ इतने में इसने मेरी गरदन पकड़ ली □ यह बीमार और कमज़ोर है वरना अभी गरदन दबा देता □”

गोरा उस लड़की के आते ही फिर तनकर खड़ा हो गया और दॉत फीसकर बोला, “अरे मैं तुम्हारे दॉत तोड़ दूँगा □ बदमाश कहीं का, चुपके-चुपके आया और गुलाब तोड़ने लगा □ मैं चमेली के झाड़ के पीछे छिपा देख रहा था □”

“अभी मैं पुलिस बुलाती हूँ, तुम देखते रहो बर्टी इसे □ मैं फोन करती हूँ □”

लड़की ने डॉटते हुए कहा □

“अरे भाई, मैं मिस डिक्रूज से मिलने आया हूँ □”

“मैं तुम्हें नहीं जानती, झूठा कहीं का □ मैं मिस डिक्रूज हूँ □”

“देखिए तो यह खत!”

लड़की ने खत खोला और पढ़ा और एकदम उसने आवाज बदल दी □

“छि: बर्टी, तुम किसी दिन पागलखाने जाओगे □ आपको डॉ. शुक्ला ने भेजा है □ तुम तो मुझे बदनाम करा डालोगे!”

उसकी शवल और भी योनी हो गयी, “मैं नहीं जानता था, मैं जानता नहीं था □” उसने और भी

ਘਬਰਾਕਰ ਕਹਾ □

“ਮਾਫ ਕੀਂਜਿ�ਗਾ!” ਲਡਕੀ ਨੇ ਬਡੇ ਮੀਠੇ ਸ਼ਵਰ ਮੌਜੂਦਾ ਸਾਫ ਛਿੰਦੁਰਤਾਨੀ ਮੌਜੂਦਾ ਕਹਾ, “ਮੈਰੇ ਭਾਈ ਕਾ ਟਿਮਾਨ ਜ਼ਰਾ ਠੀਕ ਨਹੀਂ ਰਹਤਾ, ਜਬ ਯੇ ਇਨਕੀ ਪਤਨੀ ਕੀ ਮੌਤ ਹੋ ਗਈ □”

“ਇਸਕਾ ਮਤਲਬ ਯੇ ਨਹੀਂ ਕਿ ਯੇ ਕਿਸੀ ਮਲੇ ਆਦਮੀ ਕੀ ਇੱਤਾਰ ਤਾਰ ਲੈਂ □” ਚਨਦਰ ਨੇ ਬਿਗਡਕਰ ਕਹਾ □

“ਦੇਖਿਏ, ਬੁਰਾ ਮਤ ਮਾਨਿए □ ਮੈਂ ਇਨਕੀ ਓਰੇ ਸੇ ਮਾਫਿ ਮੱਗਤੀ ਹੁੱ □ ਆਇਏ, ਅਨਦਰ ਚਲਿਏ □” ਉਸਨੇ ਚਨਦਰ ਕਾ ਹਾਥ ਪਕਢ ਲਿਆ □ ਉਸਕਾ ਹਾਥ ਬੇਹਦ ਠਣਡਾ ਥਾ □ ਵਹ ਨਹਾਕਰ ਆ ਰਹੀ ਥੀ □ ਉਸਕੇ ਹਾਥ ਕੇ ਉਸ ਤੁ਷ਾਰ ਸਪੰਝ ਸੇ ਚਨਦਰ ਸਿਹਰ ਤਠ ਔਰ ਉਸਨੇ ਹਾਥ ਝਾਟਕਕਰ ਕਹਾ, “ਅਫਸੋਸ, ਆਪਕਾ ਹਾਥ ਤੋਂ ਬਫ਼ ਹੈ?”

ਲਡਕੀ ਚੌਂਕ ਗਈ □ ਵਹ ਸਦਾ: ਸਨਾਤਾ ਸਹਸਾ ਸਚੇਤ ਹੋ ਗਈ ਔਰ ਗੋਲੀ, “ਅਤੇ ਸ਼ੈਤਾਨ ਤੁਮਹੈਂ ਤੇ ਜਾਏ, ਬਟੀ! ਤੁਮਹਾਏ ਪੀਛੇ ਮੈਂ ਬੇਟਿਡ੍ ਗਾਉਨ ਮੈਂ ਭਾਗ ਆਈ □” ਔਰ ਬੇਟਿਡ੍ ਗਾਉਨ ਕੇ ਟੋਨੋਂ ਕਾਲਰ ਪਕਡਕਰ ਉਸਨੇ ਅਪਨੀ ਖੁਲੀ ਗਰਦਨ ਢੱਕਨੇ ਕਾ ਪ੍ਰਧਾਸ ਕਿਯਾ ਔਰ ਫਿਰ ਅਪਨੀ ਪੋਥਾਕ ਪਰ ਲਜ਼ਜ਼ਤ ਛੋਕਰ ਭਾਗੀ □

ਅਭੀ ਤਕ ਗੁਰਸੇ ਕੇ ਮਾਰੇ ਚਨਦਰ ਨੇ ਉਸ ਪਰ ਧਿਆਨ ਹੀ ਨਹੀਂ ਦਿਯਾ ਥਾ □ ਲੋਕਿਨ ਉਸਨੇ ਦੇਖਾ ਕਿ ਵਹ ਤੋਈਸ ਬਰਸ ਕੀ ਟੁਬਲੀ-ਪਤਲੀ ਤਰਣੀ ਹੈ □ ਲਫ਼ਰਾਤਾ ਹੁਆ ਬਦਨ, ਗਲੇ ਤਕ ਕਟੇ ਹੁਏ ਬਾਲ □ ਏਂਡਲੋ-ਡਿੰਡਿਯਨ ਛੋਨੇ ਕੇ ਬਾਵਜੂਦ ਗੋਰੀ ਨਹੀਂ ਹੈ □ ਚਾਹ ਕੀ ਤਰਫ਼ ਵਹ ਛਲਕੀ, ਪਤਲੀ, ਮੂਰੀ ਔਰ ਤੁਰ੍ਸ਼ ਥੀ □ ਭਾਗਤੇ ਵਕਤ ਐਸੀ ਲਗ ਰਹੀ ਥੀ ਜੈਸੇ ਛਲਕਤੀ ਹੁੰਡ ਚਾਹ □

ਇਨੇ ਮੈਂ ਵਹ ਗੋਰਾ ਤਠ ਔਰ ਚਨਦਰ ਕਾ ਕਨਧਾ ਛੂਕਰ ਗੋਲਾ, “ਮਾਫ ਕਰਨਾ, ਭਾਈ! ਉਸਦੇ ਮੇਰੀ ਸ਼ਿਕਾਇਤ ਮਤ ਕਰਨਾ □ ਅਦਿਤ ਮੈਂ ਯੇ ਗੁਲਾਬ ਮੇਰੀ ਮੂਰੂ ਪਤਨੀ ਕੀ ਯਾਦਗਾਰ ਹੈं □ ਜਬ ਇਨਕਾ ਪਹਲਾ ਪੇਡ ਆਇਆ ਥਾ ਤਥ ਮੈਂ ਇਨ੍ਹਾਂ ਹੀ ਜਵਾਨ ਥਾ ਜਿਤਨੇ ਤੁਮ, ਔਰ ਮੇਰੀ ਪਤਨੀ ਤਨ੍ਹੀ ਹੀ ਅਚਹੀ ਥੀ ਜਿਤਨੀ ਪਸੰਦੀ □”

“ਕੌਨ ਪਸੰਦੀ?”

“ਹਾਹ ਮੇਰੀ ਬਹਨ ਪ੍ਰਮਿਲਾ ਡਿਕ੍ਰੂਜ਼!”

“ਓਹ! ਕਿਸ ਮਰੀ ਆਪਕੀ ਪਤਨੀ? ਮਾਫ ਕੀਂਜਿਏਗਾ ਮੁੜੇ ਭੀ ਮਾਲੂਮ ਨਹੀਂ ਥਾ!”

“ਛੋਂ, ਮੈਂ ਬਡਾ ਅਭਾਗਾ ਹੁੱ □ ਮੇਰਾ ਟਿਮਾਨ ਕੁਛ ਖਰਾਬ ਹੈ; ਦੇਖਿਏ!” ਕਫ਼ਕਰ ਉਸਨੇ ਝੁਕਕਰ ਅਪਨੀ ਖੋਪੜੀ ਚਨਦਰ ਕੇ ਸਾਮਨੇ ਕਰ ਦੀ ਔਰ ਬਹੁਤ ਗਿੜਗਿੜਾਕਰ ਗੋਲਾ, “ਪਤਾ ਨਹੀਂ ਕੌਨ ਮੈਰੇ ਫੂਲ ਚੁਰਾ ਲੇ ਜਾਤਾ ਹੈ! ਅਪਨੀ ਪਤਨੀ ਕੀ ਸੂਤ੍ਯੁ ਕੇ ਬਾਦ ਪਾਂਚ ਸਾਲ ਸੇ ਮੈਂ ਇਨ ਫੂਲਾਂ ਕੋ ਸੱਭਾਲ ਰਹਾ ਹੁੱ □ ਹਾਥ ਰੇ ਮੈਂ ਜਾਇਏ, ਪਸੰਦੀ ਬੁਲਾ ਰਹੀ ਹੈ □”

ਪਿਛਵਾਡੇ ਕੇ ਸਹਨ ਕਾ ਬੀਚ ਕਾ ਦਰਖਾਜਾ ਖੁਲ ਗਿਆ ਥਾ ਔਰ ਪਸੰਦੀ ਕਪਡੇ ਪਹਨਕਰ ਬਾਹਰ ਝੱਕ ਰਹੀ ਥੀ □ ਚਨਦਰ ਆਗੇ ਬਣਾ ਔਰ ਗੋਰਾ ਸੁਡਕਰ ਅਪਨੇ ਗੁਲਾਬ ਔਰ ਚਮੇਤੀ ਕੀ ਝਾੜੀ ਮੈਂ ਖੋ ਗਿਆ □ ਚਨਦਰ ਗਿਆ ਔਰ ਕਮਰੇ ਮੈਂ ਪੱਡੇ ਹੁਏ ਏਕ ਸੋਫਾ ਪਰ ਬੈਠ ਗਿਆ □ ਪਸੰਦੀ ਟਵਾਯਲੇਟ ਕਰ ਚੁਕੀ ਥੀ ਔਰ ਏਕ ਛਲਕੀ ਫਾਨਸੀਸੀ ਖੁਸ਼ਬੂ ਸੇ ਮਹਕ ਰਹੀ ਥੀ □ ਸ਼ੈਮਪੂ ਸੇ ਧੁਲੇ ਹੁਏ ਰੁਖੇ ਬਾਲ ਜੋ ਮਹਲੇ ਪੱਡ ਰਹੇ ਥੇ, ਖੁਸ਼ਨੁਮਾ ਆਸਮਾਨੀ ਰੰਗ ਕਾ ਏਕ ਪਤਲਾ ਚਿਪਕਾ ਹੁਆ ਝੀਨਾ ਬਲਾਉਜ ਔਰ ਬਲਾਉਜ ਪਰ ਏਕ ਪਲੈਨੇਲ ਕਾ ਫੁਲਪੈਂਟ ਜਿਸਕੇ ਟੋ ਗੇਲਿਸ ਕਮਰ, ਛਾਤੀ ਔਰ ਕਨਧੇ ਪਰ ਚਿਪਕੇ ਹੁਏ ਥੇ □ ਛੋਠੋਂ ਪਰ ਏਕ ਛਲਕੀ ਲਿਪਿਸ਼ਟਿਕ ਕੀ ਝਾਲਕ ਮਾਤਰ ਥੀ, ਔਰ ਗਲੇ ਤਕ ਬਹੁਤ ਛਲਕਾ ਪਾਉਡਰ, ਜੋ ਬਹੁਤ ਨਜ਼ਦੀਕ ਸੇ ਹੀ ਮਾਲੂਮ ਹੋਤਾ ਥਾ □ ਲਾਮ੍ਬੇ ਨਾਖੂਨੋਂ ਪਰ ਛਲਕੀ ਗੁਲਾਬੀ ਪੈਂਟ □ ਵਹ ਆਈ, ਨਿਰਸ਼ਕੋਚ ਭਾਵ ਸੇ ਤਸੀ ਸੋਫੇ ਪਰ ਕਪੂਰ ਕੇ ਬਣਾਂ ਮੈਂ ਬੈਠ ਗਈ ਔਰ ਬਡੀ ਮੁਲਾਯਮ ਆਵਾਜ ਮੈਂ ਗੋਲੀ, ‘ਮੁੜੇ ਬਡਾ ਦੁ:ਖ ਹੈ, ਮਿਸਟਰ ਕਪੂਰ!

आपको बहुत तवालत उठानी पड़ी □ चोट तो नहीं आयी?”

“नहीं, नहीं, कोई बात नहीं!” कपूर का सारा गुस्सा हवा हो जया □ कोई भी लड़की निःसंकोच भाव से, इतनी अपनायत से सहानुभूति दिखाये और माफी माँगे, तो उसके सामने कौन पानी-पानी नहीं हो जाएगा, और फिर वह भी तब जबकि उसके होठों पर न केवल बोती अच्छी लगती हो, वरन् लिपस्टिक भी इतनी प्यारी हो □ लेकिन चन्द्र की एक आदत थी □ और चाहे कुछ न हो, कम-से-कम वह यह अच्छी तरह जानता था कि नारी जाति से व्यवहार करते समय कहाँ पर कितनी ढील देनी चाहिए, कितना कसना चाहिए, कब सहानुभूति से उन्हें झुकाया जा सकता है, कब अकड़कर □ इस वक्त जानता था कि इस लड़की से वह जितनी सहानुभूति चाहे, ले सकता है, अपने अपमान के हर्जाने के तौर पर □ इसलिए कपूर साहब बोले, “लेकिन मिस डिकूज, आपके भाई बीमार होने के बावजूद बहुत मजबूत हैं □ उफ! गरदन पर जैसे अभी तक जलन हो रही है □”

“ओहो! सचमुच मैं बहुत शर्मिन्दा हूँ □ देख्यूँ!” और कालर हटाकर उसने गरदन पर अपनी बर्फीली अँगुलियाँ रख दीं, “लाइए, लोशन मल दूँ मैं!”

“धन्यवाद, धन्यवाद, इतना कष्ट न कीजिए □ आपकी अँगुलियाँ गन्दी हो जाएँगी!” कपूर ने बड़ी शालीनता से कहा □

परमी के होठों पर एक हल्की-सी मुरक्काहट, आँखों में हल्की-सी लाज और वक्ष में एक हल्का-सा कम्पन दौड़ गया □ यह वाक्य कपूर ने चाहे शरारत में ही कहा हो, लेकिन कहा इतने शान्त और संयत रूपों में कि परमी कुछ प्रतिवाद भी न कर सकी और फिर छह बरस से साठ बरस तक की कौन ऐसी झी है जो अपने रूप की प्रशंसा पर बेहोश न हो जाए □

“अच्छा लाइए, वह स्पीच कहाँ है जो मुझे टाइप करनी है □” उसने विषय बदलते हुए कहा □

“यह लीजिए □” कपूर ने दे दी □

“यह तो मुश्किल से तीन-चार घण्टे का काम है?” और परमी स्पीच को उलट-पुलटकर देखने लगी □

“माफ कीजिएगा, अगर मैं कुछ व्यक्तिगत सवाल पूछूँ; क्या आप टाइपिस्ट हैं?” कपूर ने बहुत शिष्टता से पूछा □

“जी नहीं!” परमी ने उन्हीं कागजों पर नजर गड़ाते हुए कहा, “मैंने कभी टाइपिंग और शार्टहैंड सीखी थी, और तब मैं सीनियर केमिक्रेज पास करके यूनिवर्सिटी गयी थी □ यूनिवर्सिटी मुझे छोड़नी पड़ी क्योंकि मैंने अपनी शादी कर ली □”

“अच्छा, आपके पति कहाँ हैं?”

“शवलपिंडी में, आर्मी में □”

“लेकिन फिर आप डिकूज क्यों लिखती हैं, और फिर मिस?”

“क्योंकि हमलोग अलग हो जये हैं □” और स्पीच के कागज को फिर तह करती हुई बोली-

“मिस्टर कपूर, आप अविवाहित हैं?”

“जी हूँ?”

“और विवाह करने का इरादा तो नहीं रखते?”

“नहीं □”

“बहुत अच्छे □ तब तो हम लोगों में निभ जाएगी □ मैं शादी से बहुत नफरत करती हूँ □ शादी

अपने को दिया जानेवाला सबसे बड़ा धोखा है। देखिए, ये मेरे भाई हैं ज, कैसे पीले और बीमार-से हैं। ये पहले बड़े तन्दुरुसत और टेनिस में प्रान्त के अच्छे खिलाड़ियों में से थे। एक बिशप की दुबली-पतली भावुक लड़की से इन्होंने शादी कर ली, और उसे बेहद प्यार करते थे। सुबह-शाम, दौपहर, शत कभी उसे अलग नहीं होने देते थे। हनीमून के लिए उसे लेकर सीलोन जाये थे। वह लड़की बहुत कलाप्रिय थी। बहुत अच्छा नाचती थी, बहुत अच्छा गाती थी और खुद गीत लिखती थी। यह गुलाब का बाग उसी ने बनवाया था और इन्हीं के बीच में दोनों बैठकर घंटों गुजार देते थे।

“कुछ दिनों बाद दोनों में झगड़ा हुआ। वलब में बॉल डान्स था और उस दिन वह लड़की बहुत अच्छी लग रही थी। बहुत अच्छी। डान्स के बीच इनका ध्यान डान्स की तरफ कम था, अपनी पत्नी की तरफ ज्यादा। इन्होंने आवेश में उसकी अँगुलियाँ जोर से ढबा दी। वह चीख पड़ी और सभी इन लोगों की ओर देखकर हँस पड़े।

“वह घर आयी और बहुत बिगड़ी, बोली, ‘आप नाच रहे थे या टेनिस का मैच खेल रहे थे, मेरा हाथ था या टेनिस का ऐकट?’ इस बात पर बर्टी भी बिगड़ गया, और उस दिन से जो इन लोगों में खटकी तो फिर कभी न बनी। धीर-धीर वह लड़की एक सार्जेंट को प्यार करने लगी। बर्टी को इतना सदमा हुआ कि वह बीमार पड़ गया। लेकिन बर्टी ने तलाक नहीं दिया, उस लड़की से कुछ कहा भी नहीं, और उस लड़की ने सार्जेंट से प्यार जारी रखा। लेकिन बीमारी में बर्टी की बहुत सेवा की। बर्टी अच्छा हो गया। उसके बाद उसको एक बच्ची हुई और उसी में वह मर गयी। हालाँकि हम लोग सब जानते हैं कि वह बच्ची उस सार्जेंट की थी लेकिन बर्टी को यकीन नहीं होता कि वह सार्जेंट को प्यार करती थी। वह कहता है, ‘यह दूसरे को प्यार करती होती तो मेरी इतनी सेवा कैसे कर सकती थी भला!’ उस बच्ची का नाम बर्टी ने रोज रखा। और उसे लेकर दिनभर उन्हीं गुलाब के पेड़ों के बीच में बैठा करता था जैसे अपनी पत्नी को लेकर बैठता था। दो साल बाद बच्ची को साँप ने काट लिया, वह मर गयी और तब से बर्टी का दिमाग ठीक नहीं रहता। खैर, जाने दीजिए। आइए, अपना काम शुरू करें। चलिए, अन्दर के स्टडी-रूम में चलें।”

“चलिए!” चन्द्र बोला। और पम्मी के पीछे-पीछे चल दिया। मकान बहुत बड़ा था और पुराने अंगैजों के ढंग पर सजा हुआ था। बाहर से जितना पुराना और गन्दा नजर आता था, अन्दर से उतना ही आलीशान और सुथरा। ईस्ट इंडिया कम्पनी के जमाने की छाप थी अन्दर। यहाँ तक कि बिजली लगने के बावजूद अन्दर पुराने बड़े-बड़े हाथ से खींचे जाने वाले पंखे लगे थे। दो कमरों को पार कर वे लोग स्टडी-रूम में पहुँचे। बड़ा-सा कमरा जिसमें चारों तरफ आलमारियों में किताबें सजी हुई थीं। चार कोने में चार मेजें लगी हुई थीं जिनमें कुछ बरस्त और कुछ तर्फीरे स्टैंड के सहारे रखी हुई थीं। एक आलमारी में नीचे खाने में टाइपराइटर रखा था। पम्मी ने बिजली जला दी और टाइपराइटर खोलकर साफ करने लगी। चन्द्र घूमकर किताबें देखने लगा। एक कोने में कुछ मराठी की किताबें रखी थीं। उसे बड़ा ताज्जुब हुआ। “अच्छा पम्मी, ओह, माफ कीजिएगा, मिस डिक्रूज...”

“नहीं, आप मुझे पम्मी पुकार सकते हैं। मुझे यही नाम अच्छा लगता है-हाँ, क्या पूछ रहे थे आप?”

“क्या आप मराठी भी जानती हैं?”

“नहीं, मैं तो नहीं, मेरी नानीजी जानती थीं□ क्या आपको डॉक्टर शुक्ला ने हमलोगों के बारे में कुछ नहीं बताया?”

“नहीं!” कपूर ने कहा□

“अच्छा! ताज्जुब है!” पम्मी बोली, “आपने ट्रेनाली डिक्ट्रूज का नाम सुना है न?”

“हाँ हाँ, डिक्ट्रूज जिन्होंने कौशास्मी की खुदाई करवायी थी□ वह तो बहुत बड़े पुरातत्ववेता थे?”
कपूर ने कहा□

“हाँ, वही□ वह मेरे सगे नाना थे□ और वह अँग्रेज नहीं थे, मराठा थे और उन्होंने मेरी नानी से शादी की थी जो एक कृष्णीरी ईसाई महिला थीं□ उनके कारण भारत में उन्हें ईसाइयत अपनानी पड़ी□ यह मेरे नाना का ही मकान है और अब हम लोगों को मिल गया है□ डॉ. शुक्ला के दोस्त मिस्टर श्रीवास्तव बैरिस्टर हैं न, वे हमारे खानदान के ऐटर्नी थे□ उन्होंने और डॉ. शुक्ला ने ही यह जायदाद हमें दिलवायी□ लीजिए, मशीन तो ठीक हो गयी□” उसने टाइपराइटर में कार्बन और कागज लगाकर कहा, “लाइए निबन्ध!”

इसके बाद घंटे-भर तक टाइपराइटर रुका नहीं□ कपूर ने देखा कि यह लड़की जो व्यवहार में इतनी सरल और स्पष्ट है, फैशन में इतनी नाजुक और शौकीन है, काम करने में उतनी ही मेहनती और तेज भी है□ उसकी अँगुलियाँ मशीन की तरह चल रही थीं□ और तेज इतनी कि एक घंटे में उसने लगभग आधी पांडुलिपि टाइप कर डाली थी□ ठीक एक घंटे के बाद उसने टाइपराइटर बन्द कर दिया, बगल में बैठे हुए कपूर की ओर झुककर कहा, “अब थोड़ी देर आराम□” और अपनी अँगुलियाँ चटखाने के बाद वह कुरसी खिसकाकर उठी और एक भरपूर अँगड़ाई ली□ उसका अंग-अंग धनुष की तरह झुक गया□ उसके बाद कपूर के कन्धे पर बेतकल्तुफी से हाथ रखकर बोली, “क्यों, एक प्याला चाय मँगवायी जाय?”

“मैं तो पी चुका हूँ□”

“लेकिन मुझसे तो काम होने से रहा अब बिना चाय के□” पम्मी एक अल्टड बच्ची की तरह बोली, और अन्दर चली गयी□ कपूर ने टाइप किये हुए कागज उठाये और कलम निकालकर उनकी गलतियाँ सुधारने लगा□ चाय पीकर थोड़ी देर में पम्मी वापस आयी और बैठ गयी□ उसने एक सिगरेट केस कपूर के सामने किया□

“धन्यवाद, मैं सिगरेट नहीं पीता□”

“अच्छा, ताज्जुब है, आपकी इजाजत हो तो मैं सिगरेट पी लूँ!”

“क्या आप सिगरेट पीती हैं? छि, पता नहीं क्यों औरतों का सिगरेट पीना मुझे बहुत ही नास्पन्द है□”

“मेरी तो मजबूरी है मिस्टर कपूर, मैं यहाँ के समाज में मिलती-जुलती नहीं, अपने विवाह और अपने तलाक के बाद मुझे ऐंब्लो-इंडियन समाज से नफरत हो गयी है□ मैं अपने टिल से हिन्दुस्तानी हूँ□ लेकिन हिन्दुस्तानियों से घुलना-मिलना हमारे लिए सम्भव नहीं□ घर में अकेले रहती हूँ□ सिगरेट और चाय से तबीयत बढ़त जाती है□ किताबों का मुझे शौक नहीं□”

“तलाक के बाद आपने पढ़ाई जारी क्यों नहीं रखी?” कपूर ने पूछा□

“मैंने कहा न, कि किताबों का मुझे शौक नहीं बिलकुल!” पम्मी बोली□ “और मैं अपने को आदमियों में घुलने-मिलने के लायक नहीं पाती□ तलाक के बाद साल-भर तक मैं अपने घर में बन्द रही□ मैं और बर्टी□ सिर्फ बर्टी से बात करने का मौका मिला□ बर्टी मेरा भाई, वह भी

बीमार और बूढ़ा □ कहीं कोई तकल्लुफ की गुंजाइश नहीं □ अब मैं छेरेक से बेतकल्लुफि से बात करती हूँ तो कुछ लोग मुझ पर हँसते हैं, कुछ लोग मुझे सभ्य समाज के लायक नहीं समझते, कुछ लोग उसका गलत मतलब निकालते हैं □ इसलिए मैंने अपने को अपने बँगले में ही कैद कर लिया है □ अब आप ही हैं, आज पढ़ली बार मैंने देखा आपको □ मैं समझी ही नहीं कि आपसे कितना दुराव रखना चाहिए □ अगर आप भलेमानस न हों तो आप इसका गलत मतलब निकाल सकते हैं □”

“अगर यहीं बात हो तो...” कपूर हँसकर बोला, “सम्भव है कि मैं भलेमानस बनने के बजाय गलत मतलब निकालना ज्यादा पसंद करूँ □”

“तो सम्भव है मैं मजबूर ठोकर आपसे भी न मिलूँ!” पर्मी गम्भीरता से बोली □

“नहीं, मिस डिक्रूज...”

“नहीं, आप पर्मी कहिए, डिक्रूज नहीं!”

“पर्मी सही, आप गलत न समझें, मैं मजाक कर रहा था □” कपूर बोला □ उसने इतनी देर में समझ लिया था कि यह साधारण ईसाई छोकरी नहीं है □

इतने में बर्टी लड़खड़ाता हुआ, हाथ में धूल सना खुरापा लिये आया और चुपचाप खड़ा हो गया और अपनी धुँधली पीली आँखों से एकटक कपूर को देखने लगा □ कपूर ने एक कुरसी खिसका दी और कहा, “आइए!” पर्मी उठी और बर्टी के कन्धे पर एक हाथ रखकर उसे सहाय देकर कुरसी पर बिठा दिया □ बर्टी बैठ गया और आँखें बन्द कर लीं □ उसका बीमार कमज़ोर व्यक्तित्व जाने कैसा लगता था कि पर्मी और कपूर दोनों चुप हो गये □ थोड़ी देर बाद बर्टी ने आँखें खोलीं और बहुत करुण रुर में बोला, “पर्मी, तुम नाराज हो, मैंने जान-बूझकर तुम्हारे मित्र का आपमान नहीं किया था?”

“अे नहीं!” पर्मी ने उठकर बर्टी का माथा सहलाते हुए कहा, “मैं तो भूल गयी और कपूर भी भूल गये?”

“अच्छा, धन्यवाद! पर्मी, अपना हाथ इधर लाओ!” और वह पर्मी के हाथ पर शिर रखकर पड़ रहा और बोला, “मैं कितना अभागा हूँ! कितना अभागा! अच्छा पर्मी, कल रात को तुमने सुना था, वह आयी थी और पूछ रही थी, बर्टी तुम्हारी तबीयत अब ठीक है, मैंने झट अपनी आँखें ढँक लीं कि कहीं आँखों का पीलापन देख न ले □ मैंने कहा, तबीयत अब ठीक है, मैं अच्छा हूँ तो उठी और जाने लगी □ मैंने पूछा, कहाँ चली, तो बोली सार्जेंट के साथ ज़रा वलब जा रही हूँ □ तुमने सुना था पर्मी?”

कपूर स्तब्ध-सा उन दोनों की ओर देख रहा था □ पर्मी ने कपूर को आँख का इशारा करते हुए कहा, “हाँ, हमसे मिली थी वह, लेकिन बर्टी, वह सार्जेंट के साथ नहीं गयी थी!”

“हाँ, तब?” बर्टी की आँखें चमक उठीं और उसने उल्लास-भरे रुर में पूछा □

“वह बोली, बर्टी के ये गुलाब सार्जेंट से ज्यादा प्यारे हैं □” पर्मी बोली □

“अच्छा!” मुसकराहट से बर्टी का चेहरा खिल उठा, उसकी पीली-पीली आँखें और धूँस गर्याँ और दाँत बाहर झालकने लगे, “हूँ! क्या कहा उसने, फिर तो कहो!”

उसने कहा, “ये गुलाब सार्जेंट से ज्यादा प्यारे हैं, फिर इन्हीं गुलाबों पर नाचती रही और सुबह होते ही इन्हीं फूलों में छिप गयी! तुम्हें सुबह किसी फूल में तो नहीं मिली?”

“उहूँ, तुम्हें तो किसी फूल में नहीं मिली?” बर्टी ने बच्चों के-से भोले विश्वास के रुरों में कपूर से

पूछा □

चन्द्र चौंक उठा □ पम्मी और बर्टी की इन बातों पर उसका मन बेहद भर आया था □ बर्टी की मुसकराहट पर उसकी नसें थरथरा उठी थीं □

“नहीं; मैंने तो नहीं देखा था □” चन्द्र ने कहा □

बर्टी ने फिर मायूसी से सिर झुका लिया और आँखें बन्द कर लीं और कराहती हुई आवाज में बोला, “जिस फूल में वह छिप गयी थी, उसी को किसी ने चुरा लिया होगा!” फिर सहसा वह तनकर खड़ा हो गया और पुचकारते हुए बोला, “जाने कौन ये फूल चुराता है! अगर मुझे एक बार मिल जाए तो मैं उसका खून ऐसे पी लूँ!” उसने हाथ की अँगुली काटते हुए कहा और उठकर लड़खड़ाता हुआ चला गया □

वातावरण इतना भारी हो गया था कि फिर पम्मी और कपूर ने कोई बातें नहीं कीं □ पम्मी ने चुपचाप टाइप करना शुरू किया और कपूर चुपचाप बर्टी की बातें सोचता रहा □ धंटा-भर बाट टाइपराइटर खामोश हुआ तो कपूर ने कहा-

“पम्मी, मैंने जितने लोग देखे हैं उनमें शायद बर्टी सबसे विचित्र हैं और शायद सबसे दयनीय!”
पम्मी खामोश रही □ फिर उसी लापरवाही से अँगड़ाई तेते हुए बोली, “मुझे बर्टी की बातों पर ज़रा भी दया नहीं आती □ मैं उसको दिलासा देती हूँ क्योंकि वह मेरा भाई है और बच्चे की तरह नासमझ और लाचार हैं □”

कपूर चौंक गया □ वह पम्मी की ओर आश्वर्य से चुपचाप देखता रहा; कुछ बोला नहीं □

“क्यों, तुम्हें ताज्जुब क्यों होता है?” पम्मी ने कुछ मुसकराकर कहा, “लैकिन मैं सच कहती हूँ”- वह बहुत गम्भीर हो गयी, “मुझे जरा तरस नहीं आता इस पागलपन पर □” क्षण-भर चुप रही, फिर जैसे बहुत ही तेजी से बोली, “तुम जानते हो उसके फूल कौन चुराता है? मैं, मैं उसके फूल तोड़कर फेंक देती हूँ □ मुझे शादी से नफरत है, शादी के बाद होने वाली आपसी धोखेबाजी से नफरत है, और उस धोखेबाजी के बाद इस झूठमूठ की यादगार और बेर्इमानी के पागलपन से नफरत है □ और ये गुलाब के फूल, ये क्यों मूल्यवान हैं, इसलिए न कि इसके साथ बर्टी की जिंदगी की इतनी बड़ी ट्रेजेडी गुँथी हुई है □ अगर एक फूल के खूबसूरत होने के लिए आदमी की जिंदगी में इतनी बड़ी ट्रेजेडी आना जरूरी है तो लानत है उस फूल की खूबसूरती पर! मैं उससे नफरत करती हूँ □ इसीलिए मैं किताबों से नफरत करती हूँ □ एक कहानी लिखने के लिए कितनी कहानियों की ट्रेजेडी बर्दाश्त करनी होती हैं □”

पम्मी चुप हो गयी □ उसका चेहरा सुर्ख हो गया था □ थोड़ी देर बाद उसका तैश उतर गया और वह अपने आवेश पर खुद शरमा गयी □ उठकर वह कपूर के पास गयी और उसके कन्धों पर हाथ रखकर बोली, “बर्टी से मत कहना, अच्छा?”

कपूर ने सिर हिलाकर स्वीकृति दी और कागज समेटकर खड़ा हुआ □ पम्मी ने उसके कन्धों पर हाथ रखकर उसे अपनी ओर धुमाकर कहा, “देखो, पिछले चार साल से मैं अकेली थी, और किसी दोस्त का इन्तजार कर रही थी, तुम आये और दोस्त बन गये □ तो अब अक्सर आना, ऐं?”

“अच्छा!” कपूर ने गम्भीरता से कहा □

“डॉ. शुक्ला से मेरा अभिवादन कहना, कभी यहाँ जरूर आएँ □”

“आप कभी चलिए, वहाँ उनकी लड़की है □ आप उससे मिलकर खुश होंगी □”

पम्मी उसके साथ फाटक तक पहुँचाने चली तो देखा बर्टी एक चमेली के झाड़ में टहनियाँ हटा-

ਛਟਾਕਰ ਕੁਛ ਛੁੱਢ ਰਣਾ ਥਾ□ ਪਸੀਂ ਕੋ ਦੇਖਕਰ ਪ੍ਰਭਾ ਤਸਨੇ- ”ਤੁਸੁਹੈਂ ਯਾਦ ਹੈ; ਵਹ ਚਮੇਲੀ ਕੇ ਝਾੜ ਮੌਂ ਤੋ
ਜਾਣੀਂ ਛਿਪੀ ਥੀ?” ਕਪੂਰ ਨੇ ਪਤਾ ਨਹੀਂ ਕਿਧੋ ਜਲਦੀ ਪਸੀਂ ਕੋ ਅਭਿਵਾਦਨ ਕਿਯਾ ਔਰ ਚਲ ਦਿਯਾ□ ਤਥੇ
ਬਟੀ ਕੋ ਦੇਖਕਰ ਡਰ ਲਗਤਾ ਥਾ□

सुधा का कॉलेज बड़ा एकान्त और खूबसूरत जगह बना हुआ था □ दोनों ओर ऊँची-सी मेड और गोच में से कंकड़ की एक खूबसूरत धुमावदार सड़क □ दायीं ओर चने और गेहूँ के खेत, बेर और शहतूत के झाड़ और बायीं ओर ऊँचे-ऊँचे टीले और ताड़ के लम्बे-लम्बे पेड़ □ शहर से काफी बाहर देहात का-सा नजारा और इतना शान्त वातावरण लगता था कि यहाँ कोई उथल-पुथल, कोई शोरगुल है ही नहीं □ जगह इतनी हरी-भरी कि दर्जों के कमरों के पीछे ही महुआ घृता था और लम्बी-लम्बी धास की दुपहरिया के नीले फूलों की जंगली लतरें उलझी रहती थीं □

और इस वातावरण ने अगर किसी पर सबसे ज्यादा प्रभाव डाला था तो वह थी गेसू □ उसे अच्छी तरह मालूम था कि बाँस के झाड़ के पीछे किस चीज के फूल हैं □ पुराने पीपल पर गिलोय की लतर चढ़ी है और कर्णटे के झाड़ के पीछे एक साढ़ी की माँट है □ नागफनी की झाड़ी के पास एक बार उसने एक लोमड़ी भी देखी थी □ शहर के एक मशहूर रईस साबिर हुसैन काजमी की वह सबसे बड़ी लड़की थी □ उसकी माँ, जिन्हें उसके पिता अदन से ब्याह कर लाये थे, शहर की मशहूर शायरा थीं □ हालाँकि उनका दीवान छपकर मशहूर हो चुका था, मगर वह किसी भी बाढ़ी आदमी से कभी नहीं मिलती-जुलती थीं, उनकी सारी दुनिया अपने पति और अपने बच्चों तक सीमित थी □ उन्हें शायराना नाम रखने का बहुत शौक था □ अपनी दोनों लड़कियों का नाम उन्होंने गेसू और फूल रखा था और अपने छोटे बच्चे का नाम हसरत □ हाँ, अपने पतिदेव साबिर साहब के हुक्के से बेहद चिढ़ती थीं और उनका नाम उन्होंने रखा था, 'आतिश-फिज़ौ' □ धास, फूल, लतर और शायरी का शौक गेसू ने अपनी माँ से विरासत में पाया था □ किस्मत से उसका कॉलेज भी ऐसा मिला जिसमें दर्जों की खिड़कियों से आम की शार्खें झाँका करती थीं इसलिए हमेशा जब कभी मौका मिलता था, वलास से भाग कर गेसू धास पर लेटकर सपने देखने की आदी हो गयी थी □ वलास के इस महाभिनिष्करण और उसके बाद लतरों की छाँह में जाकर ध्यान-योग की साधना में उसकी एकमात्र साधिन थी सुधा □ आम की घनी छाँह में हरी-हरी दूब में दोनों सिर के नीचे हाथ रखकर लेट रहतीं और दुनिया-भर की बातें करतीं □ बातों में छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी किस तरह की बातें करती थीं, यह वही समझ सकता है जिसने कभी दो अभिन्न सठेलियों की एकान्त वार्ता सुनी हो □ गालिब की शायरी से लेकर, उनके छोटे भाई हसरत ने एक कुते का पिल्ला पाला है, यह गेसू सुनाया करती थी और शरत के उपन्यासों से लेकर यह कि उसकी मालिन ने गिलट का कड़ा बनवाया है, यह सुधा बताया करती थी □ दोनों अपने-अपने मन की बातें एक-दूसरे को बता डालती थीं और जितना भावुक, प्यारा, अनजान और सुकुमार दोनों का मन था, उतनी ही भावुक और सुकुमार दोनों की बातें □ हाँ भावुक, सुकुमार दोनों ही थीं, लेकिन दोनों में एक अन्तर था □ गेसू शायर होते हुए भी इस दुनिया की थी और सुधा शायर न होते हुए भी कल्पनालोक की थी □ गेसू अगर झाड़ियों में से

कुछ फूल चुनती तो उन्हें सूंघती, उन्हें अपनी चोटी में सजाती और उन पर चन्द शे'र कठने के बाद भी उन्हें माला में पिरोकर अपनी कलाई में लपेट लेती □ सुधा लतरों के बीच में सिर रखकर लेट जाती और निर्निमेष पलकों से फूलों को देखती रहती और आँखों से न जाने क्या पीकर उन्हें उन्हीं की डालों पर फूलता हुआ छोड़ देती □ गेसू हर चीज का उचित इस्तेमाल जानती थी, किसी भी चीज को पसन्द करने या प्यार करने के बाद अब उसका क्या उपयोग है, क्रियात्मक यथार्थ जीवन में उसका क्या स्थान है, यह गेसू खूब समझती थी □ लेकिन सुधा किसी भी फूल के जादू में बैंध जाना चाहती थी, उसी की कल्पना में ढूब जाना जानती थी, लेकिन उसके बाद सुधा को कुछ नहीं मालूम था □ गेसू की कल्पना और भावुक सूक्ष्मता शायरी में व्यक्त हो जाती थी, अतः उसकी जिंदगी में काफी व्यावहारिकता और यथार्थ था, लेकिन सुधा, जो शायरी लिख नहीं सकती थी, अपने स्वभाव और गठन में खुद ही एक मासूम शायरी बन गयी थी □ वह भी पिछले दो सालों में तो सचमुच ही इतनी गम्भीर, सुकुमार और भावनामयी बन गयी थी कि लगता था कि सूर के गीतों से उसके व्यक्तित्व के ऐशे बुन गये हैं □

लड़कियाँ, गेसू और सुधा के इस स्वभाव और उनकी अभिन्नता से वाकिफ थीं □ और इसलिए जब आज सुधा की मोटर आकर सायबान में रुकी और उसमें से सुधा और गेसू हाथ में फाइल लिये उतरीं तो कामिनी ने हँसकर प्रभा से कहा, “लो, चन्दा-सूरज की जोड़ी आ गयी!” सुधा ने सुन लिया □ मुसकराकर गेसू की ओर फिर कामिनी और प्रभा की ओर देखकर हँस दी □ सुधा बहुत कम बोलती थी, लेकिन उसकी हँसी ने उसे खुशमिजाज साबित कर रखा था और वह सभी की प्यारी थी □ प्रभा ने आकर सुधा के गले में बाँह डालकर कहा, “गेसू बानो, थोड़ी देर के लिए सुधारानी को हमें दे दो □ जरा कल के नोट्स उतारने हैं इनसे पूछकर □”

गेसू हँसकर बोली, “उसके पापा से तय कर ले, फिर तू जिंदगी भर सुधा को पाल-पोस, मुझे क्या करना है □”

जब सुधा प्रभा के साथ चली गयी तो गेसू ने कामिनी के कन्धे पर हाथ रखा और कहा, “कम्मो रानी, अब तो तुम्हीं हमारे हिस्से में पड़ी, आओ □ चलो, देखें लतर में कुन्दर हैं?”

“कुन्दर तो नहीं, अब चले का खेत हरिया आया है □” कम्मो बोली □

गृह-विज्ञान का पीरियड था और मिस उमालकर पढ़ा रही थीं □ बीच की कतार की एक बेंच पर कामिनी, प्रभा, गेसू और सुधा बैठी थीं □ हिस्सा बॉट अभी तक कायम था, अतः कामिनी के बगल में गेसू, गेसू के बगल में प्रभा और प्रभा के बाद बेंच के कोने पर सुधा बैठी थी □ मिस उमालकर शेंगियों के खान-पान के बारे में समझा रही थीं □ मेज के बगल में खड़ी हुई, हाथ में एक किताब लिये हुए, उसी पर निगाह लगाये वह बोलती जा रही थीं □ शायद अँगरेजी की किताब में जो कुछ लिखा हुआ था, उसी का हिन्दी में उल्था करते हुए बोलती जा रही थीं, “आलू एक नुकसानदेह तरकारी है, योग की हालत में □ वह खुशक होता है, गरम होता है और हजम मुश्किल से होता है... □”

सहसा गेसू ने एकदम बीच से पूछा, “गुरुजी, गाँधी जी आलू खाते हैं या नहीं?” सभी हँस पड़े □ मिस उमालकर ने बहुत गुस्से से गेसू की ओर देखा और डॉटकर कहा, “व्हाइ टॉक ऑत गाँधी? आई वाण्ट नो पोलिटिकल डिस्पशन इन वलास □ (गाँधी से क्या मतलब? मैं दर्जे में राजनीतिक बहस नहीं चाहती □)” इस पर तो सभी लड़कियों की ढबी हुई हँसी फूट पड़ी □ मिस उमालकर झल्ला गयी और मेज पर किताब पटकते हुए बोलीं, “साइलेन्स (खामोश)!” सभी चुप हो गये □

उन्होंने फिर पढ़ाना शुरू किया □

“जिनर के शेगियों के लिए हरी तरकारियाँ बहुत फायदेमन्द होती हैं □ लौकी, पालक और हर किस्म के हरे साग तन्दुरुस्ती के लिए बहुत फायदेमन्द होते हैं □”

सहसा प्रभा ने कुठनी मारकर गेसू से कहा, “ले, फिर क्या है, निकाल चने का हरा साग, खाखाकर मोटे हो मिस उमालकर के घंटे में!”

गेसू ने अपने कुरते की जेब से बहुत-सा साग निकालकर कामिनी और प्रभा को दिया □

मिस उमालकर अब शवकर के हानि-लाभ बता रही थीं, “लम्बे शेग के बाद शेगी को शवकर कम देनी चाहिए □ दूध या साबूदाने में ताढ़ की मिश्री मिला सकते हैं □ दूध तो ब्लूकोज के साथ बहुत स्वादिष्ट लगता है □”

इतने में जब तक सुधा के पास साग पहुँचा कि फौरन मिस उमालकर ने देख लिया □ वह समझ गयीं, यह शरारत गेसू की होगी, “मिस गेसू बीमारी की हालत में दूध काढे के साथ स्वादिष्ट लगता है?”

इतने में सुधा के मुँह से निकला, “साग काढे के साथ खाएँ?” और गेसू ने कहा, “नमक के साथ!”

“हूँ? नमक के साथ?” मिस उमालकर ने कहा, “बीमारी में दूध नमक के साथ अच्छा लगता है □ खड़ी हो! कहाँ था ध्यान तुम्हारा?”

गेसू सन्न □ मिस उमालकर का चेहरा मारे गुस्से के लाल हो रहा था □

“क्या बात कर रही थीं तुम और सुधा?”

गेसू सन्न!

“अच्छा, तुम लोग वलास के बाहर जाओ, और आज हम तुम्हारे गार्जियन को खत भेजेंगे □ चलो, जाओ बाहर □”

सुधा ने कुछ मुसक्याते हुए प्रभा की ओर देखा और प्रभा हँस दी □ गेसू ने देखा कि मिस उमालकर का पाया और भी चढ़ने वाला है तो वह चुपचाप किताब उठाकर चल दी □ सुधा भी पीछे-पीछे चल दी □ कामिनी ने कहा, “खत-वत भेजती रहना, सुधा!” और वलास उठाकर हँस पड़ी □ मिस उमालकर गुस्से से नीली पड़ गयीं, “वलास अब खत्म होगी □” और रजिस्टर उठाकर चल दीं □ गेसू अभी अन्दर ही थी कि वह बाहर चली गयीं और उनके जरा दूर पहुँचते ही गेसू ने बड़ी आदा से कहा, “बड़े बेआबरु होकर तैरे कूचे से हम निकलो!” और सारी वलास फिर हँसी से गूँज उठी □ लड़कियाँ चिड़ियों की तरह फुर्झ हो गयीं और थोड़ी ही देर में सुधा और गेसू बैडमिंटन फ़िल्ड के पास वाले छतनार पाकड़ के नीचे लेटी हुई थीं □

बड़ी खुशनुमा दोपहरी थी □ खुशबू से लदे हल्के-हल्के झाँके गेसू की ओढ़नी और गरारे की सिलवटों से आँखमिचौली खेल रहे थे □ आसमान में कुछ हल्के रूपहले बादल उड़ रहे थे और जमीन पर बादलों की साँवली छायाएँ दौड़ रही थीं □ वास के लम्बे-चौड़े मैदान पर बादलों की छायाओं का खेल बड़ा मासूम लग रहा था □ जितनी दूर तक छाँह रहती थी, उतनी दूर तक वास का रंग गहरा काढ़ी हो जाता था, और जहाँ-जहाँ बादलों से छनकर धूप बरसने लगती थी वहाँ-वहाँ वास सुनहरे धानी रंग की हो जाती थी □ दूर कहीं पर पानी बरसा था और बादल हल्के होकर खरगोश के मासूम खच्छन्द बच्चों की तरह दौड़ रहे थे □ सुधा आँखों पर फाइल की छाँह किये हुए बादलों की ओर एकटक देख रही थी □ गेसू ने उसकी ओर करवट बढ़ाई और उसकी

वेणी में लगे हुए रेशमी फिते को उँगली में उमेठते हुए एक लम्बी-सी साँस भरकर कहा-
बादशाहों की मुअत्तर ख्वाबगाहों में कहाँ
वह मजा जो भीगी-भीगी घास पर सोने में है,
मुतमिन बैफिक्र लोगों की हँसी में भी कहाँ
लुत्फ जो एक-दूसरे को देखकर योने में है॥

सुधा ने बादलों से अपनी निगाह नहीं हटायी, बस एक करण सपनीली मुसकराहट बिखरेकर
रह गयी॥

क्या देख रही है, सुधा?” गेसू ने पूछा॥

“बादलों को देख रही हूँ॥” सुधा ने बेहोश आवाज में जवाब दिया॥ गेसू उठी और सुधा की छाती
पर सिर रखकर बोती-

कैफ बरदोश, बादलों को न देख,

बेखबर, तू न कुचल जाय कहीं!

और सुधा के गाल में जोर की चुटकी काट ली॥ “हाय रे!” सुधा ने चीखकर कहा और उठ बैठी,
“वाह वाह! कितना अच्छा शेर है! किसका है?”

“पता नहीं किसका है॥” गेसू बोली, “लेकिन बहुत सच है सुधी, आरम्भ के बादलों के दामन में
आपने ख्वाब टॉक लेना और उनके सहारे जिंदगी बसर करने का ख्याल है तो बड़ा नाजुक,
मगर यानी बड़ा खतरनाक भी है॥ आदमी बड़ी ठोकरें खाता है॥ इससे तो अच्छा है कि आदमी
को नाजुकख्याली से साबिका ही न पड़े॥ खाते-पीते, हँसते-बोलते आदमी की जिंदगी कट
जाए॥”

सुधा ने अपना आँचल ठीक किया, और लटों में से घास के तिनके निकालते हुए कहा, “गेसू
अगर हम लोगों को भी शादी-ब्याह के झँझाट में न फँसना पड़े और इसी तरह दिन कटते जाएँ तो
कितना मजा आए॥ हँसते-बोलते, पढ़ते-लिखते, घास में लेटकर बादलों से प्यार करते हुए
कितना अच्छा लगता है, लेकिन हम लड़कियों की जिंदगी भी क्या! मैं तो सोचती हूँ गेसू; कभी
ब्याह ही न करूँ॥ हमारे पापा का ध्यान कौन रखेगा?”

गेसू थोड़ी देर तक सुधा की आँखों में आँखें डालकर शरारत-भरी निगाहों से देखती रही और
मुसकराकर बोली, “ऐ, अब ऐसी भोली नहीं हो रानी तुम! ये शबाब, ये उठान और ब्याह नहीं
करेंगी, जोगन बनेंगी॥”

“अच्छा, चल हट बेशरम कहीं की, खुद ब्याह करने की ठान चुकी है तो दुनिया-भर को क्यों
तोहमत लगाती है!”

“मैं तो ठान ही चुकी हूँ, मेरा क्या! किक तो तुम लोगों की है कि ब्याह नहीं होता तो लेटकर
बादल देखती हैं॥” गेसू ने मचलते हुए कहा॥

“अच्छा अच्छा,” गेसू की ओढ़नी खींचकर सिर के नीचे रखकर सुधा ने कहा, “क्या हाल है तेरे
अख्तर मियाँ का? मँगनी कब होगी तेरी?”

“मँगनी क्या, किसी भी दिन हो जाय, बस फूफीजान के यहाँ आने-भर की कसर है॥ वैसे अम्मी
तो फूल की बात उनसे चला रही थीं, पर उन्होंने मेरे लिए इशादा जाहिर किया॥ बड़े अच्छे हैं, आते
हैं तो घर-भर में रोशनी छा जाती है॥” गेसू ने बहुत भोलेपन से गोद में सुधा का हाथ रखकर
उसकी उँगलियाँ चिटकाते हुए कहा॥

“तै तो तैरे चचाजाद भाई हैं न? तुझसे तो पहले उनसे बोल-चाल रही होगी” सुधा ने पूछा □
“हाँ-हाँ, खूब अच्छी तरह से □ मौलवी साहब हम लोगों को साथ-साथ पढ़ाते थे और जब हम दोनों सबक भूल जाते थे तो एक-दूसरे का कान पकड़कर साथ-साथ उठते-बैठते थे □” गेसू कुछ झोपते हुए बोली □

सुधा हँस पड़ी, “वाह रे! प्रेम की इतनी विचित्र शुरुआत मैंने कहीं नहीं सुनी थी □ तब तो तुम लोग एक-दूसरे का कान पकड़ने के लिए अपने-आप सबक भूल जाते होंगे?”

“जहीं जी, एक बार फिर पढ़कर कौन सबक भूलता है और एक बार सबक याद होने के बाद जानती हो इश्क में वया होता है-

मकतबे इश्क में इक ढंग निराला देखा,
उसको छुट्टी न मिली जिसको सबक याद हुआ”

“खैर, यह सब बात जाने दे सुधा, अब तू कब ब्याह करेगी?”

“जल्दी ही करँगी” सुधा बोली □

“किससे?”

“तुझसे” और दोनों खिलखिलाकर हँस पड़ीं □

बादल हट गये थे और पाकड़ की छाँठ को चीरते हुए एक सुनहरी रोशनी का तार झिलमिला उठा □ हँसते वक्त गेसू के कान के टॉप वमक उठे और सुधा का ध्यान उधर खिंच गया □ “ये कब बनवाया तूने?”

“बनवाया नहीं”

“तो उन्होंने दिये होंगे, वयों?”

गेसू ने शरमाकर सिर छिला दिया □

सुधा ने उठकर हाथ से छूते हुए कहा, “कितने सुन्दर कमल हैं! वाह! वयों, गेसू! तूने सचमुच के कमल देखे हैं?”

“न”

“मैंने देखे हैं”

“कहाँ?”

“असल में पाँच-छह साल पहले तक तो मैं गाँव में रहती थी न! ऊँचाहार के पास एक गाँव में मेरी बुआ रहती हैं न, बचपन से मैं उन्हीं के पास रहती थी □ पढ़ाई की शुरुआत मैंने वहीं की और सातवीं तक वहीं पढ़ी □ तो वहाँ मेरे स्कूल के पीछे के पोखरे में बहुत-से कमल थे □ योज शाम को मैं भाग जाती थी और तालाब में धुसकर कमल तोड़ती और घर से बुआ एक लम्बा-सा सोंटा लेकर गालियाँ देती हुई आती थीं मुझे पकड़ने के लिए □ जहाँ वह किनारे पर पहुँचतीं तो मैं कहती, अभी डूब जाएँगे बुआ, अभी डूबे, तो बहुत खड़ी-मलाई की लालच देकर वह मिन्नत करतीं-निकल आओ, तो मैं निकलती थी □ तुमने तो कभी देखा नहीं होगा हमारी बुआ को?”

“न, तूने कभी दिखाया ही नहीं”

“इधर बहुत दिनों से आयीं ही नहीं वे □ आँगी तो दिखाऊँगी तुझे □ और उनकी एक लड़की है □ बड़ी प्यारी, बहुत मजे की है □ उसे देखकर तो तुम उसे बहुत प्यार करोगी □ वो तो अब यहीं आने वाली है □ अब यहीं पढ़ेगी”

“किस दर्जे में पढ़ती है?”

“प्राइवेट विदुषी में बैठेगी इस साल” खूब गोल-मटोल और हँसमुख है” सुधा बोली।
इतने में घंटा बोला और गेसू ने सुधा के पैर के नीचे ढबी हुई अपनी ओढ़नी खींची।
“अे, अब आखिरी घंटे में जाकर क्या पढ़ोगी! हाजिरी कट ही गयी। अब बैठो यहाँ बातचीत करें, आराम करें।” सुधा ने अलसाये खर में कहा और खड़ी होकर एक मदमाती हुई अँगड़ाई ली-गेसू ने हाथ पकड़कर उसे बिठा लिया और बड़ी गम्भीरता से कहा, “देखो, ऐसी अरसौहीं अँगड़ाई न लिया करो, इससे लोग समझ जाते हैं कि अब बचपन करवट बदल रहा है।”

“धृत!” बेहद झेंपकर और फाइल में मुँह छिपाकर सुधा बोली।
“तो, तुम मजाक समझती हो, एक शायर ने तुम्हारी अँगड़ाई के लिए कहा है-
कौन ये ले रहा है अँगड़ाई
आसमानों को नींद आती हैं”

“गाह!” सुधा बोली, “अच्छा गेसू, आज बहुत-से शेर सुनाओ।”
“सुनो-

इक रिदायेतीर्णी है और खाबेकायनात
डूबते जाते हैं तारे, भीगती जाती है रात!”

“पहली लाइन के क्या मतलब हैं?” सुधा ने पूछा।

“रिदायेतीर्णी के माने हैं अँधेरे की चादर और खाबेकायनात के माने हैं जिंदगी का सपना-अब
फिर सुनो शेर-

इक रिदायेतीर्णी है और खाबेकायनात
डूबते जाते हैं तारे, भीगती जाती है रात!”

“गाह! कितना अच्छा है-अन्धकार की चादर है, जीवन का स्वप्न है, तारे डूबते जाते हैं, रात
भीगती जाती है...गेसू, उर्दू की शायरी बहुत अच्छी है।”

“तो तू खुद उर्दू क्यों नहीं पढ़ लेती?” गेसू ने कहा।

“गाहती तो बहुत हूँ, पर निभ नहीं पाता!”

“किसी दिन शाम को आओ सुधा तो अम्मीजान से तुझे शेर सुनवाएँ। यह ले तेरी मोटर तो आ
गयी।”

सुधा उठी, अपनी फाइल उठायी। गेसू ने अपनी ओढ़नी झाड़ी और आगे चली। पास आकर
उत्ककर उसने प्रिंसिपल का रूम देखा। वह खाली था। उसने दाई को खबर दी और मोटर पर
बैठ गयी।

गेसू बाहर खड़ी थी। “चल तू भी न!”

“नहीं, मैं गाड़ी पर चली जाऊँगी।”

“अे चलो, गाड़ी साढ़े चार बजे जाएगी। अभी घंटा-भर है। घर पर चाय पिएँगे, फिर मोटर
पहुँचा देगी। जब तक पापा नहीं हैं, तब तक जितना चाहो कार धिसो!”

गेसू भी आ बैठी और कार चल दी।

5

दूसरे दिन जब चन्द्र डॉ. शुक्ला के यहाँ निबन्ध की प्रतिलिपि लेकर पहुँचा तो आठ बजे चुके थे □ सात बजे तो चन्द्र की नींद ही खुली थी और जल्दी से वह नहाए-धोकर साइकिल ढौड़ाता हुआ भागा था कि कहीं भाषण की प्रतिलिपि पहुँचने में देर न हो जाए □

जब वह बँगले पर पहुँचा तो धूप फैल चुकी थी □ अब धूप भली नहीं मालूम देती थी, धूप की तेजी बर्फशत के बाहर होने लगी थी, लैकिन सुधा नीलकाँटे के ऊँचे-ऊँचे झाड़ों की छाँह में एक छोटी-सी कुरसी डाले बैठी थी □ बगल में एक छोटी-सी मेज थी जिस पर कोई किताब खुली हुई रखी थी, हाथ में क्रोशिया थी और ऊँगलियाँ एक नाजुक तेजी से डौरे से उलझ-सुलझ रही थीं □ हल्के बादामी रंग की इकलाई की लहराती हुई धोती, नारंगी और काली तिरछी धारियों का कलफ किया चुस्त ब्लाउज और एक कंधे पर उभरा एक उसका पफ ऐसा लग रहा था जैसे कि बाँह पर कोई रंगीन तितली आकर बैठी हुई हो और उसका सिर्फ एक पंख उठा हो! अभी-अभी शायद नहाकर उठी थी क्योंकि शरद की खुशनुमा धूप की तरह हल्के सुनहले बाल पीठ पर लहरा रहे थे □ नीलकाँटे की टहनियाँ उनको सुनहली लहरे समझकर अठखेलियाँ कर रही थीं □

चन्द्र की साइकिल जब अन्दर दिख पड़ी तो सुधा ने उधर देखा लैकिन कुछ भी न कहकर फिर अपनी क्रोशिया बुनने में लग गयी □ चन्द्र सीधा पोर्टिको में गया और अपनी साइकिल रखकर भीतर चला गया डॉ. शुक्ला के पास □ स्टडी-रूम में, बैठक में, सोने के कमरे में कहीं भी डॉ. शुक्ला नजर नहीं आये □ हारकर वह बाहर आया तो देखा मोटर अभी गैरज में है □ तो वे जा कहाँ सकते? और सुधा को तो देखिए! क्या अकड़ी हुई है आज, जैसे चन्द्र को जानती ही नहीं □ चन्द्र सुधा के पास गया □ सुधा का मुँह और भी लटक गया □

“डॉक्टर साहब कहाँ हैं?” चन्द्र ने पूछा □

“हमें क्या मालूम?” सुधा ने क्रोशिया पर से बिना निगाह उठाये जवाब दिया □

“तो किसे मालूम होगा?” चन्द्र ने डॉटो हुए कहा, “हर वक्त का मजाक हमें अच्छा नहीं लगता □ काम की बात का उसी तरह जवाब देना चाहिए □ उनके निबन्ध की लिपि देनी है या नहीं!”

“हाँ-हाँ, देनी है तो मैं क्या करूँ? नहा रहे होंगे □ अभी कोई ये तो है नहीं कि तुम निबन्ध की लिपि लाये हो तो कोई नहाये-धोये न, बस सुबह से बैठा रहे कि अब निबन्ध आ रहा है, अब आ रहा है!” सुधा ने मुँह बनाकर आँखें नचाते हुए कहा □

“तो सीधे क्यों नहीं कहती कि नहा रहे हैं □” चन्द्र ने सुधा के गुरसे पर हँसकर कहा □ चन्द्र की हँसी पर तो सुधा का मिजाज और भी बिगड़ गया और अपनी क्रोशिया उठाकर और किताब बगल में दबाकर, वह उठकर अन्दर चल दी □ उसके उठते ही चन्द्र आराम से उस कुरसी पर बैठ गया और मेज पर टँग फैलाकर बोला-”आज मुझे बहुत गुस्सा चढ़ा है, खबरदार कोई बोलना

मत!”

सुधा जाते-जाते मुड़कर खड़ी हो गयी □

“हमने कह दिया चन्दर एक बार कि हमें ये सब बातें अच्छी नहीं लगतीं □ जब देखो तुम चिढ़ाते रहते हो!” सुधा ने गुस्से से कहा □

“नहीं! चिढ़ाएँगे नहीं तो पूजा करेंगे! तुम अपने मौके पर छोड़ देती हो!” चन्दर ने उसी लापरवाही से कहा □

सुधा गयी नहीं □ वहीं घास पर बैठ गयी और किताब खोलकर पढ़ने लगी □ जब पाँच मिनट तक वह कुछ नहीं बोली तो चन्दर ने सोचा आज बात कुछ गम्भीर है □

“सुधा!” उसने बड़े दुलार से पुकारा □ “सुधा!”

सुधा ने कुछ नहीं कहा मगर दो बड़े-बड़े आँसू टप से नीचे किताब पर गिर गये □

“अेरे क्या बात है सुधा, नहीं बताओगी?”

“कुछ नहीं □”

“बता दो, तुम्हें हमारी कसम है □”

“कल शाम को तुम आये नहीं...” सुधा योनी आवाज में बोली □

“बस इस बात पर इतनी नाराज हो, पागल!”

“हाँ, इस बात पर इतनी नाराज हूँ! तुम आओ वाहे हजार बार न आओ; इस पर हम क्यों नाराज होंगे! बड़े कहीं के आये, नहीं आएँगे तो जैसे हमारा घर-बार नहीं है □ अपने को जाने क्या समझ लिया है!” सुधा ने चिढ़कर जवाब दिया □

“अेरे तो तुम्हीं तो कह रही थी, भाई □” चन्दर ने हँसकर कहा □

“तो बात पूरी भी सुनो □ शाम को गेसू का नौकर आया था □ उसके छोटे भाई हसरत की सालगिरह थी □ सुबह 'कुरानखानी' होने वाली थी और उसकी माँ ने बुलाया था □”

“तो गयी क्यों नहीं?”

“गयी क्यों नहीं! किससे पूछकर जाती? आप तो इस वक्त आ रहे हैं जब सब खत्म हो गया!”

सुधा बोली □

“तो पापा से पूछ के चली जाती!” चन्दर ने समझाकर कहा, “और फिर गेसू के यहाँ तो यों अकसर जाती हो तुम!”

“तो? आज तो डान्स भी करने के लिए कहा था उसने □ फिर बाद में तुम कहते, 'सुधा, तुम्हें ये नहीं करना चाहिए, वो नहीं करना चाहिए □ लड़कियों को ऐसे रहना चाहिए, वैसे रहना चाहिए □' और बैठ के उपदेश पिलाते और नाराज होते □ बिना तुमसे पूछे हम कहीं सिनेमा, पिकनिक, जलसों में गये हैं कभी?” और फिर आँसू टपक पड़े □

“पगली कहीं की! इतनी-सी बात पर योना क्या? किसी के हाथ कुछ उपहार भेज दो और फिर किसी मौके पर चली जाना □”

“हाँ, चली जाना! तुम्हें कहते क्या लगता है! गेसू ने कितना बुरा माना होगा!” सुधा ने बिगड़ते हुए ही कहा □ “इमतहान आ रहा है, फिर कब जाएँगे?”

“कब है इमतहान तुम्हारा?”

“चाहे जब हो! मुझे पढ़ाने के लिए कहा किसी से?”

“अेरे भूत गये! अच्छा, आज देखो कहेंगे!”

“कहेंगे-कहेंगे नहीं, आज दोपहर को आप बुला लाइए, वरना हम सब किताबों में लगाये देते हैं आग्‌ समझे कि नहीं!”

“अच्छा-अच्छा, आज दोपहर को बुला लाएँगे ठीक, अच्छा याद आया बिसरिया से कहूँगा तुम्हें पढ़ाने के लिए उसे रूपये की जरूरत भी है” चन्द्र ने छुटकारे का कोई रास्ता न पाकर कहा।

“आज दोपहर को जरूर से” सुधा ने फिर आँखें नचाकर कहा। “लो, पापा आ गये नहाकर, जाओ!”

चन्द्र उठा और चल दिया। सुधा उठी और अन्दर चली गयी।

डॉ. शुक्ला हॉल्के-साँवले रंग के जरा स्थूलकाय-से थे। बहुत गम्भीर अध्ययन और अध्यापन और उम्र के साथ-साथ ही उनकी नम्रता और भी बढ़ती जा रही थी।

लेकिन वे लोगों से मिलते-जुलते कम थे। व्यक्तिगत दोस्ती उनकी किसी से नहीं थी। लेकिन उत्तर भारत के प्रमुख विद्यालयों घोने के नाते कान्फ्रेंसों में, मौखिक परीक्षाओं में, सरकारी कमेटियों में वे बराबर बुलाये जाते थे और इसमें प्रमुख दिलचस्पी से हिस्सा लेते थे। ऐसी जगहों में चन्द्र अक्सर उनका प्रमुख सहायक रहता था और इसी नाते चन्द्र भी प्रान्त के बड़े-बड़े लोगों से परिचित हो गया था। जब वह एम. ए. पास हुआ था तब से फाइनेंस विभाग में उसे कई बार ऊँचे-ऊँचे पदों का 'ऑफर' आ चुका था लेकिन डॉ. शुक्ला इसके खिलाफ थे। वे चाहते थे कि पहले वह रिसर्च पूरी कर ले। सम्भव हो तो विदेश हो आये, तब चाहे कुछ काम करे। अपने व्यक्तिगत जीवन में डॉ. शुक्ला अन्तर्विरोधों के व्यक्ति थे। पार्टियों में मुसलमानों और ईसाइयों के साथ खाने में उन्हें कोई एतराज नहीं था लेकिन कच्चा खाना वे चौके में आसन पर बैठकर, शैश्वमी धोती पहनकर खाते थे। सरकार को उन्होंने सलाह दी कि साधुओं और संन्यासियों को जबरदस्ती काम में लगाया जाए और मनिदरों की जायदादें जबत कर ली जाएँ, लेकिन सुबह घंटे-भर तक पूजा जरूर करते थे। पूजा-पाठ, खान-पान, जात-पाँत के पक्के हामी, लेकिन व्यक्तिगत जीवन में कभी यह नहीं जाना कि उनका कौन शिष्य ब्राह्मण है, कौन बनिया, कौन खत्री, कौन कायस्थ!

नहाकर वे आ रहे थे और दुर्गासप्तशती का कोई ज्लोक गुनगुना रहे थे। कपूर को देखा तो रुक गये और बोले, “हैलो, हो गया वह टाइप!”

“जी हाँ।”

“कहाँ कराया टाइप?”

“मिस डिक्रूज के याँ॥”

“अच्छा! वह लड़की अच्छी है। अब तो बहुत बड़ी हुई होगी? अभी शादी नहीं हुई? मैंने तो सोचा वह मिले या न मिले!”

“नहीं, वह यहीं है। शादी हुई। फिर तलाक हो गया।”

“अे! तो अकेले रहती है?”

“नहीं, अपने भाई के साथ है, बट्टी के साथ!”

“अच्छा! और बट्टी की पत्नी अच्छी तरह है?”

“वह मर गयी।”

“राम-राम, तब तो घर ही बदल गया होगा।”

“पापा, पूजा के लिए सब बिछा दिया है” सहसा सुधा बोली □

“अच्छा बेटी, अच्छा चन्द्र, मैं पूजा कर आऊँ जल्दी से □ तुम चाय पी चुके?”

“जी हाँ”

“अच्छा तो मेरी मेज पर एक चार्ट है, जरा इसको ठीक तो कर दो तब तक □ मैं अभी आया □”

चन्द्र स्टडी-रूम में गया और मेज पर बैठ गया □ कोट उतारकर उसने खूँटी पर टाँग दिया और नवशा देखने लगा □ पास में एक छोटी-सी चीनी की प्याली में चाइना इंक रखी थी और मेज पर पानी □ उसने दो बूँद पानी डालकर चाइना इंक घिसनी शुरू की, इतने में सुधा कमरे में दाखिल, “ऐ सुनो!” उसने चारों ओर देखकर बड़े संशयित सर्वों में कहा और फिर झुककर चन्द्र के कान के पास मुँह लगाकर कहा, “चावल की नानखटाई खाओगे?”

“ये क्या बता है?” चन्द्र ने इंक घिसते-घिसते पूछा □

“बड़ी अच्छी चीज होती है; पापा को बहुत अच्छी लगती है □ आज हमने शुब्ह अपने हाथ से बनायी थी □ ऐं, खाओगे?” सुधा ने बड़े दुलार से पूछा □

“ते आओ □” चन्द्र ने कहा □

“ते आये हम, लो!” और सुधा ने अपने आँचल में लिपटी हुई दो नानखटाई निकालकर मेज पर रख दी □

“अे तश्तरी में क्यों नहीं लायी? सब धोती में धी लग गया □ इतनी बड़ी हो गयी, शजर नहीं जरा-सा □” चन्द्र ने बिंगड़कर कहा □

“छिपा करके लाये हैं, फिर ये सकरी होती हैं कि नहीं? चौके के बाहर कैसे लाते! तुम्हारे लिये तो लाये हैं और तुम्हीं बिंगड़ रहे हो □ अन्धे को नोन दो, अन्धा कहे मेरी आँखें फोड़ीं □” सुधा ने मुँह बनाकर कहा, “खाना है कि नहीं?”

“हाथ में तो हमारे स्याही लगी है □” चन्द्र बोला □

“हम अपने हाथ से नहीं खिलाएँगे, हमारा हाथ जूँठा हो जाएगा और राम राम! पता नहीं तुम ऐसराँ में मुसलमान के हाथ का खाते होगे □ थू-थू!”

चन्द्र हँस पड़ा सुधा की इस बात पर और उसने पानी में हाथ डुबोकर बिना पूछे सुधा के आँचल में हाथ पोंछ दिये स्याही के और बेतकल्तुफी से नानखटाई उठाकर खाने लगा □

“बस, अब धोती का किनारा रंग दिया और यही पठनना है हमें दिनभर □” सुधा ने बिंगड़कर कहा □

“युद्ध नानखटाई छिपाकर लायी और धी लग गया तो कुछ नहीं और हमने स्याही पोंछ दी तो मुँह बिंगड़ गया □” चन्द्र ने मैपिंग पेन में इंक लगाते हुए कहा □

“हाँ, अभी पापा देखें तो और बिंगड़े कि धोती में धी, स्याही सब लगाये रहती है □ तुम्हें क्या?” और उसने स्याही लगा हुआ छोर कसकर कमर में खोंस लिया □

“छिः, वही धी में तर छोर कमर में खोंस लिया □ गन्दी कहीं की!” चन्द्र ने चार्ट की लाइनें ठीक करते हुए कहा □

“गन्दी हैं तो, तुमसे मतलब!” और मुँह चिढ़ाते हुए सुधा कमरे से बाहर चली गयी □

चन्द्र चुपचाप बैठा चार्ट दुरुस्त करता रहा □ उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिला-बलिया, आजमगढ़, बस्ती, बनारस आदि में बच्चों की मृत्यु-संख्या का ग्राफ बनाना था और एक ओर उनके नवशे पर बिन्दुओं की एक सघनता से मृत्यु-संख्या का निर्देश करना था □ चन्द्र की एक आदत थी

वह काम में लगता था तो भूत की तरह लगता था □ फिर उसे दीन-दुनिया, किसी की खबर नहीं रहती थी □ खाना-पीना, तन-बदन, किसी का होश नहीं रहता था □ इसका एक कारण था □ चन्द्र उन लड़कों में से था जिनकी जिंदगी बाहर से बहुत हल्की-फुल्की होते हुए भी अन्दर से बहुत गम्भीर और अर्थमयी होती है, जिनके सामने एक रूपाणि उद्देश्य, एक लक्ष्य होता है □ बाहर से चाहे जैसे होने पर भी अपने आन्तरिक सत्य के प्रति घोर ईमानदारी यह इन लोगों की विशेषता होती है और सारी दुनिया के प्रति अगम्भीर और उच्छृंखल होने पर भी जो चीजें इनकी लक्ष्यपरिधि में आ जाती हैं, उनके प्रति उनकी गम्भीरता, साधना और पूजा बन जाती है □ इसलिए बाहर से इतना व्यक्तिवादी और सारी दुनिया के प्रति निरपेक्ष और लापरवाह दिया पड़ने पर भी वह अन्तरतम से समाज और युग और अपने आसपास के जीवन और व्यक्तियों के प्रति अपने को बेहृ उत्तरदायी अनुभव करता था □ वह देशभक्त भी था और शायद समाजवादी भी, पर अपने तरीके से □ वह खदर नहीं पहनता था, कांग्रेस का सदस्य नहीं था, जेल नहीं गया था, फिर भी वह अपने देश को प्यार करता था □ बेहृ प्यार □ उसकी देशभक्ति, उसका समाजवाद, सभी उसके आध्ययन और खोज में समा गया था □ वह यह जानता था कि समाज के सभी रूमओं का स्थान अपना अलग होता है □ अगर सभी मनिदर के कंबूरे का फूल बनने की कोशिश करने लगें तो नींव की ईट और सीढ़ी का पत्थर कौन बनेगा? और वह जानता था कि अर्थशास्त्र वह पत्थर है जिस पर समाज के सारे भवन का बोझ है □ और उसने निश्चय किया था कि अपने देश, अपने युग के आर्थिक पहलू को वह खूब अच्छी तरह से अपने ढंग से विश्लेषण करके देखेगा और उसे आशा थी कि वह एक दिन ऐसा समाधान खोज निकालेगा कि मानव की बहुत-सी समस्याएँ हल हो जाएँगी और आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र में अगर आदमी खूँखार जानवर बन गया है तो एक दिन दुनिया उसकी एक आवाज पर देवता बन सकेगी □ इसलिए जब वह बैठकर कानपुर की मिलों के मजदूरों के वेतन का चार्ट बनाता था, या उपयुक्त साधनों के अभाव में मर जाने वाली गरीब औरतों और बच्चों का लेखा-जोखा करता था तो उसके सामने अपना कैरियर, अपनी प्रतिष्ठा, अपनी डिग्री का सपना नहीं होता था □ उसके मन में उस वक्त वैसा सन्तोष होता था जो किसी पुजारी के मन में होता है, जब वह अपने देवता की अर्चना के लिए धूप, दीप, नैवेद्य सजाता है □ बल्कि चन्द्र थोड़ा भावुक था, एक बार तो जब चन्द्र ने अपने रिसर्व के सिलसिले में यह पढ़ा कि अँगरेजों ने अपनी पूँजी लगाने और अपना व्यापार फैलाने के लिए किस तरह मुर्शिदाबाद से लेकर योहतक तक हिन्दुस्तान के गरीब से गरीब और अमीर से अमीर बाशिन्दे को अमानुषिकता से लूटा, तब वह फूट-फूटकर ये पढ़ा था लेकिन इसके बावजूद उसने राजनीति में कभी डूबकर छिस्सा नहीं लिया क्योंकि उसने देखा कि उसके जो भी मित्र राजनीति में गये, वे थोड़े दिन बाद बहुत प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा पा गये मगर आदमीयत खो बैठे □

अपने अर्थशास्त्र के बावजूद वह यह समझता था कि आदमी की जिंदगी सिर्फ आर्थिक पहलू तक सीमित नहीं और वह यह भी समझता था कि जीवन को सुधारने के लिए सिर्फ आर्थिक ढाँचा बदल देने-भर की जरूरत नहीं है □ उसके लिए आदमी का सुधार करना होगा, व्यक्ति का सुधार करना होगा □ वरना एक भरे-पूरे और वैभवशाली समाज में भी आज के-से अखरस्थ और पाश्विक वृत्तियों वाले व्यक्ति रहेंगे तो दुनिया ऐसी ही लगेगी जैसे एक खूबसूरत सजा-सजाया महल जिसमें कीड़े और राक्षस रहते हों □

वह यह भी समझता था कि वह जिस तरह की दुनिया का सपना देखता, वह दुनिया आज किसी

भी एक राजनीतिक क्रान्ति या किसी भी विशेष पार्टी की सहायता मात्र से नहीं बन सकती है। उसके लिए आदमी को अपने को बदलना होगा, किसी समाज को बदलने से काम नहीं चलेगा। इसलिए वह अपने व्यक्ति के संसार में निरन्तर लगा रहता था और समाज के आर्थिक पहलू को समझने की कोशिश करता रहता था। यही कारण है कि अपने जीवन में आनेवाले व्यक्तियों के प्रति वह बेहद ईमानदार रहता था और अपने अध्ययन और काम के प्रति वह सर्वेत और जागरूक रहता था और वह अच्छी तरह समझता था कि इस तरह वह दुनिया को उस ओर बढ़ाने में थोड़ी-सी मदद कर रहा है। यूँकि अपने में भी वह सत्य की वही चिनगारी पाता था इसलिए कवि या दार्शनिक न होते हुए भी वह इतना भावुक, इतना टढ़-चरित्र, इतना सशक्त और इतना गम्भीर था और काम तो अपना वह इस तरह करता था जैसे वह किसी की एकाब्र उपासना कर रहा हो। इसलिए जब वह चार्ट के नक्शे पर कलम चला रहा था तो उसे मालूम नहीं हुआ कि कितनी देर से डॉ. शुक्ला आकर उसके पीछे खड़े हो गये।

“वाह, नक्शे पर तो तुम्हारा हाथ बहुत अच्छा चलता है। बहुत अच्छा! अब उसे रहने दो। लाओ, देखें, तुम्हारा काम कैसा चल रहा है। आज तो इतवार है न?”

डॉ. शुक्ला पास की कुरसी पर बैठकर बोले, “चन्द्र! आजकल मैं एक किताब लिखने की सोच रहा हूँ। मैंने सोचा कि भारतवर्ष की जाति-व्यवस्था का नये वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन और विश्लेषण किया जाए। तुम इसके बारे में क्या सोचते हो?”

“व्यर्थ है! जो व्यवस्था आज नहीं तो कल चूर्चूर होने जा रही है, उसके बारे में तूमार बाँधना और समय बरबाद करना बेकार है।” चन्द्र ने बहुत आत्मविश्वास से कहा।

“यही तो तुम लोगों में खराबी है। कुछ थोड़ी-सी खराबियाँ जाति-व्यवस्था की देख लीं और उसके खिलाफ हो जायें। एक रिसर्च स्कॉलर का एसिकोर ही दूसरा होना चाहिए। फिर हमारे भारत की प्राचीन सांस्कृतिक परम्पराओं को तो बहुत ही सावधानी से समझने की आवश्यकता है। यह समझ लो कि मानव जाति दुर्बल नहीं है। अपने विकास-क्रम में वह उन्हीं संस्थाओं, शीति-रिवाजों और परम्पराओं को रहने देती है जो उसके अस्तित्व के लिए बहुत आवश्यक होती है। अगर वे आवश्यक न हुईं तो मानव उससे छुटकारा माँग लेता है। यह जाति-व्यवस्था जाने कितने सालों से हिन्दुस्तान में कायम है, क्या यही इस बात का प्रमाण नहीं कि यह बहुत सशक्त है, अपने में बहुत जरूरी है?”

“अरे हिन्दुस्तान की भली चलायी।” चन्द्र बोला, “हिन्दुस्तान में तो गुलामी कितने दिनों से कायम है तो क्या वह भी जरूरी है?”

“बिल्कुल जरूरी है।” डॉ. शुक्ला बोले, “मुझे भी हिन्दुस्तान पर गर्व है। मैंने कभी कांग्रेस का काम किया, लेकिन मैं इसे नतीजे पर पहुँचा हूँ कि जरा-सी आजानी अगर मिलती है हिन्दुस्तानियों को, तो वे उसका भरपूर दुरुपयोग करने से बाज नहीं आते और कभी भी ये लोग अच्छे शासक नहीं निकलेंगे।”

“अरे नहीं! ऐसी बात नहीं। हिन्दुस्तानियों को ऐसा बना दिया है अँगरेजों ने। वरना हिन्दुस्तान ने ही तो चन्द्रगुप्त और अशोक पैदा किये थे और यही जाति-व्यवस्था की बात तो मुझे तो स्पष्ट दिख रही है कि जाति-व्यवस्था टूट रही है।” कपूर बोला, “रोटी-बेटी की कैद थी। रोटी की कैद तो करीब-करीब टूट गयी, अब बेटी की कैद भी... ब्याह-शादियाँ भी दो-एक पीढ़ी के बाद स्वच्छन्दता से होने लगेंगी।”

“अगर ऐसा होगा तो बहुत गलत होगा। इससे जातिगत पतन होता है। व्याह-शादी को कम-से-कम में भावना की टच्ट से नहीं देखता। यह एक सामाजिक तथ्य है और उसी टच्टिकोण से हमें देखना चाहिए। शादी में सबसे बड़ी बात होती है सांस्कृतिक समानता। और जब अलग-अलग जाति में अलग-अलग शीति-रिवाज हैं तो एक जाति की लड़की दूसरी जाति में जाकर कभी भी अपने को ठीक से सन्तुलित नहीं कर सकती। और फिर एक बनिया की व्यापारिक प्रवृत्तियों की लड़की और एक ब्राह्मण का अध्ययन वृत्ति का लड़का, इनकी सन्तान न इधर विकास कर सकती है ज उधर। यह तो सामाजिक व्यवस्था को व्यर्थ के लिए असन्तुलित करना हुआ।”

“हाँ, लेकिन विवाह को आप केवल समाज के टच्टिकोण से क्यों देखते हैं? व्यक्ति के टच्टिकोण से भी देखिए। अगर दो विभिन्न जाति के लड़के-लड़की अपना मानसिक सन्तुलन ज्यादा अच्छा कर सकते हैं तो क्यों न विवाह की इजाजत दी जाए!”

“ओह, एक व्यक्ति के सुझाव के लिए हम समाज को क्यों नुकसान पहुँचाएँ! और इसका क्या निश्चय कि विवाह के समय यदि दोनों में मानसिक सन्तुलन है तो विवाह के बाद भी रहेगा ही। मानसिक सन्तुलन और प्रेम जितना अपने मन पर आधारित होता है उतना ही बाहरी परिस्थितियों पर। क्या जाने व्याह के वक्त की परिस्थिति का दोनों के मन पर कितना प्रभाव है और उसके बाद सन्तुलन रह पाता है या नहीं? और मैंने तो लव-मैरिजेज (प्रेम-विवाह) को असफल ही होते देखा है। बोलो है या नहीं?” डॉ. शुक्ला ने कहा।

“हाँ, प्रेम-विवाह अक्सर असफल होते हैं, लेकिन सम्भव है वह प्रेम न होता हो। जहाँ सच्चा प्रेम होगा वहाँ कभी असफल विवाह नहीं होंगे।” चन्द्र ने बहुत साहस करके कहा।

“ओह! ये सब साहित्य की बातें हैं। समाजशास्त्र की टच्ट से या वैज्ञानिक टच्ट से देखो! अच्छा खैर, अभी मैंने उसकी रूप-ऐखा बनायी है। लिखूँगा तो तुम सुनते चलना। लाओ, वह निबन्ध कहाँ है!” डॉ. शुक्ला बोले।

चन्द्र ने उन्हें टाइप की हुई प्रतिलिपि दे दी। उलट-पुलटकर डॉ. शुक्ला ने देखा और कहा, “ठीक है। अच्छा चन्द्र, अपना काम इधर ठीक-ठीक कर लो, अगले इतवार को लखनऊ कॉन्फ्रेंस में चलना है।”

“अच्छा! कार पर चलेंगे या ट्रेन से?”

“ट्रेन से। अच्छा।” घड़ी देखते हुए उन्होंने कहा, “अब जरा मैं काम से चल रहा हूँ। तुम यह चार्ट बना डालो और एक निबन्ध लिख डालना - 'पूर्वी जिलों में शिशु मृत्यु।' ग्रान्त के खास्त विभाग ने एक पुरस्कार घोषित किया है।”

डॉ. शुक्ला चले गये। चन्द्र ने फिर चार्ट में हाथ लगाया।

6

चन्द्र के जाने के जरा ही देर बाद पापा आये और खाने बैठे। सुधा ने रसोई की ऐशमी धोती पहनी और पापा को पंखा झलने बैठ गयी। सुधा अपने पापा की सिरचढ़ी दुलारी बेटियों में से थी और इतनी बड़ी हो जाने पर भी वह दुलार दिखाने से बाज नहीं आती थी। फिर आज तो उसने पापा की प्रिया नानखटाई अपने हाथ से बनायी थी। आज तो दुलार दिखाने का उसका हक था और भली-बुरी हर तरह की जिद को मान लेना करना, यह पापा की मजबूरी थी। मुश्किल से डॉ. साहब ने अभी दो कौर खाये होंगे कि सुधा ने कहा, “नानखटाई खाओ, पापा!” डॉ. शुक्ला ने एक नानखटाई तोड़कर खाते हुए कहा, “बहुत अच्छी है!” खाते-खाते उन्होंने पूछा, “सोमवार को कौन दिन है, सुधा?”

“सोमवार को कौन दिन है? सोमवार को 'मण्डे' है।” सुधा ने हँसकर कहा। डॉ. शुक्ला भी अपनी भूल पर हँस पड़े। “अरे देख तो मैं कितना भुलवक़ड़ हो गया हूँ। मेरा मतलब था कि सोमवार को कौन तारीख है?”

“11 तारीख।” सुधा बोली, “क्यों?”

“कुछ नहीं, 10 को कॉन्फ्रेन्स है और 14 को तुम्हारी बुआ आ रही है।”

“बुआ आ रही हैं, और बिनती भी आएगी?”

“हाँ, उसी को तो पहुँचाने आ रही है। विदुषी का केन्द्र यहीं तो है।”

“आहा! अब तो बिनती तीन महीने यहीं रहेगी, पापा अब बिनती को यहीं बुला लो। मैं बहुत अफेली रहती हूँ।”

“हाँ, अब तो जून तक यहीं रहेगी। फिर जुलाई में उसकी शादी होगी।” डॉ. शुक्ला ने कहा।

“अरे, अभी से? अभी उसकी उम्र ही क्या है?” सुधा बोली।

“क्यों, तैरे बराबर है। अब तैरे लिए भी तेरी बुआ ने लिखा है।”

“नहीं पापा, हम ब्याह नहीं करेंगे।” सुधा ने मचलकर कहा।

“तब?”

“बस हम पढ़ेंगे। एफ.ए. कर लेंगे, फिर बी.ए., फिर एम.ए., फिर रिसर्च, फिर बराबर पढ़ते जाएँगे, फिर एक ठिन हम भी तुम्हारे बराबर हो जाएँगे। क्यों, पापा?”

“पागल नहीं तो, बातें तो सुनो इसकी! ला, दो नानखटाई और दे।” शुक्ला हँसकर बोले।

“नहीं, पहले तो कबूल दो तब हम नानखटाई देंगे। बताओ ब्याह तो नहीं करेंगे।” सुधा ने दो नानखटाईयाँ हाथ में उठाकर कहा।

“ला, रख।”

“नहीं, पहले बता दो।”

“अच्छा-अच्छा, नहीं करेंगे।”

सुधा ने दोनों नानखटाइयाँ रखकर पंखा डालना शुरू किया □ इतने में फिर नानखटाइयाँ खाते हुए डॉ. शुक्ला बोले, “तेरी सास तुझे देखने आएगी तो यही नानखटाइयाँ तुमसे बनवा कर खिलाएँगे □”

“फिर वही बात!” सुधा ने पंखा पटककर कहा, “अभी तुम वादा कर चुके हो कि ब्याह नहीं करेंगे □”

“हाँ-हाँ, ब्याह नहीं करूँगा, यह तो कह दिया मैंने □ लेकिन तेरा ब्याह नहीं करूँगा, यह मैंने कब कहा?”

“हाँ आँ, ये तो फिर झूठ बोल गये तुम...” सुधा बोली □

“अच्छा, ए! चलो ओहर □” महराजिन ने डॉटकर कहा, “एती बड़ी बिटिया हो गयी, मारे दुलारे के बररानी जात है □” महराजिन पुरानी थी और सुधा को डॉटने का पूरा हक था उसे, और सुधा भी उसका बहुत लिहाज करती थी □ वह उठी और चुपचाप जाकर अपने कमरे में लेट गयी □ बारह बज रहे थे □

वह लेटी-लेटी कल रात की बात सोचने लगी □ वलास में क्या मजा आया था कल; गेसू कितनी अच्छी लड़की है! इस वक्त गेसू के यहाँ खाना-पीना हो रहा होगा और फिर सब लोग मिलकर गाएँगे □ कौन जाने शायद दोपहर को कब्बाली भी हो □ इन लोगों के यहाँ कब्बाली इतनी अच्छी होती है □ सुधा सुन नहीं पाएगी और गेसू ने भी कितना बुरा माना होगा □ और यह सब चन्द्र की वजह से □ चन्द्र हमेशा उसके आने-जाने, उठने-बैठने में कतर-ब्योंत करता रहता है □ एक बार वह अपने मन से लड़कियों के साथ पिकनिक में चली गयी □ वहीं चन्द्र के बहुत-से दोस्त भी थे □ एक दोस्त ने जाकर चन्द्र से जाने क्या कह दिया कि चन्द्र उस पर बहुत बिगड़ा □ और सुधा कितनी रोयी थी उस दिन □ यह चन्द्र बहुत खराब है □ सब पूछो तो अगर कभी-कभी वह सुधा का कहना मान लेता है तो उससे दुगुना सुधा पर रोब जमाता है और सुधा को रुला-रुलाकर मार डालता है □ और खुद अपने-आप दुनियाभर में घूमेंगे □ अपना काम होगा तो 'चलो सुधा, अभी करो, फौरन □' और सुधा का काम होगा तो-'अरे भाई, क्या करें, भूल गये □' अब आज ही देखो, सुबह आठ बजे आये और अब देखो दो बजे भी जनाब आते हैं या नहीं? और कह गये हैं दो बजे तक के लिए तो दो बजे तक सुधा को चैन नहीं पड़ेगी □ न नींद आएगी, न किसी काम में तबीयत लगेगी □ लेकिन अब ऐसे काम कैसे चलेगा □ इम्तहान को कितने थोड़े दिन रह गये हैं □ और सुधा की तबीयत सिवा पोयट्री (कविता) के और कुछ पढ़ने में लगती ही नहीं □ कब से वह चन्द्र से कह रही है थोड़ा-सा इकनामिक्स पढ़ा दो, लेकिन ऐसा स्वार्थी है कि बस चाय पी ली, नानखटाई खा ली, रुला लिया और फिर अपने मस्त साइकिल पर घूम रहे हैं □

यही सब सोचते-सोचते सुधा को नींद आ गयी □

और तीन बजे जब गेसू आयी तो भी सुधा सो रही थी □ पलंग के नीचे डी.एम.सी. का गोला खुला हुआ था और तकिये के पास क्रोशिया पड़ी थी □ सुधा भी बड़ी प्यारी □ बड़ी खूबसूरत □ और खासतौर से उसकी पलकें तो अपराजिता के फूलों को मात करती थीं □ और थी इतनी गोशी गुदकारी कि कहीं पर दबा दो तो फूल खिल जाए □ मूँगिया होंठों पर जाने कैसा अछूता गुलाब मुस्कराता था और बाँहें तो जैसे बेले की पाँखुरियों की बनी हों □ गेसू आयी □ उसके हाथ में मिठाई थी जो उसकी माँ ने सुधा के लिए भेजी थी □ वह पल-भर खड़ी रही और फिर उसने मेज

पर मिठाई रख दी और क्रोशिया से सुधा की गर्दन गुदगुदाने लगी ॥ सुधा ने करवट बदल ली ॥ गेसू ने नीचे पड़ा हुआ डोरा उठाया और आहिस्ते से उसका चुटीला डौरे के एक छोर से बाँधकर दूसरा छोर मेज के पाये से बाँध दिया ॥ और उसके बाट बोली, “सुधा, सुधा उठो ॥”

सुधा चौंककर उठ गयी और आँखें मलते-मलते बोली, “अब दो बजे हैं? लाये उन्हें या नहीं?”

“ओहो! उन्हें लाये या नहीं किसे बुलाया था यानी, दो बजे; जरा हमें भी तो मालूम हो?” गेसू ने बाँह में चुटकी काटते हुए पूछा ॥

“उफफोह!” सुधा बाँह झटककर बोली, “मार डाला! बेदर्द कहीं की! ये सब अपने उन्हीं अल्लर मियाँ को दिखाया कर!” और ज्यों ही सुधा ने सिर ढंकने के लिए पल्ला उठाया तो देखा कि चोटी डोर में बँधी हुई है ॥ इसके पहले कि सुधा कुछ कहे, गेसू बोली, “या सनम! जरा पढ़ाई तो देखो, मैंने तो सुना था कि नींद न आये इसातिए लड़के अपनी चोटी खूँटी में बाँध लेते हैं पर यह नहीं मालूम था कि लड़कियाँ भी अब वही करने लगी हैं ॥”

सुधा ने चोटी से डोर खोलते हुए कहा, “मैं ही सताने को रह गयी हूँ ॥ अल्लर मियाँ की चोटी बाँधकर नचाना उन्हें ॥ अभी से बेताब क्यों हुई जाती है?”

“अरे यानी, उनके चोटी कहाँ? मियाँ हैं मियाँ?”

“चोटी न सही, दाढ़ी सही ॥”

“दाढ़ी, खुदा खैर करे, मगर वो दाढ़ी रख लें तो मैं उनसे मोहब्बत तोड़ लूँ ॥”

सुधा हँसने लगी ॥

“तो, अम्मी ने तौरे लिए मिठाई भेजी है ॥ तू आयी क्यों नहीं?”

“क्या बताऊँ?”

“बताऊँ-वताऊँ कुछ नहीं ॥ अब कब आएगी तू?”

“गेसू, सुनो, इसी मंगल, नहीं-नहीं बृहस्पति को बुआ आ रही है ॥ वो चली जाएँगी तब आऊँगी मैं ॥”

“अच्छा, अब मैं चलूँ ॥ अभी कामिनी और प्रभा के यहाँ मिठाई पहुँचानी है ॥”

गेसू मुड़ते हुए बोली ॥

“अरे बैठो भी ॥” सुधा ने गेसू की ओढ़नी पकड़कर उसे खींचकर बिठलाते हुए कहा, “अभी आये हो, बैठे हो, दामन शैंभाला है ॥”

“आहा ॥ अब तो तू भी उर्दू शायरी कहने लगी ॥” गेसू ने बैठते हुए कहा ॥

“तेरा ही मर्ज लग गया ॥” सुधा ने हँसकर कहा ॥

“देख कहीं और भी मर्ज न लग जाए, वरना फिर तौरे लिए भी इन्तजाम करना होगा!” गेसू ने पतंग पर लेटते हुए कहा ॥

“अरे ये वो गुड़ नहीं कि चीटे खाएँ ॥”

“देख्यूँगी, और देख्यूँगी क्या, देख रही हूँ ॥ इधर पिछले दो साल से कितनी बदल गयी है तू ॥ पहले कितना हँसती-बोलती थी, कितनी लड़ती-झगड़ती थी और अब कितना हँसने-बोलने पर भी गुमसुम हो गयी है तू ॥ और वैसे हमेशा हँसती रहे चाहे लेकिन जाने किस ख्याल में डूबी रहती है हमेशा ॥” गेसू ने सुधा की ओर देखते हुए कहा ॥

“धत् पगली कहीं की ॥” सुधा ने गेसू के एक हल्की-सी चपत मारकर कहा, “यह सब तौरे अपने ख्याली-पुलाव हैं ॥ मैं किसी के ध्यान में डूबूँगी, ये हमारे गुरु ने नहीं सिखाया ॥”

“गुरु तो किसी के नहीं सिखाते सुधा यानी, बिल्कुल सच-सच, क्या कभी तुम्हारे मन में किसी के लिए मोहब्बत नहीं जानी?” गेसू ने बहुत गम्भीरता से पूछा □

“देख गेसू, तुझसे मैंने आज तक तो कभी कुछ नहीं छिपाया, न शायद कभी छिपाऊँगी □ अगर कभी कोई बात होती तो तुझसे छिपी न रहती और यह मुहब्बत का, तो सच पूछ तो मैंने जो कुछ कहानियों में पढ़ा है कि किसी को देखकर मैं रोने लगूँ गाने लगूँ पागल हो जाऊँ यह सब कभी मुझे नहीं हुआ □ और यहीं कविताएँ तो उनमें की बातें मुझे बहुत अच्छी लगती हैं □ कीट्स की कविताएँ पढ़कर ऐसा लगा है अवसर कि मेरी नसों का कतरा-कतरा आँसू बनकर छलकने वाला है □ लेकिन वह महज कविता का असर होता है □”

“महज कविता का असर,” गेसू ने पूछा, “कभी किसी खास आदमी के लिए तौरे मन में हँसी या आँसू नहीं उमड़ते! कभी अपने मन को जाँचकर तो देख, कहीं तेरी नाजुक-खयाली के परदे में किसी एक की सूरत तो नहीं छिपी है □”

“नहीं गेसू बानो, नहीं, इसमें मन को जाँचने की क्या बात है □ ऐसी बात होती और मन किसी के लिए झुकता तो क्या खुद मुझे नहीं मालूम होता?” सुधा बोली, “लेकिन तुम ऐसा क्यों सोचती हो?”

“बात यह है, सुधी!” गेसू ने सुधा को अपनी गोद में रखींचते हुए कहा, “देखो, तुम मुझसे इलम में ऊँची हो, तुमने अँग्रेजी शायरी छान डाली है लेकिन जिंदगी से जितना मुझे साबिका पड़ चुका है, अभी तुम्हें नहीं पड़ा □ अवसर कब, कहाँ और कैसे मन अपने को हार बैठता है, यह खुद हमें पता नहीं लगता □ मालूम तब होता है जब जिसके कदम पर हमने सिर रखा है, वह झाटके से अपने कदम घसीट ले □ उस वक्त हमारी नींद टूट जाती है और तब हम जाकर देखते हैं कि अरे हमारा सिर तो किसी के कदमों पर रखा हुआ था और उनके सहारे आराम से सोते हुए हम सपना देख रहे थे कि हमारा सिर कहीं झुका ही नहीं □ और मुझे जाने तेरी आँखों में इधर क्या दीख रहा है कि मैं बेवैन हो उठी हूँ □ तूने कभी कुछ नहीं कहा, लेकिन मैंने देखा कि नाजुक अशार तौरे दिल को उस जगह छू लेते हैं जिस जगह उसी को छू सकते हैं जो अपना दिल किसी के कदमों पर चढ़ा चुका हो □ और मैं यह नहीं कहती कि तूने मुझसे छिपाया है □ कौन जानता है तौरे दिल ने खुद तुझसे यह राज छिपा रखा हो □” और सुधा के गाल थपथपाते हुए गेसू बोली, “लेकिन मेरी एक बात मानेगी तू? तू कभी इस दर्द को मोल न लेना, बहुत तकलीफ होती है □”

सुधा हँसने लगी, “तकलीफ की क्या बात? तू तो है ही □ तुझसे पूछ लूँगी उसका इलाज □”

“मुझसे पूछकर क्या कर लेनी-

दर्दे दिल क्या बाँटने की चीज है?

बाँट लें अपने पराये दर्दे दिल?

नहीं, तू बड़ी सुकृतांग है □ तू इन तकलीफों के लिए बनी नहीं मेरी चम्पा!” और गेसू ने उसका सिर अपनी छाती में छिपा लिया □

टज से घड़ी ने साढ़े तीन बजाये □

सुधा ने अपना सिर उठाया और घड़ी की ओर देखकर कहा-

“ओण्फोह, साढ़े तीन बजे गये और अभी तक गायब!”

“किसके इन्तजार में बेताब है तू?” गेसू ने उठकर पूछा □

“बस दर्दे दिल, मुहब्बत, इन्तजार, बेताबी, तौरे दिमाग में तो यहीं सब भरा रहता है आज कल,

वहाँ तू सबको समझती हैं□ इन्तजार-विन्तजार नहीं, चन्द्र अभी मास्टर लेकर आएँगे□ अब इमतहान कितना नजदीक हैं□”

“हाँ, ये तो सच हैं और अभी तक मुझसे पूछ, क्या पढ़ाई हुई हैं□ असल बात तो यह है कि कॉलेज में पढ़ाई हो तो घर में पढ़ने में मन लगे और याजा कॉलेज में पढ़ाई नहीं होती□ इससे अच्छा सीधे यूनिवर्सिटी में बी.ए. करते तो अच्छा था□ मेरी तो अम्मी ने कहा कि वहाँ लड़के पढ़ते हैं, वहाँ नहीं भेज़नी, लेकिन तू क्यों नहीं गयी, सुधा?”

“मुझे भी चन्द्र ने मना कर दिया था□” सुधा बोली□

सहसा गेसू ने एक क्षण को सुधा की ओर देखा और कहा, “सुधी, तुझसे एक बात पूछँ!”

“हाँ!”

“अच्छा जाने दे!”

“पूछो न!”

“नहीं, पूछना क्या, खुद जाहिर हैं□”

“क्या?”

“कुछ नहीं□”

“पूछो न!”

“अच्छा, फिर कभी पूछ लेंगे! अब देर हो रही हैं□ आधा घंटा हो गया□ कौचवान बाहर खड़ा हैं□”

सुधा गेसू को पहुँचाने बाहर तक आयी□

“कभी हसरत को लेकर आओ□” सुधा बोली□

“अब पहले तुम आओ□” गेसू ने चलते-चलते कहा□

“हाँ, हम तो बिनती को लेकर आएँगे□ और हसरत से कह देना तभी उसके लिए तोहफा लाएँगे!”

“अच्छा, सलाम...”

और गेसू की गाड़ी मुश्किल से फाटक के बाहर गयी होगी कि साइकिल पर चन्द्र आते हुए दीख पड़ा□ सुधा ने बहुत गौर से देखा कि उसके साथ कौन है, मगर वह अकेला था□

सुधा सचमुच झल्ला गयी□ आखिर लापरवाही की हृद होती है□ चन्द्र को दुनिया भर के काम याद रहते हैं, एक सुधा से जाने क्या खार खाये बैठा है कि सुधा का काम कभी नहीं करेगा□ इस बात पर सुधा कभी-कभी दुःखी हो जाती है और घर में किससे वह कहे काम के लिए□ खुद कभी बाजार नहीं जाती□ नतीजा यह होता है कि वह छोटी-से-छोटी चीज के लिए मोहताज होकर बैठ जाती है□ और काम नौकरी से करवा भी ले, पर अब मास्टर तो नौकर से नहीं ढुँढ़वाया जा सकता? ऊन तो नौकर नहीं पसन्द कर सकता? किताबें तो नौकर नहीं ला सकता? और चन्द्र का यह हाल है□ इसी बात पर कभी-कभी उसे रुलाई आ जाती है□

चन्द्र ने आकर बरामदे में साइकिल रखी और सुधा का चेहरा देखते ही वह समझ गया□ “काहे मुँह बना रखा है, पाँच बजे मास्टर साढ़ब आएँगे तुम्हारे□ अभी उन्हीं के यहाँ से आ रहे हैं□ बिसरिया को जानती हो, वही आएँगे□” और उसके बाद चन्द्र सीधा स्टडी-रूम में पहुँच गया□ वहाँ जाकर देखा तो आराम-कुर्सी पर बैठे-ही-बैठे डॉ. शुकला सो रहे हैं, अतः उसने अपना चार्ट और पेन उठाया और ड्राइंगरूम में आकर चुपचाप काम करने लगा□

बड़ा गम्भीर था वह□ जब इंक घोलने के लिए उसने सुधा से पानी नहीं माँगा और खुद गिलास लाकर आँगन में पानी लेने लगा, तब सुधा समझ गयी कि आज दिमाग कुछ बिगड़ा है□ वह एकदम तड़प उठी□ क्या करे वह! वैसे चाहे वह चन्द्र से कितना ही ढींठ क्यों न हो पर चन्द्र गुरुसा रहता था तब सुधा की रुठ काँप उठती थी□ उसकी हिम्मत नहीं पड़ती थी कि वह कुछ भी कहे□ लेकिन अन्दर-ही-अन्दर वह इतनी परेशान हो उठती थी कि बस□

कई बार वह किसी-न-किसी बहाने से ड्राइंगरूम में आयी, कभी गुलदस्ता बदलने, कभी मेजपोश बदलने, कभी आलमारी में कुछ रखने, कभी आलमारी में से कुछ निकालने, लेकिन चन्द्र अपने चार्ट में निगाह गड़ाये रहा□ उसने सुधा की ओर देखा तक नहीं□ सुधा की आँख में आँसू छलक आये और वह चुपचाप अपने कमरे में चली गयी और लेट गयी□ थोड़ी देर वह पड़ी रही, पता नहीं क्यों वह फूट-फूटकर ये पड़ी□ खूब रोयी, खूब रोयी और फिर मुँह धोकर आकर पढ़ने की कोशिश करने लगी□ जब हर अक्षर में उसे चन्द्र का उदास चेहरा नजर आने लगा तो उसने किताब बन्द करके रख दी और ड्राइंगरूम में गयी□ चन्द्र ने चार्ट बनाना भी बन्द कर दिया था और कुरसी पर सिर टेके छत की ओर देखता हुआ जाने क्या सोच रहा था□

वह जाकर सामने बैठ गयी तो चन्द्र ने चौंककर सिर उठाया और फिर चार्ट को सामने खिसका लिया□ सुधा ने बड़ी हिम्मत करके कहा-

“चन्द्र!”

“क्या!” बड़े भर्याये गले से चन्द्र बोला□

“इधर देखो!” सुधा ने बहुत दुलार से कहा□

“क्या है!” चन्द्र ने उधर देखते हुए कहा, “अे सुधा! तुम ये क्यों रही हो?”

“ठमारी बात पर नाराज हो गये तुम□ हम क्या करें, ठमारा स्वभाव ही ऐसा हो गया□ पता नहीं क्यों तुम पर इतना गुरसा आ जाता है□” सुधा के गाल पर दो बड़े-बड़े मोती छलक आये□

“अे पगली! मालूम होता है तुम्हारा तो दिमाग बहुत जल्दी खराब हो जाएगा, हमने तुमसे कुछ कहा है?”

“कह लेते तो हमें सन्तोष हो जाता□ हमने कभी कहा तुमसे कि तुम कहा मत करो□ गुरसा मत हुआ करो□ मगर तुम तो फिर गुरसा मन-ही-मन में छिपाने लगते हो□ इसी पर हमें रुलाई आ जाती है□”

“नहीं सुधी, तुम्हारी बात नहीं थी और हम गुरसा भी नहीं थे□ पता नहीं क्यों मन बड़ा भारी-सा था□”

“क्या बात है, अगर बता सको तो बताओ, वरना हम कौन हैं तुमसे पूछने वाले□” सुधा ने बड़े करुण स्वर में कहा□

“तो तुम्हारा दिमाग खराब हुआ□ हमने कभी तुमसे कोई बात छिपायी? जाओ, अच्छी लड़की की तरह मुँह धो आओ□”

सुधा उठी और मुँह धोकर आकर बैठ गयी□

“अब बताओ, क्या बात थी?”

“कोई एक बात हो तो बताएँ□ पता नहीं तुम्हारे घर से गये तो एक-न-एक ऐसी बात होती गयी कि मन बड़ा उदास हो गया□”

“आखिर फिर भी कोई बात तो हुई ही होगी!”

“बात यह हुई कि तुम्हारे यहाँ से मैं घर गया खाना खाने □ वहाँ देखा चाचाजी आये हुए हैं, उनके साथ एक कोई साहब और हैं □ खैर बड़ी खुशी हुई □ खाना-वाना खाकर जब बैठे तब मालूम हुआ कि चाचाजी मेरा ब्याह तय करने के लिए आये हैं और साथ वाले साहब मेरे होनेवाले ससुर हैं □ जब मैंने इनकार कर दिया तो बहुत बिगड़कर चले गये और बोले हम आज से तुम्हारे लिए मर गये और तुम हमारे लिए मर गये □”

“तुम्हारी माताजी कहाँ हैं?”

“प्रतापगढ़ में, लेकिन वो तो सौतेली हैं और वे तो चाहती ही नहीं कि मैं घर लौटूँ, लेकिन चाचाजी जरूर आज तक मुझसे कुछ मुछब्बत करते थे □ आज वह भी नाशज होकर चले गये □” सुधा कुछ देर तक सोचती रही, फिर बोली, “तो चन्द्र, तुम शादी कर क्यों नहीं लेते?”

“नहीं सुधा, शादी नहीं करनी है मुझे □ मैंने देखा कि जिसकी शादी हुई, कोई भी सुखी नहीं हुआ □ सभी का अविष्य बिगड़ गया □ और क्यों एक तवालत पाली जाए? जाने कैसी लड़की हो, क्या हो?”

“तो उसमें क्या? पापा से कहो उस लड़की को जाकर देख लें □ हम भी पापा के साथ चले जाएँगे □ अच्छी हो तो कर तो न, चन्द्र □ फिर यहाँ रहना □ हमें अकेला भी नहीं लगेगा □ क्यों?”

“नहीं जी, तुम तो समझती नहीं हो □ जिंदगी निभानी है कि कोई गाय-भैंस खरीदना है!” चन्द्र ने हँसकर कहा, “आदमी एक-दूसरे को समझे, बूझे, प्यार करे, तब ब्याह के भी कोई माने हैं □”

“तो उसी से कर तो जिससे प्यार करते हो!”

चन्द्र ने कुछ जवाब नहीं दिया □

“बोलो! चुप क्यों हो गये! अच्छा, तुमने किसी को प्यार किया, चन्द्र!”

“क्यों?”

“बताओ न!”

“शायद नहीं!”

“बिल्कुल ठीक, हम भी यही सोच रहे थे अभी □” सुधा बोली □

“क्यों, ये क्यों सोच रही थी?”

“इसलिए कि तुमने किया होता तो तुम हमसे थोड़े ही छिपाते, हमें जरूर बताते, और नहीं बताया तो हम समझ गये कि अभी तुमने किसी से प्यार नहीं किया □”

“लेकिन तुमने यह पूछा क्यों, सुधा! यह बात तुम्हारे मन में उठी कैसे?”

“कुछ नहीं, अभी गेसू आयी थी □ वह बोली-सुधा, तुमने किसी से कभी प्यार किया है, असल में वह अख्तर को प्यार करती है □ उससे उसका विवाह होनेवाला है □ हाँ, तो उसने पूछा कि तूने किसी से प्यार किया है, हमने कहा, नहीं □ बोली, तू अपने से छिपाती है □ तो हम मन-ही-मन में सोचते रहे कि तुम आओगे तो तुमसे पूछेंगे कि हमने कभी प्यार तो नहीं किया है □ क्योंकि तुम्हीं एक हो जिससे हमारा मन कभी कोई बात नहीं छिपाता, अगर कोई बात छिपाई भी होती हमने, तो तुम्हें जरूर बता देती □ फिर हमने सोचा, शायद कभी हमने प्यार किया हो और तुम्हें बताया हो, फिर हम भूल गये हों □ अभी उसी दिन देखो, हम पापा की दवाई का नाम भूल गये और तुम्हें याद रहा □ शायद हम भूल गये हों और तुम्हें मालूम हो □ कभी हमने प्यार तो नहीं किया न?”

“नहीं, हमें तो कभी नहीं बताया” चन्द्र बोला।

“तब तो हमने प्यार-वार नहीं किया। गेसू यूँ ही गप उड़ा रही थी।” सुधा ने सन्तोष की साँस लेकर कहा, “लेकिन बस! चाचाजी के नाराज होने पर तुम इतने दुःखी हो गये हो! हो जाने दो नाराज। पापा तो हैं अभी, क्या पापा मुहब्बत नहीं करते तुमसे?”

“सो क्यों नहीं करते, तुमसे ज्यादा मुझसे करते हैं लेकिन उनकी बात से मन तो भारी हो ही गया। उसके बाद गये बिसरिया के यहाँ। बिसरिया ने कुछ बड़ी अच्छी कविताएँ सुनायी। और भी मन भारी हो गया।” चन्द्र ने कहा।

“तो, तब तो चन्द्र, तुम प्यार करते होगे! जरूर से?” सुधा ने हाथ पटककर कहा।

“क्यों?”

“गेसू कह रही थी-शायरी पर जो उदास हो जाता है वह जरूर मुहब्बत-तुहब्बत करता है।” सुधा ने कहा, “अरे यह पोर्टिको में कौन है?”

चन्द्र ने देखा, “लो बिसरिया आ गया!”

चन्द्र उसे बुलाने उठा तो सुधा ने कहा, “अभी बाहर बिठलाना उन्हें, मैं तब तक कमरा ठीक कर लूँ।”

बिसरिया को बाहर बिठाकर चन्द्र भीतर आया, अपना चार्ट वर्गैरण समेटने के लिए, तो सुधा ने कहा, “सुनो!”

चन्द्र रुक गया।

सुधा ने पास आकर कहा, “तो अब तो उदास नहीं हो तुम। नहीं चाहते मत करो शादी, इसमें उदास क्या होना। और कविता-विविता पर मुँह बनाकर बैठे तो अच्छी बात नहीं होगी।”

“अच्छा!” चन्द्र ने कहा।

“अच्छा-वच्छा नहीं, बताओ, तुम्हें मेरी कसम है, उदास मत हुआ करो फिर हमसे कोई काम नहीं होता।”

“अच्छा, उदास नहीं होंगे, पगली!” चन्द्र ने हल्की-सी चपत मारकर कहा और बरबस उसके मुँह से एक ठण्डी साँस निकली। उसने चार्ट उठाकर रस्ती रूम में रखा। देखा डॉक्टर साहब अभी सो ही रहे हैं। सुधा कमरा ठीक कर रही थी। वह आकर बिसरिया के पास बैठ गया।

थोड़ी देर में कमरा ठीक करके सुधा आकर कमरे के दरवाजे पर खड़ी हो गयी। चन्द्र ने पूछा-“क्यों, सब ठीक हैं?”

उसने सिर हिला दिया, कुछ बोली नहीं।

“यही हैं आपकी शिष्या। सुश्री सुधा शुक्ला। इस साल बी.ए. फाइनल का इमताजान देंगी।”

बिसरिया ने बिना आँखें उठाये ही ठाथ जोड़ लिये। सुधा ने ठाथ जोड़े फिर बहुत सकुचा-सी गयी। चन्द्र उठा और बिसरिया को लाकर उसने अन्दर बिठा दिया। बिसरिया के सामने सुधा और उसकी बगल में चन्द्र।

चुप। सभी चुप।

अन्त में चन्द्र बोला-“लो, तुम्हारे मार्टर साहब आ गये। अब बताओ न, तुम्हें क्या-क्या पढ़ा हैं?”

सुधा चुप। बिसरिया कभी यह पुस्तक उलटता, कभी वह। थोड़ी देर बाद वह बोला-“आपके क्या विषय हैं?”

“जी!” बड़ी कोशिश से बोलते हुए सुधा ने कहा- “हिन्दी, इकनॉमिक्स और गृह-विज्ञान” और उसके माथे पर पसीना झलक आया।

“आपको हिन्दी कौन पढ़ाता है?” बिसरिया ने किताब में ही निगाह गड़ाये हुए कहा। सुधा ने चन्द्र की ओर देखा और मुरक्कर कर फिर मुँह झुका लिया।

“बोलो न तुम खुद, ये याजा गर्ल्स कॉलेज में हैं। शायद मिस पवार हिन्दी पढ़ाती हैं।” चन्द्र ने कहा- “अच्छा, अब आप पढ़ाइए, मैं अपना काम करूँ।” चन्द्र उठकर चल दिया। रुम में मुश्किल से चन्द्र दरवाजे तक पहुँचा होगा कि सुधा ने बिसरिया से कहा-

“जी, मैं पेन ले आऊँ!” और लपकती हुई चन्द्र के पास पहुँची।

“ए सुनो, चन्द्र!” चन्द्र रुक गया और उसका कुरता पकड़कर छोटे बच्चों की तरह मचलते हुए सुधा बोली- “तुम चलकर बैठो तो हम पढ़ेंगे। ऐसे शरम लगती है।”

“जाओ, चलो! हर वक्त वही बचपना!” चन्द्र ने डॉक्टर कहा- “चलो, पढ़ो शीर्धे शे। इतनी बड़ी हो गयी, अभी तक वही आदतें।”

सुधा चुपचाप मुँह लटकाकर खड़ी हो गयी और फिर धीरे-धीरे पढ़ने लग गयी। चन्द्र रुम में जाकर वार्ट बनाने लगा। डॉक्टर साहब अभी तक सो रहे थे। एक मरखी उड़कर उनके गले पर बैठ गयी और उन्होंने बायें हाथ से मरखी मारते हुए नींद में कहा- “मैं इस मामले में सरकार की नीति का विरोध करता हूँ।”

चन्द्र ने चौंककर पीछे देखा। डॉक्टर साहब जग गये थे और जमुहाई ले रहे थे।

“जी, आपने मुझसे कुछ कहा?” चन्द्र ने पूछा।

“नहीं, क्या मैंने कुछ कहा था? ओह! मैं सपना देख रहा था कैं बज गये?”

“साढ़े पाँच।”

“अरे बिलकुल शाम हो गयी!” डॉक्टर साहब ने बाहर देखकर कहा- “अब रहने दो कपूर, आज काफी काम किया है तुमने। चाय मँगवाओ। सुधा कहाँ है?”

“पढ़ रही है। आज से उसके मास्टर साहब आने लगे हैं।”

“अच्छा-अच्छा, जाओ उन्हें भी बुला लाओ, और चाय भी मँगवा लो। उसे भी बुला लो-सुधा को।”

चन्द्र जब ड्राइंग रुम में पहुँचा तो देखा सुधा किताबें समेट रही हैं और बिसरिया जा चुका है। उसने सुधा से कहना चाहा लेकिन सुधा का मुँह देखते ही उसने अनुमान किया कि सुधा लड़ने के मूँह में है, अतः वह स्वयं ही जाकर महराजिन से कह आया कि तीन प्याला चाय पढ़ने के कमरे में भेज दो। जब वह लौटने लगा तो खुद सुधा ही उसके गरस्ते में खड़ी हो गयी और धमकी के स्वर में बोली- “अगर कल से साथ नहीं बैठोगे तुम, तो हम नहीं पढ़ेंगे।”

“हम साथ नहीं बैठ सकते, चाहे तुम पढ़ो या न पढ़ो।” चन्द्र ने ठंडे स्वर में कहा और आगे बढ़ा।

“तो फिर हम नहीं पढ़ेंगे।” सुधा ने जोर से कहा।

“क्या बात है? क्यों लड़ रहे हो तुम लोग?” डॉ. शुक्ला अपने कमरे से बोले। चन्द्र कमरे में जाकर बोला, “कुछ नहीं, ये कह रही हैं कि...”

“पहले हम कहेंगे,” बात काटकर सुधा बोली- “पापा, हमने इनसे कहा कि तुम पढ़ाते वक्त बैठा करो, हमें बहुत शरम लगती है, ये कहते हैं पढ़ो चाहे न पढ़ो, हम नहीं बैठेंगे।”

“अच्छा-अच्छा, जाओ चाय लाओ□”

जब सुधा चाय लाने गयी तो डॉक्टर साहब बोले- ”कोई विश्वासपात्र लड़का है? अपने घर की लड़की समझकर सुधा को सौंपना पढ़ने के लिए□ सुधा अब बच्ची नहीं है□”

“हाँ-हाँ, और यह भी कोई कठने की बात है!”

“हाँ, वैसे अभी तक सुधा तुम्हारी ही निगहबानी में रही है□ तुम खुद ही अपनी जिम्मेवारी समझते हो□ लड़का हिन्दी में एम.ए. है?”

“हाँ, एम.ए. कर रहा है□”

“अच्छा है, तब तो बिनती आ रही है, उसे भी पढ़ा देना□”

सुधा चाय लेकर आ गयी थी□

“पापा, तुम लखनऊ कब जाओगे?”

“शुक्रवार को, वयों?”

“और ये भी जाएँगे?”

“हाँ□”

“और हम अकेले रहेंगे?”

“वयों, महराजिन यहीं सोएगी और अगले सोमवार को हम लौट आएँगे□”

डॉ. शुक्ला ने चाय का प्याला मुँह से लगाते हुए कहा□

एक गमकदे की शाम, मन उदास, तबीयत उचटी-सी, सितारों की योशनी फीकी लग रही थी। मार्च की शुरुआत थी और फिर भी जाने शाम इतनी गरम थी, या सुधा को ही इतनी बेवैनी लग रही थी। पहले वह जाकर सामने के लॉन में बैठी लेकिन सामने के मौतसिरी के पेड़ में छोटी-छोटी गोर्हियों ने मिलकर इतनी जोर से चहचहाना शुरू किया कि उसकी तबीयत घबरा उठी। वह इस वक्त एकान्त चाहती थी और सबसे बढ़कर सन्नाटा चाहती थी जहाँ कोई न बोले, कोई बात न करे, सभी खामोशी में डूबे हुए हों।

वह उठकर टहलने लगी और जब लगा कि पैरों में ताकत ही नहीं रही तो फिर लेट गयी, हरी-हरी धास पर। मंगलवार की शाम थी और अभी तक पापा नहीं आये थे। आना तो दूर, पापा या चन्द्र के हाथ के एक पुरजे के लिए तरस गयी थी। किसी ने यह भी नहीं लिखा कि वे लोग कहाँ रह गये हैं, या कब तक आएंगे। किसी को भी सुधा का खयाल नहीं। शनिवार या इतवार को तो वह हर रोज खाना खाते वक्त रोयी, चाय पीना तो उसने उसी दिन से छोड़ दिया था और सोमवार को सुबह पापा नहीं आये तो वह इतना फूट-फूटकर रोयी कि महराजिन को सिंकती हुई रोटी छोड़कर चूल्हे की आँच निकालकर सुधा को समझाने आना पड़ा। और सुधा की रुलाई देखकर तो महराजिन के हाथ-पाँव ढीले हो गये थे। उसकी सारी डॉट छवा हो गयी थी और वह सुधा का मुँह-ही-मुँह देखती थी। कल से कॉलेज भी नहीं गयी थी। और दोनों दिन इन्तजार करती रही कि कहाँ दोपहर को पापा न आ जाए। गेसू से भी दो दिन से मुलाकात नहीं हुई थी। लेकिन मंगल को दोपहर तक जब कोई खबर न आयी तो उसकी घबराहट बेकाबू हो गयी। इस वक्त उसने बिसरिया से कोई भी बात नहीं की। आधा घंटा पढ़ने के बाद उसने कहा कि उसके सिर में दर्द हो रहा है और उसके बाद खूब रोयी, खूब रोयी। उसके बाद उठी, चाय पी, मुँह-हाथ धोया और सामने के लॉन में टहलने लगी। और फिर लेट गयी हरी-हरी धास पर।

बड़ी ही उदास शाम थी। और क्षितिज की लाली के होठ भी स्याह पड़ गये थे। बादल साँस रोके पड़े थे और खामोश सितारे टिमटिमा रहे थे। बगुलों की धुँधली-धुँधली कतारें पर मारती हुई गुजर रही थीं। सुधा ने एक लम्बी साँस लेकर सोचा कि अंगर वह विडिया होती तो एक क्षण में उड़कर जहाँ चाहती वहाँ की खबर ले आती। पापा इस वक्त घूमने गये होंगे। चन्द्र अपने दोस्तों की टोली में बैठा झंगेलियाँ कर रहा होगा। वहाँ भी दोस्त बना ही लिये होंगे उसने। बड़ा बातूनी है चन्द्र और बड़ा मीठे स्वभाव का। आज तक किसी से सुधा ने उसकी बुराई नहीं सुनी। सभी उसको प्यार करते थे। यहाँ तक कि महराजिन, जो सुधा को हमेशा डॉटती रहती थी, चन्द्र का हमेशा पक्ष लेती थी। और सुधा हरेक से पूछ लेती थी कि चन्द्र के बारे में उसकी क्या याय है? लेकिन सब लोग जितनी चन्द्र की तारीफ करते वह उतना अच्छा उसे नहीं समझती थी। आदमी की परख तब होती है जब दिन-रात बरते। चन्द्र उसका ऊन कभी नहीं

लाकर देता था, बादामी रंग का रेशम मँगाओ तो केसरिया रंग का ला देता था ॥ इतने नवशे बनाता रहता था, और सुधा ने हमेशा उससे कहा कि मेजपोश की कोई डिजाइन बना दो तो उसने कभी नहीं बनायी ॥ एक बार सुधा ने बहुत अच्छी खाल कानपुर से मँगवायी और चन्द्र ने कहा, “लाओ, यह बहुत अच्छी है, इस पर हम किनारे की डिजाइन बना देंगे ॥” और उसके बाद उसने उसमें तमाम पान-जैसा जाने क्या बना दिया और जब सुधा ने पूछा, “यह क्या है?” तो बोला, “लंका का नवशा है ॥” जब सुधा बिगड़ी तो बोला, “तङ्गियाँ के हृदय में यवण से मेघनाद तक करोड़ों राक्षसों का वास होता है, इसलिए उनकी पोशाक में लंका का नवशा ज्यादा सुशोभित होता है ॥” मारे गुरसे के सुधा ने वह धोती अपनी मालिन को दे डाली थी ॥ यह सब बातें तो किसी को मालूम नहीं ॥ उनके सामने तो जरा-सा कपूर साफ़ छूँस दिये, चार मजाक की बातें कर दीं, छोटे-मोटे उनके काम कर दिये, मीठी बातें कर लीं और सब समझे कपूर साफ़ तो बिल्कुल गुलाब के फूल हैं ॥ लैकिन कपूर साफ़ एक तीखे काँटे हैं जो दिन-रात सुधा के मन में चुभते रहते हैं, यह तो दुनिया को नहीं मालूम ॥ दुनिया क्या जाने कि सुधा कितनी परेशानी रहती है चन्द्र की आदतों से! अबर दुनिया को मालूम हो जाए तो कोई चन्द्र की जरा भी तारीफ न करे, सब सुधा को ही ज्यादा अच्छा कहें, लैकिन सुधा कभी किसी से कुछ नहीं कहती, मगर आज उसका मन हो रहा था कि किसी से चन्द्र की जी भरकर बुराई कर ले तो उसका मन बहुत हल्का हो जाए ॥

“चलो बिटिया रानी, तई खाय लेव, फिर भीतर लेटो ॥ अबहिन लेटे का बखत नहीं आवा!” सहसा महराजिन ने आकर सुधा की स्वप्न-शृंखला तोड़ते हुए कहा ॥

“अब हम नहीं खाएँगे, भूख नहीं ॥” सुधा ने अपने सुनहले सपनों में ही ढूबी हुई बेहोश आवाज में जवाब दिया ॥

“खाय लेव बिटिया, खाय-पियौ छोड़ै से कसस काम चली, आव उठौ!” महराजिन ने बड़े दुलार से कहा ॥ सुधा पीछा छूटने की कोई आशा न देखकर उठ गयी और चल दी खाने ॥ कौर उठाते ही उसकी आँख में आँसू छलक आये, लैकिन अपने को शोक लिया उसने ॥ दूसरों के सामने अपने को बहुत शान्त खेला आता था ॥ उसे ॥ दो कौर खाने के बाद वह महराजिन से बोली, “आज कोई चिठ्ठी तो नहीं आयी?”

“नहीं बिटिया, आज तो दिन भर घैरे में रह्यो!” महराजिन ने पराठे उलटते हुए जवाब दिया- “काहे बिटिया, बाबूजी कुछौ नाहीं लिखिन तो छोटे बाबू तो लिख देते ॥”

“अरे महराजिन, यहीं तो हमारी जान का रोना है ॥ हम चाहे ये-योकर मर जाएँ मगर न पापा को खेला, न पापा के शिष्य को ॥ और चन्द्र तो ऐसे खराब हैं कि हम क्या करें ॥ ऐसे स्वार्थी हैं, अपने मतलब के कि बस! सुबह-शाम आएँ और हम या पापा न मिलें तो आफत ढा देंगे-बहुत घूमने लगी हो तुम, बहुत बाहर कदम निकल गया है तुम्हारा-और सच पूछो तो चन्द्र की वजह से हमने सब जगह आना-जाना बन्द कर दिया और खुद हैं कि आज लखनऊ, कल कलकत्ता और एक चिठ्ठी भेजने तक का वक्त नहीं मिलता! अभी हम ऐसा करते तो हमारी जान नोच खाते! और पापा को देखो, उनके दुलारे उनके साथ हैं तो बस और किसी की फिक्र ही नहीं ॥ अब तुम महराजिन, चन्द्र को तो कभी कुछ चाय-वाय बना के मत देना ॥”

“काहे बिटिया, काहे कोसत हो ॥ कैसा चाँद-से तो हैं छोटे बाबू, और कैसा हूँस के बातें करत हैं ॥ माई का जाने कैसे हियाव पड़ा कि उन्हें अलग कै दिहिस ॥ बेचारा होटल में जाने कैसे शेटी

खात होई□ उन्हें हिंयर्ड बुलाय लेव तो अपने हाथ की खिलाय के दुई मठीना माँ मोटा के देर्ड□ हमें तोसे ज्यादा उसकी ममता लगत है□”

“बीबीजी, बाहर एक मेम पूछत हैं-हिंया कोनो डाकदर रहत है? हम कठा, नाहीं, हिंया तो बाबूजी रहत हैं तो कठत हैं, नहीं यही मकान आय□” मालिन ने सहसा आकर बहुत स्वतंत्र स्वरों में कठा□

“बैठाओ उन्हें, हम आते हैं□” सुधा ने कठा और जल्दी-जल्दी खाना शुरू किया और जल्दी-जल्दी खत्म कर दिया□

बाहर जाकर उसने देखा तो नीलकाँट के झाड़ से टिकी हुई एक बाइसिकिल रखी थी और एक ईसाई लड़की लॉन पर टहल रही है□ होगी करीब चौबीस-पच्चीस बरस की, लेकिन बहुत अच्छी लग रही थी□

“कहिए, आप किसे पूछ रही हैं?” सुधा ने अँग्रेजी में पूछा□

“मैं डॉक्टर शुक्ला से मिलने आयी हूँ□” उसने शुद्ध हिन्दुस्तानी में कठा□

“वे तो बाहर जये हैं और कब आएँगे, कुछ पता नहीं□ कोई खास काम है आपको?” सुधा ने पूछा□

“नहीं, यूँ ठी मिलने आ गयी□ आप उनकी लड़की हैं?” उसने साइकिल उठाते हुए कठा□

“जी हाँ, लेकिन अपना नाम तो बताती जाइए□”

“मेरा नाम कोई महत्वपूर्ण नहीं□ मैं उनसे मिल लूँगी□ और हाँ, आप उसे जानती हैं, मिस्टर कपूर को?”

“आहा! आप पम्मी हैं, मिस डिक्रूज!” सुधा को एकदम खयाल आ गया-”आइए, आइए; हम आपको ऐसे नहीं जाने देंगे□ चलिए, बैठिए□” सुधा ने बड़ी बेतकल्तुफी से उसकी साइकिल पकड़ ली□

“अच्छा-अच्छा, चलो!” कठकर पम्मी जाकर ड्राइंग रूम में बैठ गयी□

“मिस्टर कपूर रहते कहाँ हैं?” पम्मी ने बैठने से पहले पूछा□

“रहते तो वे चौक में हैं, लेकिन आजकल तो वे भी पापा के साथ बाहर जये हैं□ वे तो आपकी एक दिन बहुत तारीफ कर रहे थे, बहुत तारीफ□ इतनी तारीफ किसी लड़की की करते तो हमने सुना नहीं□”

“सचमुच!” पम्मी का चेहरा लाल हो गया□ “वह बहुत अच्छे हैं, बहुत अच्छे हैं!”

थोड़ी देर पम्मी चुप रही, फिर बोली-”वया बताया था उन्होंने हमारे बारे में?”

“ओह तमाम! एक दिन शाम को तो हम लोग आप ही के बारे में बातें करते रहे□ आपके भाई के बारे में बताते रहे□ फिर आपके काम के बारे में बताया कि आप कितना तेज टाइप करती हैं, फिर आपकी रुचियों के बारे में बताया कि आपको साहित्य से बहुत शौक नहीं हैं और आप शादी से बेहद नफरत करती हैं और आप ज्यादा मिलती-जुलती नहीं, बाहर आती-जाती नहीं और मिस डिक्रूज...”

“न, आप पम्मी कहिए मुझे?”

“हाँ, तो मिस पम्मी, शायद इसीलिए आप उसे इतनी अच्छी लगी कि आप कहीं आती-जाती नहीं, वह लड़कियों का आना-जाना और आजादी बहुत नापसन्द करता है□” सुधा बोली□

“नहीं, वह ठीक सोचता है□” पम्मी बोली-”मैं शादी और तलाक के बाद इसी नतीजे पर पहुँची हूँ

कि चौदह बरस से चौंतीस बरस तक लड़कियों को बहुत शासन में रखना चाहिए” पर्मी ने गम्भीरता से कहा।

एक ईसाई मेम के मुँह से यह बात सुनकर सुधा ठंग रह गयी।

“क्यों?” उसने पूछा।

“इसलिए कि इस उम्र में लड़कियाँ बहुत नादान होती हैं और जो कोई भी चार मीठी बातें करता है, तो लड़कियाँ समझती हैं कि इससे ज्यादा प्यार उन्हें कोई नहीं करता। और इस उम्र में जो कोई भी ऐरा-गैरा उनके संसर्व में आ जाता है, उसे वे प्यार का देवता समझने लगती हैं और नतीजा यह होता है कि वे ऐसे जाल में फँस जाती हैं कि जिंदगी भर उससे छुटकारा नहीं मिलता। मेरा तो यह विचार है कि या तो लड़कियाँ चौंतीस बरस के बाट शादियाँ करें जब वे अच्छा-बुरा समझने के लायक हो जाएँ, नहीं तो मुझे तो हिन्दुओं का कायदा सबसे ज्यादा पसन्द आता है कि चौदह वर्ष के पहले ही लड़की की शादी कर दी जाए और उसके बाट उसका संसर्व उसी आदमी से रहे जिससे उसे जिंदगी भर निबाह करना है और अपने विकास-क्रम से दोनों ही एक-दूसरे को समझते चलें। लेकिन यह तो सबसे भद्वा तरीका है कि चौदह और चौंतीस बरस के बीच में लड़की की शादी हो, या उसे आजादी दी जाए। मैंने तो स्वयं अपने ऊपर बन्धन बाँध लिये थे....तुम्हारी तो शादी अभी नहीं हुई?”

“नहीं।”

“बहुत ठीक, तुम चौंतीस बरस के पहले शादी मत करना, अच्छा हाँ, और क्या बताया चन्द्र ने मैरे बारे में?”

“और तो कुछ खास नहीं; हाँ, यह कह रहा था, आपको चाय और सिगरेट बहुत अच्छी लगती है। ओहो, देखिए मैं भूल ठी गयी, तीजिए सिगरेट मँगवाती हूँ।” और सुधा ने घंटी बजायी।

“रहने दीजिए, मैं सिगरेट छोड़ रही हूँ।”

“क्यों?”

“इसलिए कि कपूर को अच्छा नहीं लगता और अब वह मेरा दोस्त बन गया है, और दोस्ती में एक-दूसरे से निबाह ही करना पड़ता है। उसने आपसे यह नहीं बताया कि मैंने उसे दोस्त मान लिया है?” पर्मी ने पूछा।

“जी हाँ, बताया था, अच्छा तो चाय लीजिए!”

“हाँ-हाँ, चाय मँगवा लीजिए। आपका कपूर से क्या सम्बन्ध है?” पर्मी ने पूछा।

“कुछ नहीं। मुझसे भला क्या सम्बन्ध होगा उनका, जब देखिए तब बिनाड़ते रहते हैं मुझ पर; और बाहर जाये हैं और आज तक कोई खत नहीं भेजा। ये कहीं सम्बन्ध हैं?”

“नहीं, मेरा मतलब आप उनसे घनिष्ठ हैं।”

“हाँ, कभी वह छिपाते तो नहीं मुझसे कुछ! क्यों?”

“तब तो ठीक है, सच्चे दिल के आदमी मालूम पड़ते हैं। आप तो यह बता सकती हैं कि उन्हें क्या-क्या चीजें पसन्द हैं?”

“हाँ...उन्हें कविता पसन्द है। बस कविता के बारे में बात न कीजिए, कविता सुना दीजिए उन्हें या कविता की किताब दे दीजिए उन्हें और उनको सुबह धूमना पसन्द है। यह को गंगाजी की सैर करना पसन्द है। सिनेमा तो बेहृ पसन्द है। और, और क्या, चाय की पत्ती का हलुआ पसन्द है।”

“यह क्या होता है?”

“मेरा मतलब बिना दूध की चाय उन्हें पसंद है”

“अच्छा, अच्छा देखिए आप सोचेंगी कि मैं इस तरह से मि. कपूर के बारे में पूछ रही हूँ जैसे मैं कोई जासूस होऊँ, लेकिन असल बात मैं आपको बता दूँ मैं पिछले दो-तीन साल से अकेली रहती रही किसी से भी नहीं मिलती-जुलती थी उस दिन मिस्टर कपूर गये तो पता नहीं क्यों मुझ पर प्रभाव पड़ा उनको देखकर ऐसा लगा कि यह आदमी है जिसमें दिल की सच्चाई है, जो आदमियों में बिल्कुल नहीं होती तभी मैंने सोचा, इनसे दोस्ती कर लूँ लेकिन चूँकि एक बार दोस्ती करके विवाह, और विवाह के बाद अलगाव, मैं भोग चुकी हूँ इसलिए इनके बारे में पूरी जाँच-पड़ताल कर लेना चाहती हूँ लेकिन दोस्त तो अब बना ही चुकी हूँ” चाय आ गयी थी और पम्मी ने सुधा के प्याले में चाय ढाली

“न, मैं तो अभी खाना खा चुकी हूँ” सुधा बोली

“पम्मी ने दो-तीन चुस्कियों के बाद कहा-”आपके बारे में चन्द्र ने मुझसे कहा था”

“कहा होगा!” सुधा मुँह बिगड़कर बोली- “मेरी बुराई कर रहे होंगे और क्या?”

पम्मी चाय के प्याले से उठते हुए धुएं को देखती हुई अपने ही खयाल में डूबी थी थोड़ी देर बाद बोली, “मेरा अनुमान गलत नहीं होता मैंने कपूर को देखते ही समझ लिया था कि यही मेरे लिए उपयुक्त मित्र हैं मैंने कविता पढ़नी बहुत दिनों से छोड़ दी लेकिन किसी कविती ने, शायद मिसेज ब्राउनिंग ने कहीं लिखा था, कि वह मेरी जिंदगी में रोशनी बनकर आया, उसे देखते ही मैं समझ गयी कि यह वह आदमी है जिसके हाथ में मेरे दिल के सभी यज सुरक्षित रहेंगे वह खेल नहीं करेगा, और प्यार भी नहीं करेगा जिंदगी में आकर भी जिंदगी से दूर और सपनों में बँधकर भी सपनों से अलग...यह बात कपूर पर बहुत लागू होती है माफ करना मिस सुधा, मैं आपसे इसलिए कह रही हूँ कि आप इनकी घनिष्ठ हैं और आप उन्हें बतला देंगी कि मेरा क्या खयाल है उनके बारे में अच्छा, अब मैं चलूँगी

“बैठिए न!” सुधा बोली

“नहीं, मेरा भाई अकेला खाने के लिए इन्तजार कर रहा होगा” उठते हुए पम्मी ने कहा

“आप बहुत अच्छी हैं इस तक आप आयीं तो मैं थोड़ी-सी विनता भूल गयी वरना मैं तीन दिन से उदास थी बैठिए, कुछ और चन्द्र के बारे में बताइए न!”

“अब नहीं वह अपने ढंग का अकेला आदमी है, यह मैं कह सकती हूँ...ओह तुम्हारी आँखें बड़ी सुन्दर हैं देखें” और छोटे बच्चे की तरह उसके मुँह को हथेलियों से ऊपर उठाकर पम्मी ने कहा, “बहुत सुन्दर आँखें हैं माफ करना, मैं कपूर से भी इतनी ही बेतकल्लुफ हूँ!”

सुधा झोंप गयी उसने आँखें नीची कर लीं

पम्मी ने अपनी साइकिल उठाते हुए कहा-”कपूर के साथ आप आइएगा और आपने कहा था कपूर को कविता पसंद है”

“जी हाँ, गुडनाइट”

जब पम्मी बँगले पर पहुँची तो उसकी साइकिल के कैशियर में अँगरेजी कविता के पाँच-छह ब्रन्थ बँधे थे

आठ बज चुके थे सुधा जाकर अपने बिस्तरे पर लेटकर पढ़ने लगी अँगरेजी कविता पढ़ रही थी अँगरेजी लड़कियाँ कितनी आजाद और खच्छन्द होती होंगी! जब पम्मी, जो ईसाई है,

इतनी आजाद है, उसने सोचा और पम्मी कितनी अच्छी है उसकी बेतकल्लुफी में भोलापन तो नहीं है, पर सरलता बेछढ है बड़ा साफ दिल है, कुछ छिपाना नहीं जानती और सुधा से सिर्फ पाँच-छह साल बड़ी है, लेकिन सुधा उसके सामने बच्ची लगती है कितना जानती है पम्मी और कितनी अच्छी समझ है उसकी और चन्द्र की तारीफ करते नहीं थकती चन्द्र के लिए उसने सिगरेट छोड़ दी चन्द्र उसका दोस्त है, इतनी पढ़ी-लिखी लड़की के लिए योशनी का देवदूत है सचमुच चन्द्र पर सुधा को गर्व है और उसी चन्द्र से वह लड़-झगड़ लेती है, इतनी मान-मनुष्ठान कर लेती है और चन्द्र सब बर्दाश्त कर लेता है वरना चन्द्र के इतने बड़े-बड़े दोस्त हैं और चन्द्र की इतनी इज्जत है अगर चन्द्र चाहे तो सुधा की रत्नी भर परवाह न करे लेकिन चन्द्र सुधा की भली-बुरी बात बर्दाश्त कर लेता है और वह कितना परेशान करती रहती है चन्द्र को

कभी अगर सचमुच चन्द्र बहुत नाराज हो गया और सचमुच हणेशा के लिए बोलना छोड़ दे तब क्या होगा? या चन्द्र यहाँ से कहीं चला जाए तब क्या होगा? खैर, चन्द्र जाएगा तो नहीं इलाहाबाद छोड़कर, लेकिन अगर वह खुद कहीं चली गयी तब क्या होगा? वह कहाँ जाएगी! और पापा को मनाना तो बायें हाथ का खेल है, और ऐसा प्यार वह करेगी नहीं कि शादी करनी पड़े लेकिन यह सब तो ठीक है पर चन्द्र ने चिढ़ी क्यों नहीं भेजी? क्या नाराज होकर गया है? जाते वक्त सुधा ने परेशान तो बहुत किया था होलडॉल की पेटी का बपसुआ खोल दिया था और उठाते ही चन्द्र के हाथ से सब कपड़े बिखर गये चन्द्र कुछ बोला नहीं लेकिन जाते समय उसने सुधा को डॉटा भी नहीं और न यही समझाया कि घर का खायाल रखना, अकेले घूमना मत, मछराजिन से लड़ना मत, पढ़ती रहना इससे सुधा समझ तो गयी थी कि वह नाराज है, लेकिन कुछ कहा नहीं

लेकिन चन्द्र को खत तो भेजना चाहिए था चाहे गुरसे का ही खत क्यों न होता? बिना खत के मन उसका कितना धबरा रहा है और क्या चन्द्र को मालूम नहीं होगा यह कैसे हो सकता है? जब इतनी दूर बैठे हुए सुधा को मालूम हो गया कि चन्द्र नाखुश है तो क्या चन्द्र को नहीं मालूम होगा कि सुधा का मन उदास हो गया है जरूर मालूम होगा सोचते-सोचते उसे जाने कब नींद आ गयी और नींद में उसे पापा या चन्द्र की चिढ़ी मिली या नहीं, यह तो नहीं मालूम, लेकिन इतना जरूर है कि जैसे यह सारी सृष्टि एक बिन्दु से बनी और एक बिन्दु में समा गयी, उसी तरह सुधा की यह भाद्रों की घटाओं जैसी फैली हुई बेहौनी और गीली उदासी एक चन्द्र के ध्यान से उठी और उसी में समा गयी

दूसरे दिन सुबह सुधा आँगन में बैठी हुई आलू छील रही थी और चन्द्र का इन्तजार कर रही थी। उसी दिन यत को पापा आ गये थे और दूसरे दिन सुबह बुआजी और बिनती।

“सुधी!” किसी ने इतने प्यार से पुकारा कि छवाओं में ये भर गया।

“अच्छा! आ गये चन्द्र!” सुधा आलू छोड़कर उठ बैठी, “क्या लाये हमारे लिए लखनऊ से?”

“बहुत कुछ, सुधा!”

“कै है सुधा!” सहसा कमरे में से कोई बोला।

“चन्द्र हैं।” सुधा ने कहा, “चन्द्र, बुआ आ गयीं।” और कमरे से बुआजी बाहर आयीं।

“प्रणाम, बुआजी!” चन्द्र बोला और पैर छूने के लिए झुका।

“हाँ, हाँ, हाँ!” बुआजी तीन कदम पीछे हट गयीं। “देखत्यों नैं हम पूजा की धोती पढ़ने हैं। ई के हैं, सुधा!”

सुधा ने बुआ की बात का कुछ जवाब नहीं दिया। चन्द्र, चलो अपने कमरे में; यहाँ बुआ पूजा करेंगी।

चन्द्र अलग हटा। बुआ ने हाथ के पंचपात्र से वहाँ पानी छिड़का और जमीन फूँकने लगीं।

“सुधा, बिनती को भेज देव।” बुआजी ने धूपतानी में महराजिन से कोयला लेते हुए कहा।

सुधा अपने कमरे में पहुँचकर चन्द्र को खाट पर बिठाकर नीचे बैठ गयी।

“अरे, ऊपर बैठो।”

“नहीं, हम यहीं ठीक हैं।” कहकर वह बैठ गयी और चन्द्र की पैंट पर पेनिसल से लकीरें खींचने लगीं।

“अरे यह क्या कर रही हो?” चन्द्र ने पैर उठाते हुए कहा।

“तो तुमने इतने दिन क्यों लगाये?” सुधा ने दूसरे पाँयवे पर पेनिसल लगाते हुए कहा।

“अरे, बड़ी आफत मैं फँस गये थे, सुधा। लखनऊ से हम लोग गये बेरेली। वहाँ एक उत्सव में हम लोग भी गये और एक मिनिस्टर भी पहुँचे। कुछ सोशलिस्ट, कम्युनिस्ट, और मजदूरों ने विरोध प्रदर्शन किया। फिर तो पुलिसवालों और मजदूरों में जमकर लड़ाई हुई। वह तो कहो एक बेचारा सोशलिस्ट लड़का था कैलाश मिश्रा, उसने हम लोगों की जान बचायी, वरना पापा और हम, दोनों ही अस्पताल में होते...”

“अच्छा! पापा ने हमें कुछ बताया नहीं!” सुधा घबराकर बोली और बड़ी देर तक बेरेली, उपद्रव और कैलाश मिश्रा की बात करती रही।

“अरे ये बाहर गा कौन रहा है?” चन्द्र ने सहसा पूछा।

बाहर कोई गाता हुआ आ रहा था, “आँचल में क्यों बाँध लिया मुझ परदेशी का प्यार....आँचल में क्यों...” और चन्द्र को देखते ही उस लड़की ने चौंककर कहा, “अरे?” क्षण-भर स्तब्ध, और

फिर शरम से लाल होकर भागी बाहर□

“अरे, भागती क्यों है? यहीं तो हैं चन्द्रर्” सुधा ने कहा□

लड़की बाहर रुक गयी और गरदन छिलाकर इशारे से कहा, “मैं नहीं आँगनी□ मुझे शरम लगती है□”

“अरे चली आ, देखो हम अभी पकड़ लाते हैं, बड़ी झटकी है यह□” कहकर सुधा उठी, वह फिर भागी□ सुधा पीछे-पीछे भागी□ थोड़ी देर बाद सुधा अन्दर आयी तो सुधा के हाथ में उस लड़की की चोटी और वह बेचारी बुरी तरह अस्त-व्यस्त थी□ ढाँत से अपने आँचल का छोर दबाये हुए थी बाल की तीन-चार लट्टे मुँह पर झुक रही थीं और लाज के मारे सिमटी जा रही थी और आँखें थीं कि मुर्झाये या रोये, यह तय ही नहीं कर पायी थीं□

“देखो...चन्द्रर...देखो□” सुधा हाँफ रही थी-“यहीं है बिनती मोटकी कहीं की, इतनी मोटी है कि दम निकल गया हमारा□” सुधा बुरी तरह हाँफ रही थी□

चन्द्रर ने देखा-बेचारी की बुरी हालत थी□ मोटी तो बहुत नहीं थी पर हाँ, गाँव की तन्दुरुस्ती थी, लाल चेहरा, जिसे शरम ने तो दूना बना दिया था□ एक हाथ से अपनी चोटी पकड़े थी, दूसरे से अपने कपड़े ठीक कर रही थी और ढाँत से आँचल पकड़े□

“छोड़ दो उसे, यह क्या है सुधा! बड़ी जंगली हो तुम□” चन्द्रर ने डॉटकर कहा□

“जंगली मैं हूँ या यह?” चोटी छोड़कर सुधा बोली-“यह देखो, ढाँत काट लिया है इसने□” सचमुच सुधा के कन्धे पर ढाँत के निशान बने हुए थे□

चन्द्रर इस सम्भावना पर बेतहाशा हँसने लगा कि इतनी बड़ी लड़की ढाँत काट सकती है-“क्यों जी, इतनी बड़ी हो गयी और ढाँत काटती हो?” उसकी हँसी रुक नहीं रही थी□ “सचमुच यह तो बड़े मजे की लड़की है□ बिनती है इसका नाम? क्यों ऐ, महुआ बीनती थी क्या वहाँ, जो बुआजी ने बिनती नाम रखा है?”

वह पल्ला ठीक से ओढ़ चुकी थी□ बोली, “नमस्ते□”

चन्द्रर और सुधा दोनों हँस पड़े□ “अब इतनी देर बाद आयी□” चन्द्रर और भी हँसने लगा□

“बिनती! ए बिनती!” बुआ की आवाज आयी□ बिनती ने सुधा की ओर देखा और चली गयी□

“और कहो सुधी,” चन्द्रर बोला-“क्या हाल-चाल रहा यहाँ?”

“फिर भी एक विछुं भी तो नहीं लिखी तुमने□” सुधा बड़ी शिकायत के ख्वर में बोली, “हमें योज रुलाई आती थी□ और तुम्हारी वो आयी थी□”

“हमारी वो?” चन्द्रर ने चौंककर पूछा□

“अरे हाँ, तुम्हारी पम्मी रानी□”

“अच्छा वो आयी थीं□ क्या बात हुई?”

“कुछ नहीं; तुम्हारी तसवीर देख-देखकर ये रही थीं□” सुधा ने उँगलियाँ नचाते हुए कहा□

“मेरी तसवीर देखकर! अच्छा, और थी कहाँ मेरी तसवीर?”

“अब तुम तो बहस करने लगे, हम कोई बकील हैं! तुम कोई नयी बात बताओ□” सुधा बोली□

“हम तो तुम्हें बहुत-बहुत बात बताएँगे□ पूरी कहानी है□”

इतने में बिनती आयी□ उसके हाथ में एक तश्तरी थी और एक गिलास□ तश्तरी में कुछ मिठाई थी, और गिलास में शरबत□ उसने लाकर तश्तरी चन्द्रर के सामने रख दी□

“ना भई, हम नहीं खाएँगे□” चन्द्रर ने इनकार किया□

बिनती ने सुधा की ओर देखा □

“खा लो □ तगे नखरा करने □ लखनऊ से आ रहे हैं न, तकल्लुफ न करें तो मालूम कैसे हो?”

सुधा ने मुँह विछाते हुए कहा □ चन्द्र मुसकराकर खाने लगा □

“दीर्घी के कठने पर खाने लगे आप!” बिनती ने अपने हाथ की अँगूठी की ओर देखते हुए कहा □

चन्द्र हँस दिया, कुछ बोला नहीं □ बिनती चली गयी □

“बड़ी अच्छी लड़की मालूम पड़ती है यह □” चन्द्र बोला □

“बहुत प्यारी है □ और पढ़ने में हमारी तरह नहीं है, बहुत तेज है □”

“अच्छा! तुम्हारी पढ़ाई कैसी चल रही है?”

“मास्टर साहब बहुत अच्छा पढ़ाते हैं □ और चन्द्र, अब हम खूब बात करते हैं उनसे दुनिया-भर की ओर वे बस हमेशा सिर नीचे किये रहते हैं □ एक दिन पढ़ते वक्त हम गरी पास में रखकर खाते गये, उन्हें मालूम ठी नहीं हुआ □ उनसे एक दिन कविता सुनवा दो □” सुधा बोली □

चन्द्र ने कुछ जवाब नहीं दिया और डॉ. साहब के कमरे में जाकर किताबें उलटने लगा □

इतने में बुआजी का तेज स्वर आया-”हमें मालूम होता कि ई मुँह-झौंसी हमके ऐसी नाच नचइहै तौ हम पैदा होतै गला घोंट देइत □ हरे राम! अवकाश सिर पर उठाये हैं □ कैं घंटे से नरियात-नरियात गर्टई फट गयी □ ई बोलतौ नाहीं जैसे साँप सूँध गवा होय □”

प्रोफेसर शुक्ला के घर में वह नया सांस्कृतिक तत्व था □ कितनी शालीनता और शिष्टता से वह रहते थे □ कभी इस तरह की भाषा भी उनके घर में सुनने को मिलेगी, इसकी चन्द्र को जरा भी उम्मीद न थी □ चन्द्र चौंककर उधर देखने लगा □ डॉ. शुक्ला समझ गये □ कुछ लज्जित-से और मुसकराकर ज्ञानि छिपाते हुए-से बोले, “मेरी विधवा बहन है, कल गाँव से आयी है लड़की को पहुँचाने □”

उसके बाद कुछ पटकने का स्वर आया, शायद किसी बरतन के □ इतने में सुधा आयी, गुस्से से लाल-”सुना पापा तुमने, बुआ बिनती को मार डालेंगी □”

“क्या हुआ आखिर?” डॉ. शुक्ला ने पूछा □

“कुछ नहीं, बिनती ने पूजा का पंचपात्र उठाकर ठाकुरजी के सिंहासन के पीछे रख दिया था □ उन्हें दिखाई नहीं पड़ा, तो गुस्सा बिनती पर उतार रही हैं □”

इतने में फिर उनकी आवाज आयी-”पैदा करते बखत बहुत अच्छा लाग रहा, पालत बखत टैं बोल गये □ मर गये रहो तो आपन सन्तानों अपने साथ लै जात्यौं □ हमारे मूँड पर ई हत्या काहे डाल गयौं □ ऐसी कुलच्छनी है कि पैदा होतेहिन बाप को खाय गयी □”

“सुना पापा तुमने?”

“चलो हम चलते हैं □” डॉ. शुक्ला ने कहा □ सुधा वहीं रह गयी □ चन्द्र से बोली, “ऐसा बुरा स्वभाव है बुआ का कि बस □ बिनती ऐसी है कि इतना बर्दाश्त कर लेती है □”

बुआ ने ठाकुरजी का सिंहासन साफ करते हुए कहा, “रोकत काहे हो, कौन तुम्हारे माई-बाप को गरियावा है कि ई अँसुआ ढरकाय रही हो □ ई सब चोचला अपने ओ को दिखाओ जायके □ दुई महीना और हैं-अबहिन से उधियानी न जाओ □”

अब अभद्रता सीमा पार कर चुकी थी □

“बिनती, चलो कमरे के अन्दर, हटो सामने जो □” डॉ. शुक्ला ने डॉटकर कहा, “अब ये चरखा

बन्द होगा या नहीं□ कुछ शरम-हया है या नहीं तुममें?”

बिनती सिसकते हुए अन्दर गयी□ स्टडी रूम में देखा कि चन्द्र है तो उलटे पाँव लौट आयी सुधा के कमरे में और फूट-फूटकर रोने लगी□

डॉ. शुक्ला लौट आये-”अब हम ये सब करें कि अपना काम करें! अच्छा कल से घर में महाभारत मवा रखा है□ कब जाएँगी ये, सुधा?”

“कल जाएँगी□ पापा अब बिनती को कभी मत भेजना इनके पास□” सुधा ने गुस्सा-भरे स्वर में कहा□

“अच्छा-जाओ, हमारा खाना परसो□ चन्द्र, तुम अपना काम यहाँ करो□ यहाँ शेर ज्यादा हो तो तुम लाड्ब्रेशी में चले जाना□ आज भर की तकलीफ है□”

चन्द्र ने अपनी कुछ किताबें उठायीं और उसने चला जाना ही ठीक समझा□ सुधा खाना परोसने चली गयी□ बिनती गो-रोकर और तकिये पर सिर पटककर अपनी कुंठा और दुःख उतार रही थी□ बुआ घंटी बजा रही थीं, दबी जबान जाने क्या बकती जा रही थीं, यह घंटी के भक्ति-भावना-भरे मधुर स्वर में सुनायी नहीं देता था□

लेकिन बुआजी दूसरे दिन गयीं नहीं। जब तीन-चार दिन बाट चन्द्र गया तो देखा बाहर के सेहन में डॉ. शुक्ला बैठे हुए हैं और दरवाजा पकड़कर बुआजी खड़ी बातें कर रही हैं। लेकिन इस तक बुआजी काफी गम्भीर थीं और किसी विषय पर मन्त्रणा कर रही थीं। चन्द्र के पास पहुँचने पर फौरन वे चुप हो गयीं और चन्द्र की ओर संश्फैत नेत्रों से देखने लगीं। डॉ. शुक्ला बोले, “आओ चन्द्र, बैठो।” चन्द्र बगल की कुर्सी खींचकर बैठ गया तो डॉ. साहब बुआजी से बोले, “हाँ, हाँ, बात करो, और ये तो घर के आदमी हैं। इनके बारे में सुधा ने नहीं बताया तुम्हें? ये चन्द्र हैं हमारे शिष्य, बहुत अच्छा लड़का हैं।”

“अच्छा, अच्छा, भइया बइठो, तू तो एक दिन अउर आये रहो, बी. ए. में पढ़त हौं सुधा के संगे।”
“नहीं बुआजी, मैं रिसर्च कर रहा हूँ।”

“गाह, बहुत खुशी भई तोको देख के-हाँ तो सुकुल!” वे अपने भाई से बोलीं, “फिर यही ठीक होई। बिनती का बियाह टाल देव और अगर ई लड़का ठीक हुई जाय तो सुधा का बियाह अषाढ़-भर में निपटाय देव। अब अच्छा नाहीं लागत। नूँठ ऐसी बिटिया, सूनी माँग लिये छर्रावा करत है एहर-ओहर!” बुआ बोलीं।

“हाँ, ये तो ठीक हैं।” डॉ. शुक्ला बोले, “मैं खुद सुधा का ब्याह अब टालना नहीं चाहता। बी.ए. तक की शिक्षा काफी है वरना फिर हमारी जाति में तो लड़के नहीं मिलते। लेकिन ये जो लड़कातुम बता रही हो तो घर वाले कुछ एतराज तो नहीं करेंगे! और फिर, लड़का तो हमें अच्छा लगा लेकिन घरवाले पता नहीं कैसे हों?”

“अरे तो घरवालन से का करै का कै है तोको। लड़कातो अलग है, अपने-आप पढ़ रहा है और लड़की अलग रहिए, न सास का डर, न ननद की धौंस। हम पत्री मँगवाये देइत ही, मिलवाय लेव।”

डॉ. शुक्ला ने स्वीकृति में सिर हिला दिया।

“तो फिर बिनती के बारे में का कहत हौ? अगहन तक टाल दिया जाय न?” बुआजी ने पूछा।

“हाँ हाँ,” डॉ. शुक्ला ने विचार में डूबे हुए कहा।

“तो फिर तुम ही इन जूतापिटड, बड़नक़ू से कठ दियौ; आय के कल से हमरी छाती पर मँग दलत हैं।” बुआजी ने चन्द्र की ओर किसी को निर्देशित करते हुए कहा और चली गयीं।

चन्द्र चुपचाप बैठा था। जाने क्या सोच रहा था। शायद कुछ भी नहीं सोच रहा था! मगर फिर भी अपनी विचार-शून्यता में ही खोया हुआ-सा था। जब डॉ. शुक्ला उसकी ओर मुड़े और कहा, “चन्द्र!” तो वह एकदम से चौंक गया और जाने किस दुनिया से लौट आया। डॉ. साहब ने कहा, “अरे! तुम्हारी तबीयत खराब है क्या?”

“नहीं तो।” एक फीकी हँसी हँसकर चन्द्र ने कहा।

“तो मेहनत बहुत कर रहे होगे□ कितने अध्याय लिखे अपनी थीसिस के? अब मार्च खत्म हो रहा है और पूरा अप्रैल तुम्हें थीसिस टाइप कराने में लगेगा और मई में हर हालत में जमा हो जानी चाहिए□”

“जी, हाँ□” बड़े थके खर में चन्द्र ने कहा, “दस अध्याय हो ही गये हैं□ तीन अध्याय और होने हैं और अनुक्रमणिका बनानी है□ अप्रैल के पहले सप्ताह तक खत्म हो ही जायेगा□ अब सिवा थीसिस के और करना ही क्या है?” एक बहुत गहरी साँस लेते हुए चन्द्र ने कहा और माथा थामकर बैठ गया□

“कुछ तबीयत ठीक नहीं है तुम्हारी□ चाय बनवा लो! लेकिन सुधा तो है नहीं, न महराजिन है□” डॉक्टर साहब बोले□

अरे सुधा, सुधा के नाम पर चन्द्र चौंक गया□ हाँ, अभी वह सुधा के ही बारे में सोच रहा था, जब बुआजी बात कर रही थीं□ क्या सोच रहा था□ देखो...उसने याद करने की कोशिश की पर कुछ याद ही नहीं आ रहा था, पता नहीं क्या सोच रहा था□ पता नहीं था...कुछ सुधा के ब्याह की बात हो रही थी शायद□ क्या बात हो रही थी...?

“कहाँ गयी है सुधा?” चन्द्र ने पूछा□

“आज शायद साबिर साहब के यहाँ गयी है□ उनकी लड़की उनके साथ पढ़ती है न, वहीं गयी है बिनती के साथ□”

“अब इमतहान को कितने दिन रह गये हैं, अभी घूमना बन्द नहीं हुआ उनका?”

“नहीं, दिन-भर पढ़ने के बाद उठी थी, उसके भी सिर में दर्द था, चली गयी□ घूम-फिर लेने दो बेचारी को, अब तो जा ही रही है□” डॉ. शुक्ला बोले, एक हँसी के साथ जिसमें आँखें छलके पड़ते थे□

“कहाँ तय हो रही है सुधा की शादी?”

“बेरेली में□ अब उसकी बुआ ने बताया है□ जन्मपत्री दी है मिलवा लो, फिर तुम जरा सब बातें देख लेना□ तुम तो थीसिस में व्यस्त रहोगे; मैं जाकर लड़का देख आऊँगा□ फिर मई के बाद जुलाई तक सुधा का ब्याह कर देंगे□ तुम्हें डॉक्टरेट मिल जाए और यूनिवर्सिटी में जगह मिल जाए□ बस हम तो लड़का-लड़की दोनों से फारिंग□” डॉ. शुक्ला बहुत अजब-से खरों में बोले□ चन्द्र चुप रहा□

“बिनती को देखा तुमने?” थोड़ी देर बाद डॉक्टर ने पूछा□

“हाँ, वही न जिनको डॉट रही थीं ये उस दिन?”

“हाँ, वही□ उसके ससुर आये हुए हैं; उनसे कहना है कि अब शादी अगहन-पूस के लिए टाल दें□ पहले सुधा की हो जाए, वह बड़ी है और हम चाहते हैं कि बिनती को तब तक विदुषी का दूसरा खंड भी दिला दें□ आओ, उनसे बात कर लें अभी□” डॉ. शुक्ला उठे□ चन्द्र भी उठा□ और उसने अन्दर जाकर बिनती के ससुर के दिव्य दर्शन प्राप्त किये□ वे एक पलंग पर बैठे थे, लेकिन वह अभागा पलंग उनके ऊपर के ही लिए नाकाफ़ी था□ वे चित पढ़े थे और साँस लेते थे तो पुराणों की उस कथा का प्रदर्शन हो जाता था कि धीर-धीर पृथ्वी का गोला वाराह के मुँह पर कैसे ऊपर उठा होगा□ सिर पर छोटे-छोटे बाल और कमर में एक अँगोछे के अलावा सारा शरीर दिग्म्बर□ सुबह शायद गंगा नहाकर आये थे क्योंकि पेट तक में चन्दन, गोली लगी हुई थी□ डॉ. शुक्ला जाकर बगल में कुर्सी पर बैठ गये; “कहिए दुबेजी, कुछ जलपान किया आपने?”

पतँग चरमराया। उस विशाल मांस-पिंड में एक भूडोल आया और दुबेजी जलपान की याद करके गद्दद होकर हँसने लगे। एक थलथलाहट हुई और कमरे की दीवारें गिरते-गिरते बचीं। दुबेजी ने उठकर बैठने की कोशिश की लेकिन असफल होकर लेटे-ही-लेटे कहा, “हो-हो! सब आपकी कृपा है। खूब छकके मिष्टान्न पाया। अब जरा सरबत-उरबत कुछ मिलै तो जो कुछ पेट में जलन है, सो शान्त होय!” उन्होंने पेट पर अपना हाथ फेरते हुए कहा।

“अच्छा, ऐरे भाई जरा सरबत बना देना।” डॉ. शुक्ला ने दरवाजे की ओट में खड़ी हुई बुआजी से कहा। बुआजी की आवाज सुनाई पड़ी, “बाप रे! ई ठाई मन की लहास कम-से-कम मसक-भर के शरबत तो उलीचै लैईहैं।” चन्द्र को हँसी आ गयी, डॉ. शुक्ला मुसकराने लगे लेकिन दुबेजी के दिव्य मुखमंडल पर कहीं क्षोभ या उल्लास की रेखा तक न आयी। चन्द्र मन-ठी-मन सोचने लगा, प्राचीन काल के ब्रह्मानन्द सिद्ध महात्मा ऐसे ही होते होंगे।

बुआ एक गिलास में शरबत ले आयी। दुबेजी काँख-काँखकर उठे और एक सौंस में शरबत गले से नीचे उतारकर, गिलास नीचे रख दिया।

“दुबेजी, एक प्रार्थना है आपसे!” डॉ. शुक्ला ने हाथ जोड़कर बड़े विनीत रूप में कहा।

“नहीं! नहीं!” बात काटकर दुबेजी बोले, “बस अब हम कुछ न खावें। आप बहुत सत्कार किये। हम एठी से छक गये। आपको देखके तो हमें बड़ी प्रसन्नता भई। आप सचमुच दिव्य पुरुष हो! और फिर आप तो लड़की के मामा हो, और बियाह-शादी में जो है सो मामा का पक्ष देखा जाता है। ई तो भगवान् ऐसा जोड़ मिलाइन है कि वरपक्ष अउर कन्यापक्ष दुझन के मामा बड़े ज्ञानी हैं। आप हैं तौन कालिज में पुरफेसर और ओहर हमार सार-लड़काकेर मामा जौन हैं तौन डाकघर में मुंशी हैं, आपकी किरणा से।” दुबेजी ने गर्व से कहा। चन्द्र मुसकराने लगा। “ऐरे सो तो आपकी नम्रता है लेकिन मैं सोच रहा हूँ कि गरमियों में अगर ब्याह न रखकर जाड़े में रखा जाए तो ज्यादा अच्छा होगा। तब तक आपके सत्कार की हम कुछ तैयारी भी कर लेंगे।” डॉ. शुक्ला बोले।

दुबेजी इसके लिए तैयार नहीं थे। वे बड़े अवरज में भरकर उनकी ओर देखने लगे। लेकिन बहुत कठने-सुनने के बाद अन्त में वे इस शर्त पर राजी हुए कि अगहन तक हर तीज-त्यौहार पर लड़के के लिए कुरता-धोती का कपड़ा और ज्याह-बारह रूपये नजराना जाएगा और अगहन में अगर ब्याह हो रहा है तो सास-ननद और जिठानी के लिए गरम साड़ी जाएगी और जब-जब दुबेजी गंगा नहाने प्रयागराज आएंगे तो उनका रोचना एक थाल, कपड़े और एक खर्णमण्डित जौ से होगा। जब डॉ. शुक्ला ने यह रुपीकार कर लिया तो दुबेजी ने उठकर अपना झालम-झोला कुरता गले में अटकाया और अपनी गठरी हाथ में उठाकर बोले-

“अच्छा तो अब आज्ञा देव, हम चली अब, और ई रूपिया लड़की को दै दियो, अब बात पक्की है।” और अपनी टेट से उन्होंने एक मुड़ा-मुड़ाया तेल लगा हुआ पाँच रूपये का नोट निकाला और डॉ. साहब को दे दिया।

“चन्द्र एक ताँगा कर दो, दुबेजी को। अच्छा, आओ हम भी चलें।”

जब ये लोग लौटे तो बुआजी एक थैली से कुछ धर-निकाल रही थीं। डॉ. शुक्ला ने नोट बुआजी को देते हुए कहा, “लो, ये दे गये तुम्हारे समधीं जी, लड़की को।”

पाँच का नोट देखा तो बुआजी सुलग उठीं—”न गहना न गुरिया, बियाह पक्का कर गये ई कागज के टुकड़े से। अपना-आप तो सोना और रूपिया और कपड़ा सब लीलै को तैयार और देत के दाँई

पेट पिराता है जूता-पिटऊ का □ और शम चाही तो जमदूत ई लहास की बोटी-बोटी करके शमजी के कुतन को खिलड़हैं□”

चन्द्र हँसी के मारे पागल हो गया □

बुआजी ने थैली का मुँह बौधा और बोलीं, “अबहिन तक बिनती का पता नै, और ऊ तुरकन-मतेच्छन के हियाँ कुछ खा-पी लिहिस तो फिर हमरे हियाँ गुजारा नाहि ना ओका □ बड़ी आजाद हुई गयी है सुधा की सह पाय के □ आवै देव, आज हम भद्रा उतारित ही □”

डॉ. शुक्ला अपने कमरे में चले गये □ चन्द्र को प्यास लगी थी □ उसने बुआजी से एक गिलास पानी माँगा □ बुआ ने एक गिलास में पानी दिया और बोलीं, “बैठ के पियो बेटा; बैठ के □ कुछ खाय का देई?”

“नहीं, बुआजी!” बुआ बैठकर हँसिया से कटहल छीतने लगीं और चन्द्र पानी पीता हुआ सोचने लगा, बुआजी अभी से इतनी मीठी बात करती हैं तो आखिर बिनती से ही इतनी कटु क्यों हैं? इतने में अन्दर चप्पलों की आहट सुनाई पड़ी □ चन्द्र ने देखा, सुधा और बिनती आ गयी थीं □ सुधा अपनी चप्पल उतारकर अपने कमरे में चली गयी और बिनती आँगन में आयी □ बुआजी के पास आकर बोली, “लाओ, हम तरकारी काट देइं □”

“चल हट ओहर □ पढ़िले नहाव जाय के □ कुछ खाय तो नै रहयो □ एती देर कहाँ धूमति रहयो ? हम खूब अच्छी तरह जानित ही तूँ हमार नाक कटाइन के रहबो □ पतुरियन के ढँग सीखे हैं!” बिनती चुप □ एक तीखी वेदना का भाव उसके मुँह पर आया □ उसने आँखें झुका लीं □ योयी नहीं और चुपचाप सिर झुकाये हुए सुधा के कमरे में चली गयी □

चन्द्र क्षण-भर खड़ा रहा □ फिर सुधा के पास गया □ सुधा के कमरे में अकेले बिनती खाट पर पड़ी थी-औंधे मुँह, तकिया में मुँह छिपाये □ चन्द्र को जाने कैसा लगा □ उसके मन में बेहद तरस आ रहा था इस बेचारी लड़की के लिए, जिसके पिता हैं ही नहीं और जिसे प्रताड़ना के सिवा कुछ नहीं मिला □ चन्द्र को बहुत ही ममता लग रही थी इस अभागिनी के लिए □ वह सोचने लगा, कितना अन्तर है दोनों बछनों में □ एक बचपन से ही कितने असीम दुलार, वैभव और स्नेह में पली है और दूसरी प्रताड़ना और कितने अपमान में पली और वह भी अपनी ही सगी माँ से जो दुनिया भर के प्रति रनेहमरी है, अपनी लड़की को छोड़कर □

वह कुर्सी पर बैठकर चुपचाप यही सोचने लगा-अब आगे भी इस बेचारी को क्या सुख मिलेगा □ ससुराल कैसी है, यह तो ससुर को देखकर ही मालूम देता है □

इतने में सुधा कपड़े बदलकर हाथ में किताब लिये, उसे पढ़ती हुई, उसी में डूबी हुई आयी और खाट पर बैठ गयी □ “अरे! बिनती! कैसे पड़ी हो? अच्छा तुम हो चन्द्र! बिनती! उठो!” उसने बिनती की पीठ पर हाथ रखकर कहा □

बिनती, जो अभी तक निचेष्ट पड़ी थी, सुधा के ममता-भरे स्पर्श पर फूट-फूटकर ये पड़ी □ तो सुधा ने चन्द्र से कहा, “क्या हुआ बिनती रानी को □” और बिनती भी जोरों से सिसकियाँ भरने लगी तो सुधा ने चन्द्र से कहा, “कुछ तुमने कहा होगा □ चौदह दिन बाट आये और आते ही लगे रुलाने उसे □ कुछ कहा होगा तुमने! समझ गये □ धूमने के लिए उसे भी डॉटा होगा □ हम साफ-साफ बताये देते हैं चन्द्र, हम तुम्हारी डॉट सह लेते हैं इसके ये मतलब नहीं कि अब तुम इस बेचारी पर भी रोब झाड़ने लगो □ इससे कभी कुछ कहा तो अच्छी बात नहीं होगी!”

“तुम्हारे दिमाग का कोई पुरजा ढीला हो गया है क्या? मैं क्यों कहूँगा बिनती को कुछ!”

“बस फिर यहीं बात तुम्हारी बुरी लगती है” सुधा बिगड़कर बोली, “क्यों नहीं कहोगे बिनती को कुछ? जब हमें कहते हो तो उसे क्यों नहीं कहोगे? हम तुम्हारे अपने हैं तो क्या वो तुम्हारी अपनी नहीं है?”

चन्द्र छेंस पड़ा- “सो क्यों नहीं है, लेकिन तुम्हारे साथ न ऐसे निबाह, न वैसे निबाह”

“ये सब कुछ हम नहीं जानते! क्यों ये रही है यह?” सुधा बोली धमकी के खर में

“बुआजी ने कुछ कहा था” चन्द्र बोला

“अरे तो उसके लिए क्या रोना! इतना समझाया तुझे कि उनकी तो आदत है छेंसकर टाल दिया कर चल उठ! छेंसती है कि गुदगुदाऊँ” सुधा ने गुदगुदाते हुए कहा बिनती ने उसका हाथ पकड़कर झटक दिया और फिर सिसकियाँ भरने लगी

“नहीं मानेगी तू?” सुधा बोली, “अभी ठीक करती हूँ तुझे मैं चन्द्र, पकड़ो तो इसका हाथ” चन्द्र चुप रहा

“नहीं उठे उठो, तुम इसका हाथ पकड़ लो तो हम अभी इसे हँसाते हैं” सुधा ने चन्द्र का हाथ पकड़कर बिनती की ओर बढ़ते हुए कहा चन्द्र ने अपना हाथ खींच लिया और बोला, “वह तो ये रही है और तुम बजाय समझाने के उसे परेशान कर रही हो”

“अरे जानते हो, क्यों ये रही है? अभी इसके ससुर आये थे, वो बहुत मोटे थे तो ये सोच रही है कहीं 'वो' भी मोटे हों!” सुधा ने फिर उसकी गरदन गुदगुदाकर कहा

बिनती हँस पड़ी सुधा उछल पड़ी- “लो, ये तो हँस पड़ी, अब ये ओगी?” अब फिर सुधा ने गुदगुदाना शुरू किया बिनती पहले तो हँसी से लोट गयी फिर पल्ला सँभालते हुए बोली, “छः, दीदी! वो बैठे हैं कि नहीं!” और उठकर बाहर जाने लगी

“कहाँ चली?” सुधा ने पूछा

“जा रही हूँ नहाने” बिनती पल्लू से सिर ढँकते हुए चल दी

“क्यों, मैंने तेरा बदन छू दिया इसलिए?” सुधा हँसकर बोली, “ऐ चन्द्र, वो गेसू का छोटा भाई है न-हसरत, मैंने उसे छू लिया तो फौरन उसने जाकर अपना मुँह साबुन से धोया और अमीजान से बोला, “मेरा मुँह जूँठा हो गया” और आज हमने गेसू के अखतर मियाँ को देखा बड़े मजे के हैं मैं तो गेसू से बात करती रही लेकिन बिनती और फूल ने बहुत छेड़ा उन्हें बेचारे घबरा गये फूल बहुत चुलबुली है और बड़ी नाजुक है बड़ी बोलने वाली है और बिनती और फूल का खूब जोड़ मिला दोनों खूब गाती हैं”

“बिनती गाती भी है?” चन्द्र ने पूछा, “हमने तो येते ही देखा”

“अरे बहुत अच्छा गाती है इसने एक गाँव का गाना बहुत अच्छा गाया था... अरे देखो वह सब बताने मैं हम तुम पर गुरसा होना तो भूल ही गये कहाँ रहे चार योज? बोलो, बताओ जल्दी से”

“व्यस्त थे सुधा, अब थीसिस तीन हिस्सा लिख गयी इधर हम लगातार पाँच घंटे से बैठकर लिखते थे!” चन्द्र बोला

“पाँच घंटे!” सुधा बोली, “दूध आजकल पीते हो कि नहीं?”

“हाँ-हाँ, तीन गायें खरीद ली हैं...” चन्द्र बोला

“नहीं, मजाक नहीं, कुछ खाते-पीते रहना, कहीं तबीयत खराब हुई तो अब हमारा इमतहान है, पड़े-पड़े मरखी मारोगे और अब हम देखने भी नहीं आ सकेंगे”

“अब कितना कोर्स बाकी है तुम्हारा?”

“कोर्स तो खत्म था हमारा कुछ कठिनाइयाँ थीं सो पिछले दो-तीन हफ्ते में मास्टर साहब ने बता दी थीं अब दोहराना है लेकिन बिनती का इमतहान मई में है, उसे भी तो पढ़ाना है”

“अच्छा, अब चलें हम्”

“अरे बैठो! फिर जाने कैंदिन बाद आओगे आज बुआ तो चली जाएँगी फिर कल से यहाँ पढ़ो न तुमने बिनती के संसुर को देखा था?”

“हाँ, देखा था!” चन्द्र उनकी रूपरेखा याद करके हँस पड़ा- “बाप ऐ! पूरे टैक थे वे तो”

“बिनती की ननद से तुम्हारा ब्याह करवा दें करोगे?” सुधा बोली, “लड़की इतनी ही मोटी है उसे कभी डॉट लेना तो देखेंगे तुम्हारी हिम्मत्”

ब्याह! एकदम से चन्द्र को याद आ गया अभी बुआ ने बात की थी सुधा के ब्याह की तब उसे कैसा लगा था? कैसा लगा था? उसका दिमाग धूम गया था लगा जैसे एक असहनीय दर्द था या क्या था-जो उसकी नस-नस को तोड़ गया एकदम...

“क्या हुआ, चन्द्र? अरे चुप क्यों हो गये? डर नहीं मोटी लड़की के नाम से?” सुधा ने चन्द्र का कन्धा पकड़कर झकझोरते हुए कहा

चन्द्र एक फीकी हँसी हँसकर रह गया और चुपचाप सुधा की ओर देखने लगा सुधा चन्द्र की निगाह से सहम गयी चन्द्र की निगाह में जाने क्या था, एक अजब-सा पथराया सूनापन, एक जाने किस दर्द की अमंगल छाया, एक जाने किस पीड़ा की मूँक आवाज, एक जाने कैसी पिघलती हुई-सी उदासी और वह भी गहरी, जाने कितनी गहरी... और चन्द्र था कि एकटक देखता जा रहा था, एकटक अपलक...

सुधा को जाने कैसा लगा ये अपना चन्द्र तो नहीं, ये अपने चन्द्र की निगाह तो नहीं है चन्द्र तो ऐसी निगाह से, इस तरह अपलक तो सुधा को कभी नहीं देखता था नहीं, यह चन्द्र की निगाह तो नहीं इस निगाह में न शरारत है, न डॉट न दुलार और न करुणा इसमें कुछ ऐसा है जिससे सुधा बिल्कुल परिचित नहीं, जो आज चन्द्र में पहली बार दिखाई पड़ रहा है सुधा को जैसा डर लगने लगा, जैसे वह काँप उठी नहीं, यह कोई दूसरा चन्द्र है जो उसे इस तरह देख रहा है यह कोई अपरिचित है, कोई अजनबी, किसी दूसरे देश का कोई व्यक्ति जो सुधा को...

“चन्द्र, चन्द्र! तुम्हें क्या हो गया!” सुधा की आवाज मारे डर के काँप रही थी, उसका मुँह पीला पड़ गया, उसकी सौँस बैठने लगी थी- “चन्द्र...” और जब उसका कुछ बस न चला तो उसकी आँखों में आँसू छलक आये

हाथों पर एक गरम-गरम बूँद आकर पड़ते ही चन्द्र चौंक गया “अरे सुधी! शोओ मत नहीं पगली हमारी तबीयत कुछ ठीक नहीं है, एक गिलास पानी तो ले आओ”

सुधा अब भी काँप रही थी चन्द्र की आवाज में अभी भी वह मुलायमियत नहीं आ पायी थी वह पानी लाने के लिए उठी

“नहीं, तुम कहीं जाओ मत, तुम बैठो यहाँ” उसने उसकी हथेली अपने माथे पर रखकर जोर से अपने हाथों में दबा ली और कहा, “सुधा!...”

“क्यों, चन्द्र!”

“कुछ नहीं!” चन्द्र ने आवाज दी लेकिन लगता था वह आवाज चन्द्र की नहीं थी न जाने

कहाँ से आ रही थी...

“क्या सिर में दर्द है? बिनती, एक गिलास पानी लाओ जल्दी से”

सुधा ने आवाज ढो चन्द्र जैसे पहले-सा हो गया-”अरे! अभी मुझे क्या हो गया था? तुम क्या बात कर रही थीं सुधा?”

“पता नहीं तुम्हें अभी क्या हो गया था?” सुधा ने घबरायी हुई गौरेया की तरह सठमकर कहा चन्द्र खस्थ हो गया-”कुछ नहीं सुधा! मैं ठीक हूँ मैं तो यूँ ही तुम्हें प्रेशान करने के लिए चुप था” उसने हँसकर कहा

“हाँ, चलो रहने दो तुम्हारे सिर में दर्द है जखर से” सुधा बोली बिनती पानी लेकर आ गयी थी

“तो, पानी पियो!”

“जहीं, हमें कुछ नहीं चाहिए” चन्द्र बोला

“बिनती, जरा पेनबाम ले जाओ” सुधा ने गिलास जबर्दस्ती उसके मुँह से लगाते हुए कहा बिनती पेनबाम ले आयी थी-”बिनती, तू जरा लगा दे इनके अरे खड़ी क्यों हैं? कुर्सी के पीछे खड़ी होकर माथे पर जरा हल्की उँगली से लगा दे”

बिनती आज्ञाकारी लड़की की तरह आगे बढ़ी, लेकिन फिर छिक कर गयी किसी अजनबी लड़के के माथे पर कैसे पेनबाम लगा दे “चलती है या अभी काट के गाड़ देंगे यहीं मोटकी कहीं की! खा-खाकर मुटानी है जरा-सा काम नहीं होता”

बिनती ने हारकर पेनबाम लगाया चन्द्र ने उसका हाथ हटा दिया तो सुधा ने बिनती के हाथ से पेनबाम लेकर कहा, “आओ, हम लगा दें” बिनती पेनबाम देकर चली गयी तो चन्द्र बोला, “अब बताओ, क्या बात कर रही थीं? हाँ, बिनती के ब्याह की ये उनके ससुर तो बहुत ही भड़े मालूम पड़ रहे थे क्या देखकर ब्याह कर रही हो तुम लोग?”

“पता नहीं क्या देखकर ब्याह कर रही हैं बुआ असल में बुआ पता नहीं क्यों बिनती से इतनी चिन्हती हैं, वह तो चाहती हैं किसी तरह से बोझ टले सिर से लेकिन चन्द्र, यह बिनती बड़ी खुश है यह तो चाहती है किसी तरह जल्दी से ब्याह हो!” सुधा मुसकराती हुई बोली

“अच्छा, यह खुद ब्याह करना चाहती है!” चन्द्र ने ताज्जुब से पूछा

“और क्या? अपने ससुर की खूब सेवा कर रही थी सुबह बल्कि पापा तो कठ रहे थे कि अभी यह बी.ए. कर ले तब ब्याह करो हमसे पापा ने कहा इससे पूछने को हमने पूछा तो कहने लगी बी.ए. करके भी वही करना होगा तो बेकार टालने से क्या फायदा फिर पापा हमसे बोले कि कुछ वजहों से अगहन में ब्याह होगा, तो बड़े ताज्जुब से बोली, “अगहन में?”

“सुधी, तुम जानती हो अगहन में उसका ब्याह क्यों टल रहा है? पहले तुम्हारा ब्याह होगा”

चन्द्र हँसकर बोला वह पूर्णतया शान्त था और उसके स्वर में कम-से-कम बाहर सिवा चुहल के और कुछ भी न था

“मेरा ब्याह, मेरा ब्याह!” अँखें फाड़कर, मुँह फैलाकर, हाथ नचाकर, कुत्तूल-भेरे आश्र्य से सुधा ने कहा और फिर हँस पड़ी, खूब हँसी-”कौन करेगा मेरा ब्याह? बुआ? पापा करने ही नहीं देंगे हमारे बिना पापा का काम ही नहीं चलेगा और बाबूसाहब, तुम किस पर आकर रंग जमाओगे? ब्याह मेरा हूँ!” सुधा ने मुँह बिचकाकर उपेक्षा से कहा

“नहीं सुधा, मैं जम्भीरता से कठ रहा हूँ तीन-चार महीने के अन्दर तुम्हारा ब्याह हो

जाएगा।” चन्द्र उसे विश्वास दिलाते हुए बोला।

“अरे जाओ!” सुधा ने हँसते हुए कहा, “ऐसे हम तुम्हारे बनाने में आ जाएँ तो हो चुका।”

“अच्छा जाने दो। तुम्हारे पास कोई पोस्टकार्ड है? लाओ जरा इस कॉमरेड को एक चिठ्ठी तो लिख दें।” चन्द्र बात बदलकर बोला। पता नहीं क्यों इस विषय की बात के चलने में उसे कैसा लगता था।

“कौन कामरेड?” सुधा ने पूछा, “तुम भी कम्युनिस्ट हो गये क्या?”

“नहीं, जी, वो बरेली का सोशलिस्ट लड़का कैलाश जिसने झगड़े में हम लोगों की जान बचायी थी। हमने तुम्हें बताया नहीं था सब किस्सा उस झगड़े का, जब हम और पापा बाहर गये थे।”

“हाँ-हाँ, बताया था। उसे जरूर खत लिख दो!” सुधा ने पोस्टकार्ड देते हुए कहा, “तुम्हें पता मालूम है?”

चन्द्र जब पोस्टकार्ड लिख रहा था तो सुधा ने कहा, “शुनो, उसे लिख देना कि पापा की सुधा, पापा की जान बचाने के एवज में आपकी बहुत कृतज्ञ है और कभी अन्यर हो सके तो आप इलाहाबाद जरूर आएँ!...लिख दिया?”

“हाँ!” चन्द्र ने पोस्टकार्ड जेब में रखते हुए कहा।

“चन्द्र, हम भी सोशलिस्ट पार्टी के मेम्बर होंगे!” सुधा ने मचलते हुए कहा।

“वलो, अब तुम्हें नयी सनक सवार हुई। तुम क्या समझ रही हो सोशलिस्ट पार्टी को। यजनीतिक पार्टी है वह। यह मत करना कि सोशलिस्ट पार्टी में जाओ और लौटकर आओ तो पापा से कहो-अरे हम तो समझे पार्टी हैं, वहाँ चाय-पानी मिलेगा। वहाँ तो सब लोग लेकर देते हैं।”

“धृत् हम कोई बेवकूफ हैं क्या?” सुधा ने बिंगड़कर कहा।

“नहीं, सो तो तुम बुद्धिसान्ति हो, लैकिन लड़कियों की यजनीतिक बुद्धि कुछ ऐसी ही होती है।” चन्द्र बोला।

“अच्छा रहने दो। लड़कियाँ न हों तो काम ढीं न चले।” सुधा ने कहा।

“अच्छा, सुधा! आज कुछ रूपये दोगी। हमारे पास पैसे खतम हैं। और सिनेमा देखना है जरा।” चन्द्र ने बहुत दुलार से कहा।

“हाँ-हाँ, जरूर देंगे तुम्हें। मतलबी कहीं के!” सुधा बोली, “अभी-अभी तुम लड़कियों की बुराई कर रहे थे न?”

“तो तुम और लड़कियों में से थोड़े ही हो। तुम तो हमारी सुधा हो। सुधा महान।”

सुधा पिघल गयी। “अच्छा, कितना लोगे?” अपनी पॉकेट में से पाँच रूपये का नोट निकालकर बोली, “इससे काम चल जाएगा?”

“हाँ-हाँ, आज जरा सोच रहे हैं पम्मी के यहाँ जाएँ, तब सेकेंड शो जाएँ।”

“पम्मी यानी के यहाँ जाओगे। समझ गये, तभी तुमने चाचाजी से ब्याह करने से इनकार कर दिया। लैकिन पम्मी तुमसे तीन साल बड़ी है। लोग क्या कहेंगे?” सुधा ने छेड़ा।

“ऊँठ, तो क्या हुआ जी! सब यों ही चलता है।” चन्द्र हँसकर टाल गया।

“तो फिर खाना यहीं खाये जाओ और कार लेते जाओ।” सुधा ने कहा।

“मँगाओ!” चन्द्र ने पलँग पर पैर फैलाते हुए कहा। खाना आ गया। और जब तक चन्द्र खाता रहा, सुधा सामने बैठी रही और बिनती दौड़-दौड़कर पूँछी लाती रही।

10

जब चन्द्र पर्मी के बँगले पर पहुँचा तो शाम होने में देर नहीं थी □ लेकिन अभी फर्स्ट शो शुरू होने में देरी थी □ पर्मी गुलाबों के बीच में टहल रही थी और बर्टी एक अच्छा-सा सूट पहने लॉन पर बैठा था और घुटनों पर ठुड़डी रखे कुछ सोच-विचार में पड़ा था □ बर्टी के चेहरे पर का पीलापन भी कुछ कम था □ वह देखने से इतना भयंकर नहीं मालूम पड़ता था □ लेकिन उसकी आँखों का पागलपन अभी वैसा ही था और खूबसूरत सूट पहनने पर भी उसका हाल यह था कि एक कालर अन्दर था और एक बाहर □

पर्मी ने चन्द्र को आते देखा तो खिल गयी □ “हल्लो, कपूर! क्या हाल है □ पता नहीं क्यों आज सुबह से मेरा मन कह रहा था कि आज मेरे मित्र जरूर आएंगे □ और शाम के वक्त तुम तो इतने अच्छे लगते हो जैसे वह जगमग सितारा जिसे देखकर कीट्स ने अपनी आखिरी सार्जेट लिखी थी □” पर्मी ने एक गुलाब तोड़ा और चन्द्र के कोट के बटन होल में लगा दिया □ चन्द्र ने बड़े भय से बर्टी की ओर देखा कि कहीं गुलाब को तोड़े जाने पर वह फिर चन्द्र की गरदन पर सवार न हो जाए □ लेकिन बर्टी कुछ बोला नहीं □ बर्टी ने सिर्फ हाथ उठाकर अभिवादन किया और फिर बैठकर सोचने लगा □

पर्मी ने कहा, “आओ, अन्दर चलें □” और चन्द्र और पर्मी दोनों ड्राइंग रूम में बैठ गये □ चन्द्र ने कहा, “मैं तो डर रहा था कि तुमने गुलाब तोड़कर मुझे दिया तो कहीं बर्टी नाराज न हो जाए, लेकिन वह कुछ बोला नहीं □”

पर्मी मुसकरायी, “हाँ, अब वह कुछ कहता नहीं और पता नहीं क्यों गुलाबों से उसकी तबीयत भी इधर हट गयी □ अब वह उतनी परवाह भी नहीं करता □”

“क्यों?” चन्द्र ने ताज्जुब से पूछा □

“पता नहीं क्यों □ मेरी तो समझ में यह आता है कि उसका जितना विश्वास अपनी पत्नी पर था वह इधर धीरे-धीरे हट गया और इधर वह यह विश्वास करने लगा है कि सचमुच वह सार्जेट को प्यार करती थी □ इसलिए उसने फूलों को प्यार करना छोड़ दिया □”

“अच्छा! लेकिन यह हुआ कैसे? उसने तो अपने मन में इतना गहरा विश्वास जमा रखा था कि मैं समझता था कि मरते दम तक उसका पागलपन न छूटेगा □” चन्द्र ने कहा □

“नहीं, बात यह हुई कि तुम्हारे जाने के दो-तीन दिन बाद मैंने एक दिन सोचा कि मान लिया जाए अगर मेरे और बर्टी के विचारों में मतभेद है तो इसका मतलब यह नहीं कि मैं उसके गुलाब चुराकर उसे मानसिक पीड़ा पहुँचाऊँ और उसका पागलपन और बढ़ाऊँ □ बुद्धि और तर्क के अलावा भावना और सहानुभूति का भी एक महत्व मुझे लगा और मैंने फूल चुराना छोड़ दिया □ दो-तीन दिन वह बेहद खुश रहा, बेहद खुश और मुझे भी बड़ा सन्तोष हुआ कि लो अब बर्टी शायद ठीक हो जाए □ लेकिन तीसरे दिन सहसा उसने अपना खुरपा फेंक दिया, कई गुलाब के

पौधे उखाइकर फेंक दिये और मुझसे बोला, “अब तो कोई फूल भी नहीं चुराता, अब भी वह इन फूलों में नहीं मिलती। वह जरूर सार्जेंट के साथ जाती है। वह मुझे प्यार नहीं करती, हरगिज नहीं करती, और वह योने लगा।” बस उसी दिन से वह गुलाबों के पास नहीं जाता और आजकल बहुत अच्छे-अच्छे सूट पहनकर धूमता है और कहता है-क्या मैं सार्जेंट से कम सुन्दर हूँ! और इधर वह बिल्कुल पागल हो गया है। पता नहीं किससे अपने-आप लड़ता रहता है।

चन्द्र ने ताज्जुब से सिर हिलाया।

“हाँ, मुझे बड़ा दुःख हुआ!” पम्मी बोली, “मैंने तो, हमर्दी की कि फूल चुराने बन्द कर दिये और उसका नतीजा यह हुआ। पता नहीं क्यों कपूर, मुझे लगता है कि हमर्दी करना इस दुनिया में सबसे बड़ा पाप है। आदमी से हमर्दी कभी नहीं करनी चाहिए।”

चन्द्र ने सहसा अपनी घड़ी देखी।

“क्यों, अभी तुम नहीं जा सकते। बैठो और बातें सुनो, इसलिए मैंने तुम्हें ठोस्त बनाया है। आज दो-तीन साल हो गये, मैंने किसी से बातें ही नहीं की हैं और तुमसे इसलिए मैंने मित्रता की है कि बातें करेंगी।”

चन्द्र हँसा, “आपने मेरा अच्छा उपयोग ढूँढ़ निकाला।”

“नहीं, उपयोग नहीं, कपूर! तुम मुझे गलत न समझना। जिंदगी ने मुझे इतनी बातें बतायी हैं और यह किताबें जो मैं इधर पढ़ने लगी हैं, इन्होंने मुझे इतनी बातें बतायी हैं कि मैं चाहती हूँ कि उन पर बातचीत करके अपने मन का बोझ हल्का कर लूँ। और तुम्हें बैठकर सुननी होंगी सभी बातें।”

“हाँ, मैं तैयार हूँ लेकिन किताबें पढ़नी कब से शुरू कर दीं तुमने?” चन्द्र ने ताज्जुब से पूछा।

“अभी उस दिन मैं डॉ. शुक्ला के यहाँ गयी। उनकी लड़की से मालूम हुआ कि तुम्हें कविता पसन्द है। मैंने सोचा, उसी पर बातें करें और मैंने कविताएँ पढ़नी शुरू कर दीं।”

“अच्छा, तो देखता हूँ कि दो-तीन हफ्ते में भाई और बहन दोनों में कुछ परिवर्तन आ गये।”

पम्मी कुछ बोली नहीं, हँस दी।

“मैं सोचता हूँ पम्मी कि आज सिनेमा देखने जाऊँ। कार है साथ में, अभी पन्द्रह मिनट बाकी है। चाहो तो चलो।”

“सिनेमा! आज चार साल से मैं कहीं नहीं गयी हूँ। सिनेमा, हौंजी, बाल डांस-सभी जगह जाना बन्द कर दिया है मैंने। मेरा दम घुटेगा हॉल के अन्दर लेकिन चलो देखें, अभी भी कितने ही लोग वैसे ही खुशी से सिनेमा देखते होंगे।” एक गहरी साँस लेकर पम्मी बोली, “बर्टी को ले चलोगे?”

“हाँ, हाँ! तो चलो उठो, फिर देर हो जाएगी!” चन्द्र ने घड़ी देखते हुए कहा।

पम्मी फौरन अन्दर के कमरे में गयी और एक जार्जेंट का हल्का भूरा गाउन पहनकर आयी। इस रंग से वह जैसे निखर आयी। चन्द्र ने उसकी ओर देखा, तो वह लजा गयी और बोली, “इस तरह से मत देखो। मैं जानती हूँ यह मेरा सबसे अच्छा गाउन है। इसमें कुछ अच्छी लगती होऊँगी। चलो!” और आकर उसने बेतकल्तुफी से उसके कन्धे पर ढाथ रख दिया।

दोनों बाहर आये तो बर्टी लॉन पर धूम रहा था। उसके पैर लड़खड़ा रहे थे। लेकिन वह बड़ी शान से सीना ताने था। “बर्टी, आज मिस्टर कपूर मुझे सिनेमा दिखाना जा रहे हैं। तुम भी चलोगे?”

“हूँ!” बर्टी ने सिर हिलाकर जोर से कहा, “सिनेमा जाऊँगा? कभी नहीं भूलकर भी नहीं तुमने मुझे क्या समझा है? मैं सिनेमा जाऊँगा?” धीरे-धीरे उसका स्वर मन्द पड़ गया...” अगर सिनेमा में वह सार्जेंट के साथ मिल गयी तो! तो मैं उसका गला घोंट दूँगा” अपने गले को दबाते हुए बर्टी बोला और इतनी जोर से दबा दिया अपना गला कि आँखें लाल हो गयीं और खाँसने लगा। खाँसी बन्द हुई तो बोला, “वह मुझे प्यार नहीं करती। वह सार्जेंट को प्यार करती है। वह उसी के साथ घूमती है। अगर वह मिल जाएगी सिनेमा में तो उसकी हत्या कर डालूँगा, तो पुलिस आएगी और खेल खत्म हो जाएगा। तुम जानते हो मि. कपूर, मैं उससे कितना नफरत करता हूँ...और...और लेकिन नहीं, कौन जानता है मैं नफरत करता होऊँ और वह मुझे...कुछ समझ में नहीं आता, मैं पागल हूँ, ओफ!” और वह सिर थामकर बैठ गया। पम्मी ने चन्द्र का हाथ पकड़कर कहा, “चलो, यहाँ रहने से उसका दिमाग और खराब होगा। आओ!”

दोनों जाकर कार में बैठे। चन्द्र खुद ही ड्राइव कर रहा था। पम्मी बोली, “बहुत दिन से मैंने कार नहीं ड्राइव की है। लाओ, आज ड्राइव करूँ।”

पम्मी ने स्टीयरिंग अपने हाथ में ले ली। चन्द्र इधर बैठ गया।

थोड़ी देर में कार शीजेंट के सामने जा पहुँची। वित्र था-'सेलामी, हेयर शी डांस्ट' ('सेलामी, जहाँ वह नाची थी')। चन्द्र ने टिकट लिया और दोनों ऊपर बैठ गये। अभी न्यूज रील चल रही थी। सहसा पम्मी ने कहा, “कपूर, सेलामी की कहानी मालूम है?”

“न! क्या यह कोई उपन्यास है!” चन्द्र ने पूछा।

“नहीं, यह बाइबिल की एक कहानी है। असल में एक राजा था हैराद। उसने अपने भाई को मारकर उसकी पत्नी से अपनी शादी कर ली। उसकी भतीजी थी सेलामी, जो बहुत सुन्दर थी और बहुत अच्छा नाचती थी। हैराद उस पर मुब्द हो गया। लेकिन सेलामी एक पैगम्बर पर मुब्द थी। पैगम्बर ने सेलामी के प्रणय को ठुकरा दिया। एक बार हैराद ने सेलामी से कहा कि यदि तुम नाचो तो मैं तुम्हें कुछ दे सकता हूँ। सेलामी नाची और पुरस्कार में उसने अपना अपमान करने वाले पैगम्बर का सिर माँगा। हैराद वचनबद्ध था। उसने पैगम्बर का सिर तो दे दिया लेकिन बाद में इस भय से कि कहीं राज्य पर कोई आपति न आये, उसने सेलामी को भी मरवा डाला।”

चन्द्र को यह कहानी बहुत अच्छी लगी। तब तो वित्र बहुत ही अच्छा होगा, उसने सोचा। सुधा की परीक्षा है वरना सुधा को भी दिखला देता। लेकिन क्या नैतिकता है इन पाश्चात्य देशों की कि अपनी भतीजी पर ही हैराद मुब्द हो गया। उसने कहा पम्मी से-

“लेकिन हैराद अपनी भतीजी पर ही मुब्द हो गया?”

“तो क्या हुआ! यह तो सेक्स है मि. कपूर। सेक्स कितनी भयंकर शक्तिशाली भावना है, यह भी शायद तुम नहीं समझते। अभी तुम्हारी आँखों में बड़ा भोलापन है। तुम रूप की आग के संसार से दूर मालूम पड़ते हो, लेकिन शायद तो-एक साल बाद तुम भी जानोगे कि यह कितनी भयंकर चीज है। आदमी के सामने वक्त-बेवक्त, नाता-रिश्ता, मर्यादा-अमर्यादा कुछ भी नहीं रह जाता। वह अपनी भतीजी पर मोहित हुआ तो क्या? मैंने तो तुम्हारे यहाँ एक पौराणिक कहानी पढ़ी थी कि महादेव अपनी लड़की सरखती पर मुब्द हो गये।”

“महादेव नहीं, ब्रह्मा।” चन्द्र बोला।

“हाँ, हाँ, बह्नां मैं भूल गयी थी तो यह तो सेवस है आदमी को कहाँ ले जाता है, यह अन्दाज भी नहीं किया जा सकता तुम तो अभी बच्चों की तरह भोले हो और ईश्वर न करे तुम कभी इस प्याले का शरबत चखो मैं भी तो तुम्हारी इसी पवित्रता को प्यार करती हूँ” पर्मी ने चन्द्र की ओर देखकर कहा, “तुम जानते हो, मैंने तलाक क्यों दिया? मेरा पति मुझे बहुत चाहता था लेकिन मैं विवाहित जीवन के वासनात्मक पहलू से घबरा उठी! मुझे लगने लगा, मैं आदमी नहीं हूँ बस मांस का लोथड़ा हूँ जिसे मेरा पति जब चाहे मसल दे, जब चाहे... ऊब गयी थी! एक गहरी नफरत थी मेरे मन में तुम आये तो तुम बड़े पवित्र लगे तुमने आते ही प्रणय-याचना नहीं की तुम्हारी आँखों में भूख नहीं थी छमदर्दी थी, झोंठ था, कोमलता थी, निःछलता थी मुझे तुम काफी अच्छे लगे तुमने मुझे अपनी पवित्रता देकर जिला दिया...” चन्द्र को एक अजब-सा गौरव अनुभव हुआ और पर्मी के प्रति एक बहुत ऊँची आदर-भावना उसने पवित्रता देकर जिला दिया रहसा चन्द्र के मन में आया-लेकिन यह उसके व्यक्तित्व की पवित्रता किसकी दी हुई है सुधा की ही न! उसी ने तो उसे सिखाया है कि पुरुष और नारी में कितने ऊँचे सम्बन्ध रह सकते हैं।

“क्या सोच रहे हो?” पर्मी ने अपना हाथ कपूर की गोद में रख दिया।

कपूर सिंहर गया लेकिन शिष्टाचारवश उसने अपना हाथ पर्मी के कन्धे पर रख दिया। पर्मी ने दो क्षण के बाद अपना हाथ हटा लिया और बोली, “कपूर, मैं सोच रही हूँ अगर यह विवाह संस्था हट जाए तो कितना अच्छा हो पुरुष और नारी में मित्रता हो बौद्धिक मित्रता और दिल की छमदर्दी। यह नहीं कि आदमी औरत को वासना की प्यास बुझाने का प्याला समझो और औरत आदमी को अपना मालिक। असल में बंधने के बाद ही, पता नहीं क्यों सम्बन्धों में विकृति आ जाती है। मैं तो देखती हूँ कि प्रणय विवाह भी होते हैं तो वह असफल हो जाते हैं क्योंकि विवाह के पहले आदमी औरत को ऊँची निगाह से देखता है, छमदर्दी और प्यार की चीज समझता है और विवाह के बाद सिर्फ वासना की। मैं तो प्रेम में भी विवाह-पक्ष में नहीं हूँ और प्रेम में भी वासना का विशेष करती हूँ।”

“लेकिन हर लड़की ऐसी थोड़े ही होती है!” चन्द्र बोला, “तुम्हें वासना से नफरत हो लेकिन हर एक को तो नहीं।”

“हर एक को होती है लड़कियाँ बस वासना की झलक, एक हल्की सिंहरन, एक गुदगुदी परसन्द करती हैं। बस, उसी के पीछे उन पर चाहे जो दोष लगाया जाय लेकिन अधिकतर लड़कियाँ कम वासनाप्रिय होती हैं, लड़के ज्यादा।”

चित्र शुरू हो गया। वह चुप हो गयी। लेकिन थोड़ी ही देर में मालूम हुआ कि चित्र श्रमात्मक था। वह बाइबिल की सेलामी की कहानी नहीं थी। वह एक अमेरिकन नर्तकी और कुछ डाकुओं की कहानी थी। पर्मी ऊब गयी। अब जब डाकू पकड़कर सेलामी को एक जंगल में ले जाये तो इंटरवल हो गया और पर्मी ने कहा, “अब चलो, आधे ही चित्र से तबीयत ऊब गयी।”

दोनों उठ खड़े हुए और नीचे आये।

“कपूर, अबकी बार तुम ड्राइव करो!” पर्मी बोली।

“नहीं, तुम्हीं ड्राइव करो” कपूर बोला।

“कहाँ चलें,” पर्मी ने स्टार्ट करते हुए कहा।

“जहाँ चाहो।” कपूर ने विचारों में डूबे हुए कहा।

पम्मी ने गाड़ी खूब तेज चला दी ॥ सड़के साफ थीं ॥ पम्मी का कालर फहराने लगा और उड़कर चन्द्र के गालों पर थपकियाँ लगाने लगा ॥ चन्द्र दूर रिसक गया ॥ पम्मी ने चन्द्र की ओर देखा और बजाय कालर ठीक करने के, गले का एक बटन और खोल दिया और चन्द्र को पास खींच लिया ॥ चन्द्र चुपचाप बैठ गया ॥ पम्मी ने एक हाथ स्टीयरिंग पर रखा और एक हाथ से चन्द्र का हाथ पकड़े रही जैसे वह चन्द्र को दूर नहीं जाने देनी ॥ चन्द्र के बदन में एक हल्की सिफरन नाच रही थी ॥ क्यों? शायद इसलिए कि हवा ठंडी थी या शायद इसलिए कि... उसने पम्मी का हाथ अपने हाथ से हटाने की कोशिश की ॥ पम्मी ने हाथ खींच लिया और कार के अन्दर की बिजली जला दी ॥

कपूर चुपचाप ठाकुर साहब के बारे में सोचता रहा ॥ कार चलती रही ॥ जब चन्द्र का ध्यान टूटा तो उसने देखा कार मैकफर्सन लेक के पास रुकी है ॥

दोनों उतरे ॥ बीच में सड़क थी, इधर नीचे उतरकर झील और उधर गंगा बह रही थी ॥ आठ बजा होगा ॥ रात हो गयी थी, चारों तरफ सन्नाटा था ॥ बस सितारों की हल्की रोशनी थी ॥ मैकफर्सन झील काफी सूख गयी थी ॥ किनारे-किनारे मछली मारने के मचान बने थे ॥

“इधर आओ!” पम्मी बोली ॥ और दोनों नीचे उतरकर मचान पर जा बैठे ॥ पानी का धरातल शान्त था ॥ सिर्फ कठीं-कठीं मछलियों के उछलने या सौंस लेने से पानी हिल जाता था ॥ पास ही के नीवां गाँव में किसी के यहाँ शायद शादी थी जो शहनाई का हल्का खर हवाओं की तरणों पर हिलता-डुलता हुआ आ रहा था ॥ दोनों चुपचाप थे ॥ थोड़ी देर बाद पम्मी ने कहा, “कपूर, चुपचाप रहो, कुछ बात मत करना ॥ उधर देखो पानी में ॥ सितारों का प्रतिबिम्ब देख रहे हो ॥ चुप्पे से सुनो, ये सितारे क्या बातें कर रहे हैं ॥”

पम्मी सितारों की ओर देखने लगी ॥ कपूर चुपचाप पम्मी की ओर देखता रहा ॥ थोड़ी देर बाद सहसा पम्मी एक बाँस से टिककर बैठ गयी ॥ उसके गले के दो बटन खुले हुए थे ॥ और उसमें से रूप की चाँदनी फटी पड़ती थी ॥ पम्मी आँखें बन्द किये बैठी थी ॥ चन्द्र ने उसकी ओर देखा और फिर जाने क्यों उससे देखा नहीं गया ॥ वह सितारों की ओर देखने लगा ॥ पम्मी के कालर के बीच से सितारे टूट-टूटकर बरस रहे थे ॥

सहसा पम्मी ने आँखें खोल दीं और चन्द्र का कन्धा पकड़कर बोली, “कितना अच्छा हो अगर आदमी हमेशा सम्बन्धों में एक दूरी रखे ॥ सेवा न आने दे ॥ ये सितारे हैं, देखो कितने नजदीक हैं ॥ करोड़ों बरस से साथ हैं, लेकिन कभी भी एक दूसरे को छूते तक नहीं, तभी तो संग निभ जाता है ॥” सहसा उसकी आवाज में जाने क्या छलक आया कि चन्द्र जैसे मदहोश हो गया-बोली वह-”बस ऐसा हो कि आदमी अपने प्रेमास्पद को निकटतम लाकर छोड़ दे, उसको बाँधे न ॥ कुछ ऐसा हो कि होठों के पास खींचकर छोड़ दे ॥” और पम्मी ने चन्द्र का माथा होठों तक लाकर छोड़ दिया ॥ उसकी गरम-गरम सौंसें चन्द्र की पलकों पर बरस गयी...”कुछ ऐसा हो कि आदमी उसे अपने हृदय तक खींचकर फिर हटा दे ॥” और चन्द्र को पम्मी ने अपनी बाँहों में घेरकर अपने वक्ष तक खींचकर छोड़ दिया ॥ वक्ष की गरमाई चन्द्र के रोम-रोम में सुलग उठी, वह बेचैन हो उठा ॥ उसके मन में आया कि वह अभी यहाँ से चला जाए ॥ जाने कैसा लग रहा था उसे ॥ सहसा पम्मी बोली, “लेकिन नहीं, हम लोग मित्र हैं और कपूर, तुम बहुत पवित्र हो, निष्कलंक हो और तुम पवित्र रहोगे ॥ मैं जितनी दूरी, जितना अन्तर, जितनी पवित्रता पसन्द करती हूँ, वह तुम्हें है और हम लोगों में हमेशा निभेगी जैसे इन सितारों में हमेशा निभती आयी

हैं॥”

चन्द्र चुपचाप सोचने लगा, “वह पवित्र है॥ एकाएक उसका मन जैसे ऊबने लगा॥ जैसे एक विहंग शिशु घबराकर अपने नीँँड के लिए तड़प उठता है, वैसे ही वह इस वक्त तड़प उठा सुधा के पास जाने के लिए-क्यों? पता नहीं क्यों? यहाँ कुछ है जो उसे जकड़ लेना चाहता है॥ वह क्या करे?

परमी उठी, वह भी उठा॥ बाँस का मचान हिला॥ लहरों में हरकत हुई॥ करोड़ों साल से अलग और पवित्र सितारे हिले, आपसे में टकराये और चूर-चूर होकर बिखर गये॥

11

रात-भर चन्द्र को ठीक से नींद नहीं आयी। अब गरमी काफी पड़ने लगी थी। एक सूती चादर से ज्यादा नहीं ओढ़ा जाता था और चन्द्र ने वह भी ओढ़ना छोड़ दिया था, लेकिन उस दिन रात को अक्सर एक अजब-सी कँपकँपी उसे झकझोर जाती थी और वह कसकर चादर लपेट लेता था, फिर जब उसकी तबीयत घुटने लगती तो वह उठ बैठता था। उसे रात-भर नींद नहीं आयी; बार-बार झपकी आयी और लगा कि खिड़की के बाहर सुनसान अँधेरे में से अजब-सी आवाजें आती हैं और नागिन बनकर उसकी साँसों में लिपट जाती हैं। वह परेशान हो उठता है, इतने में फिर कहीं से कोई मीठी सतरंगी संगीत की लहर आती है और उसे सचेत और सजग कर जाती है। एक बार उसने देखा कि सुधा और गेसू कहीं चली जा रही हैं। उसने गेसू को कभी नहीं देखा था लेकिन उसने सपने में गेसू को पहचान लिया। लेकिन गेसू तो पर्मी की तरह गाउन पहने हुए थी! फिर देखा बिनती रो रही है और इतना बिलख-बिलखकर रो रही है कि तबीयत घबरा जाए। घर में कोई नहीं है। चन्द्र समझ नहीं पाता कि वह क्या करे! अकेले घर में एक अपरिचित लड़की से बोलने का साहस भी नहीं होता उसका। किसी तरह हिम्मत करके वह समीप पहुँचा तो देखा ऐ, यह तो सुधा है। सुधा लुटी हुई-सी मालूम पड़ती है। वह बहुत हिम्मत करके सुधा के पास बैठ गया। उसने सोचा, सुधा को आशासन दे लेकिन उसके हाथों पर जाने कैसे सुकुमार जंजीरे कसी हुई हैं। उसके मुँह पर किसी की साँसों का भार है। वह निश्चेष्ट है। उसका मन अकुला उठा। वह चौंककर जाग गया तो देखा वह पसीने से तर है। वह उठकर टहलने लगा। वह जाग गया था लेकिन फिर भी उसका मन खस्थ नहीं था। कमरे में ही टहलते-टहलते वह फिर लेट गया। लगा जैसे सामने की खुली खिड़की से सैकड़ों तारे टूट-टूटकर भयानक तेजी से आ रहे हैं और उसके माथे से टक्कर-टक्करकर चूर-चूर हो जाते हैं। एक मर्मांतक पीड़ा उसकी नसों में खौल उठी और लगा जैसे उसके अंग-अंग में चिताएँ धधक रही हैं।

जैसे-तैसे रात कटी और सुबह उठते ही वह यूनिवर्सिटी जाने से पहले सुधा के यहाँ गया। सुधा लेटी हुई पढ़ रही थी। डॉ. शुक्ला पूजा कर रहे थे। बुआजी शायद रात को चली गयी थी। क्योंकि बिनती बैठी तरकारी काट रही थी और खुश नजर आ रही थी। चन्द्र सुधा के कमरे में गया। देखते ही सुधा मुसक्कर पड़ी। बोली कुछ नहीं लेकिन आते ही उसने चन्द्र के अंग-अंग को अपनी निगाहों के स्वागत में समेट लिया। चन्द्र सुधा के पैरों के पास बैठ गया। “कल रात को तुम कार लेकर वापस आये तो चुप्पे से चले गये!” सुधा बोली, “कहो, कल कौन-सा खेल देखा?”

“कल बहुत बड़ा खेल देखा; बहुत बड़ा खेल, सुधी!” चन्द्र व्याकुलता से बोला, “अरे जाने कैसा मन हो गया कि रात-भर नींद ही नहीं आयी।” और उसके बाद चन्द्र सब बता गया। कैसे वह

सिनेमा गया। उसने पर्मी से क्या बात की? उसके बाद कैसे कार पर उसने चन्द्र को पास खींच लिया? कैसे वे लोग मैकफर्सन झील गये और वहाँ पर्मी पागल हो गयी? फिर कैसे चन्द्र को एकदम सुधा की याद आने लगी और फिर यात-भर चन्द्र को कैसे-कैसे सपने आये? सुधा बहुत गम्भीर होकर मुँह में पेन्सिल दबाये कुहनी टेके बस चुपचाप सुनती रही और अन्त में बोली, “तो तुम इतने परेशान क्यों हो गये, चन्द्र! उसने तो अच्छी ही बात कही थी। यह तो अच्छा ही है कि ये सब जिसे तुम सेवस कहते हो, यह सम्बन्धों में न आए। उसमें क्या बुराई है? क्या तुम चाहते हो कि सेवस आए?”

“कभी नहीं, तुम मुझे अभी तक नहीं समझ पायी।”

“तो ठीक है, तुम भी नहीं चाहते कि सेवस आए और वह भी नहीं चाहती कि सेवस आए तो झगड़ा क्या है? क्यों, तुम उदास क्यों हो इतने?” सुधा बोली बड़े अवरज से।

“लैकिन उसका व्यवहार कैसा है?” चन्द्र ने सुधा से कहा।

“ठीक तो है। उसने बता दिया तुम्हें कि इतना अन्तर होना चाहिए। समझ गये। तुम लालची आदमी, चाहते होगे यह भी अन्तर न रहे! इसीलिए तुम उदास हो गये, छिः!” होंठों में मुसकराहट और आँखों में शरारत की झलक छिपाते हुए सुधा बोली।

“तुम तो मजाक करने लगी।” चन्द्र बोला।

सुधा सिर्फ चन्द्र की ओर देखकर मुसकराती रही। चन्द्र सामने लगी हुई तसवीर की ओर देखता रहा। फिर उसने सुधा के कबूतरों-जैसे उजले मासूम नन्हे पैर अपने हाथ में ले लिये और भर्यायी हुई आवाज में बोला, “सुधा, तुम कभी हम पर विश्वास न हार बैठना।”

सुधा ने किताब बन्द करके रख दी और उठकर बैठ गयी। उसने चन्द्र के दोनों हाथ अपने हाथों में लेकर कहा, “पागल कहीं के! हमें कहते हो, अभी सुधा में बचपन है और तुममें क्या है! वाह रे छुईमुई के फूल! किसी ने हाथ पकड़ लिया, किसी ने बदन छू लिया तो घबरा गये! तुमसे अच्छी लड़कियाँ होती हैं।” सुधा ने उसके दोनों हाथ झकझोरते हुए कहा।

“नहीं सुधी, तुम नहीं समझती। मेरी जिंदगी में एक ही विश्वास की चट्ठान है। वह हो तुम। मैं जानता हूँ कि कितने ही जल-प्रलय हों लैकिन तुम्हारे सहारे मैं हमेशा ऊपर रहूँगा। तुम मुझे डूबने नहीं दोगी। तुम्हारे ही सहारे मैं लहरों से खेल भी सकता हूँ। लैकिन तुम्हारा विश्वास अन्तर कभी हिला तो मैं किन अँधेरी गहराइयों में डूब जाऊँगा, यह कभी मैं सोच नहीं पाता।” चन्द्र ने बड़े कातर स्वर में कहा।

सुधा बहुत गम्भीर हो गयी। छाण-भर वह चन्द्र के चेहरे की ओर देखती रही, फिर चन्द्र के माथे पर झूलती हुई एक लट को ठीक करती हुई बोली, “चन्द्र, और मैं किसके विश्वास पर चल रही हूँ, बोलो! लैकिन मैंने तो कभी नहीं कहा कि चन्द्र अपना विश्वास मत हारना! और क्या कहूँ। मुझे अपने चन्द्र पर पूरा विश्वास है। मरते दम तक विश्वास रहेगा। फिर तुम्हारा मन इतना डगमगा क्यों गया? बुरी बात है न?”

चन्द्र ने सुधा के कन्धे पर अपना सिर रख दिया। सुधा ने उसका हाथ लेकर कहा, “ताओ, यहाँ छुआ था पर्मी ने तुम्हें!” और उसका हाथ होंठों तक ले गयी। चन्द्र काँप गया, आज सुधा को यह क्या हो गया है। लैकिन होंठों तक हाथ ले जाकर झाड़ने-फूँकनेवालों की तरह सुधा ने फूँककर कहा, “जाओ, तुम्हारे हाथ से पर्मी के स्पर्श का जहर उतर गया। अब तो ठीक हो गये! पवित्र हो गये! छू-मन्त्र!”

चन्द्र हँस पड़ा □ उसका मन शान्त हो गया □ सुधा में जादू था □ सरमुच जादू था □ बिनती चाय ले आयी □ दो प्याले □ सुधा बोली, “अपने लिए भी लाओ □” बिनती ने सिर हिलाया □ सुधा ने चन्द्र की ओर देखकर कहा, “ये पगली जाने क्यों तुमसे झेंपती हैं?”

“झेंपती कहाँ हूँ?” बिनती ने प्रतिवाद किया और प्याला भी ले आयी और जमीन पर बैठ गयी □ सुधा ने प्याला मुँह से लगाया और बोली, “चन्द्र, तुमने पम्मी को गलत समझा है □ पम्मी बहुत अच्छी लड़की है □ तुमसे बड़ी भी है और तुमसे ज्यादा समझदार, और उसी तरह व्यवहार भी करती है □ तुम अब यह क्यों सोचते हो □ मेरा मतलब समझ गये न □”

“जी हाँ, गुरुआनीजी, अच्छी तरह से!” चन्द्र ने हाथ जोड़कर विनम्रता से कहा □ बिनती हँस पड़ी और उसकी चाय छलक गयी □ नीचे रखी हुई चन्द्र की जरीदार पेशावरी सैंडिल भीग गयी □ बिनती ने झुककर एक अँगोछे से उसे पोंछना चाहा तो सुधा चिल्ला उठी-”हाँ-हाँ, छुओ मत □ कहीं इनकी सैंडिल भी बाट में आके न रोने लगे □ सुन बिनती, एक लड़की ने कत इन्हें छू लिया तो आप आज उदास थे □ अभी तुम सैंडिल छुओ तो कहीं जाके कोतावली में रपट न कर दें □”

चन्द्र हँस पड़ा □ और उसका मन धुलकर ऐसे निखर गया जैसे शरद का नीलाभ आकाश □

“अब पम्मी के यहाँ कब जाओगे?” सुधा ने शरारत-भरी मुसकराहट से पूछा □

“कल जाऊँगा! ठाकुर साहब पम्मी के हाथ अपनी कार बेच रहे हैं तो कान्ज पर दस्तखत करना है □” चन्द्र ने कहा, “अब मैं निःदर हूँ □ कहो बिनती, तुम्हारे ससुर का क्या कोई खत नहीं आया □”

बिनती झेंप गयी □ चन्द्र चल दिया □

थोड़ी दूर जाकर फिर मुड़ा और बोला, “अच्छा सुधा, आज तक जो काम हो बता दो फिर एक महीने तक मुझसे कोई मतलब नहीं □ हम थीसिस पूरी करेंगे □ समझीं?”

“समझो!” हाथ पटककर सुधा बोली □

12

सचमुच डेढ़ महीने तक चन्द्र को होश नहीं रहा कि कहाँ क्या हो रहा है बिसरिया रोज सुधा और बिनती को पढ़ाने आता रहा, सुधा और बिनती दोनों ही का इम्तहान खत्म हो गया। पर्मी दो बार सुधा और चन्द्र से मिलने आयी लेकिन चन्द्र एक बार भी उसके यहाँ नहीं गया। मिश्रा का एक खत बरेली से आया लेकिन चन्द्र ने उसका भी जवाब नहीं दिया। डॉक्टर साहब ने अपनी पुस्तक के दो अध्याय लिख डाले लेकिन उसने एक दिन भी बहस नहीं की। बिनती उसे बराबर चाय, दूध, नाश्ता, शखबत और खरबूजा देती रही लेकिन चन्द्र ने एक बार भी उसके ससुर का नाम लेकर नहीं चिठ्ठाया। सुधा क्या करती है, कहाँ जाती है, चन्द्र से क्या कहती है, चन्द्र को कोई होश नहीं, बस उसका पेन, उसके कागज, स्टडीरूम की मेज और चन्द्र है कि आखिर थीसिस पूरी करके ही माना।

7 मई को जब उसने थीसिस का आखिरी पन्ना लिखकर पूरा किया और सन्तोष की साँस ली तो देखा कि शाम के पाँच बजे हैं, सायबान में अभी परदा पड़ा है लेकिन धूप उतार पर है और लू बन्द हो गयी है। उसकी कुर्सी के पीछे एक चटाई बिछाये हुए सुधा बैठी है। ह्यूगो का अधपढ़ा हुआ उपन्यास बगल में खुला हुआ औंधा पड़ा है और आप चन्द्र की एक मोटी-सी इकनॉमिक्स की किताब खोले उस पर कलम से कुछ गोदा-गोदी कर रही है।

“सुधा!” एक गहरी साँस लेकर अँगड़ाई लेते हुए चन्द्र ने कहा, “लो, आज आखिरकार जान छुटी। बस, अब दो-तीन महीने में माबदौलत डॉक्टर बन जाएँगे।”

सुधा अपने कार्य में व्यस्त चन्द्र ने क्या कहा, यह सुनकर भी गुम। चन्द्र ने हाथ बढ़ाकर चोटी झटक दी। “हाय रे! छमें नहीं अच्छा लगता, चन्द्र!” सुधा बिंगड़कर बोली, “तुम्हारे काम के बीच में कोई बोलता है तो बिंगड़ जाते हो और हमारा काम थोड़े ही महत्वपूर्ण है।” कहकर सुधा फिर पेन लेकर गोदने लगी।

“आखिर कौन-सा उपनिषद लिख रही हैं आप? जरा देखें तो!” चन्द्र ने किताब खींच ली। टाजिंग की इकनॉमिक्स की किताब में एक पूरे पन्ने पर सुधा ने एक बिल्ली बनायी थी और अगर निगाह जरा चूक जाए तो आप कह नहीं सकते थे यह चौरासी लाख योनियों में से किस योनि का जीव है, लेकिन चूँकि सुधा कह रही है कि यह बिल्ली है, इसलिए मानना होगा कि यह बिल्ली ही है।

चन्द्र ने सुधा की बाँह पकड़कर कहा, “उठ! आलसी कहीं की, चल उठा ये पोथा! चलके पापा के पैर छू आएँ?”

सुधा चुपचाप उठी और आज्ञाकारी लड़की की तरह मोटी फाइल उठा ली। दरवाजे तक पहुँचकर रुक गयी और चन्द्र के कब्जे पर फाइलें टिकाकर बोली, “ऐ चन्द्र, तो सच्ची अब तुम डॉक्टर हो जाओगे?”

“और क्या?”

“आहा!” कहकर जो सुधा उछली तो फाइल हाथ से खिसकी और सभी पन्ने जमीन पर □
चन्द्र झळा गया □ उसने गुस्से से लाल होकर एक धूंसा सुधा को मार दिया □ “अरे याम रे!”
सुधा ने पीठ सीधी करते हुए कहा, “बडे परोपकारी हो डॉक्टर चन्द्र कपूर! हमें बिना थीसिस
लिये डिग्री दे दी! लेकिन बहुत जोर की थी!”

चन्द्र हँस पड़ा □

खैर दोनों पापा के पास गये □ वे भी लिखकर ही उठे थे और शरबत पी रहे थे □ चन्द्र ने जाकर
कहा, “पूरी हो गयी □” और झुककर पैर छू लिये □ उन्होंने चन्द्र को सीने से लगाकर कहा,
“बस बेटा, अब तुम्हारी तपस्या पूरी हो गयी □ अब जुलाई से यूनिवर्सिटी में जरूर आ जाओगे
तुम!”

सुधा ने पोथा कोच पर रख दिया और अपने पैर बढ़ाकर खड़ी हो गयी □ “ये क्या?” पापा ने
पूछा □

“ठमारे पैर नहीं छुएँगे क्या?” सुधा ने गम्भीरता से कहा □

“चल पगली! बहुत बदतमीज होती जा रही है!” पापा ने कृत्रिम गुस्से से कहा, “चन्द्र! बहुत
सिर चढ़ी हो गयी है □ जरा ढबाकर रखा करो □ तुमसे छोटी है कि नहीं?”

“अच्छा पापा, अब आज मिठाई मिलनी चाहिए □” सुधा बोली, “चन्द्र ने थीसिस खत्म की है?”
“जरूर, जरूर बेटी!” डॉक्टर शुक्ला ने जेब से दस का नोट निकालकर दे दिया, “जाओ, मिठाई
मँगवाकर खाओ तुम लोग □”

सुधा हाथ में नोट लिये उछलते हुए रटडी रूम में आयी, पीछे-पीछे चन्द्र □ सुधा रुक गयी और
अपने मन में हिसाब लगाते हुए बोली, “दस रुपये पौंड ऊन □ एक पौंड में आठ लच्छी □ छठ
लच्छी में एक शाल □ बाकी बची दो लच्छी □ दो लच्छी में एक स्वेटर □ बस एक बिनती का
स्वेटर, एक हमारा शाल □”

चन्द्र का माथा ठनका □ अब मिठाई की उम्मीद नहीं □ फिर भी कोशिश करनी चाहिए □

“सुधा, अभी से शाल का क्या करोगी? अभी तो बहुत गरमी है!” चन्द्र बोला □

“अबकी जाड़े में तुम्हारा ब्याघ होगा तो आखिर हम लोग नयी-नयी चीज का इन्तजाम करें न □
अब डॉक्टर हुए, अब डॉक्टरनी आएँगी!” सुधा बोली □

खैर, बहुत मनाने-बहलाने-फुसलाने पर सुधा मिठाई मँगवाने को राजी हुई □ जब नौकर मिठाई
लेने चला गया तो चन्द्र ने चारों ओर देखकर पूछा, “कहाँ गयी बिनती? उसे भी बुलाओ कि
अकेले-अकेले खा लोगी!”

“वह पढ़ रही है मास्टर साहब से!”

“क्यों? इमतहान तो खत्म हो गया, अब क्या पढ़ रही है?” चन्द्र ने पूछा □

“विदुषी का दूसरा खण्ड तो दे रही है न सितम्बर में!” सुधा बोली □

“अच्छा, बुलाओ बिसरिया को भी!” चन्द्र बोला □

“अच्छा, मिठाई आने दो □” सुधा ने कहा और फाइल की ओर देखकर कहा, “मुझे इस कम्बरक्त
पर बहुत गुस्सा आ रहा है □”

“क्यों?”

“इसकी वजह से तुम डेढ़ महीने सीधे से बोले तक नहीं □ इमतहान वाले दिन सुबह-सुबह तुम्हें

हाथ जोड़ने आयी तो तुमने सिर पर हाथ भी नहीं रखा!” सुधा ने शिकायत के स्वर में कहा □
“तो अब आशीर्वाद दे दें □ अब तो खत्म हुई थीसिस □ अब जितना चाहो बात कर लो □ थीसिस
न लिखते तो फिर तुम्हारे चन्द्र को उपाधि कहाँ से मिलती?” चन्द्र ने दुलार से कहा □
“तो फिर कन्वोकेशन पर तुम्हारी गाउन हम पठनकर फोटो खिंचाएँगे!” सुधा मचलकर बोली □
इतने में नौकर मिठाई ले आया □ “जाओ, बिनतीजी को बुला लाओ □” चन्द्र ने कहा □
बिनती आयी □

“तुम पढ़ चुकी!” चन्द्र ने पूछा □

“अभी नहीं □” बिनती बोली □

“अच्छा, अब आज पढ़ाई बन्द करो, उन्हें भी बुला लाओ □ मिठाई खाई जाए □” चन्द्र ने कहा □
“अच्छा!” कहकर बिनती जो मुझी तो सुधा बोली, “अरे लालचिन! ये तो पूछ ले कि मिठाई काहे
की है?”

“मुझे मालूम है!” बिनती मुसकराती हुई बोली, “उनके यहाँ आज गये होंगे, पम्मी के यहाँ फिर
आज कुछ उस दिन जैसी बात हुई होगी □”

सुधा हँस पड़ी □ चन्द्र झोंप गया □ बिनती चली गयी बिसरिया को बुलाने □

“अब तो ये तुमसे बोलने लगी!” सुधा ने कहा □

“हाँ, यह है बड़ी सुशील लड़की और बहुत शान्त □ हमें बहुत अच्छी लगती है □ बोलना तो जैसे
आता ही नहीं इसे □”

“हाँ, लेकिन अब खूब सीख रही है □ इसकी गुरु मिली है गेस्ट □ हमसे भी ज्यादा गेस्ट से पठने
लगी है इसकी □ दोनों ब्याह करने जा रही हैं और दोनों उसी की बातें करती हैं जब मिलती हैं
तब □” सुधा बोली □

“और कविता भी करती है यह, तुम एक बार कह रही थीं?” चन्द्र ने पूछा □

“नहीं जी, असल में एक बड़ी सुन्दर-सी नोट-बुक थी, उसमें यह जाने क्या लिखती थी? हमें
नहीं दिखाती थी □ बाद में हमने देखा कि एक डायरी है □ उसमें धोबी का हिसाब लिखती
थी □”

“तो कविता नहीं लिखती! ताज्जुब है, वरना सोलह बरस के बाद प्रेम करके कविता करना तो
लड़कियों का फैशन हो गया है, उतना ही व्यापक जितना उलटा पल्ला ओढ़ना □” चन्द्र
बोला □

“चला तुम्हारा नारी-पुराण!” सुधा बिगड़ी □

मिठाई खाने वाले आये □ आगे-आगे बिनती, पीछे-पीछे बिसरिया □ अभिवादन के बाद बिसरिया
बैठ गया □ “कठो बिसरिया, तुम्हारी शिष्या कैसी है?”

“बस अद्वितीय □” कवि बिसरिया ने सिर हिलाकर कहा □ सुधा मुसकरा दी, चन्द्र की ओर
देखकर □

“और ये सुधा कैसी थी?”

“बस अद्वितीय □” बिसरिया ने उसी तरह कहा □

“दोनों अद्वितीय हैं? साथ ही!” चन्द्र ने पूछा □

सुधा और बिनती दोनों हँस दीं □ बिसरिया नहीं समझ पाया कि उसने कौन-सी हँसने की बात
की थी और जब नहीं समझ पाया तो पहले सिर खुजलाने लगा फिर खुट भी हँस पड़ा □ उसकी

हँसी पर तीनों और हँस पड़े□

“चन्द्र, मास्टर साहब भी खूब हैं□ एक दिन बिनती को महादेवी की वह कविता पढ़ा रहे थे, ‘विरह का जलजात जीवन,’ तो पढ़ते-पढ़ते बड़ी गहरी साँस भरने लगे□”

चन्द्र और बिनती दोनों हँस पड़े□ बिसरिया पहले तो खुद हँसा फिर बोला, “हाँ भाई, क्या करें, कपूर! तुम तो जानते ही हो, मैं बहुत भावुक हूँ□ मुझसे बर्दाशत नहीं होता□ एक बार तो ऐसा हुआ कि पर्चे में एक करण रस का गीत आ गया अर्थ लिखने को□ मैं उसे पढ़ते ही इतना व्यथित हो गया कि उठकर टहलने लगा□ प्रोफेसर समझे मैं दूसरे लड़के की कॉपी देखने उठा हूँ, तो उन्होंने निकाल दिया□ मुझे निकाले जाने का अफसोस नहीं हुआ लेकिन कविता पढ़कर मुझे बहुत रुलाई आयी□”

सुधा हँसी तो चन्द्र ने आँख के इशारे से मना किया और गम्भीरता से बोला, “हाँ भाई बिसरिया, सो तो सही है ही□ तुम इतने भावुक न हो तो इतना अच्छा कैसे लिख सकते हो? तो तुमने पर्चा छोड़ दिया?”

“हाँ, मैं पर्चे वगैरह की क्या परवाह करता हूँ? मेरे लिए इन सभी वस्तुओं का कुछ भी अर्थ नहीं□ मैं भावना की उपासना करता हूँ□ उस समय परीक्षा देने की भावना से ज्यादा सबल उस कविता की करण भावना थी□ और इस तरह मैं कितनी बार फेल हो चुका हूँ□ मेरे साथ वह पढ़ता था न हरिहर टंडन, वह अब बस्ती कॉलेज का प्रिन्सिपल है□ एक मेरा सहपाठी था, वह रेडियो का प्रोग्राम एकजीक्यूटिव है...”

“और एक तुम्हारा सहपाठी तो हमने सुना कि असेम्बली का स्पीकर भी है!” चन्द्र बात काटकर बोला□ सुधा फिर हँस पड़ी□ बिनती भी हँस पड़ी□

खैर मिठाई का भोग प्रारम्भ हुआ□ बिसरिया कुछ तकल्पुफ कर रहा था तो बिनती बोली, “खाइए, मिठाई तो विरह-रोग और भावुकता में बहुत स्वास्थ्यप्रद होती है!”

“अच्छा, अब तो बिनती का कंठ फूट निकला! अपने गुरुजी को बना रही है□” चन्द्र बोला□ बिसरिया थोड़ी देर बाद चला गया□ “अब मुझे एक पार्टी में जाना है□” उसने कहा□ जब आखिर में एक रसगुल्ला बच रहा तो बिनती हाथ में लेकर बोली, “कौन लेगा?” आज पता नहीं क्यों बिनती बहुत खुश थी और बहुत बोल रही थी□

चन्द्र बोला, “हमें दो!”

सुधा बोली, “हमें!”

बिनती ने एक बार चन्द्र की ओर देखा, एक बार सुधा की ओर□ चन्द्र बोला, “देखो बिनती हमारी है या सुधा की है□”

बिनती ने झट रसगुल्ला सुधा के मुख में रख दिया और सुधा के सिर पर सिर रखकर बोली- “हम अपनी दीदी के हैं!” सुधा ने आधा रसगुल्ला बिनती को दे दिया तो बिनती चन्द्र को दिखलाकर खाते हुए सुधा से बोली, “दीदी, ये हमें बहुत बनाते हैं, अब हम भी तुम्हारी तरह बोलेंगे तो इनका दिमाग ठीक हो जाएगा□”

“हम-तुम दोनों मिलके इनका दिमाग ठीक करेंगे?” सुधा ने प्यार से बिनती को थपथपाते हुए कहा, “अब हम तश्तरियाँ धोकर रख दें□” और तश्तरियाँ उठाकर चल दी□

“पानी नहीं दोगी?” चन्द्र बोला□

बिनती पानी ले आयी और बोली, “हम तो आपका इतना काम करते हैं और आप जब देखो तब

हमें बनाते रहते हैं□ आपको क्या आनंद आता है हमें बनाने में?”

चन्द्र ने पल-भर बिनती की ओर देखा और बोला, “असल में बनने के बाद जब तुम झेंप जाती हो तो...हाँ ऐसे ही□”

बिनती ने फिर झेंपकर मुँह छिपा लिया और लाज से सक्रवाकर इन्द्रवधु बन गयी□ बिनती देखने-सुनने में बड़ी अच्छी थी□ उसकी गठन तो सुधा की तरह नहीं थी लेकिन उसके घेरे पर एक फिरोजी आभा थी जिसमें गुलाल के डोरे थे□ आँखें उसकी बड़ी-बड़ी और पलकों में इस तरह डोलती थीं जैसे किसी सुकुमार सीपी में कोई बहुत बड़ा मोती डोले□ झेंपती थी तो मुँह पर साँझा मुसकरा उठती थी और गालों में फूलों के कटोरों जैसे दो छोटे-छोटे गड्ढों□ और बिनती के अंग-अंग में एक रूप की लहर थी जो नागिन की तरह लहराती थी और उसकी आदत थी कि बात करते समय अपनी गरदन जरा टेढ़ी कर लेती थी और अँगुलियों से अपने आँचल का छोर उमेठने लगती थी□

इस वक्त चन्द्र की बात पर झेंप गयी और उसी तरह आँचल के छोर को उमेठती हुई, मुसकान छिपाकर उसने ऐसी निगाह से चन्द्र की ओर देखा जिसमें थोड़ी लाज, थोड़ा गुस्सा, थोड़ी प्रसन्नता और थोड़ी शरारत थी□

चन्द्र एकदम बोला उठा, “अे सुधा, सुधा, जरा बिनती की आँख देखो इस वक्त!”

“आयी अभी□” बगल के कमरे में तश्तरी रखते हुए सुधा बोली□

“बड़े खराब हैं आप?” बिनती बोली□

“हाँ, बनाओगी न आज से हमें? हमारा दिमाग ठीक करेगी न? बहुत बोल रही थी, अब बताओ!”

“बताएँ वहा? अभी तक हम बोलते नहीं थे तभी न?”

“अब अपनी ससुराल में बोलना टुड़ियाँ ऐसी! वहीं तुम्हारे बोल पर रीझेंगे लोग□” चन्द्र ने फिर छेड़ा□

“छि:, राम-राम! ये सब मजाक हमसे मत किया कीजिए□ दीदी से क्यों नहीं कहते जिनकी अभी शादी होने जा रही है□”

“अभी उनकी कहाँ, अभी तो तय भी नहीं हुई□”

“तय ही समझिए, फोटो इनकी उन लोगों ने पसन्द कर ली□ अच्छा एक बात कहें, मानिएगा!”

बिनती बड़े आग्रह और दीनता के स्वर में बोली□

“क्या?” चन्द्र ने आश्वर्य से पूछा□ बिनती आज सहसा कितना बोलने लगी है□ बिनती बोली, नीचे जमीन की ओर देखती हुई-”आप हमसे ब्याह के बारे में मजाक न किया कीजिए, हमें अच्छा नहीं लगता□”

“ओहो, ब्याह अच्छा लगता है लेकिन उसके बारे में मजाक नहीं□ गुड़ खाया गुलगुले से परहेज!”

“हाँ, यहीं तो बात है□” बिनती सहसा गम्भीर हो गयी-”आप समझते होंगे कि मैं ब्याह के लिए उत्सुक हूँ, दीदी भी समझती हैं; लेकिन मेरा ही दिल जानता है कि ब्याह की बात सुनकर मुझे कैसा लगने लगता है□ लेकिन फिर भी मैंने ब्याह करने से इनकार नहीं किया□ खुद दौड़-दौड़कर उस दिन दुर्बेजी की सेवा में लगी रही, इसलिए कि आप देख चुके हैं कि मैं वहाँ कैसे रहती हूँ, कैसे माँजी की बातें बर्दाश्त करती हूँ, वह नरक है मेरे लिए, मौं की गोद नरक है और मैं किसी

तरह निकल भागना चाहती हूँ □ कुछ चैन तो मिलेगा!” बिनती की आँखों में आँसू आ गये और सिसकती हुई बोली, “लेकिन आप या दीदी जब यह कहते हैं, तो मुझे लगता है कि मैं कितनी नीच हूँ, कितनी पतित हूँ कि खुद अपने ब्याह के लिए व्याकुल हूँ, लेकिन आप न कहा करें तो अच्छा है!” बिनती को आँसूओं का तार बँध गया था □

सुधा बगल के कमरे से सब कुछ सुन रही थी □ आयी और चन्दर से बोली, “बहुत बुरी बात है, चन्दर! बिनती, क्यों ये रही हो, यनी? बुआ का स्वभाव ही ऐसा है, उससे हमेशा अपना दिल दुखाने से क्या लाभ?” और पास जाकर उसको छाती से लगाकर सुधा बोली, “मेरी राजदुलारी! अब योना मत, ऐ! अच्छा, हम लोग कभी मजाक नहीं करेंगे! बस अब चुप हो जाओ, यानी बिटिया की तरह जाओ मुँह धो आओ □”

बिनती चली गयी □ चन्दर लज्जत-सा बैठा था □

“तो, अब तुम्हें भी रुलाई आ रही है क्या?” सुधा ने बहुत दुलार से कहा, “तुम उससे सम्मुखीत का मजाक मत किया करो □ वह बहुत दुःखी है और बहुत कदर करती है तुम्हारी □ और किसी की मजाक की बात और है □ हम या तुम कहते हैं तो उसे लग जाता है □”

“अच्छा, वो कह रही थी, तुम्हारी फोटो उन लोगों ने पसन्द कर ली है”-चन्दर ने बात बदलने के ख्याल से कहा □

“और क्या, कोई हमारी शवल तुम्हारी तरह है कि लोग नापसन्द कर दें □” सुधा अकड़कर बोली □

“नहीं, सच-सच बताओ?” चन्दर ने पूछा □

“ऐरे जी,” लापरवाही से मुँह बिचकाकर सुधा बोली, “उनके पसन्द करने से क्या होता है? मैं ब्याह-उआह नहीं करूँगी □ तुम इस फेर में न रहना कि हमें निकाल दोगे यहाँ से □”

इतने में बिनती आ गयी □ वह भी उदास थी □ सुधा उठी और बिनती को पकड़ लायी और ढकेलकर चन्दर के बगल में बिठा दिया □

“तो, चन्दर! अब इसे दुलार कर लो तो अभी गुण्गुणने लगे □ बिल्ली कहीं की!” सुधा ने उसे हल्की-सी चपत मारकर कहा □ बिनती का मुँह अपनी हथेतियों में लेकर अपने मुँह के पास लाकर आँखों में आँख डालकर कहा, “पगली कहीं की, आँसू का खजाना लुटाती फिरती है □”

“चन्दर!” डॉ. शुक्ला ने पुकारा और चन्दर उठकर चला गया □

13

सुधा पर इन दिनों घूमना सवार था □ सुबह हुई कि चप्पल पहनी और गायब □ गेसू कामिनी, प्रभा, लीला शायद ही कोई लड़की बची होनी जिसके यहाँ जाकर सुधा ऊधम न मचा आती हो, और चार सुख-दुःख की बातें न कर आती हो □ बिनती को घूमना कम पसन्द था, हाँ जब कभी सुधा गेसू के यहाँ जाती थी तो बिनती जरूर जाती थी, उसे सुधा की सभी मित्रों में गेसू सबसे ज्यादा पसन्द थी □ डॉक्टर शुक्ला के ब्यूरो में छुट्टी हो चुकी थी पर वे सुधा का ब्याह तय करने की कोशिश कर रहे थे □ इसलिए वह बाहर भी नहीं गये थे □ चन्द्र डेढ़ महीने तक लगातार मेहनत करने के बाद पढ़ाई-लिखाई की ओर से आराम कर रहा था और उसने निश्चित कर लिया था कि अब बरसात के पहले वह किताब छुएगा नहीं □ बड़े आराम के दिन कटते थे उसके □ सुबह उठकर साइकिल पर गंगा नदीने जाता था और वहाँ अक्सर ठाकुर साहब से भी मुलाकात हो जाती थी □ डॉक्टर शुक्ला ने भी कई दफे इसदा किया कि वे गंगाजी चला करें लैकिन एक तो उनसे दिन में काम नहीं होता था, शाम को वे घूमते और सुबह उठकर किताब लिखते थे □ एक दिन सुबह लिख रहे थे कि चन्द्र आया और उनके पैर छूकर बोला, “प्रान्तीय सरकार का वह पुरस्कार कल शाम को आ गया!”

“कौन-सा?”

“वह जो उत्तर प्रान्त में माता और शिशुओं की मृत्यु-संख्या पर मैंने निबन्ध लिखा था, उसी पर □”

“तो क्या पदक आ गया?” डॉक्टर शुक्ला ने कहा □

“जी,” अपनी जेब में से एक मखमली डिब्बा निकालकर चन्द्र ने दिया □ पदक बहुत सुन्दर था □ जगमगाता हुआ स्वर्णपदक जिसमें प्रान्तीय राजमुद्रा अंकित थी □

“ईश्वर तुम्हें बहुत यशस्वी करे जीवन में □” डॉक्टर शुक्ला ने पदक उसकी कमीज में अपने हाथों से लगा दिया, “जाओ, अन्दर सुधा को दिखा आओ □”

चन्द्र जाने लगा तो डॉक्टर साहब ने बुलाया, “अच्छा, अब सुधा की शादी का इन्तजाम करना है □ हमसे तो कुछ होने से रहा, तुम्हीं को सब करना होगा □ और सुनो, जेठ दशहरा को लड़के का भाई और माँ देखने आ रही हैं □ और बहन भी आएँगी गाँव से □”

“अच्छा?” चन्द्र बैठ गया कुर्सी पर और बोला, “कहाँ हैं लड़का? क्या करता है?”

“लड़का शाहजहाँपुर में है □ घर के जर्मीदार हैं ये लोग □ लड़का एम. ए. है □ और अच्छे विचारों का है □ उसने लिखा है कि सिर्फ दस आदमी बारात में आएँगे, एक दिन रुकेंगे □ संस्कार के बाद चले जाएँगे □ सिवा लड़की के गठने-कपड़े और लड़के के गठने-कपड़ों के और कुछ भी नहीं स्वीकार करेंगे □”

“अच्छा, ब्राह्मणों में तो ऐसा कुल नहीं मिलेगा □”

“तभी तो! सुधा की किस्मत है, वरना तुम बिनती के ससुर को तो देख ही चुके हो॥ अच्छा जाओ, सुधा से मिल आओ॥”

वह सुधा के कमरे में आ गया॥ सुधा थी ही नहीं॥ वह आँगन में आया॥ देखा महराजिन खाना बना रही है और बिनती बरामदे में बुराटे की अँगीठी पर पकौड़ियाँ बना रही हैं॥

“आइए,” बिनती बोली, “दीदी तो गयी हैं गेसू को बुलाने॥ आज गेसू की दावत है॥...पीढ़े पर बैठिएगा, लीजिए॥” एक पीढ़ा चन्द्र की ओर बिनती ने खिसका दिया॥ चन्द्र बैठ गया॥ बिनती ने उसके हाथ में मखमली डिब्बा देखा तो पूछा, “यह क्या लाये? कुछ दीदी के लिए है क्या? यह तो अँगूठी मालूम पड़ती है॥”

“अँगूठी, वह क्या दाल में मिला के खाएगी! जंगली कहीं की! उसे क्या तमीज है अँगूठी पहनने की!”

“हमारी दीदी के लिए ऐसी बात की तो अच्छा नहीं होगा, हाँ!” उसे बिनती ने उसी तरह गरदन टेढ़ी कर आँखें डुलाते हुए धमकाया-”उन्हें नहीं अँगूठी पहननी आएगी तो क्या आपको आएगी? अब ब्याह में सोलहों सिंगार करेंगी! अच्छा, दीदी कैसी लगेगी घूँघट काढ़ के? अभी तक तो सिर खोले चकई की तरह घूमती-फिरती है॥”

“तुमने तो डाल ली आदत, ससुराल में रहने की!” चन्द्र ने बिनती से कहा॥

“अरे हमारा क्या!” एक गहरी साँस लेते हुए बिनती ने कहा, “हम तो उसी के लिए बने थे॥ लेकिन सुधा दीदी को ब्याह-शादी में न फँसना पड़ता तो अच्छा था॥ दीदी इन सबके लिए नहीं बनी थी॥ आप मामाजी से कहते क्यों नहीं?”

चन्द्र ने कुछ जवाब नहीं दिया॥ चुपचाप बैठा हुआ सोचता रहा॥ बिनती भी कड़ाही में से पकौड़ियाँ निकाल-निकालकर थाली में रखने लगी॥ थोड़ी देर बाद जब वह घी में पकौड़ियाँ डाल चुकी तब भी वह वैसे ही गुमसुम बैठा सोच रहा था॥

“क्या सोच रहे हैं आप? नहीं बताइएगा॥ फिर अभी हम दीदी से कह ठेंगे कि बैठ-बैठे सोच रहे थे॥” बिनती बोली॥

“क्या तुम्हारी दीदी का डर पड़ा है?” चन्द्र ने कहा॥

“अपने दिल से पूछिए॥ हमसे नहीं बन सकते आप!” बिनती ने मुसकराकर कहा और उसके गालों में फूलों के कटोरे खिल गये-”अच्छा, इस डिब्बे में क्या है, कुछ प्राइवेट!”

“नहीं जी, प्राइवेट क्या होगा, और वह भी तुमसे? सोने का मेडल है॥ मिला है मुझे एक लेख पर॥” और चन्द्र ने डिब्बा खोलकर दिखला दिया॥

“आहा! ये तो बहुत अच्छा है॥ हमें दे दीजिए॥” बिनती बोली॥

“क्या करेंगी तू?” चन्द्र ने हँसकर पूछा॥

“अपने आनेवाले जीजाजी के लिए कान के बुन्दे बनवा लेंगे॥” बिनती बोली, “अरे हाँ, आपको एक चीज दिखाएँगे॥”

“क्या?”

“यह नहीं बताते॥ देखिएगा तो उछल पड़िएगा॥”

“तो दिखाओ न!”

“अभी तो दीदी आ रही होंगी॥ दीदी के सामने नहीं दिखाएँगे॥”

“सुधा से छिपाकर हम कुछ नहीं कर सकते, यह तुम जानती हो॥” चन्द्र बोला॥

“छिपाने की बात थोड़े ही हैं □ देखकर तब उन्हें बता दीजिएगा □ वैसे वह खुद ही सुधा दीदी से क्या छिपाते हैं? लो, सुधा दीदी तो आ गयी...”

चन्द्र ने पीछे मुड़कर देखा □ सुधा के हाथ में एक लम्बा-सा सरकंडा था और उसे झंडे की तरह फहराती हुई चली आ रही थी □ चन्द्र हँस पड़ा □

“खिल गये दीदी को देखते ही!” बिनती बोली और एक गरम पकौड़ी चन्द्र के ऊपर फेंक दी □

“अरे, बड़ी शैतान हो गयी हो तुम इधर! पाजी कहीं की!” चन्द्र बोला □

सुधा चप्पल उतारकर अन्दर आयी □ झूमती-इठलाती हुई चली आ रही थी □

“कहो, सेठ खार्थीमिल!” उसने चन्द्र को देखते ही कहा, “सुबह हुई और पकौड़ी की महक लग गयी तुम्हें!” पीढ़ा खींचकर उसके बगल में बैठ गयी और सरकंडा चन्द्र के हाथ पर रखते हुए बोली, “लो, यह गन्ना □ घर में बो देना □ और गड़ेरी खाना! अच्छा!” और हाथ बढ़ाकर वह डिबिया उठा ली और बोली, “इसमें क्या है? खोलें या न खोलें?”

“अच्छा, खत तक तो हमारे बिना पूछे खोल लेती हो □ इसे पूछ के खोलोगी!”

“अरे हमने सोचा शायद इस डिबिया में पम्मी का दिल बन्द हो □ तुम्हारी मित्र है, शायद स्मृति-चिन्हां में वही दे दिया हो □” और सुधा ने डिबिया खोली तो उछल पड़ी, “यह तो उसी निबन्ध पर मिला है जिसका चार्ट तुम बनाये थे!”

“हाँ!”

“तब तो ये हमारा है □” डिबिया अपने वक्ष में छिपाकर सुधा बोली □

“तुम्हारा तो है ही □ मैं अपना कब कहता हूँ?” चन्द्र ने कहा □

“लगाकर देखें!” और उठकर सुधा चल दी □

“बिनती, दो पकौड़ी तो दो □” और दो पकौड़ियाँ लेकर खाते हुए चन्द्र सुधा के कमरे में गया □ देखा, सुधा शीशे के सामने खड़ी है और मेडल अपनी साड़ी में लगा रही है □ वह चुपचाप खड़ा होकर देखने लगा □ सुधा ने मेडल लगाया और क्षण-भर तनकर देखती रही फिर उसे एक हाथ से वक्ष पर चिपका लिया और मुँह झुकाकर उसे चूम लिया □

“बस, कर दिया न गन्दा उसे!” चन्द्र मौका नहीं छूका □

और सुधा तो जैसे पानी-पानी □ गालों से लाज की रतनारी लपटें फूटीं और एड़ी तक धधक उठीं □ फौरन शीशे के पास से हट गयी और बिंगड़कर बोली, “चोर कहीं के! क्या देख रहे थे?”

बिनती इतने में तश्तरी में पकौड़ी रखकर ले आयी □ सुधा ने जट से मेडल उतार दिया और बोली, “लो, रखो सहेजकर □”

“क्यों, पहने रहो न!”

“ना बाबा, परायी चीज, अभी खो जाये तो डॉँड भरना पड़े □” और मेडल चन्द्र की गोद में रख दिया □

बिनती ने धीमे से कहा, “या मुरली मुरलीधर की अधरा न धरी अधरा न धर्यौंगी □”

चन्द्र और सुधा ठोनों झेंप गये □ “लो, गेसू आ गयी □”

सुधा की जान में जान आ गयी □ चन्द्र ने बिनती का कान पकड़कर कहा, “बहुत उलटा-सीधा बोलने लगी हैं!”

बिनती ने कान छुड़ाते हुए कहा, “कोई झूठ थोड़े ही कहती हूँ!”

चन्द्र चुपचाप सुधा के कमरे में पकौड़ियाँ खाता रहा □ बगल के कमरे में सुधा, गेसू, फूल और

हसरत बैठे गाते करते रहे □ बिनती उन लोगों को नाश्ता देती रही □ उस कमरे में नाश्ता पहुँचाकर बिनती एक गिलास में पानी लेकर चन्द्र के पास आयी और पानी रखकर बोली, “अभी हलुआ ला रही हूँ, जाना मत!” और पल-भर में तश्तरी में हलुआ रखकर ले आयी □

“अब मैं चल रहा हूँ!” चन्द्र ने कहा □

“बैठो, अभी हम एक चीज दिखाएँगे □ जरा गेसू से बात कर आएँ □” बिनती बड़े भोले खर में बोली, “आइए, हसरत मियाँ □” और पल-भर में नज्हें-मुन्जे-से छह वर्ष के हसरत मियाँ तनजेब का कुरता और चूड़ीदार पायजामे पर पीले रेशम की जाकेट पहने कमरे में खरगोश की तरह उछल आये □

“आदाबर्ज □” बड़े तमीज से उन्होंने चन्द्र को सलाम किया □

चन्द्र ने उसे गोद में उठाकर पास बिठा दिया □ “लो, हलुआ खाओ, हसरत!”

हसरत ने सिर हिला दिया और बोला, “गेसू ने कहा था, जाकर चन्द्र भाई से हमारा आदाब कहना और कुछ खाना मत! हम खाएँगे नहीं □”

चन्द्र बोला, “हमारा भी नमस्ते कह दो उनसे जाकर □”

हसरत उठ खड़ा हुआ-”हम कह आएँ □” फिर मुड़कर बोला, “आप तब तक हलुआ खत्म कर देंगे?”

चन्द्र हँस पड़ा, “नहीं, हम तुम्हारा इन्तजार करेंगे, जाओ □”

हसरत सिर हिलाता हुआ चला गया □

इतने में सुधा आयी और बोली, “गेसू की गजल सुनो यहाँ बैठकर □ आवाज आ रही है न! फूल भी आयी है इसलिए गेसू तुम्हारे सामने नहीं आएगी वरना फूल अमीजान से शिकायत कर देगी □ लेकिन वह तुमसे मिलने को बहुत इच्छुक है, अच्छा यहीं से सुनना बैठे-बैठे...”

सुधा चली गयी □ गेसू ने गाना शुरू किया बहुत महीन, पतली लेकिन बेहद मीठी आवाज में जिसमें कसक और नशा दोनों घुले-मिले थे □ चन्द्र एक तकिया टेककर बैठ गया और उनींदा-सा सुनने लगा □ गजल खत्म होते ही सुधा भागकर आयी-”कहो, सुन लिया न!” और उसके पीछे-पीछे आया हसरत और सुधा के पैरों में लिपटकर बोला, “सुधा, हम हलुआ नहीं खाएँगे!”

सुधा हँस पड़ी, “पानल कहीं का □ ते खा □” और उसके मुँह में हलुआ हँस दिया □ हसरत को गोद में लेकर वह चन्द्र के पास बैठ गयी और गेसू के बारे में बताने लगी, “गेसू गर्मियाँ बिताने जैनीताल जा रही हैं □ वहीं अखतर की अम्मी भी आएँगी और मँगनी की रस्म वहीं पूरी करेंगी □ अब वह पढ़ेगी नहीं □ जुलाई तक उसका निकाह हो जाएगा □ कल रात की गाड़ी से जा रहे हैं ये लोग □ वगैरह-वगैरह □”

बिनती बैठी-बैठी गेसू और फूल से बातें करती रही □ थोड़ी देर बाद सुधा उठकर चली गयी □ तुम जाना मत, आज खाना यहीं खाना, मैं बिनती को तुम्हारे पास भेज रही हूँ, उससे बातें करते रहना □”

थोड़ी देर बाद बिनती आयी □ उसके हाथ में कुछ था जिसे वह अपने आँचल से छिपाये हुई थी □ आयी और बोली, “अब दीदी नहीं हैं, जल्दी से देख लीजिए □”

“क्या है?” चन्द्र ने ताज्जुब से पूछा □

“जीजाजी की फोटो □” बिनती ने मुसक्याकर कहा और एक छोटी-सी बहुत कलात्मक फोटो चन्द्र के हाथ में रख दी □

“अरे यह तो मिश्र हैं कॉमेड कैलाश मिश्र” और चन्द्र के दिमान में बरेली की बातें, लाठी चार्ज... सभी कुछ धूम गया। चन्द्र के मन में इस वक्त जाने कैसा-सा लग रहा था। कभी बड़ा अवरज होता, कभी एक सन्तोष होता कि चलो सुधा के भाव्य की रेखा उसे अच्छी जगह ले गयी, फिर कभी सोचता कि मिश्र इतना विवित खबाव का है, सुधा की उससे निभेगी या नहीं? फिर सोचता, नहीं सुधा भाव्यवान है। इतना अच्छा लड़का मिलना मुश्किल था।

“आप इन्हें जानते हैं?” बिनती ने पूछा।

“हाँ, सुधा भी उन्हें नाम से जानती है शक्ति से नहीं। लेकिन अच्छा लड़का है, बहुत अच्छा लड़का।” चन्द्र ने एक गहरी साँस लेकर कहा और फिर चुप हो गया। बिनती बोली, “क्या सोच रहे हैं आप?”

“कुछ नहीं।” पलकों में आये हुए आँसू रोककर और होठों पर मुसकान लाने की कोशिश करते हुए बोला, “मैं सोच रहा हूँ, आज कितना सन्तोष है मुझे, कितनी खुशी है मुझे, कि सुधा एक ऐसे घर जा रही है जो इतना अच्छा है, ऐसे लड़के के साथ जा रही है जो इतना ऊँचा।... कहते-कहते चन्द्र की आँखें भर आयीं।

बिनती चन्द्र के पास खड़ी होकर बोली, “छि:, चन्द्र बाबू! आपकी आँखों में आँसू! यह तो अच्छा नहीं लगता। जितनी पवित्रता और ऊँचाई से आपने सुधा के साथ निबाह किया है, यह तो शायद देवता भी नहीं कर पाते और दीदी ने आपको जैसा निश्छल प्यार दिया है उसको पाकर तो आदमी स्वर्ण से भी ऊँचा उठ जाता है, फौलाद से भी ज्यादा ताकतवर हो जाता है, फिर आज इतने शुभ अवसर पर आप में कमजोरी कहाँ से? हमें तो बड़ी शरम लग रही है। आज तक दीदी तो दूर, हम तक को आप पर गर्व था। अच्छा, मैं फोटो रख तो आऊँ वरना दीदी आ जाएँगी!” बिनती ने फोटो ली और चली गयी।

बिनती जब लौटी तो चन्द्र खस्थ था। बिनती की ओर क्षण भर चन्द्र ने देखा और कहा, “मैं इसलिए नहीं रोया था बिनती, मुझे यह लगा कि यहाँ कैसा लगेगा। खैर जाने दो।”

“एक दिन तो ऐसा होता ही है न, सहना पड़ेगा!” बिनती बोली।

“हाँ, सो तो है; अच्छा बिनती, सुधा ने यह फोटो देखी है?” चन्द्र ने पूछा।

“अभी नहीं, असल में मामाजी ने मुझसे कहा था कि यह फोटो दिखा दे सुधा को; लेकिन मेरी छिम्मत नहीं पड़ी। मैंने उनसे कह दिया कि चन्द्र आएँगे तो दिखा देंगे। आप जब ठीक समझें तो दिखा दें। जेठ दशहरा अगले ही मंगल को है।” बिनती ने कहा।

“अच्छा।” एक गहरी साँस लेकर चन्द्र बोला।

बिनती थोड़ी देर तक चन्द्र की ओर एकटक देखती रही। चन्द्र ने उसकी निबाह चुरा ली और बोला, “क्या देख रही हो, बिनती?”

“देख रही हूँ कि आपकी पलकें झापकती हैं या नहीं?” बिनती बहुत गम्भीरता से बोली।

“क्यों?”

“इसलिए कि मैंने सुना था, देवताओं की पलकें कभी नहीं गिरतीं।”

चन्द्र एक फिकी हँसी हँसकर रह गया।

“नहीं, आप मजाक न समझें। मैंने अपनी जिंदगी में जितने लोग देखे, उनमें आप-जैसा कोई भी नहीं मिला। कितने ऊँचे हैं आप, कितना विशाल हृदय है आपका! दीदी कितनी भाव्यशाली हैं।”

चन्द्र ने कुछ जवाब नहीं दिया “जाओ, फोटो ले आओ” उसने कहा, “आज ही दिखा दूँ जाओ, खाना भी ले आओ” अब घर जाकर क्या करना है”

पापा को खाना खिलाने के बाद चन्द्र और सुधा खाने बैठे महराजिन चली गयी थी इसलिए बिनती शैक-शैककर रोटी दे रही थी सुधा एक ऐशमी सनिया पठने चौके के अन्दर खा रही थी और चन्द्र चौके के बाहर सुबह के कट्टे खाने में डॉक्टर शुक्ला बहुत छूत-छात का विचार रखते थे

“देखो, आज बिनती ने रोटी बनायी है तो कितनी मीठी लग रही है, एक तुम बनाती हो कि मातृमूर्ती नहीं पड़ता रोटी है कि सोखता!” चन्द्र ने सुधा को चिढ़ाते हुए कहा

सुधा ने हँसकर कहा, “हमें बिनती से लड़ाने की कोशिश कर रहे हो! बिनती की हमसे जिंदगी-भर लड़ाई नहीं हो सकती!”

“अरे हम सब समझते हैं इनकी बात!” बिनती ने रोटी पटकते हुए कहा और जब सुधा सिर झुकाकर खाने लगी तो बिनती ने आँख के इशारे से पूछा, “कब दिखाओगे?”

चन्द्र ने सिर हिलाया और फिर सुधा से बोला, “तुम उन्हें चिट्ठी लिखोगी?”

“किन्हें?”

“कैलाश मिश्रा को, वही बरेली वाले? उन्होंने हमें खत लिखा था उसमें तुम्हें प्रणाम लिखा था”

चन्द्र बोला

“नहीं, खत-वत नहीं लिखते उन्हें एक दफे बुलाओ तो यहाँ”

“हाँ, बुलाएंगे अब महीने-दो महीने बाद, तब तुमसे खूब परिचय करा देंगे और तुम्हें उसकी पार्टी में भी भरती करा देंगे” चन्द्र ने कहा

“क्या? हम मजाक नहीं करते? हम सबमुच समाजवादी दल में शामिल होंगे” सुधा बोली, “अब हम सोचते हैं कुछ काम करना चाहिए, बहुत खेल-कूद लिये, बचपन निभा लिया”

“उन्होंने अपना चित्र भेजा है देखोगी?” चन्द्र ने जेब में हाथ डालते हुए पूछा

“कहाँ?” सुधा ने बहुत उत्सुकता से पूछा, “निकालो देखें”

“पहले बताओ, हमें क्या इनाम दोगी? बहुत मुश्किल से भेजा उन्होंने चित्र!” चन्द्र ने कहा

“इनाम देंगे इन्हें!” सुधा बोली और झट से झापटकर चित्र छीन लिया

“अरे, छू लिया चौके में से?” बिनती ने दबी जबान से कहा

सुधा ने थाली छोड़ दी अब छू गयी थी वह; अब खा नहीं सकती थी

“अच्छी फोटो देखी दीदी आमने की थाली छू गयी!” बिनती ने कहा

सुधा ने हाथ धोकर आँचल के छोर से पकड़कर फोटो देखी और बोली, “चन्द्र, सचमुच देखो! कितने अच्छे लग रहे हैं□ कितना तेज है वेहरे पर, और माथा देखो कितना ऊँचा है□” सुधा फोटो देखती हुई बोली□

“अच्छी लगी फोटो? पसंद है?” चन्द्र ने बहुत गम्भीरता से पूछा□

“हाँ, हाँ, और समाजवादियों की तरह नहीं लगते ये□” सुधा बोली□

“अच्छा सुधा, यहाँ आओ□” और चन्द्र के साथ सुधा अपने कमरे में जाकर पलंग पर बैठ गयी□ चन्द्र उसके पास बैठ गया और उसका हाथ अपने हाथ में लेकर उसकी अँगूठी घुमाते हुए बोला, “सुधा, एक बात कहें, मानोगी?”

“क्या?” सुधा ने बहुत दुलार और भोलेपन से पूछा□

“पहले बता दो कि मानोगी?” चन्द्र ने उसकी अँगूठी की ओर एकटक देखते हुए कहा□

“फिर, हमने कभी कोई बात तुम्हारी टाली है! क्या बात है?”

“तुम मानोगी चाहे कुछ भी हो?” चन्द्र ने पूछा□

“हाँ-हाँ, कह तो दिया□ अब कौन-सी तुम्हारी ऐसी बात है जो तुम्हारी सुधा नहीं मान सकती!”
आँखों में, वाणी में, अंग-अंग से सुधा के आत्मसमर्पण छलक रहा था□

“फिर अपनी बात पर कायम रहना, सुधा! देखो!” उसने सुधा की ऊँगलियाँ अपनी पलकों से लगाते हुए कहा, “सुधी मेरी! तुम उस लड़के से ब्याह कर लो!”

“क्या?” सुधा चोट खायी नागिन की तरह तड़प उठी-“इस लड़के से? यही शकल है इसकी हमसे ब्याह करने की! चन्द्र, हम ऐसा मजाक नापसंद करते हैं, समझे कि नहीं! इसलिए बड़े प्यार से बुला लाये, बड़ा दुलार कर रहे थे!”

“तुम अभी वायदा कर चुकी हो!” चन्द्र ने बहुत आजिजी से कहा□

“वायदा कैसा? तुम कब अपने वायदे निभाते हो? और फिर यह धोखा देकर वायदा कराना क्या? हिम्मत थी तो साफ-साफ कहते हमसे! हमारे मन में आता सो कहते□ हमें इस तरह से बाँध कर क्यों बलिदान चढ़ा रहे हो!” और सुधा मारे गुस्से के रोने लगी□

चन्द्र रथब्ध□ उसने इस दृश्य की कल्पना ही नहीं की थी□ वह क्षण भर खड़ा रहा□ वह क्या कहे सुधा से, कुछ समझ ही में नहीं आता था□ वह गया और रोती हुई सुधा के कंधे पर हाथ रख दिया□ “हटो उधर!” सुधा ने बहुत रुखाई से हाथ हटा दिया और आँचल से सिर ढकती हुई बोली, “मैं ब्याह नहीं करूँगी, कभी नहीं करूँगी□ किसी से नहीं करूँगी□ तुम सभी लोगों ने मिलकर मुझे मार डालने की ठानी है□ तो मैं अभी सिर पटककर मर जाऊँगी□” और मारे तैश के सचमुच सुधा ने अपना सिर ढीवार पर पटक दिया□ “अरे!” दौड़कर चन्द्र, ने सुधा को पकड़ लिया□ मगर सुधा ने गरजकर कहा, “दूर हटो चन्द्र, छूना मत मुझे□” और जैसे उसमें जाने

कहाँ की ताकत आ गयी है, उसने अपने को छुड़ा लिया □

चन्द्र ने दबी जबान से कहा, “छि: सुधा! यह तुमसे उम्मीद नहीं थी मुझे □ यह भावुकता तुम्हें शोभा नहीं देती □ बातें कैसी कर रही हो तुम! हम वही चन्द्र हैं न!”

“हाँ, वही चन्द्र हो! और तभी तो! इस सारी दुनिया में तुम्हीं एक रह गये हो मुझे फोटो दिखाकर पसन्द कराने को □” सुधा सिसक-सिसककर रोने लगी-”पापा ने भी धोखा दे दिया □ हमें पापा से यह उम्मीद नहीं थी □”

“पगली! कौन अपनी लड़की को हमेशा अपने पास रख पाया है!” चन्द्र बोला □

“तुम चुप रहो, चन्द्र □ हमें तुम्हारी बोली जहर लगती है □ 'सुधा, यह फोटो तुम्हें पसन्द है?' तुम्हारी जबान हिली कैसे? शरम नहीं आयी तुम्हें □ हम कितना मानते थे पापा को, कितना मानते थे तुम्हें? हमें यह नहीं मालूम था कि तुम लोग ऐसा करोगे □” थोड़ी देर चुपचाप सिसकती रही सुधा और फिर धाधककर उठी-”कहाँ है वह फोटो? लाओ, अभी मैं जाऊँगी पापा के पास! मैं कहूँगी उनसे हाँ, मैं इस लड़के को पसन्द करती हूँ □ वह बहुत अच्छा है, बहुत सुन्दर है □ लेकिन मैं उससे शादी नहीं करूँगी, मैं किसी से शादी नहीं करूँगी! झूठी बात है...” और उठकर पापा के कमरे की ओर जाने लगी □

“खबरदार, जो कठम बढ़ाया!” चन्द्र ने डॉटकर कहा, “बैठो इधर □”

“मैं नहीं रुकूँगी!” सुधा ने अकड़कर कहा □

“नहीं रुकोगी?”

“नहीं रुकूँगी □”

और चन्द्र का हाथ तैश में उठा और एक भरपूर तमाचा सुधा के गाल पर पड़ा □ सुधा के गाल पर नीली उँगलियाँ उपट आयीं □ वह स्तब्ध! जैसे पत्थर बन गयी हो □ आँख में आँसू जम गये □ पलकों में निगाहें जम गयीं □ होठों में आवाजें जम गयीं और सीबे में सिसकियाँ जम गयीं □ चन्द्र ने एक बार सुधा की ओर देखा और कुर्सी पर जैसे गिर पड़ा और सिर पटककर बैठ गया □ सुधा कुर्सी के पास जमीन पर बैठ गयी □ चन्द्र के घुटनों पर सिर रख दिया □ बड़ी भारी आवाज में बोली, “चन्द्र, देखें तुम्हारे हाथ में चोट तो नहीं आयी □”

चन्द्र ने सुधा की ओर देखा, एक ऐसी निगाह से जिसमें कब्र मुँह फाड़कर जमुहाई ले रही थी □ सुधा एकाएक फिर सिसक पड़ी और चन्द्र के पैरों पर सिर रखकर बोली, “चन्द्र, सचमुच मुझे अपने आश्रय से निकालकर ही मानोगे! चन्द्र, मजाक की बात दूसरी है, जिंदगी में तो दुश्मनी मत निकाला करो □”

चन्द्र एक गहरी साँस लेकर चुप हो गया □ और सिर थामकर बैठ गया □ पाँच मिनट बीत गये □ कमरे में सन्नाटा, गठन खामोशी □ सुधा चन्द्र के पाँवों को छाती से चिपकाये सूनी-सूनी निगाहों से जाने कुछ देख रही थी दीवारों के पार, दिशाओं के पार, क्षितिजों से पेरे...दीवार पर घड़ी चल रही थी टिक...टिक...

चन्द्र ने सिर उठाया और कहा, “सुधा, हमारी तरफ देखो-” सुधा ने सिर ऊपर उठाया □ चन्द्र बोला, “सुधा, तुम हमें जाने क्या समझ रही होगी, लौकिन अगर तुम समझ पाती कि मैं क्या सोचता हूँ! क्या समझता हूँ □” सुधा कुछ नहीं बोली, चन्द्र कहता गया, “मैं तुम्हारे मन को समझता हूँ, सुधा! तुम्हारे मन ने जो तुमसे नहीं कहा, वह मुझसे कह दिया था-लौकिन सुधा, हम दोनों एक-दूसरे की जिंदगी में क्या इसीलिए आये कि एक-दूसरे को कमजोर बना दें या हम

लोगों ने शर्व की ऊँचाइयों पर साथ बैठकर आत्मा का संगीत सुना सिर्फ इसीलिए कि उसे अपने ब्याह की शहनाई में बदल दें?”

“गलत मत समझो चन्द्र, मैं गेसू नहीं कि अख्लर से ब्याह के सपने देखते हैं और न तुम्हीं अख्लर हो, चन्द्र! मैं जानती हूँ कि मैं तुम्हारे लिए शर्वी के सूत से भी ज्यादा पवित्र रही हूँ लेकिन मैं जैसी हूँ, मुझे वैसी ही क्यों नहीं रहने देते! मैं किसी से शादी नहीं करूँगी। मैं पापा के पास रहूँगी। शादी को मेरा मन नहीं कहता, मैं क्यों करूँ? तुम गुरसा मत हो, दुखी मत हो, तुम आज्ञा दोगे तो मैं कुछ भी कर सकती हूँ, लेकिन हत्या करने से पहले यह तो देख लो कि मेरे हृदय में क्या है?” सुधा ने चन्द्र के पाँवों को अपने हृदय से और भी दबाकर कहा।

“सुधा, तुम एक बात सोचो। अगर तुम सबका प्यार बटोरती चलती हो तो कुछ तुम्हारी जिम्मेदारी है या नहीं? पापा ने आज तक तुम्हें किस तरह पाला। अब क्या तुम्हारा यह फर्ज है कि तुम उनकी बात को ठुकराओ? और एक बात और सोचो-हम पर कुछ विश्वास करके ही उन्होंने कहा है कि मैं तुमसे फोटो पसन्द कराऊँ? अगर अब तुम इनकार कर देती हो तो एक तरफ पापा को तुमसे धक्का पहुँचेगा, दूसरी ओर मेरे प्रति उनके विश्वास को कितनी चोट लगेगी। हम उन्हें क्या मुँह दिखाने लायक रहेंगे भला! तो तुम क्या चाहती हो? महज अपनी थोड़ी-सी भावुकता के पीछे तुम सभी की जिंदगी चौपट करने के लिए तैयार हो? यह तुम्हें शोभा नहीं देता है। क्या कहेंगे पापा, कि चन्द्र ने अभी तक तुम्हें यही सिखाया था? हमें लोग क्या कहेंगे? बताओ। आज तुम शादी न करो। उसके बाद पापा हमेशा के लिए दुःखी रहा करें और दुनिया हमें कहा करें, तब तुम्हें अच्छा लगेगा?”

“नहीं।” सुधा ने भर्यों हुए गले से कहा।

“तब, और फिर एक बात और है न सुधी! सोने की पहचान आग में ढोती है न! लपटों में अगर उसमें और निखार आये तभी वह सच्चा सोना है। सचमुच मैंने तुम्हारे व्यक्तित्व को बनाया है या तुमने मेरे व्यक्तित्व को बनाया है, यह तो तभी मालूम होगा जबकि हम लोग कठिनाइयों से, घेटनाओं से, संघर्षों से खेलें और बाद में विजयी हों और तभी मालूम होगा कि सचमुच मैंने तुम्हारे जीवन में प्रकाश और बल दिया था। अगर सदा तुम मेरी बाँहों की सीमा में रहीं और मैं तुम्हारी पलकों की छाँव में रहा और बाहर के संघर्षों से हम लोग डरते रहे तो कायरता है। और मुझे अच्छा लगेगा कि दुनिया कहे कि मेरी सुधा, जिस पर मुझे नाज था, वह कायर है? बोलो। तुम कायर कहलाना पसन्द करोगी?”

“हाँ!” सुधा ने फिर चन्द्र के घुटनों में मुँह छिपा लिया।

“क्या? यह मैं सुधा के मुँह से सुन रहा हूँ! छि: पगली! अभी तक तेरी निगाहों ने मेरे प्राणों में अमृत भरा है और मेरी साँसों ने तेरे पंखों में तूफानों की तेजी। और हमें-तुम्हें तो आज खुश होना चाहिए कि अब सामने जो शस्ता है उसमें हम लोगों को यह सिद्ध करने का अवसर मिलेगा कि सचमुच हम लोगों ने एक-दूसरे को ऊँचाई और पवित्रता दी है। मैंने आज तक तुम्हारी सहायता पर विश्वास किया था। आज क्या तुम मेरा विश्वास तोड़ दोगी? सुधा, इतनी क्रूर क्यों हो रही हो आज तुम? तुम साधारण लड़की नहीं हो। तुम ध्रुवतारा से ज्यादा प्रकाशमान हो। तुम यह क्यों चाहती हो कि दुनिया कहे, सुधा भी एक साधारण-सी भावुक लड़की थी और आज मैं अपने कान से सुनूँ! बोलो सुधी?” चन्द्र ने सुधा के सिर पर हाथ रखकर कहा।

सुधा ने आँखें उठाईं, बड़ी कातर निगाहों से चन्द्र की ओर देखा और सिर झुका लिया। सुधा

के सिर पर हाथ फेरते हुए चन्द्र बोला-

“सुधा, मैं जानता हूँ मैं तुम पर शायद बहुत सख्ती कर रहा हूँ, लेकिन तुम्हारे सिवा और कौन है मेरा? बताओ□ तुम्हीं पर अपना अधिकार भी आजमा सकता हूँ□ विश्वास करो मुझ पर सुधा, जीवन में अलगाव, दूरी, दुख और पीड़ा आदमी को मठान बना सकती है□ भावुकता और सुख हमें ऊचे नहीं उठाते□ बताओ सुधा, तुम्हें क्या पसन्द है? मैं ऊचा उँड़ तुम्हारे विश्वास के सहारे, तुम ऊची उठो मैरे विश्वास के सहारे, इससे अच्छा और क्या है सुधा! चाहो तो मैरे जीवन को एक पवित्र साधन बना दो, चाहो तो एक छिछली अनुभूति□”

सुधा ने एक गहरी साँस ली, क्षण-भर घड़ी की ओर देखा और बोली, “इतनी जल्दी क्या है अभी, चन्द्र? तुम जो कहोगे मैं कर लूँगी!” और फिर वह सिसकने लगी-”लेकिन इतनी जल्दी क्या हैं? अभी मुझे पढ़ लेने दो!”

“नहीं, इन्हा अच्छा लड़का फिर मिलेगा नहीं□ और इस लड़के के साथ तुम वहाँ पढ़ भी सकती हो□ मैं जानता हूँ ये□ वह देवताओं-सा निश्छल है□ बोलो, मैं पापा से कह दूँ कि तुम्हें पसन्द हैं?”

सुधा कुछ नहीं बोली□

“मौन का मतलब हौं है न?” चन्द्र ने पूछा□

सुधा ने कुछ नहीं कहा□ झुककर चन्द्र के पैरों को अपने होठों से हूँ लिया और पलकों से दो आँसू चू पड़े□ चन्द्र ने सुधा को उठा लिया और उसके माथे पर हाथ रखकर कहा, “ईश्वर तुम्हारी आत्मा को सदा ऊचा बनाएगा, सुधा!” उसने एक गहरी साँस लेकर कहा, “मुझे तुम पर गर्व है,” और फोटो उठाकर बाहर चलने लगा□

“कहाँ जा रहे हो! जाओ मत!” सुधा ने उसका कुरता पकड़कर बड़ी आजिजी से कहा, “मैरे पास रहो, तबीयत घबराती है?”

चन्द्र पलँग पर बैठ गया□ सुधा तकिये पर सिर रखकर लेट गयी और फटी-फटी पथराई आँखों से जाने क्या देखने लगी□ चन्द्र भी चुप था, बिल्कुल खामोश□ कमरे में सिर्फ घड़ी चल रही थी, टिक...टिक...

थोड़ी देर बाद सुधा ने चन्द्र के पैरों को अपने तकिये के पास खींच लिया और उसके तलवों पर होठ रखकर उसमें मुँह छिपाकर चुपचाप लेटी रही□ बिनती आयी□ सुधा हिली भी नहीं! चन्द्र ने देखा वह सो गयी थी□ बिनती ने फोटो उठाकर इशारे से पूछा, “मजूर?” “हाँ□” बिनती ने बजाय खुश होने के चन्द्र की ओर देखकर सिर झुका लिया और चली गयी□

सुधा सो रही थी और चन्द्र के तलवों में उसकी नरम वर्वारी साँसें गूँज रही थीं□ चन्द्र बैठा रहा चुपचाप□ उसकी हिम्मत न पड़ी कि वह हिले और सुधा की नींद तोड़ दे□ थोड़ी देर बाद सुधा ने करवट बदली तो वह उठकर आँगन के सोफे पर जाकर लेट रहा और जाने क्या सोचता रहा□

जब उठा तो देखा धूप ढल गयी है और सुधा उसके सिरहाने बैठी उसे पंखा झल रही है□ उसने सुधा की ओर एक अपराधी जैसी कातर निगाहों से देखा और सुधा ने बहुत ठर्ड से आँखें फेर लीं और ऊचाइयों पर आखियां साँसें लेती हुई मरणासन्न धूप की ओर देखने लगी□

चन्द्र उठा और सोचने लगा तो सुधा बोली, “कल आओगे कि नहीं?”

“क्यों नहीं आँँगा?” चन्द्र बोला□

“मैंने सोचा शायद अभी से दूर होना चाहते हो□” एक गहरी साँस लेकर सुधा बोली और पंखे की

ओट में आँख पोंछ लिये□

15

चन्द्र दूसरे दिन सुबह नहीं गया। उसकी थीसिस का बहुत-सा भाग टाइप होकर आ गया था और उसे बैठा वह सुधार रहा था। लेकिन साथ ही पता नहीं क्यों उसका साफ्स नहीं हो रहा था वहाँ जाने का। लेकिन मन में एक चिन्ता थी सुधा की। वह कल से बिल्कुल मुरझा गयी थी। चन्द्र को अपने ऊपर कभी-कभी क्रोध आता था। लेकिन वह जानता था कि यह तकलीफ का ही रस्ता ठीक रस्ता है। वह अपनी जिंदगी में सरतोपन के खिलाफ था। लेकिन उसके लिए सुधा की पलक का एक आँखू भी देवता की तरह था और सुधा के फूलों-जैसे घेहरे पर उदासी की एक रेखा भी उसे पागल बना देती थी। सुबह पहले तो वह नहीं गया, बाद में ख्यां उसे पछतावा होने लगा और वह अधीरता से पाँच बजने का इन्तजार करने लगा।

पाँच बजे, और वह साइकिल लेकर पहुँचा। देखा, सुधा और बिनती दोनों नहीं हैं। अकेले डॉक्टर शुक्ला अपने कमरे में बैठे हैं। चन्द्र गया। “आओ, सुधा ने तुमसे कह दिया, उसे पसन्द है?” डॉक्टर शुक्ला ने पूछा।

“हाँ, उसे कोई एतराज नहीं।” चन्द्र ने कहा।

“मैं पहले से जानता था। सुधा मेरी इतनी अच्छी है, इतनी सुशील है कि वह मेरी इच्छा का उल्लंघन तो कर ही नहीं सकती। लेकिन वन्दर, कल से उसने खाना-पीना छोड़ दिया है। बताओ, इससे क्या फायदा? मेरे बस में क्या है? मैं उसे हमेशा तो रख नहीं सकता। लेकिन, लेकिन आज सुबह खाते वक्त वह बैठी भी नहीं मेरे पास बताओ...” उनका गला भर आया। “बताओ, मेरा क्या कर्सूर है?”

चन्द्र चुप था।

“कहाँ है सुधा?” चन्द्र ने पूछा।

“गैरेज में मोटर ठीक कर रही है। मैं इतना मना किया कि धूप में तप जाओगी, तू लग जाएगी। लेकिन मानी ही नहीं! बताओ, इस जल्लाहट से मुझे कैसा लगता है?” वृद्ध पिता के कातर स्वर में डॉक्टर ने कहा, “जाओ चन्द्र, तुम्हीं समझाओ! मैं क्या कहूँ?”

चन्द्र उठकर गया। मोटर गैरेज में काफी गरमी थी, लेकिन बिनती वहीं एक चटाई बिछाये पड़ी सो रही थी और सुधा इंजन का कवर उठाये मोटर साफ करने में लगी हुई थी। बिनती बेहोश सो रही थी। तकिया चटाई से हटकर जमीन पर चला गया था और चोटी फर्श पर सोयी हुई नागिन की तरह पड़ी थी। बिनती का एक हाथ छाती पर था और एक हाथ जमीन पर। आँचल, आँचल न रहकर चादर बन गया था। चन्द्र के जाते ही सुधा ने मुँह फेरकर देखा। “चन्द्र, आओ।” क्षीण मुसकराहट उसके होठों पर ढौँड गयी। लेकिन इस मुसकराहट में उल्लास लुट चुका था, रेखाएँ बाकी थीं। सहसा उसने मुड़कर देखा। “बिनती! ऐरे, कैसे घोड़ा बेचकर सो रही है! उठ। चन्द्र आये हैं!” बिनती ने आँखें खोलीं, चन्द्र की ओर देखा, लेटे-हीं-लेटे नमरते किया और

आँचल सँभालकर फिर करवट बदलकर सो गयी □

“बहुत सोती है कम्बख्त!” सुधा बोली, “इतना कहा इससे कमरे में जाकर पंखे में सो! लेकिन नहीं, जहाँ दीदी रहेगी, वहीं यह भी रहेगी □ मैं गैरेज में हूँ तो यह कैसे कमरे में रहे □ वहीं मरेगी जहाँ मैं मरेगी □”

“तो तुम्हीं क्यों गैरेज में थीं! ऐसी क्या जरूरत थी अभी ठीक करने की!” चन्द्र ने कहा, लेकिन कोशिश करने पर भी सुधा को आज डॉट नहीं पा रहा था □ पता नहीं कहाँ पर क्या टूट गया था □

“नहीं चन्द्र, तबीयत ही नहीं लग रही थी □ क्या करती! क्रोसिया उठायी, वह भी रख दिया □ कविता उठायी, वह भी रख दी □ कविता वगैरह में तबीयत नहीं लगी □ मन में आया, कोई कठोर काम हो, कोई नीरस काम हो तोहे-लवकड़, पीतल-फौलाद का, तो मन लग जाए □ तो चली आयी मोटर ठीक करने □”

“क्यों, कविता में भी तबीयत नहीं लगी? ताजजुब है, गेसू के साथ बैठकर तुम तो कविता में घंटों गुजार देती थीं!” चन्द्र बोला □

“उन दिनों शायद किसी को प्यार करती रही होऊँ तभी कविता में मन लगता था!” सुधा उस दिन की पुरानी बात याद करके बहुत उदास हँसी हँसी-”अब प्यार नहीं करती होऊँगी, अब तबीयत नहीं लगती □ बड़ी फीकी, बड़ी बेजार, बड़ी बनावटी लगती हैं ये कविताएँ, मन के दर्द के आगे सभी फीकी हैं □” और फिर वह उन्हीं पुरजों में ढूब गयी □ चन्द्र भी चुपचाप मोटर की रिंड़की से टिककर खड़ा हो गया □ और चुपचाप कुछ सोचने लगा □

सुधा ने बिना सिर उठाये, झुके-ठी-झुके, एक हाथ से एक तार लपेटते हुए कहा-

“चन्द्र, तुम्हारे मित्र का परिवार आ रहा है, इसी मंगल को □ तैयारी करो जल्दी □”

“कौन परिवार, सुधा?”

“हमारे जेठ और सास आ रही हैं, इसी बैसाखी को हमें देखने □ उन्होंने तिथि बदल दी है □ तो अब छह ही दिन रह गये हैं □”

चन्द्र कुछ नहीं बोला □ थोड़ी देर बाद सुधा फिर बोली-

“अगर उचित समझो तो कुछ पाउडर-क्रीम ले आना, लगाकर जरा गौरे हो जाएं तो शायद पसन्द आ जाएँ! क्यों, ठीक है न!” सुधा ने बड़ी विचित्र-सी हँसी हँसा दी और सिर उठाकर चन्द्र की ओर देखा □ चन्द्र चुप था लेकिन उसकी आँखों में अजीब-सी पीड़ा थी और उसके माथे पर बहुत ही करुण छाँह □

सुधा ने कवर गिरा दिया और चन्द्र के पास जाकर बोली, “क्यों चन्द्र, बुरा मान गये हमारी बात का? क्या करें चन्द्र, कल से हम मजाक करना भी भूल गये □ मजाक करते हैं तो व्यंब्य बन जाता है □ लेकिन हम तुमको कुछ कह नहीं रहे थे, चन्द्र □ उदास न होओ □” बड़े ही दुलार से सुधा बोली, “अच्छा, हम कुछ नहीं कहेंगे □” और उसने अपना आँचल सँभालने के लिए हाथ उठाया □ हाथ में कालौंच लग गयी थी □ चन्द्र समझा मैरे कन्धे पर हाथ रख रही है सुधा □ वह अलग हटा तो सुधा अपने हाथ देखकर बोली, “घबराओ न देवता, तुम्हारी उज्ज्वल साधना में कालिख नहीं लगाऊँगी □ अपने आँचल में पौछ लूँगी □” और सचमुच आँचल में हाथ पौछकर बोली, “चलो, अन्दर चलें, उठ बिनती! बिलैया कहीं की!”

चन्द्र को सोफे पर बिठाकर उसी की बगल में सुधा बैठ गयी और अँगुलियाँ तोड़ते हुए कहा,

“चन्द्र, सिर में बहुत दर्द हो रहा है मेरे□”

“सिर में दर्द नहीं होगा तो क्या? इतनी तपिश में मोटर बना रही थीं! पापा कितने दुखी हो रहे थे आज? तुम्हें इस तरह करना चाहिए? फिर फायदा क्या हुआ? न ऐसे दुःखी किया, वैसे दुःखी कर लिया□ बात तो वही रही न? तारीफ तो तब थी कि तुम अपनी दुनिया में अपने हाथ से आग लगा देती और वे हरे पर शिकन न आती□ अभी तक दुनिया की सभी ऊँचाई समेटकर भी बाहर से वही बचपन कायम रखा था तुमने, अब दुनिया का सारा सुख अपने हाथ से लुटाने पर भी वही बचपन, वही उल्लास वयों नहीं कायम रखती!”

“बचपन!” सुधा हँसी-“बचपन अब खत्म हो गया, चन्द्र! अब मैं बड़ी हो गयी□”

“बड़ी हो गयी! कब से?”

“कल दोपहर से, चन्द्र!”

चन्द्र चुप□ थोड़ी देर बाद फिर खयं सुधा ही बोली, “नहीं चन्द्र, दो-तीन दिन में ठीक हो जाऊँगी! तुम घबराओ मत□ मैं मृत्यु-शैख्या पर भी होऊँगी तो तुम्हारे आदेश पर हँस सकती हूँ□” और फिर सुधा गुमसुम बैठ गयी□ चन्द्र चुपचाप सोचता रहा और बोला, “सुधी! मेरा तुम्हें कुछ भी ध्यान नहीं है?”

“और किसका है, चन्द्र! तुम्हारा ध्यान न होता तो देखती मुझे कौन झुका सकता था□ आज से सालों पहले जब मैं पापा के पास आयी थी तो मैंने कभी न सोचा था कि कोई भी होगा जिसके सामने मैं इतना झुक जाऊँगी□...अच्छा चन्द्र, मन बहुत उचट रहा है! चलो, कहीं घूम आएँ! चलोगे?”

“चलो!” चन्द्र ने कहा□

“जाएं बिनती को जगा लाएँ□ वह कम्बरलत अभी पड़ी सो रही है□” सुधा उठकर चली गयी□ थोड़ी देर में बिनती आँख मलते बगल में चटाई दाढ़े आयी और फिर बरामदे में बैठकर ऊँधने लगी□ पीछे-पीछे सुधा आयी और चोटी खींचकर बोली, “चल तैयार हो! चलेंगे घूमने□”

थोड़ी देर में तैयार हो गये□ सुधा ने जाकर मोटर निकाली और बोली चन्द्र से-“तुम चलाओगे या हम? आज हमीं चलाएँ□ चलो, किसी पेड़ से लड़ा दें मोटर आज!”

“अरे बाप रे□” पीछे बिनती चिल्लायी, “तब हम नहीं जाएँगे□”

सुधा और चन्द्र दोनों ने मुड़कर उसे देखा और उसकी घबराहट देखकर दंग रह गये□

“नहीं□ मेरेगी नहीं तू!” सुधा ने कहा□ और आगे बैठ गयी□

“बिनती, तू पीछे बैठेगी?” सुधा ने पूछा□

“न भइया, मोटर चलेगी तो मैं गिर जाऊँगी□”

“अरे कोई मोटर के पीछे बैठने के लिए थोड़ी कठ रही हूँ□ पीछे की सीट पर बैठेगी?” सुधा ने पूछा□

“ओ! मैं समझी तुम कठ रही हो पीछे बैठने के लिए जैसी बज्जी में साईंस बैठते हैं! हम तुम्हारे पास बैठेंगे□” बिनती ने मचलकर कहा□

“अब तेरा बचपन इठला रहा है, बिल्ली कहीं की, चल आ मेरे पास!” बिनती मुसकराती हुई जाकर सुधा के बगल में बैठ गयी□ सुधा ने उसे दुलार से पास खींच लिया□ चन्द्र पीछे बैठा तो सुधा बोली, “अगर कुछ हर्ज न समझो तो तुम भी आगे आ जाओ या दूरी रखनी हो तो पीछे ही बैठो□”

चन्द्र आगे बैठ गया □ बीच में बिनती, इधर चन्द्र उधर सुधा □

मोटर चली तो बिनती चीखी, “अरे मेरे मास्टर साहब!”

चन्द्र ने देखा, बिसरिया चला जा रहा था, “आज नहीं पढ़ेंगे...” चन्द्र ने चिल्लाकर कहा □ सुधा ने मोटर रोकी नहीं □

चन्द्र को बेहद अवरज हुआ जब उसने देखा कि मोटर पर्मी के बँगले पर रुकी □ “अरे यहाँ क्यों?” चन्द्र ने पूछा □

“यों ही □” सुधा ने कहा □ “आज मन हुआ कि मिस पर्मी से अंगरेजी कविता सुनें □”

“क्यों, अभी तो तुम कह रही थीं कि कविता पढ़ने में आज तुम्हारा मन ही नहीं लग रहा है!”

“कुछ कहो मत चन्द्र, आज मुझे जो मन में आये, कर लेने दो □ मेरा सिर बेहद दर्द कर रहा है □ और मैं कुछ समझ नहीं पाती क्या करूँ □ चन्द्र तुमने अच्छा नहीं किया?”

चन्द्र कुछ नहीं बोला □ चुपचाप आगे चल दिया □ सुधा के पीछे-पीछे कुछ संकोच करती हुई-सी बिनती आ रही थी □

पर्मी बैठी कुछ लिख रही थी □ उसने उठकर सबों का स्वागत किया □ वह कोच पर बैठ गयी □ दूसरी पर सुधा, चन्द्र और बिनती □ सुधा ने बिनती का परिचय पर्मी से कराया और पर्मी ने बिनती से हाथ मिलाया तो बिनती जाने क्यों चन्द्र की ओर देखकर हँस पड़ी □ शायद उस दिन की घटना की याद में □

सहसा सुधा को जाने क्या ख्याल आ गया, बिनती की शरारत-भरी हँसी देखकर कि उसने फौरन कहा चन्द्र से-”चन्द्र, तुम पर्मी के पास बैठो, दो मित्रों को साथ बैठना चाहिए □”

“हाँ, और खास तौर से जब वह कभी-कभी मिलते हों □”-बिनती ने मुसकराते हुए जोड़ दिया □ पर्मी ने मजाक समझ लिया और बिना शरमाये बोली-

“हम लोगों को मध्यस्थ की जरूरत नहीं, धन्यवाद! आओ चन्द्र, यहाँ आओ □” पर्मी ने चन्द्र को बुलाया □ चन्द्र उठकर पर्मी के पास बैठ गया □ थोड़ी देर तक बातें होती रहीं □ मालूम हुआ, बर्टी अपने एक दोस्त के साथ तराई के पास शिकार खेलने गया है □ आजकल वह दिल की शक्ल का एक पानबुमा दफ्ती का टुकड़ा काटकर उसमें गोली मारा करता है और जब किसी चिड़िया बगैर ह को मारता है तो शिकार को उठाकर देखता है कि गोली हृदय में लगी है या नहीं □ स्वास्थ्य उसका सुधर रहा है □ सुधा कोच पर सिर टेके उदास बैठी थी □ सहसा पर्मी ने बिनती से कहा, “आपको पहली दफे देखा मैंने □ आप बातें क्यों नहीं करतीं?”

बिनती ने झोंपकर मुँह झुका लिया □ बड़ी विचित्र लड़की थी □ हमेशा चुप रहती थी और कभी-कभी बोलने की लहर आती तो गुटरबूँ करके घर गुँजा देती थी और जिन दिनों चुप रहती थी उन दिनों ज्यादातर आँख की निगाह, कपोलों की आशनाई या अधरों की मुसकान के ढारा बातें करती थी □ पर्मी बोली, “आपको फूलों से शौक है?”

“हाँ, हाँ” बिनती सिर हिलाकर बोली □

“चन्द्र, इन्हें जाकर गुलाब दिखा लाओ □ इधर फिर खूब रिते हैं!”

बिनती ने सुधा से कहा, “चलो दीदी □” और चन्द्र के साथ बढ़ गयी □

फूलों के बीच में पहुँचकर, बिनती ने चन्द्र से कहा, “सुनिए, दीदी को तो जाने क्या होता जा रहा है □ बताइए, ऐसे क्या होगा?”

“मैं खुद पेरेशान हूँ, बिनती! लेकिन पता नहीं कहाँ मन में कौन-सा विश्वास है जो कहता है कि

नहीं, सुधा अपने को सँभालना जानती है, अपने मन को सन्तुलित करना जानती है और सुधा सचमुच ही त्याग में ज्यादा गौरवमयी हो सकती है” इसके बाद चन्द्र ने बात टाल दी वह बिनती से ज्यादा बात करना नहीं चाहता था, सुधा के बारे में

बिनती ने चन्द्र को मौन देखा तो बोली, “एक बात कहें आपसे? मानिएगा!”

“क्या?”

“अगर हमसे कभी कोई अनधिकार चेष्टा हो जाए तो क्षमा कर दीजिएगा, लेकिन आप और दीदी दोनों मुझे इतना चाहते हैं कि हम समझ नहीं पाते कि व्यवहारों को कहाँ सीमित रखें!” बिनती ने सिर झुकाये एक फूल को नोचते हुए कहा

चन्द्र ने उसकी ओर देखा, क्षण-भर चुप रहा, फिर बोला, “नहीं बिनती, जब सुधा तुम्हें इतना चाहती है तो तुम हमेशा मुझ पर उतना ही अधिकार समझना जितना सुधा पर”

उधर पम्मी ने चन्द्र के जाते ही सुधा से कहा, “क्या आपकी तबीयत खराब है?”

“नहीं तो”

“आज आप बहुत पीली नजर आती हैं!” पम्मी ने पूछा

“हाँ, कुछ मन नहीं लग रहा था तो मैं आपके पास चली आयी कि आपसे कुछ कविताएँ सुनूँ औंगरेजी की दोपहर को मैंने कविता पढ़ने की कोशिश की तो तबीयत नहीं लगी और शाम को लगा कि अगर कविता नहीं सुनूँगी तो सिर फट जाएगा” सुधा बोली

“आपके मन में कुछ संघर्ष मालूम पड़ता है, या शायद...एक बात पूछूँ आपसे?”

“क्या, पूछिए?”

“आप बुरा तो नहीं मानेंगी?”

“नहीं, बुरा क्यों मानेंगी?”

“आप कपूर को प्यार तो नहीं करतीं? उससे विवाह तो नहीं करना चाहतीं?”

“छिः, मिस पम्मी, आप कैसी बातें कर रही हैं उसका मेरे जीवन में कोई ऐसा स्थान नहीं”

छिः, आपकी बात सुनकर शरीर में काँटे उठ आते हैं मैं और चन्द्र से विवाह करूँगी! इतनी धिनौनी बात तो मैंने कभी नहीं सुनी!”

“माफ कीजिएगा, मैंने यों ही पूछा था क्या चन्द्र किसी को प्यार करता है?”

“नहीं, बिलकुल नहीं!” सुधा ने उतने ही विश्वास से कहा जितने विश्वास से उसने अपने बारे में कहा था

इतने में चन्द्र और बिनती आ गये सुधा बोली अधीरता से, “मेरा एक-एक क्षण कटना मुश्किल हो रहा है, आप शुरू कीजिए कुछ गाना!”

“कपूर, क्या सुनोगे?” पम्मी ने कहा

“अपने मन से सुनाओ! चलो, सुधा ने कहा तो कविता सुनने को मिली!”

पम्मी ने आलमारी से एक किताब उठायी और एक कविता गाना शुरू की-अपनी हेयर पिन निकालकर मेज पर रख दी और उसके बाल मचलने लगे चन्द्र के कन्धे से वह टिककर बैठ गयी और किताब चन्द्र की गोद में रख दी बिनती मुसकरायी तो सुधा ने आँख के इशारे से मना कर दिया पम्मी ने गाना शुरू किया, लेडी नार्टन का एक गीत-

मैं तुम्हें प्यार नहीं करती हूँ न! मैं तुम्हें प्यार नहीं करती हूँ

फिर भी मैं उदास रहती हूँ जब तुम पास नहीं होते हो!

और मैं उस चमकदार नीले आकाश से भी इर्ष्या करती हूँ

जिसके नीचे तुम खड़े होगे और जिसके सितारे तुम्हें देख सकते हैं...”

चन्द्र ने पम्मी की ओर देखा □ सुधा ने अपने ही वक्ष में अपना सिर छुपा लिया □ पम्मी ने एक पठ समाप्त कर एक गहरी साँस ली और फिर शुरू किया-

“मैं तुम्हें प्यार नहीं करती हूँ-फिर भी तुम्हारी बोलती हुई आँखें;

जिनकी नीलिमा में गहराई, चमक और अभिव्यक्ति है-

मेरी निर्निमेष पलकों और जागते अर्धशत्रि के आकाश में नाच जाती हैं!

और किसी की आँखों के बारे में ऐसा नहीं होता...”

सुधा ने बिनती को अपने पास खींच लिया और उसके कन्धे पर सिर टेककर बैठ गयी □ पम्मी गाती गयी-

“ज मुझे मातृम है कि मैं तुम्हें प्यार नहीं करती हूँ, लेकिन फिर भी,

कोई शायद मेरे साफ दिल पर विश्वास नहीं करेगा □

और अक्सर मैंने देखा है, कि लोग मुझे देखकर मुसक्या देते हैं

वहाँकि मैं उधर एकटक देखती हूँ, जिधर से तुम आया करते हो!”

गीत का रवर बड़े स्वाभाविक ढंग से उठा, लट्ठराने लगा, काँप उठा और फिर धीरे-धीरे एक करण सिसकती हुई लय में डूब गया □ गीत खत्म हुआ तो सुधा का सिर बिनती के कंधे पर था और चन्द्र का हाथ पम्मी के कन्धे पर □ चन्द्र थोड़ी देर सुधा की ओर देखता रहा फिर पम्मी की एक हल्की सुनहरी लट से खेलते हुए बोला, “पम्मी, तुम बहुत अच्छा गाती हो!”

“अच्छा? आश्चर्यजनक! कठो चन्द्र, पम्मी इतनी अच्छी है यह तुमने कभी नहीं बताया था, हमें फिर कभी सुनाइएगा?”

“हाँ, हाँ मिस शुकला! काश कि बजाय लेडी नार्टन के यह गीत आपने लिखा होता!”

सुधा घबरा गयी, “चलो □ चन्द्र, चलें अब! चलो □” उसने चन्द्र का हाथ पकड़कर खींच लिया-”मिस पम्मी, अब फिर कभी आएँगे □ आज मेरा मन ठीक नहीं है □”

16

चन्द्र ड्राइव करने लगा □ बिनती बोली, “हमें आगे हवा लगती है, हम पीछे बैठेंगे □”
कार चली तो सुधा बोली, “अब मन कुछ शान्त है, चन्द्र □ इसके पहले तो मन में कैसे तूफान आपस में लड़ रहे थे, कुछ समझ में नहीं आता □ अब तूफान बीत गये □ तूफान के बाद की खामोश उठासी है □” सुधा ने गहरी साँस ली, “आज जाने वयों बदन टूट रहा है □” बैठे ही बैठे बदन उमेरते हुए कहा □

दूसरे दिन चन्द्र गया तो सुधा को बुखार आ गया था □ अंग-अंग जैसे टूट रहा हो और आँखों में ऐसी तीखी जलन कि मानो किसी ने अंगारे भर दिये हों □ रात-भर वह बेचैन रही, आधी पागल-सी रही □ उसने तकिया, चादर, पानी का गिलास सभी उठाकर फेंक दिया, बिनती को कभी बुलाकर पास बिठा लेती, कभी उसे दूर ढकेल देती □ डॉक्टर साहब पेशान, रात-भर सुधा के पास बैठे, कभी उसका माथा, कभी उसके तलवों में बर्फ मलते रहे □ डॉक्टर घोष ने बताया यह कल की गरमी का असर है □ बिनती ने एक बार पूछा, “चन्द्र को बुलवा दें?” तो सुधा ने कहा, “नहीं, मैं मर जाऊं तो! मैरे जीते जी नहीं!” बिनती ने ड्राइवर से कहा, “चन्द्र को बुला लाओ □” तो सुधा ने बिगड़कर कहा, “वयों तुम सब लोग मेरी जान लेने पर तुले हो?” और उसके बाद कमजौरी से हाँफने लगी □ ड्राइवर चन्द्र को बुलाने नहीं गया □

जब चन्द्र पहुँचा तो डॉक्टर साहब रात-भर के जागरण के बाद उठकर नहाने-धोने जा रहे थे □ “पता नहीं सुधा को क्या हो गया कल से! इस वक्त तो कुछ शान्त है पर रात-भर बुखार और बेहद बेचैनी रही है □ और एक ही दिन में इतनी चिड़ियिड़ी हो गयी है कि बस...” डॉक्टर साहब ने चन्द्र को देखते ही कहा □

चन्द्र जब कमरे में पहुँचा तो देखा कि सुधा आँख बन्द किये हुए लेटी है और बिनती उसके सिर पर आइस-बैग रखे हुए है □ सुधा का चेहरा पीला पड़ गया है और मुँह पर जाने कितनी ही रेखाओं की उलझन है, आँखें बन्द हैं और पलकों के नीचे से अँगारों की आँच छनकर आ रही है □ चन्द्र की आहट पाते ही सुधा ने आँखें खोली □ अजब-सी आनन्द निर्गाहों से चन्द्र की ओर देखा और बिनती से बोली, “बिनती, इनसे कह दो जाएँ यहाँ से □”

बिनती रुद्ध, चन्द्र नहीं समझा, पास आकर बैठ गया, बोला, “सुधा, क्यों, पड़ गयी न, मैंने कहा था कि गैरेज में मोटर साफ मत करो □ परसों इतना रोयी, सिर पटका, कल धूप खायी □ आज पड़ रही! कैसी तबीयत है?”

सुधा उधर खिसक गयी और अपने कपड़े समेट लिये, जैसे चन्द्र की छाँह से भी बचना चाहती है और तेज, कड़वी और हाँफती हुई आवाज में बोली, “बिनती, इनसे कह दो जाएँ यहाँ से □”

चन्द्र चुप हो गया और एकटक सुधा की ओर देखने लगा और सुधा की बात ने जैसे चन्द्र का मन मरोड़ दिया □ कितनी गैरियत से बात कर रही है सुधा! सुधा, जो उसके अपने व्यक्तिगत से

ज्यादा अपनी थी, आज किस स्वर में बोल रही है! “सुधी, क्या हुआ तुम्हें?” चन्द्र ने बहुत आहत हो बहुत दुलार-भरी आवाज में पूछा □

“मैं कहती हूँ जाओगे नहीं तुम?” फुफकारकर सुधा बोली, “कौन हो तुम मेरी बीमारी पर सहानुभूति प्रकट करने वाले? मेरी कुशल पूछने वाले? मैं बीमार हूँ, मैं मर रही हूँ, तुमसे मतलब? तुम कौन हो? मेरे भाई हो? मेरे पिता हो? कल अपने मित्र के यहाँ मेरा अपमान करने ले गये थे!” सुधा हँफने लगी □

“अपमान! किसने तुम्हारा अपमान किया, सुधा? पम्मी ने तो कुछ भी नहीं कहा? तुम पागल तो नहीं हो गयी?” चन्द्र ने सुधा के पैरों पर हाथ रखते हुए कहा □

“पागल हो नहीं गयी तो हो जाऊँगी!” उसने पैर हटा लिये, “तुम, पम्मी, गेस्‌ल, पापा डॉक्टर सब लोग मिलकर मुझे पागल कर दोगे □ पापा कहते हैं ब्याह करो, पम्मी कहती है मत करो, गेस्‌ल कहती है तुम प्यार करती हो और तुम... तुम कुछ भी नहीं कहते □ तुम मुझे इस जरक में बरसों से सुलगते देख रहे हो और बजाय इसके कि तुम कुछ कहो, तुमने मुझे खुद इस भट्टी में ढकेल दिया!... चन्द्र, मैं पागल हूँ, मैं क्या करूँ?” सुधा बड़े कातर स्वर में बोली □ चन्द्र चुप था □ सिर्फ सिर झुकाये, हाथों पर माथा रखे बैठा था □ सुधा थोड़ी देर हँफती रही □ फिर बोली-

“तुम्हें क्या ठक था कल पम्मी के यहाँ ले जाने का? उसने क्यों कल गीत में कहा कि मैं तुम्हें प्यार करती हूँ?” सुधा बोली □ चन्द्र ने बिनती की ओर देखा- “क्यों बिनती? बिनती से मैं कुछ नहीं छिपाता!” “क्यों पम्मी ने कल कहा, मैं तुम्हें प्यार नहीं करती! मेरा मन मुझे धोखा नहीं दे सकता □ मैं तुमसे सिर्फ जाने क्या करती हूँ... फिर पम्मी ने कल ऐसी बात क्यों कही? मेरे रोम-रोम में जाने कौन-सा ज्वालामुखी धधक उठता है ऐसी बातें सुनकर? तुम क्यों पम्मी के यहाँ ले गये?”

“तुम खुद गयी थीं, सुधा!” चन्द्र बोला □

“तो तुम रोक नहीं सकते थे! तुम कह देते मत जाओ तो मैं कभी जा सकती थी? तुमने क्यों नहीं रोका? तुम हाथ पकड़ लेते □ तुम डॉट देते □ तुमने क्यों नहीं डॉटा? एक ही दिन मैं मैं तुम्हारी गैर हो गयी? गैर हूँ तो फिर क्यों आये हो? जाओ यहाँ से □ मैं कहती हूँ; जाओ यहाँ से?” दाँत पीसकर सुधा बोली □

“सुधा...”

“मैं तुम्हारी बोली नहीं सुनना चाहती □ जाते हो कि नहीं...” और सुधा ने अपने माथे पर से उठाकर आइस-बैग फेंक दिया □ बिनती चौंक उठी □ चन्द्र चौंक उठा □ उसने मुड़कर सुधा की ओर देखा □ सुधा का चेहरा डयावना लग रहा था □ उसका मन ये आया □ वह उठा, क्षण-भर सुधा की ओर देखता रहा और धीरे-धीरे कमरे से बाहर चला गया □

बरामदे के सोफे पर आकर सिर झुकाकर बैठ गया और सोचने लगा, यह सुधा को क्या हो गया? परसों शाम को वह इसी सोफे पर सोया था, सुधा बैठी पंखा झाल रही थी □ कल शाम को वह हँस रही थी, लगता था तूफान शान्त हो गया पर यह क्या? अन्तर्दृष्टि ने यह रूप कैसे ले लिया? और क्यों ले लिया? जब वह अपने मन को शान्त रख सकता है, जब वह सभी कुछ हँसते-हँसते बरदाश्त कर सकता है तो सुधा क्यों नहीं कर सकती? उसने आज तक अपनी साँसों से सुधा का निर्माण किया है □ सुधा को तिल-तिल बनाया, सजाया, सँवारा है फिर सुधा में यह कमजोरी क्यों?

क्या उसने यह रास्ता अखिलयार करके भूल की? क्या सुधा भी एक साधारण-सी लड़की है जिसके प्रेम और धृणा का स्तर उतना ही साधारण है? माना उसने अपने दोनों के लिए एसा रास्ता अपनाया है जो विलक्षण है लेकिन इससे क्या! सुधा और वह दोनों ही क्या विलक्षण नहीं हैं? फिर सुधा क्यों बिखर रही है? लड़कियाँ भावना की ही बनी होती हैं? साधना उन्हें आती ही नहीं क्या? उसने सुधा का गलत मूल्यांकन किया था? क्या सुधा इस 'तलवार की धार' पर चलने में असमर्थ साबित होगी? यह तो चन्द्र की हार थी □

और फिर सुधा ऐसी ही रही तो चन्द्र? सुधा चन्द्र की आत्मा है; इसे अब चन्द्र खूब अच्छी तरह पहचान गया □ तो क्या अपनी ही आत्मा को घोंट डालने की हत्या का पाप चन्द्र के सिर पर है?

तो क्या त्याग मात्र नाम ही है? क्या पुरुष और नारी के सम्बन्ध का एक ही रास्ता है-प्रणय, विवाह और तृप्ति! पवित्रता, त्याग और दूरी क्या सम्बन्धों को, विश्वासों को जिन्दा नहीं रहने दे सकते? तो फिर सुधा और पम्मी में क्या अन्तर है? क्या सुधा के हृदय के इतने समीप रहकर, सुधा के व्यक्तित्व में घुल-मिलकर और आज सुधा को इतने अन्तर पर डालकर चन्द्र पाप कर रहा है? तो क्या फूल को तोड़कर अपने ही बटन होल में लगा लेना ही पुण्य है और दूसरा रास्ता गर्हित है? विनाशकारी है? क्यों उसने सुधा का व्यक्तित्व तोड़ दिया है?

किसी ने उसके कन्धे पर हाथ रखा □ विवार-शृंखला टूट गयी...बिनती थी □ “क्या सोत रहे हैं आप?” बिनती ने पूछा, बहुत स्नेह से □

“कुछ नहीं!”

“नहीं बताइएगा? ठम नहीं जान सकते?” बिनती के खर में ऐसा आब्रह, ऐसा अपनापन, ऐसी निःछलता रहती थी कि चन्द्र अपने को कभी नहीं योक पाता था □ छिपा नहीं पाता था □

“कुछ नहीं बिनती! तुम कहती हो, सुधा को इतने अन्तर पर मैंने रखा तो मैं देवता हूँ! सुधा कहती है, मैंने अन्तर पर रखा, मैंने पाप किया! जाने क्या किया है मैंने? क्या मुझे कम तकलीफ है? मेरा जीवन आजकल किस तरह घायल हो गया है, मैं जानता हूँ □ एक पल मुझे आया नहीं मिलता □ क्या उतनी सजा काफी नहीं थी जो सुधा को भी किस्मत यह ढण्ड दे रही है? मुझी को सभी बचैनी और दुःख मिल जाता □ सुधा को मैरे पाप का ढण्ड क्यों मिल रहा है? बिनती, तुमसे अब कुछ नहीं छिपा □ जिसको मैं अपनी साँसों में दुबकाकर इन्द्रधनुष के लोक तक ले गया, आज हवा के झोंके उसे बादलों की ऊँचाई से क्यों ढकेत देना चाहते हैं? और मैं कुछ भी नहीं कर सकता?” इतनी देर बाद बिनती के ममता-भरे स्पर्श में चन्द्र की आँखें छलछला आयीं □

“छिः, आप समझदार हैं! दीदी ठीक हो जाएँगी! घबराने से काम नहीं चलेगा न! आपको हमारी कसम है □ उदास मत होइए □ कुछ सोचिए मत □ दीदी बीमार हैं, आप इस तरह से करेंगे तो कैसे काम चलेगा! उठिए, दीदी बुला रही हैं □”

चन्द्र गया □ सुधा ने इशारे से पास बुलाकर बिठा लिया □ “चन्द्र, हमारा दिमाग ठीक नहीं है □ बैठ जाओ लेकिन कुछ बोलना मत, बैठे रहो □”

उसके बाद दिन भर अजब-सा गुजरा □ जब-जब चन्द्र ने उठने की कोशिश की, सुधा ने उसे खींचकर बिठा लिया □ घर तो उसे जाने ही नहीं दिया □ बिनती वहीं खाना ले आयी □ सुधा कभी चन्द्र की ओर देख लेती □ फिर तकिये में मुँह गड़ा लेती □ बोली एक शब्द भी नहीं, लेकिन उसकी आँखों में अजब-सी कातरता थी □ पापा आये, घंटों बैठे रहे; पापा चले गये तो

उसने चन्द्र का हाथ अपने हाथ में ले लिया, करवट बदली और तकिये पर अपने कपोलों से चन्द्र की हथेली ढाकर लेटी रही। पलकों से कितने ही गरम-गरम आँसू छलककर गालों पर फिसलकर चन्द्र की हथेली भिन्नते रहे।

चन्द्र चुप रहा। लैकिन सुधा के आँसू जैसे नसों के सहारे उसके हृदय में उतर गये और जब हृदय डूबने लगा तो उसकी पलकों पर उतर आये। सुधा ने देखा लैकिन कुछ भी नहीं बोली। घंटा-भर बहुत गहरी साँस ली; बेहद उदासी से मुसकगुकर कहा, “हम दोनों पागल हो गये हैं, क्यों चन्द्र? अच्छा, अब शाम हो गयी। जरा लौंग पर चलें।”

सुधा चन्द्र के कन्धे पर हाथ रखकर खड़ी हो गयी। बिनती ने दवा दी, थर्मामीटर से बुखार देखा। बुखार नहीं था। चन्द्र ने सुधा के लिए कुरसी उठायी। सुधा ने हँसकर कहा, “चन्द्र, आज बीमार हूँ तो कुरसी उठा रहे हो, मर जाऊँगी तो अरथी उठाने भी आना, वरना नरक मिलेगा! समझो ना!”

“छिः, ऐसा कुबोल न बोला करो, दीदी?”

सुधा लौंग में कुरसी पर बैठ गयी। बगल में नीचे चन्द्र बैठ गया। सुधा ने चन्द्र का सिर अपनी कुरसी में टिका लिया और अपनी ऊँगलियों से चन्द्र के सूखे होठों को छूते हुए कहा, “चन्द्र, आज मैंने तुम्हें बहुत दुःखी किया, क्यों? लैकिन जाने क्यों, दुःखी न करती तो आज मुझे वह ताकत न मिलती जो मिल गयी।” और सहसा चन्द्र के सिर को अपनी गोद में खींचती हुई-सी सुधा ने कहा, “आराध्य मेरे! आज तुम्हें बहुत-सी बातें बताऊँगी। बहुत-सी।”

बिनती उठकर जाने लगी तो सुधा ने कहा, “कहाँ चली? बैठ तू यहाँ। तू गवाह रहेगी ताकि बाद में चन्द्र यह न कहे कि सुधा कमज़ोर निकल गयी।” बिनती बैठ गयी। सुधा ने क्षण-भर आँखें बन्द कर लीं और अपनी वेणी पीठ पर से खींचकर गोद में ढाल लीं और बोली, “चन्द्र, आज कितने ही साल हुए, जबसे मैंने तुम्हें जाना है, तब से अच्छे-बुरे सभी कामों का फैसला तुम्हीं करते रहे हो। आज भी तुम्हीं बताओ चन्द्र कि अगर मैं अपने को बहुत सँभालने की कोशिश करती हूँ और नहीं सँभाल पाती हूँ, तो यह कोई पाप तो नहीं? तुम जानते हो चन्द्र, तुम जितने मजबूत हो उस पर मुझे घमंड है कि तुम कितनी ऊँचाई पर हो, मैं भी उतना ही मजबूत बनने की कोशिश करती हूँ, उतने ही ऊँचे उठने की कोशिश करती हूँ, अगर कभी-कभी फिसल जाती हूँ तो यह अपराध तो नहीं?”

“नहीं।” चन्द्र बोला।

“और अगर अपने उस अन्तर्दृढ़ के क्षणों में तुम पर कठोर हो जाती हूँ, तो तुम सह लेते हो। मैं जानती हूँ, तुम मुझे जितना रनेह करते हो, उसमें मेरी सभी दुर्बलताएँ धुल जाती हैं। लैकिन आज मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ चन्द्र कि मुझे खुद अपनी दुर्बलताओं पर शरम आती है और आगे से मैं वैसी ही बनूँगी जैसा तुमने सोचा है, चन्द्र।”

चन्द्र कुछ नहीं बोला सिर्फ धास पर रखे हुए सुधा के पाँवों पर अपनी काँपती ऊँगलियाँ रख दीं। सुधा कहती गयी, “चन्द्र, आज से कुछ ही महीने पहले जब गेसू ने मुझसे पूछा था कि तुम्हारा दिल कहीं झुका था तो मैंने इनकार कर दिया था, कल पम्मी ने पूछा, तुम चन्द्र को प्यार करती हो तो मैंने इनकार कर दिया था, मैं आज भी इनकार करती हूँ कि मैंने तुम्हें प्यार किया है, या तुमने मुझे प्यार किया है। मैं भी समझती हूँ और तुम भी समझते हो लैकिन यह न तुमसे छिपा है न मुझसे कि तुमने जो कुछ दिया है वह प्यार से कहीं ज्यादा ऊँचा और प्यार से कहीं ज्यादा

महान है... मैं ब्याह नहीं करना चाहती थी, मैंने परसों इनकार कर दिया था, इतनी रोयी थी, खीझी थी, बाद में मैंने सोचा कि यह गलत है, यह स्वार्थ है जब पापा मुझे इतना प्यार करते हैं तो मुझे उनका दिल नहीं दुखाना चाहिए पर मन के अन्दर की जो खीझी थी, जो कुँदन थी, वह कहीं तो उतरती ही वह मैं अपने पर उतार देना चाहती थी, मन में आता था अपने को कितना कष्ट दे डालूँ इसीलिए अपने गैरेज में जाकर मोटर सँभाल रही थी, लेकिन वहाँ भी असफल रही और अन्त में वह खीझा अपने मन पर भी न उतारकर उस पर उतारी जिसको मैंने अपने से भी बढ़कर माना है वह खीझा उतरी तुम पर!"

चन्द्र ने सुधा की ओर देखा सुधा मुसकराकर बोली, "न, ऐसे मत देखो यह मत समझो कि अपने आज के व्यवहार के लिए मैं तुमसे क्षमा माँगूँगी मैं जानती हूँ, माँगने से तुम दुःखी भी होगे और डॉटने भी लगोगे खैर, आज से मैं अपना रास्ता पहचान गयी हूँ मैं जानती हूँ कि मुझे कितना सँभलकर चलना है तुम्हारे सपने को पूरा करने के लिए मुझे अपने को क्या बनाना होगा, यह भी मैं समझ गयी हूँ मैं खुश रहूँगी, सबल रहूँगी और सशक्त रहूँगी और जो रास्ता तुम दिखलाओगे उधर ही चलूँगी लेकिन एक बात बताओ चन्द्र, मैंने ब्याह कर लिया और वहाँ सुखी न रह पायी, फिर और उन्हें वह भावना, उपासना न दे पायी और फिर तुम्हें दुःख हुआ, तब?"

चन्द्र ने घास का एक टिनका टोड़कर कहा, "देखो सुधा, एक बात बताओ अगर मैं तुम्हें कुछ कह देता हूँ और उसे तुम मुझी को वापस दे देती हो तो कोई बहुत ऊँची बात नहीं हुई अगर मैंने तुम्हें सचमुच ही र्णेह या पवित्रता जो कुछ भी दिया है, उसे तुम उन सभी के जीवन में ही क्यों नहीं प्रतिफलित कर सकती जो तुम्हारे जीवन में आते हैं, चाहे वह पति ही क्यों न हों तुम्हारे मन के अक्षय र्णेह-भंडार के उपयोग में इतनी कृपणता क्यों? मेरा सपना कुछ और ही है, सुधा आज तक तुम्हारी साँसों के अमृत ने ही मुझे यह सामग्री दी कि मैं अपने जीवन में कुछ कर सकूँ और मैं भी यही चाहता हूँ कि मैं तुम्हें वह र्णेह दूँ जो कभी घटे ही न जितना बाँटो उतना बढ़े और इतना मुझे विश्वास है कि तुम यदि र्णेह की एक बूँद दो तो मनुष्य क्या से क्या हो सकता है अगर वही र्णेह रहेगा तो तुम्हारे पति को कभी कोई असन्तोष क्या हो सकता है और फिर कैलाश तो इतना अच्छा लड़का है, और उसका जीवन इतना ऊँचा कि तुम उसकी जिंदगी में ऐसी लगोगी, जैसे अँगूठी में हीरा और जहाँ तक तुम्हारा अपना सवाल है, मैं तुमसे भीख माँगता हूँ कि अपना सब कुछ खोकर भी अगर मुझे कोई सन्तोष रहेगा तो यह देखकर कि मेरी सुधा अपने जीवन में कितनी ऊँची है मैं तुमसे इस विश्वास की भीख माँगता हूँ"

"छिः, मुझसे बड़े हो, चन्द्र! ऐसी बात नहीं कहते! लेकिन एक बात है मैं जानती हूँ कि मैं चन्द्रमा हूँ, सूर्य की किरणों से ही जिसमें चमक आती है तुमने जैसे आज तक मुझे सँवारा है, आगे भी तुम अपनी रोशनी अगर मेरी आत्मा में भरते गये तो मैं अपना भविष्य भी नहीं पहचान सकूँगी समझो!"

"समझा, पगली कहीं की!" थोड़ी देर चन्द्र चुप बैठा रहा फिर सुधा के पाँवों से सिर टिकाकर बोला- "प्रेशान कर डाला, तीन रोज से सूरत तो देखो कैसी निकल आयी है और बैसाखी को कुल चार रोज रह गये अब मत दिमाग बिगड़ना! वे लोग आते ही होंगे!"

"बिनती! दवा ले आ..." बिनती उठकर गयी तो सुधा बोली, "हटो, अब हम घास पर बैठेंगे!" और घास पर बैठकर वह बोली, "लेकिन एक बात है, आज से लेकर ब्याह तक तुम हर अवसर पर

हमारे सामने रहना, जो कहोगे वह हम करते जाएँगे॥”

“हाँ, यह हम जानते हैं॥” चन्द्र ने कहा और कुछ दूर हटकर घास पर लेट गया और आकाश की ओर देखने लगा॥ शाम हो गयी थी और दिन-भर की उड़ी हुई धूल अब बहुत कुछ बैठ गयी थी॥ आकाश के बादल ठहरे हुए थे और उन पर अरुणाई झलक रही थी॥ एक दुरंगी पतंग बहुत ऊंचे पर उड़ रही थी॥ चन्द्र का मन भारी था॥ हालाँकि जो तूफान परसों उठा था वह खत्म हो गया था, लेकिन चन्द्र का मन अभी मरा-मरा हुआ-सा था॥ वह चुपचाप लेटा रहा॥ बिनती दवा और पानी ले आयी॥ दवा पीकर सुधा बोली, “क्यों, चुप क्यों हो, चन्द्र?”

“कोई बात नहीं॥”

“फिर बोलते क्यों नहीं, देखा बिनती, अभी-अभी क्या कह रहे थे और अब देखो इन्हें॥” सुधा बोली॥

“हम अभी बताते हैं इन्हें!” बिनती बोली और गिलास में थोड़ा-सा पानी लेकर चन्द्र के ऊपर फैक दिया॥ चन्द्र चौंककर उठ बैठा और बिगड़कर बोला, “यह क्या बदतमीजी है? अपनी दीदी को यह सब दुलार दिखाया करो॥”

“तो क्यों पढ़े थे ऐसे? बात करेंगे ऋषि-मुनियों जैसे और उदास रहेंगे बच्चों की तरह! वाह ऐ चन्द्र बाबू!” बिनती ने हँसकर कहा, “दीदी, ठीक किया न मैंने?”

“बिलकुल ठीक, ऐसे ही इनका दिमाग ठीक होगा॥”

“इतने में डॉक्टर शुक्ला आये और कुरसी पर बैठ गये॥ सुधा के माथे पर हाथ रखकर देखा, “अब तो तू ठीक है?”

“हाँ, पापा!”

“बिनती, कल तुम्हारी माताजी आ रही हैं॥ अब बैसाखी की तैयारी करनी है॥ सुधा के जेठ आ रहे हैं और सास॥”

सुधा चुपचाप उठकर चली गयी॥ चन्द्र, बिनती और डॉक्टर साहब बैठे उस दिन का बहुत-सा कार्यक्रम बनाते रहे॥

चन्द्र को सबसे बड़ा सन्तोष था कि सुधा ठीक हो गयी थी। बैसाख पूजो के एक दिन पहले ही से बिनती ने घर को इतना साफ कर डाला था कि घर चमक उठा था। यह बात तो दूसरी है कि स्टडी-रूम की सफाई में बिनती ने चन्द्र के बहुत-से कागज बुहारकर फेंक दिये थे और आँगन धोते वक्त उसने चन्द्र के कपड़ों को छीटों से तर कर दिया था। उसके बदले में चन्द्र ने बिनती को डॉटा था और सुधा देख-देखकर हँस रही थी और कह रही थी, “तुम क्यों चिढ़ रहे हो? तुम्हें देखने थोड़े ही आ रही हैं हमारी सास।”

बैशाखी पूजो की सुबह डॉक्टर साहब और बुआजी गाड़ी लेकर उनको लिवा लाने गये थे। चन्द्र बाहर बरामदे में बैठा अखबार पढ़ रहा था और सुधा अन्दर कमरे में बैठी थी। अब दो दिन उसे बहुत दब-ड़ककर रहना होगा। वह बाहर नहीं घूम सकती थी; क्योंकि जाने कैसे और कब उसकी सास आ जाएँ और देख लें। बुआ उसे समझा गयी थीं और उसने एक गम्भीर आझाकारी लड़की की तरह मान लिया था और अपने कमरे में चुपचाप बैठी थी। बिनती कढ़ी के लिए बेसन फेंट रही थी और महराजिन ने रसोई में दूध चढ़ा रखा था।

सुधा चुपके से आयी, किवाड़ की आड़ से देखा कि पापा और बुआ की मोटर आ तो नहीं रही हैं! जब देखा कि कोई नहीं है तो आकर चुप्पे से खड़ी हो गयी और पीछे से चन्द्र के हाथ से अखबार ले लिया। चन्द्र ने पीछे देखा तो सुधा एक बच्चे की तरह मुसकरा दी और बोली, “क्यों चन्द्र, हम ठीक हैं न? ऐसे ही रहें न? देखा तुम्हारा कहना मानते हैं न हम?”

“हाँ सुधी, तभी तो हम तुम्हारो इतना दुलार करते हैं!”

“तेकिन चन्द्र, एक बार आज ये लेने दो। फिर उनके सामने नहीं ये सकेंगे।” और सुधा का गला रुँध गया और आँख छतछला आयी।

“छि, सुधा...” चन्द्र ने कहा।

“अच्छा, नहीं-नहीं...” और झाटके से सुधा ने आँखू पोंछ लिये। इतने में गेट पर किसी कार का भोपू सुनाई पड़ा और सुधा भागी।

“अे, यह तो पम्मी की कार है।” चन्द्र बोला। सुधा रुक गयी। पम्मी ने पोर्टिको में आकर कार योकी।

“हैलो, मेरे जुड़वा मित्र, क्या हाल है तुम लोगों का?” और हाथ मिलाकर बेतकल्तुफी से कुर्सी खींचकर बैठ गयी।

“इन्हें अन्दर ले चलो, चन्द्र! वरना अभी वे लोग आते होंगे!” सुधा बोली।

“नहीं, मुझे बहुत जल्दी है। आज शाम को बाहर जा रही हूँ। बर्टी अब मसूरी चला गया है, वहाँ से उसने मुझे भी बुलाया है। उसके हाथ में कहीं शिकार में चोट लग गयी है। मैं तो आज जा रही हूँ।”

सुधा बोली, “ठमें ले चलिएगा?”

“चलिए कपूर, तुम भी चलो, जुलाई में लौट आना!” पर्मी ने कहा □

“जब अगले साल हम लोगों की मित्रता की वर्षगाँठ होगी तो मैं चलूँगा □” चन्द्र ने कहा □

“अच्छा, विदा!” पर्मी बोली □ चन्द्र और सुधा ने हाथ जोड़े तो पर्मी ने आगे बढ़कर सुधा का मुँह हथेलियों में उठाकर उसकी पलकें चूम लीं और बोली, “मुझे तुम्हारी पलकें बहुत अच्छी लगती हैं □ ऐ! इनमें आँखुओं का स्वाद है, अभी येरी थीं क्या?” सुधा झोंप गयी □

चन्द्र के कन्धे पर हाथ रखकर पर्मी ने कहा, “कपूर, तुम खत जरूर लिखते रहना □ चलते तो बड़ा अच्छा रहता □ अच्छा, आप दोनों मित्रों का समय अच्छी तरह बीतो □” और पर्मी चल दी □

थोड़ी देर में डॉक्टर साहब की कार आयी □ सुधा ने अपने कमरे के दरवाजे बन्द कर लिये, बिनती ने सिर पर पल्ला ढक लिया और चन्द्र ढौँडकर बाहर गया □ डॉक्टर साहब के साथ जो सज्जन उतरे वे ठिगने-से, गोरे-से, गोल घेहरे के कुलीन सज्जन थे और खदर का कुरता और धोती पहने हुए थे □ हाथ में एक छोटा-सा सफरी बैग था □ चन्द्र ने लेने को हाथ बढ़ाया तो हँसकर बोले, “नहीं जी, क्या इतना-सा बैग ले चलने में मेरा हाथ थक जाएगा □ आप लोग तो खातिर करके मुझे महत्वपूर्ण बना देंगे!”

सब लोग स्टडी रूम में गये □ वहीं डॉक्टर शुक्ला ने परिचय कराया- “यह हमारे शिष्य और लड़के, प्रान्त के होनहार अर्थशास्त्री चन्द्रकुमार कपूर और आप शाहजहाँपुर के प्रसिद्ध काँग्रेसी कार्यकर्ता और म्यूनिसिपल कमिंश्नर श्री शंकरलाल मिश्र □”

“अब तू नहाय लेव संकरी, फिर चाय ठंडाय जड़है □” बुआजी ने आकर कहा □ आज बुआजी ने बहुत दिनों पहले की बूटीदार साड़ी पहन रखी थी और शायद वह खुश थीं क्योंकि बिनती को डॉंट नहीं रही थीं □

“नहीं, मैं तो वेटिंग-रूम में नहा चुका □ चाय मैं पीता नहीं □ खाना ही तैयार कराइए □” और घड़ी देखकर शंकर बाबू बोले, “मुझे जरा खराज्य-भवन जाना है और दो बजे की गाड़ी से वापस चले जाना है और शायद उधर से ही चला जाऊँगा □” उन्होंने बहुत मीठे स्वर से मुसक्काते हुए कहा □

“यह तो अच्छा नहीं लगता कि आप आये भी और कुछ रुके नहीं □” डॉक्टर शुक्ला बोले □

“हाँ, मैं खुद रुकना चाहता था लेकिन माँजी की तबीयत ठीक नहीं है □ कैलाश भी कानपुर गया हुआ है □ मुझे जल्दी जाना चाहिए □”

बिनती ने लाकर थाली रखी □ चन्द्र ने आश्वर्य से डॉक्टर साहब की ओर देखा □ वे हँसकर बोले, “भाई, यह लोग हमारी तरह छूत-पाक नहीं मानते □ शंकर तुम्हारे सम्प्रदाय के हैं, यहीं कट्टा खाना खा लेंगे □”

“इन्हें ब्राह्मण कहत के हैं, ई तो किरिस्तान है, हमरो धरम बिगाड़िन हिंयाँ आय कै!” बुआजी बोलीं □ बुआजी ने ही यह शादी तय करायी थी, लड़काबताया था और दूर के रिश्ते से वे कैलाश और शंकर की भाभी लगती थीं □

शंकर बाबू ने हाथ धोये और कुर्सी खींचकर बैठ गये □ चन्द्र, की ओर देखकर बोले, “आइए, होनहार डॉक्टर साहब, आप तो मेरे साथ खा सकते हैं?”

“नहीं, आप खाइए □” चन्द्र ने तकल्लुफ करते हुए कहा □

“अजी वाह! मैं ब्राह्मण हूँ, शुद्ध; मेरे साथ खाकर आपको जलदी मोक्ष मिल जाएगा। कहीं हाथ में तरकारी लगी रह गयी तो आपके लिए स्वर्ग का फाटक फौरन खुल जाएगा! खाओ!”

दो कौर खाने के बाद शंकर बाबू ने बुआजी से कहा, “यही बहु है, जो लड़की थाली रख गयी थी?”

“अरे यम कहौ, ऊ तो हमार छोरी है बिनती! पठचनत्यौ नै पिछले साल तो मुन्ने के विवाह में देखे होबो!” बुआजी बोलीं।

शंकर बाबू कैलाश से काफी बड़े थे लोकिन देखने में बहुत बड़े नहीं लगते थे। खाते-पीते बोले, “डॉक्टर साहब! लड़की से कहिए, शेटी दे जायें। मैं इसी तरह देख लूँगा, और ज्यादा तड़क-भड़क की कोई जरूरत नहीं!”

डॉक्टर साहब ने बुआजी को इशारा किया और वे उठकर चली गयीं। थोड़ी देर में सुधा आयी। साठी सफेद धोती पहने, हाथ में शेटी लिये दरवाजे पर आकर हिचकी, फिर आकर चन्दर से बोली, “शेटी लोगे!” और बिना चन्दर की आवाज सुने शेटी चन्दर के आगे रखकर बोली, “और क्या चाहिए?”

“मुझे कढ़ी चाहिए!” शंकर बाबू ने कहा। सुधा गयी और कढ़ी ले आयी। शंकर बाबू के सामने रख दी। शंकर बाबू ने आँखें उठाकर सुधा की ओर देखा, सुधा ने निगाहें नीची कर लीं और चली गयीं।

“बहुत अच्छी है लड़की!” शंकर बाबू ने कहा। “इतनी पढ़ी-लिखी लड़की में इतनी शर्म-लिहाज नहीं मिलती। सचमुच जैसे आपकी एक ही लड़की थी, आपने उसे खूब बनाया है। कैलाश के बिल्कुल योन्य लड़की है। यह तो कहिए डॉक्टर साहब कि शिष्टा प्रबल होती है वरना हमारा कहाँ सौभाग्य था! जब से मेरी पत्नी मरी तभी से माताजी कैलाश के विवाह की जिद कर रही है। कैलाश अनतर्जातीय विवाह करना चाहता था, लोकिन हमें तो अपनी जाति में ही इतना अच्छा सम्बन्ध मिल गया।”

“तो तोहेरे अबहिन कौन बैस ह्वा गयी? तुहाँ काहे नाही बहुशिया तै अउत्यौ? सुधी के अकेल मन न लगी!” बुआजी बोलीं।

शंकर बाबू कुछ नहीं बोले। खाना खाकर उन्होंने हाथ धोये और घड़ी देखी।

“अब थोड़ा सो लैँ या जाने दीजिए। आइए, बातें करें हम और आप,” उन्होंने चन्दर से कहा। एक बजे तक चन्दर शंकर बाबू से बातें करता रहा और डॉक्टर साहब और सुधा बगैर ह खाना खाते रहे। शंकर बाबू बहुत हँसमुख थे और बहुत बातूनी भी। चन्दर को तो कैलाश से भी ज्यादा शंकर बाबू पसन्द आये। बातें करने से मातृत्व हुआ कि शंकर बाबू की आयु अभी तीस वर्ष से अधिक की नहीं है। एक पाँच वर्ष का बत्ता है और उसी के होने में उनकी पत्नी मर गयी। अब वे विवाह नहीं करेंगे, वे गाँधीवादी हैं, कांग्रेस के प्रमुख स्थानीय कार्यकर्ता हैं और म्युनिसिपल कमिंजर हैं। घर के जर्मींदार हैं। कैलाश बेरेली में पढ़ता था। अब भी कैलाश का कोई इयादा किसी प्रकार की नौकरी या व्यापार करने का नहीं है, वह मजदूरों के लिए सामाजिक पत्र निकालने का इयादा कर रहा है। वह सुधा को बजाय घर पर रखने के अपने साथ रखेगा क्योंकि वह सुधा को आगे पढ़ाना चाहता है, सुधा को राजनीति क्षेत्र में ले जाना चाहता है। बीच में एक बार बिनती आयी और उसने चन्दर को बुलाया। चन्दर बाहर गया तो बिनती ने कहा, “दीदी पूछ रही हैं, ये कितनी देर में जाएँगे?”

“क्यों?”

“कह रही हैं अब चन्द्र को याद थोड़े ही है कि सुधा भी इसी घर में हैं उन्हीं से बातें कर रहे हैं”

चन्द्र हँस दिया और कुछ नहीं कहा बिनती गोली, “ये लोग तो बहुत अच्छे हैं मैं तो कहुँगी सुधा दीदी को इससे अच्छा परिवार मिलना मुश्किल है छमारे ससुर की तरह नहीं हैं ये लोग”

“हाँ, फिर भी सुधा इतनी सेवा नहीं कर रही है इनकी बिनती, तुम सुधा को कुछ शिक्षा दे दो इस मामले में”

“हाँ-हाँ, हम सेवा करने की शिक्षा दे देंगे और ब्याह करने के बाद की शिक्षा अपनी पम्पी से दिलवा देना खुद तो उनसे ले ही चुके होंगे आप!”

चन्द्र झोंप गया “पाजी कहीं की, बहुत बेशरम हो गयी हैं पहले मुँह से बोल नहीं निकलता था!”

“तुमने और दीदी ने ही तो किया बेशरम! हम क्या करें? पहले हम कितना डरते थे!” बिनती ने उसी तरह गर्दन टेढ़ी करके कहा और मुसकराकर भाग गयी

जब डॉक्टर साहब आये तो शंकर बाबू ने कहा, “अब तो मैं जा रहा हूँ, यह माला मेरी ओर से बहु को दे दीजिए” और उन्होंने बड़ी सुन्दर मोतियों की माला बैग से निकाली और बुआजी के हाथ में दे दी

“हाँ, एक बात है!” शंकर बाबू बोले, “ब्याह हम लोग महीने भर के अन्दर ही करेंगे आपकी सब बात हमने मानी, यह बात आपको हमारी माननी होगी”

“इतनी जल्दी!” डॉक्टर शुक्ला चौंक उठे, “यह असम्भव है, शंकर बाबू! मैं अकेला हूँ, आप जानते हैं”

“नहीं, आपको कोई कष्ट न होगा” शंकर बाबू बहुत मीठे स्वर में बोले, “हम लोग रीति-रसम के तो कायल हैं नहीं आप जितना चाहे रीति-रसम अपने मन से कर लें हम लोग तो सिर्फ छह-सात आदमियों के साथ आएंगे सुबह आएंगे, अपने बँगले में एक कमरा खाली करा दीजिएगा शाम को अगवानी और विवाह कर दें दूसरे दिन दस बजे हम लोग चले जाएंगे”

“यह नहीं होगा” डॉक्टर साहब बोले, “हमारी तो अकेली लड़की है और हमारे भी तो कुछ हौसले हैं और फिर लड़की की बुआ तो यह कभी भी नहीं स्वीकार करेगी”

“देखिए, मैं आपको समझा दूँ, कैलाश शादियों में तड़क-भड़क के सरल खिलाफ हैं पहले तो वह इसलिए जाति में विवाह नहीं करना चाहता था, लेकिन जब मैंने उसे भरोसा दिलाया कि बहुत सादा विवाह होगा तभी वह राजी हुआ इसीलिए इसे आप मान ही लें फिर विवाह के बाद तो जिंदगी पड़ी है आपकी अकेली लड़की है जितना चाहिए, करिए रहा कम समय का तो शुभस्य शीघ्रम्! फिर आपको कुछ खास इन्तजाम भी नहीं करना, अगर कुछ हो तो कहिए मैं यहीं रह जाऊँ, आपका काम कर दूँ!” शंकर बाबू हँसकर बोले

कुछ देर तक बातें होती रहीं, अन्त में शंकर बाबू ने अपने सौजन्य और मीठे स्वभाव से सभी को राजी कर ही लिया उसके बाद उन्होंने सबसे विदा माँगी, चलते वक्त बुआजी और डॉक्टर साहब के पैर छुए, चन्द्र से हाथ मिलाया और शंकर बाबू सबका मन जीतकर चले गये

बुआजी ने माला हाथ में ली, उसे उलट-पलटकर देखा और गोलीं, “एक ऊ आये रहे जूताखोर! एक ठो कान्ज थमाय के चले गये!” और एक गहरी साँस लेके चली गयीं

डॉ. साहब ने सुधा को बुलाया। उसके हाथ में वह माला रखकर उसे विपटा लिया। सुधा पापा की गोद में मुँह छिपाकर रो पड़ी।

उसके बाद सुधा चली गयी और चन्द्र, डॉक्टर साहब और बुआजी बैठे शादी के इन्तजाम की बातें करते रहे। यह तय हुआ कि अभी तो इन्हीं की इच्छानुसार विवाह कर दिया जाए फिर यूनिवर्सिटी खुलने पर सभी को बुलाकर अच्छी दावत वगैरह दे दी जाए। यह भी तय हुआ कि बुआजी गाँव जाकर अनाज, धी, बड़ियाँ और नौकर वगैरह का इन्तजाम कर लाएं और पन्द्रह दिन के अन्दर लौट आएं। अगवानी ठीक छह बजे शाम को हो जाए और सुबह के नाश्ते में क्या दिया जाए, यह सभी डॉक्टर साहब ने तय कर डाला। लेकिन निश्चय यह किया गया कि चूँकि आदमी बहुत कम आ रहे हैं, अतः सुबह-शाम के नाश्ते का काम यूनिवर्सिटी के किसी ऐसतरों को दे दिया जाए।

इसी बीच में बिनती खरबूजा और शरबत लाकर रख गयी और चन्द्र ने बहुत आराम से शरबत पीते हुए पूछा, “किसने बनाया है?”

“सुधा दीदी ने।”

“आज बड़ी खुश मालूम पड़ती है, चीनी बहुत कम छोड़ी है!” चन्द्र बोला। बुआ और बिनती दोनों हँस पड़ीं।

थोड़ी देर बाद चन्द्र उठकर भीतर गया तो देखा कि सुधा अपने पलौंग पर बैठी सामने एक किताब रखे जाने क्या देख रही है और सामने वह माला पड़ी है। चन्द्र गया और बोला, “सुधा! आज मैं बहुत खुश हूँ।”

सुधा ने आँखें उठायीं और चन्द्र की ओर देखकर मुसकराने की कोशिश की और बोली, “मैं भी बहुत खुश हूँ।”

“क्यों, तय हो गया इसलिए?” बिनती ने पूछा।

“जहाँ, चन्द्र बहुत खुश है इसलिए!” और एक गहरी साँस लेकर किताब बन्द कर दी।

“कौन-सी किताब है, सुधा?” चन्द्र ने पूछा।

“कुछ नहीं, इस पर उर्दू के कुछ अशार लिखे हैं जो गेसू ने सुनाये थे।” सुधा बोली।

चन्द्र ने बिनती की ओर देखा और कहा, “बिनती, कैलाश तो जैसा है वैसा ही है, लेकिन शंकरबाबू की तारीफ में कर नहीं सकता। क्या याय है तुम्हारी?”

“हाँ, है तो सही; दीदी इतनी सुखी रहेंगी कि बस! दीदी, हमें भूल मत जाना, समझो!” बिनती बोली।

“और हमें भी मत भूलना सुधा!” चन्द्र ने सुधा की उदासी दूर करने के लिए छेड़ते हुए कहा।

“हाँ, तुम्हें भूले बिना कैसे काम चलेगा।” सुधा ने और भी गहरी साँस लेते हुए कहा और एक आँसू गालों पर फिसल ही आया।

“अरे पगली, तुम सब कुछ अपने चन्द्र के लिए कर रही हो, उसकी आज्ञा मानकर कर रही हो। फिर यह आँसू कैसे? छिः! और यह माला सामने रखे थीं कि बतलाऊँ...बतलाऊँ!” चन्द्र ने बहलाया।

“माला तो दीदी इसलिए सामने रखे थीं कि बतलाऊँ...बतलाऊँ!” बिनती बोली, “असल में यमायण की कहानी तो सुनी है चन्द्र, तुमने? यमचन्द्र ने अपने एक भक्त को मोती की माला दी तो वह उसे दाँत से तोड़कर देख रहा था कि उसके अन्दर यमनाम है या नहीं। सो यह माला सामने रखकर देख रही थीं, इसमें कहीं चन्द्र की झलक है या नहीं?”

“तुप गिलहरी कहीं की?” सुधा हँस पड़ी, “बहुत बोलना आ गया है!” सुधा ने हँसते हुए बनावटी गुस्से से कहा □ फिर सुधा तकिये से टिककर बैठ गयी-”आज गेसू नहीं है □ मुझे गेसू की बहुत याद आ रही है □”

“वर्चों?”

“इसलिए कि आज उसके कई शेर याद आ रहे हैं □ एक दफे उसने सुनाया था-
ये आज फिजा खामोश हैं वर्चों, हर जर्जे को आखिर होश हैं वर्चों?

या तुम ही किसी के हो न सके, या कोई तुम्हारा हो न सका □’
इसी की अनितम पंक्ति है-

मौजे भी हमारी हो न सकीं, तूफाँ भी हमारा हो न सका!’”

“वाह! यह पंक्ति बहुत अच्छी है,” चन्द्र ने कहा □

“आज गेसू होती तो बहुत-सी बातें करते!” सुधा बोली, “देखो चन्द्र, जिंदगी भी क्या होती है! आठमीं क्या सोचता हैं और क्या हो जाता है □ आज से तीन-चार महीने पहले मैंने क्या सोचा था! वलास-रम से भागकर हम लोग पेड़ के नीचे लेटकर बातें करते थे, तो मैं हमेशा कहती थी-मैं शादी नहीं करूँगी □ पापा को समझा लूँगी □ उस दिन क्या मालूम था कि इतनी जल्दी जुए के नीचे गरदन डाल देनी होगी और पापा को भी जीतकर किसी दूसरे से हार जाना होगा □ अभी उसकी तय भी नहीं हुई और महीने-भर बाद मेरी...” सुधा थोड़ी देर तुप रही और फिर-”और दूसरी बात उसकी, जो मैंने तुम्हें बतायी थी □ उसने कहा था जब किसी के कदम हट जाते हैं सिर के नीचे से, तब मालूम होता है कि हम किसका सपना देख रहे थे □ पहले हमें भी नहीं मालूम होता था कि हमारे सिर किसके कदमों पर झुक चुके हैं □ याद है? मैंने तुम्हें बताया था, तुमने पूछा था!”

“याद है □” चन्द्र ने कहा □ बिनती उठकर चली गयी लेकिन सुधा या चन्द्र किसी ने ध्यान भी नहीं दिया □ चन्द्र बोला, “लेकिन सुधा, इन सब बातों को सोचने से क्या फायदा, आगे का रास्ता सामने है, बढ़ो □”

“हाँ, सो तो है ही देवता मेरे! कभी-कभी जाने कितनी पुरानी बातें मन में आ ही जाती हैं और मन करता है कि मैं सोचती ही जाऊँ □ जाने वर्चों मन को बड़ा सन्तोष मिलता है □ और चन्द्र, जब मैं वहाँ रहूँगी, तुमसे दूर, तो इन्हीं स्मृतियों के अलावा और क्या शेष रहेगा...तुम्हें वह दिन याद है जब मैं गेसू के यहाँ नहीं जा पायी थी और उस स्थान पर हम लोगों में झागड़ा हो गया था...चन्द्र, वहाँ सब कुछ है लेकिन मैं लड़ूँगी-झगड़ूँगी किससे वहाँ?”

चन्द्र एक फिकी-सी हँसी हँसकर बोला, “अब क्या जन्म-भर बच्ची ही बनी रहोगी!”

“हाँ चन्द्र, चाहती तो यहीं थी लेकिन जिंदगी तो जबरदस्ती सब सुख छीन लेती है और बदले में कुछ भी नहीं देती □ आओ, चलो लौंग पर चलें □ शाम को तुमसे बातें ही करेंगे!”

उसके बाद सुधा यात को आठ बजे उठी, जब बुआ तैयार होकर स्टेशन जा रही थीं और ड्राइवर मोटर निकाल रहा था □ और उदास टिमटिमाते हुए सितारों ने देखा कि चन्द्र और सुधा दोनों की आँखों में आँखुओं की अवशेष नमी डिलमिला रही थी □ उठते हुए सुधा ने क्षण-भर चन्द्र की ओर देखा, चन्द्र ने सिर झुका लिया और बहुत उदास आवाज में कहा, “चलो सुधा, बहुत देर कर दी हम लोगों ने □”

18

पन्द्रह दिन बाद बुआ आयीं तो उन्होंने घर की शवल ही बदल दी □ दरवाजे पर और बरसाती में हल्टी के हाथों की छाप लग गयी, कमरों का सभी सामान हटाकर दरियाँ बिछा दी गयीं और सबसे अन्दर वाले कमरे में सुधा का सब सामान रख दिया गया □ स्टडी-रूम की सभी किताबें समेट दी गयीं और वहाँ एक बड़ी-सी मशीन लाकर रख दी गयी जिस पर बैठकर बिनती सिलाई करती थी □ उसी को कपड़े और गहनों का अंडार-घर बनाया गया और उसकी चाबी बिनती या बुआ के पास रहती थी □ गाँव से एक महराजिन, एक कठारिन और दो मजदूर आये थे, वे सभी गैरेज में सोते थे और दिन-भर काम करते थे और 'पानी पीने' को माँगते रहते थे □ सभी कुर्सियाँ और सोफासेट निकलवाकर सायबान में लगवा दिये गये थे □ रसोई के पार वाली कोठरी में कुल्हड़, पतलें, प्याले वगैरह रखे थे और पूजा वाले कमरे में शवकर, धी, तरकारी और अनाज था □ मिठाई कहाँ रखी जाएगी, इस पर बुआजी, महराजिन और बिनती में घंटे-भर तक बहस हुई लेकिन जब बुआजी ने बिनती से कहा, "आपन लड़के-बच्चे का बियाह कियो तो कतरनी अस जबान चलाय लिह्यो, अबहिन हर काम में काहे टाँग अड़ावा करत हौ!" तो बिनती चुप हो गयी और अन्त में बुआजी की राय सर्वोपरि मानी गयी □ बुआजी की जबान जितनी तेज थी, हाथ भी उतने ही तेज □ चार बोय गेहूँ उन्होंने साफ करके कोठरियों में भरवा दिये □ कम-से-कम पाँच तरह की दालें लायी थीं □ बेसन पिसवाया, दाल दरवायी, पापड़ बनवाये, मैदा छनवाया, सूजी दरवायी, बरी-मुँगौरी डलवारीं, चावल की कचौरियाँ बनवायीं और सबको अलग-अलग गठरी में बाँधकर रख दिया □ यत को अकसर बुआजी, महराजिन तथा गाँव की महरिन ढोलक लेकर बैठ जातीं और गीत गातीं □ बिनती उनमें भी शामिल रहती □

सब पूछो तो सुधा के ब्याह का जितना उछाह बुआ को नहीं था, उतना बिनती को था □ वह सुबह से उठकर झाड़ लेकर सारा घर बुहार डालती थी, इसके बाद नहाकर तरकारी काटती, उसके बाद फिर चाय चढ़ाती □ डॉक्टर साढ़ब, चन्दर, सुधा सभी को चाय देती, बैठकर चन्दर अगर कुछ हिसाब लिखता तो हिसाब लिखती, फिर अपनी मशीन पर बैठ जाती और बारह-एक बजे तक सिलाई करती रहती, फिर दोपहर को चावल और दाल बीनती, शाम को खरबूजे काटती, शरबत बनाती और यत-भर जान-जानकर गाती या दीदी को हँसाने की कोशिश करती □ एक दिन सुधा ने कहा, "मेरे ब्याह में तो इतनी खुश है, अपने ब्याह में क्या करेंगी?" तो बिनती ने जवाब दिया, "अपने ब्याह में तो मैं खुद बैंड बजाऊँगी, वर्दी पहनकर!"

घर चमक उठा था जैसे ऐशम! लेकिन ऐशम के चमकदार, रंगीन उल्लास भेरे गोले के अन्दर भी एक प्राणी होता है, उदास स्तब्ध अपनी साँस रोककर अपनी मौत की क्षण-क्षण प्रतीक्षा करने वाला ऐशम का कीड़ा □ घर के इस सारे उल्लास और चहल-पहल से घिरा हुआ सिर्फ एक प्राणी था जिसकी साँस धीरे-धीरे डूब रही थी, जिसकी आँखों की चमक धीरे-धीरे कुम्हला रही थी,

जिसकी चंचलता ने उसकी नजरों से विदा माँग ली थी, वह थी-सुधा □ सुधा बदल गयी थी □ गोरा चम्पई चेहरा पीला पड़ गया था, और लगता था जैसे वह बीमार हो □ खाना उसे जहर लगने लगा था, अपने कमरे को छोड़कर कहीं जाती न थी □ एक शीतलपाटी बिछाये उसी पर दिन-रात पड़ी रहती थी □ बिनती जब हँसती हुई खाना लाती और सुधा के इनकार पर बिनती के आँसू छलछला आते तब सुधा पानी के धूंट के सहरे कुछ खा लेती और उदास, फिर अपनी शीतलपाटी पर लेट जाती □ खर्न को कोई इन्द्रधनुषों से भर दे और शर्की को जहर पिला दे, कुछ ऐसा ही लग रहा था वह घर □

डॉक्टर शुवला का साहस न होता था सुधा से बोलने का □ वह रोज बिनती से पूछ लेते-”सुधा खाना खाती है या नहीं?” बिनती कहती, “हाँ □” तो एक गहरी साँस लेकर अपने कमरे में चले जाते □

चन्द्र परेशान था □ उसने इतना काम शायद कभी भी न किया हो अपनी जिंदगी में □ सुनार के यहाँ, कपड़े वाले के यहाँ, फिर शशनिंग अफसर के यहाँ, पुलिस बैंड ठीक कराने पुलिस लाइंस, अर्जी देने मैजिस्ट्रेट के यहाँ, रूपया निकालने बैंक, शामियाने का इन्तजाम, पतँग, कुर्सी बगैरह का इन्तजाम, खाने-परोसने के बरतनों के इन्तजाम और जाने क्या-क्या... और जब बुरी तरह थककर आता, जेठ की तपती हुई दोपहरी में, तब बिनती आकर बताती-सुधा ने आज फिर कुछ नहीं खाया तो उसका मन होता था वह सिर पटक-पटक दे □ वह सुधा के पास जाता, सुधा आँसू पोंछकर बैठती, एक टूटी-फूटी मुसकान से चन्द्र का स्वागत करती □ चन्द्र उससे पूछता, “खाती क्यों नहीं?”

“खाती तो हूँ चन्द्र, इससे ज्यादा गरमियों में मैं कभी नहीं खाती थी □” सुधा कहती और इतने दृढ़ झर से कि चन्द्र से कुछ प्रतिवाद नहीं करते बनता □

अब बाहरी काम लगभग समाप्त हो गये थे □ वैसे तो सभी जगह हल्दी छिड़ककर पत्र खाना किये जा चुके थे लेकिन निमंत्रण-पत्र भी बहुत सुन्दर छपकर आये थे, हालाँकि कुछ देर हो गयी थी □ ब्याह को अब कुल सात दिन बचे थे □ चन्द्र सुबह दस बजे एक डिब्बे में निमंत्रण-पत्र और लिफाफा-भरे हुए आया और स्टडी-रूम में बैठ गया □ बिनती बैठी हुई कुछ सिल रही थी □

“सुधा कहाँ है? उसे बुला लाओ □”

सुधा आयी, सूजी आँखें, सूखे होठ, रख्ये बाल, मैली धोती, निष्पाण चेहरा और बीमार चाल □ हाथ में पंखा लिये थी □ आयी और चन्द्र के पास बैठ गयी-”कहो, क्या कर आये, चन्द्र! अब कितना इन्तजाम बाकी है?”

“अब सब हो गया, सुधा यानी! आज तो पैर जवाब दे रहे हैं □ साइकिल चलाते-चलाते पैर में जैसे गाँठे पड़ गयी हों □” चन्द्र ने कार्ड फैलाते हुए कहा, “शादी तुम्हारी होगी और जान मेरी निकली जा रही है मेहनत से □”

“हाँ चन्द्र, इतना उत्साह तो और किसी को नहीं है मेरी शादी का!” सुधा ने कहा और बहुत दुलार से बोली, “लाओ, पैर ढबा ढूँ तुम्हारे?”

“अरे पागल हो गयी?” चन्द्र ने अपने पैर उठाकर ऊपर रख लिये □

“हाँ, चन्द्र!” गहरी साँस लेते हुए सुधा बोली, “अब मेरा अधिकार भी क्या है तुम्हारे पैर छूने का □ क्षमा करना, मैं भूल गयी थी कि मैं पुरानी सुधा नहीं हूँ □” और टप से दो आँसू निर पड़े □ सुधा ने पंखे की ओट कर आँखें पोंछ लीं □

“तुम तो बुरा मान गयीं, सुधा!” चन्द्र ने पैर नीचे रखते हुए कहा □

“नहीं चन्द्र, अब बुरा-भला मानने के दिन बीत गये □ अब गैरों की बात का भी बुरा-भला नहीं मान पाऊँगी, फिर घर के लोगों की बातों का बुरा-भला क्या... छोड़ो ये सब बातें □ ये क्या निमंत्रण-पत्र छपा है, देखो!”

चन्द्र ने एक निमंत्रण-पत्र उठाया, उसे लिफाफे में भरकर उस पर सुधा का नाम लिखकर कहा, “तो, हमारी सुधा का ब्याह है, आइएगा जरूर!”

सुधा ने निमंत्रण पत्र ले लिया- “अच्छा!” एक फिकी हँसी हँसकर बोली, “अच्छा, अब हमारे पतिदेव ने आज्ञा दे दी तो आऊँगी आपके यहाँ □ उनका भी नाम लिख दीजिए वरना बुरा न मान जाएँ □” और सुधा उठ खड़ी हुई □

“कहाँ चली?” चन्द्र ने पूछा □

“यहाँ बहुत योशनी है! मुझे अपना अँधेरा कमरा ही अच्छा लगता है □” सुधा बोली □

“वलो बिनती, वहीं कार्ड ले चलो!” चन्द्र ने कहा, “आओ सुधा, आज कार्ड लिखते जाएँगे, तुमसे बात करते जाएँगे □ जिंदगी देखो, सुधी! आज पन्द्रह दिन से तुमसे दो मिनट बैठकर बात भी न कर सके □”

“अब क्या करना है, चन्द्र! जैसा कह रहे हो वैसा कर तो रही हूँ □ अभी कुछ और बाकी है क्या? बता दो वह भी कर डालूँ □ अब तो यो-पीटकर ऊँचा बनाना ही है □”

बिनती ने कार्ड समेटे तो सुधा डॉटकर बोली- “ख इसे यहीं; चली उठा के! बड़ी चन्द्र की आज्ञाकारी बनी है □ ये भी हमारी जान की गाहक हो गयी अब! हमारे कमरे में लायी ये सब, तो टाँग तोड़ दूँगी! पाजी कहीं की!”

बिनती ने कार्ड धर दिये □ नौकर ने आकर कहा, “बाबूजी, कुम्हार अपना हिसाब माँगता है!”

“अच्छा, अभी आया, सुधा!” और चन्द्र चला गया □

और इस तरह दिन बीत रहे थे □ शादी नजदीक आती जा रही थी और सभी का सहारा एक-दूसरे से छूटता जा रहा था □ सुधा के मन पर जो कुछ भी धौरि-धौरि मरघट की उदासी की तरह बैठता जा रहा था और चन्द्र अपने प्यार से, अपनी मुसकानों से, अपने आँसुओं से धो देने के लिए व्याकुल हो उठा था, तोकिन यह जिंदगी थी जहाँ प्यार हार जाता है, मुसकानें हार जाती हैं, आँसू हार जाते हैं-तश्तरी, प्याले, कुल्हड़, पतले, कालीनें, दरियाँ और बाजे जीत जाते हैं □ जहाँ अपनी जिंदगी की प्रेरणा-मूर्ति के आँसू गिनने के बजाय कुल्हड़ और प्याले गिनवाकर रखने पड़ते हैं और जहाँ किसी आत्मा की उदासी को अपने आँसुओं से धोने के बजाय पतले धुलवाना ज्यादा महत्वपूर्ण होता है, जहाँ भावना और अन्तर्दृढ़ के सारे तूफान सुनार और बिजलीवालों की बातें में ढूब जाते हैं, और जहाँ दो आँसुओं में ढूबते हुए व्यक्तियों की पुकार शहनाइयों की आवाज में ढूब जाती है और जिस वक्त कि आदमी के हृदय का कण-कण क्षतविक्षत हो जाता है, जिस वक्त उसकी नसों में सितारे टूटते हैं, जिस वक्त उसके माथे पर आग धधकती है, जिस वक्त उसके सिर पर से आसमान और पाँव तले से धरती हट जाती है, उस समय उसे शादी की साड़ियों का मोल-तोल करना पड़ता है और बाजे वाले को एडवान्स रुपया देना पड़ता है □

ऐसी थी उस वक्त चन्द्र की जिंदगी और उस जिंदगी ने अपना चक्र पूरी तरह बला दिया था □ करोड़ों तूफान घुमझाते हुए उसे नचा रहे थे □ वह एक क्षण भी कहीं नहीं टिक पाता था □ एक पल भी उसे चैन नहीं था, एक पल भी वह यह नहीं सोच पाता था कि उसके चारों ओर वया हो रहा है? वह बेहोशी में, मूर्छा में मशीन की तरह काम कर रहा था □ आवाजें थीं कि उसके कानों से टकराकर चली जाती थीं, आँसू थे कि हृदय को छू नहीं पाते थे, चक्र उसे फँसाकर खींचे लिये जा रहा था □ बिजली से भी ज्यादा तेज, प्रलय से भी ज्यादा सशक्त वह खिंचा जा रहा था □ सिर्फ एक ओर □ शादी का दिन □ सुधा ने नथुनी पहनी, उसे नहीं मालूम □ सुधा ने कोरे कपड़े पहने, उसे नहीं मालूम □ सुधा ने चूड़े पहने, उसे नहीं मालूम □ घर में गीत हुए, उसे नहीं मालूम □ सुधा ने चूल्हा पूजते वक्त अपना सिर पटक दिया, उसे नहीं मालूम...वह व्यक्ति नहीं था, तूफान में उड़ता हुआ एक पीला पता था जो वात्याचक्र में उलझ गया था और झोंके उसे नचाये जा रहे थे... और उसे होश आया तब, जब बिनती जबरदस्ती उसका हाथ पकड़कर खींच ले गयी बारात आने के एक दिन पहले □ उस छत पर, जहाँ सुधा पड़ी थी रही थी, चन्द्र को ढकेलकर चली आयी □ चन्द्र के सामने सुधा थी □ सुधा, जिससे वह पता नहीं क्यों बचना चाहता था □ अपनी आत्मा के संघर्षों से, अपने अन्तःकरण के घावों की कसक से घबराकर जैसे कोई आदमी एकान्त कमरे से भागकर भीड़ में मिल जाता है, भीड़ के निरर्थक शोर में अपने को खो देना चाहता है, बाढ़ के शोर में अन्दर का तूफान भुला देना चाहता है; उसी तरह चन्द्र पिछले हृपते से सब कुछ भूल गया; उसे सिर्फ एक चीज याद रहती थी-शादी का प्रबन्ध □ सुबह से लेकर सोने के वक्त तक वह

इतना काम कर डालना चाहता था कि उसे एक क्षण भी बैठने का मौका न मिले, और सोने से पहले वह इतना थक जाये, इतना चूर-चूर हो जाये कि लेटते ही नींद उसे जकड़ ले और उसे बेहोश कर दे ॥ लेकिन उस वक्त बिनती उसे उसके विस्मरण-स्थल से खींचकर एकान्त में ले आयी है जहाँ उसकी ताकत और उसकी कमजोरी, उसकी पवित्रता और उसका पाप, उसकी मुस्कान और उसके आँसू, उसकी प्रतिभा और उसकी विस्मृति; उसकी सुधा अपनी जिंदगी के चिरन्तन मोड़ पर खड़ी अपना सब कुछ लुटा रही थी ॥ चन्द्र को लगा जैसे उसको अभी चतकर आ जाएगा ॥ वह अकुलाकर खाट पर बैठ गया ॥

शाम थी, सूरज डूब रहा था और दिन-भर की तपी हुई छत पर जलती हुई बरसाती के नीचे एक खराफी खाट पर सुधा लेटी थी ॥ एक महीन पीली धोती पहने, कोरी मारकीन की कुर्ती, पहने, रखे चिकटे हुए बाल और नाक में बहुत बड़ी-सी नथ ॥ पन्द्रह दिन के आँसुओं ने चेहरे को जाने कैसा बना दिया ॥ न चेहरे पर सुकुमारता थी, न कठोरता ॥ न रूप था, न ताजगी ॥ सिर्फ ऐसा लगता था कि जैसा सुधा का सब कुछ लुट चुका है ॥ न केवल प्यार और जिंदगी लुटी है, वरन् आवाज भी लुट गयी है और नीखता भी ॥ वैभव भी लुट गया और याचना भी ॥

सुधा ने अपने पीले पल्ले से आँसू पोछे और उठकर बैठ गयी ॥ दोनों चुप ॥ पहले कौन बोले! बिनती आयी, चन्द्र और सुधा का खाना रखकर चली गयी ॥ “खाना खाओगी, सुधा?” चन्द्र ने पूछा ॥ सुधा कुछ बोली नहीं सिर्फ सिर हिला दिया ॥ और डूबते हुए सूरज और उड़ते हुए बादलों की ओर देखकर जाने क्या सोचने लगी ॥ चन्द्र ने थाली रिसका ढी और सुधा को अपनी ओर खींचकर बोला, “सुधा, इस तरह कैसे काम चलेगा ॥ तुम्हीं को देखकर तो मैं अपना धीरज सँभालूँगा, बताओ और तुम्हीं यह कर रही हो!” सुधा चन्द्र के पास रिसक आयी और दो मिनट तक चुपचाप चन्द्र की ओर फटी हुई पथरायी आँखों से देखती रही और एकदम हृदय को फाइ देने वाली आवाज में चीखकर रो उठी-“चन्द्र, अब क्या होगा!”

चन्द्र की समझ में नहीं आया, वह क्या करे! आँसू उसके सूख चुके थे ॥ वह ये नहीं सकता था ॥ उसके मन पर कठीं कोई पत्थर रखा था जो आँसुओं की बूँदों को बनने के साथ ही सोख लेता था लेकिन वह तड़प उठा, “सुधा!” वह घबराकर बोला, “सुधा, तुम्हें हमारी कसम है-चुप हो जाओ! चुप...बिल्कुल चुप...हाँ...ऐसे ही!” सुधा चन्द्र के पाँवों में मुँह छिपाये थी-”उठकर बैठो ठीक ये सुधा...इतना समझ-बूझकर यह सब करती हो, छिः! तुम्हें अपना दिल मजबूत करना चाहिए वरना पापा को किंतना दुख होगा ॥”

“पापा ने तो मुझसे बोलना भी छोड़ दिया है, चन्द्र! पापा से कह दो आज तो बोल लें, कल से हम उन्हें परेशान करने नहीं आएँगे, कभी नहीं आएँगे ॥ अब उनकी सुधा को सब ले जा रहे हैं, जाने कठीं ले जा रहे हैं!” और फिर वह फफक-फफककर रो पड़ी ॥

चन्द्र ने बिनती से पापा को बुलवाया ॥ सुधा को रोते हुए देखकर बिनती खड़ी हो गयी, “दीदी, ये ओ मत दीदी, फिर हम किसके भरोसे रहेंगे यहाँ?” और सुधा को चुप कराते-कराते बिनती भी रोने लगी ॥ और आँसू पोंछते हुए चली गयी ॥

पापा आये ॥ सुधा चुप हो गयी और कुछ कहा नहीं, फिर रोने लगी ॥ डॉक्टर शुक्ला भर्याए गले से बोले, “मुझे यह रोआई अच्छी नहीं लगती ॥ यह भावुकता क्यों? तुम पढ़ी-लिखी लड़की हो ॥ इसी दिन के लिए तुम्हें पढ़ाया-लिखाया गया था! भावुकता से क्या फायदा?” कहते-कहते डॉक्टर शुक्ला खुद रोने लगे ॥ “चलो चन्द्र यहाँ ये! अभी जनवासा ठीक करवाना है ॥” चन्द्र

और डॉक्टर शुकला दोनों उठकर चले गये।

अपनी शादी के पहले, हमेशा के लिए अलग होने से पहले सुधा को इतना ही मौका मिला...उसके बाद...

सुबह छह बजे गाड़ी आती थी, लेकिन खुशकिस्मती से गाड़ी लेट थी; डॉक्टर शुकला तथा अन्य लोग बारात का स्वागत करने स्टेशन पर जा रहे थे और चन्द्र घर पर ही रह गया था जनवासे का इन्तजाम करने। जनवासा बगल में था। माथुर साहब के बँगले के दोनों हॉल और कमरा खाली करवा लिये गये थे। चन्द्र सुबह छह ही बजे आ गया था और जनवासे में सब सामान लगवा दिया था। नहाने का पानी और बाकी इन्तजाम कर वह घर आया। जलपान का इन्तजाम तो केदार के हाथ में था लेकिन कुछ तौलिये भिजवाने थे।

“बिनती, कुछ तौलिये निकाल दो।” चन्द्र ने बिनती से कहा।

बिनती उर्द की दाल धो रही थी। उसने फौरन उठकर हाथ धोये और कमरे की ओर चली गयी। “ऐ बिनती...” बुआजी ने भंडारे के अन्दर से आवाज लगायी। “जाने कहाँ मर गयी मुँहझाँसी! ऐसे सिंगार-पटार बाद में कर लियो, काम में तनिक दीदा नै लगते। बेसन का कनस्टर कहाँ रखा है?”

“अभी आये!” बिनती ने चन्द्र से कहा और अपनी माँ के पास दौड़ी, पन्द्रह मिनट हो गये। लेकिन बिनती लौटी ही नहीं। ब्याह का घर! हर तरफ से बिनती की पुकार मरती और बिनती पंख लगाये उड़ रही थी। जब बिनती नहीं लौटी तो चन्द्र ने सुधा को ढुँढ़कर कहा, “सुधी, एक बहुत बड़ा-सा तौलिया निकाल दो।”

सुधा चुपचाप उठी और स्टडी-रूम में चली गयी। चन्द्र भी पीछे-पीछे गया।

“बैठो, अभी निकालकर लाते हैं!” सुधा ने भरी हुई आवाज में कहा और बगल के कमरे में चली गयी। वहाँ से लौटी तो उसके हाथ में मीठे की तश्तरी थी।

“अरे खाने का वक्त नहीं है, सुधा! आठ बजे लोग आ जाएँगे।”

“अभी दो घंटे हैं, खा लो चन्द्र! अब कभी तुम्हारे काम में ढर्जा करके खाने को नहीं कहूँगी!”

सुधा बोली। चन्द्र चुप।

“याद है, चन्द्र! इसी जगह आँचल में छिपाकर नानखटाई लायी थी। आओ, आज अपने हाथ से खिला दूँ। कल ये हाथ पराये हो जाएँगे। और सुधा ने एक झरती तोड़कर चन्द्र के मुँह में दे दी। चन्द्र की आँखों में दो आँसू छलक आये-सुधा ने अपने हाथ से आँसू पोंछ दिये और बोली, “चन्द्र, घर में कोई खाने का खयाल करने वाला नहीं है। खाते-पीते जाना, तुम्हें हमारी कसम है। मैं शाहजहाँपुर से लौटकर आँँगी तो दुबले मत मिलना।” चन्द्र कुछ बोला नहीं। आँसू बहते गये, सुधा खिलाती गयी, वह खाता गया। सुधा ने गिलास में पानी दिया, उसने हाथ धोया और जेब से रुमाल निकाला।

“क्यों, आज आँचल में हाथ नहीं पोंछोगे?” सुधा बोली। चन्द्र ने आँचल हाथ में ले लिया और पतकों पर आँचल दबाकर फूट-फूटकर ये पड़ा।

“छि!, चन्द्र! आज तो हम सँभल गये हैं, हमने सब स्वीकार कर लिया चुपचाप। अब तुम कमज़ोर मत बनो, तुमने कहा था, मैं शान्त रहूँ तो शान्त हो गयी। अब क्यों मुझे भी रुलाओगे! उठो।” चन्द्र उठ खड़ा हुआ।

सुधा ने एक पान चन्द्र के मुँह में ठेकर कत्था उसकी कमीज से लगा दिया। चन्द्र कुछ नहीं

बोला □

“अरे, आज तो लड़ लो, चन्द्र! आज से खत्म कर देना □”

इतने में बिनती तौलिया ले आयी □ “दीदी, इन्हें कुछ खिला दो □ ये खा नहीं रहे हैं □” बिनती ने कहा □

“खिला दिया □” सुधा बोली, “देखो चन्द्र, आज मैं नहीं रोँगी लेकिन एक शर्त पर □ तुम बराबर मेरे सामने रहना □ मंडप में रहोगे न?”

“हाँ, रहूँगा □” चन्द्र ने आँसू पीते हुए कहा □

“कहीं चले मत जाना! मेरी आखिरी बिनती है □” सुधा बोली □ चन्द्र तौलिया लेकर चला आया □

चूँकि बारात में कुल आठ ही लोग थे अतः घर की और माथुर साहब की दो ही कारों से काम चल गया □ जब ये लोग आये तो नाश्ते का सामान तैयार था और चन्द्र चुपचाप बैठा था □ उसने फौरन सबका सामान लगवाया और सामान रखवाकर वह जा ही रहा था कि कैलाश ने पीछे से कन्धे पर हाथ रखकर उसे पीछे धुमा लिया और गले से लगकर बोला, “कहीं चले कपूर साहब, नमस्ते! चलो, पहले नाश्ता करो □” और खींचकर वह चन्द्र को ले गया □ अपने बगल की मेज पर बिठाकर, उसकी चाय अपने हाथ से बनायी और बोला, “कुछ नाराज थे वया, कपूर? खत का जवाब क्यों नहीं देते थे?”

“हम तो बराबर खत का जवाब देते रहे, यार!” कपूर चाय पीते हुए बोला □

“अच्छा तो हम धूमते रहे इधर-उधर, खत गड़बड़ हो गये होंगे □...लौ, समोसा खाओ!” कैलाश ने कहा □ चन्द्र ने सिर हिलाया तो बोला, ‘अरे, वाह म्याँ? शादी तुम्हारी नहीं हो रही है, हमारी हो रही है, समझे? तुम क्यों तकल्लुफ कर रहे हो □ अच्छा कपूर...काम तो तुम्हीं पर होगा सब!”

“हाँ!” कपूर बोला □

“बड़ा अफसोस है, यार!” जब हम लोग पहली टफा मिले थे तो यह नहीं मालूम था कि तुम और डॉक्टर साहब इतना अच्छा इनाम दोगे, अपने को बचाने का □ हमारे लायक कोई काम हो तो बताओ!”

“आपकी दुआ है!” चन्द्र ने सिर झुकाकर कहा, और सभी हँस पड़े □ इतने में शंकर बाबू डॉक्टर साहब के साथ आये और सब लोग चुप हो गये □

20

दिन भर के व्यवहार से चन्द्र ने देखा कि कैलाश भी उतना ही अच्छा हँसमुख और शालीन है जितने शंकर बाबू थे। वह उसे यजनीतिक क्षेत्र में जितना फौलादी लगा था, घेरलू जिंदगी में उतना ही अच्छा लगा। चन्द्र का मन खुशी से नाच उठा। सुधा की ओर से वह थोड़ा निश्चिन्त हो गया। अब सुधा निभा ले जाएगी। वह मौका निकालकर घर में गया। देखा, सुधा को औरतें घेरे हुए बैठी हैं और महावर लगा रही हैं। बिनती कनस्तर में से धी निकाल रही थी। चन्द्र गया और बिनती की चोटी घसीटकर बोला, “ओ गिलहरी, धी पी रही है क्या?”

बिनती ने दंग होकर चन्द्र की ओर देखा। आज तक कभी अच्छे-भले में तो चन्द्र ने उसे नहीं चिनाया था। आज क्या हो गया? आज जबकि पिछले पन्द्रह रोज से चन्द्र के होठ मुसकराना भूल गये हैं।

“आँख फाइकर क्या देख रही है? कैलाश बहुत अच्छा लड़का है, बहुत अच्छा। अब सुधा बहुत सुखी रहेगी। कितना अच्छा होगा, बिनती! हँसती क्यों नहीं गिलहरी!” और चन्द्र ने बिनती की बाँह में चुटकी काट ली।

“अच्छा! हमें दीदी समझा है क्या? अभी बताती हूँ।” और धी भेरे हाथ से चन्द्र की बाँह पकड़कर बिनती ने जोर से धुमा दी। चन्द्र ने अपने को छुड़ाया और बिनती को चपत मारकर गुनगुनाता हुआ चला गया।

बिनती ने कनस्तर के मुँह पर लगा धी पोंछा और मन में बोली, ‘देवता और किसे कहते हैं?’ शाम को बायात चढ़ी। सादी-सी बायात। सिर्फ एक बैंड था। कैलाश ने शेरवानी और पायजामा पहना था, और टोपी। सिर्फ एक माला गले में पड़ी थी और हाथ में कंगन बँधा था। मौर पीछे किसी आदमी के हाथ में था। जयमाला की रस्म होने वाली थी। लेकिन बुआजी ने स्पष्ट कर दिया कि हमारी लड़की कोई ऐसी-वैसी नहीं कि ब्याह के पहले भरी बायात में मुँह खोलकर माला पहनाये। लेकिन धूँधूट के मामले पर सुधा ने दृढ़ता से मना किया था, वह धूँधूट बिल्कुल नहीं करेगी।

अन्त में पापा उसे लेकर मंडप में आये। घर का काम-काज निबट गया था। सभी लोग आँगन में बैठे थे। कामिनी, प्रभा, लीला सभी थीं, एक ओर बाराती बैठे थे। सुधा शान्त थी लेकिन उसका मुँह ग्रहण के चन्द्रमा की तरह निस्तेज था। मंडप का एक बल्ब खराब हो गया था और चन्द्र सामने खड़ा उसे बदल रहा था। सुधा ने जाते-जाते चन्द्र को देखा और आँसू पोंछकर मुसकराने लगी और मुसकराकर फिर आँसू पोंछने लगी। कामिनी, प्रभा, लीला तमाम लड़कियाँ कैलाश पर फिलियाँ कस रही थीं। सुधा सिर झुकाये बैठी थी। पापा से उसने कहा, “बिनती को हमारे पास भेज दो।” बिनती आकर सुधा के पीछे बैठ गयी। कैलाश ने आँख के इशारे से चन्द्र को बुलाया। चन्द्र जाकर पीछे बैठा तो कैलाश ने कहा, “यार, यहाँ जो लोग खड़े हैं

इनका परिवय तो बता दो चुपके से!” चन्द्र ने सभी का परिवय बताया □ कामिनी, प्रभा, लीला सभी के बारे में जब चन्द्र बता रहा था तो बिनती बोली, “बड़े लालची मालूम देते हैं आप? एक से सन्तोष नहीं है क्या? वाह रे जीजाजी!” कैलाश ने मुसकराकर चन्द्र से पूछा, “इसका ब्याह तय हुआ कि नहीं?”

“हो गया □” चन्द्र ने कहा □

“तभी बोलने का अभ्यास कर रही हैं; मंडप में भी इसीलिए बैठी हैं क्या?” कैलाश ने कहा □ बिनती झोंप गयी और उठकर चली गयी □

संस्कार शुरू हुआ □ कैलाश के हाथ में नारियल और उसकी मुँही पर सुधा के दोनों हाथ □ सुधा अब चुप थी □ इतनी चुप...इतनी चुप कि लगता था उसके होठों ने कभी बोलना जाना ही नहीं □ संस्कार के दौरान ही पारस्परिक वचन का समय आया □ कैलाश ने सभी प्रतिज्ञाएँ स्वयं कहीं □ शंकरबाबू ने कहा, लड़की भी शिक्षित है और उसे भी स्वयं वचन करने होंगे □ सुधा ने सिर हिला दिया □ एक असन्तोष की लहर-सी बारातियों में फैल गयी □ चन्द्र ने बिनती को बुलाया □ उसके कान में कहा, “जाकर सुधा से कह दो कि पागलपन नहीं करते □ इससे क्या फायदा?” बिनती ने जाकर बहुत धीरे से सुधा के कान में कहा □ सुधा ने सिर उठाकर देखा □ सामने बरामदे की सीढ़ियों पर चन्द्र बैठा हुआ बड़ा चिनितत-सा कभी शंकरबाबू की ओर देखता और कभी सुधा की ओर □ सुधा से उसकी निगाह मिली और वह सिंहर-सा उठा, सुधा क्षण-भर उसकी ओर देखती रही □ चन्द्र ने जाने क्या कहा और सुधा ने आँखों-ही-आँखों में उसे क्या जवाब दे दिया □ उसके बाद सुधा नीचे रखे हुए पूजा के नारियल पर लगे हुए सिन्दूर को देखती रही फिर एक बार चन्द्र की ओर देखा □ विवित्र-सी थी वह निगाह, जिसमें कातरता नहीं थी, करुणा नहीं थी, आँसू नहीं थे, कमजोरी नहीं थी, था एक गम्भीरतम् विश्वास, एक उपमाहीन र्णेछ, एक सम्पूर्णतम् समर्पण □ लगा, जैसे वह कह रही हो-सचमुच तुम कह रहे हो, फिर सोच लो चन्द्र...इतने दृढ़ हो...इतने कठोर हो...मुझसे मुँह से क्यों कहलवाना चाहते हो...क्या सारा सुख लूटकर थोड़ी-सी आत्मवंचना भी मैरे पास नहीं छोड़ोगे?...अच्छा तो, मैरे देवता! और उसने हारकर सिसकियों से सने स्वरों में अपने को कैलाश को समर्पित कर दिया □ प्रतिज्ञाएँ दोहरा दीं और उसके बाद साझी का एक छोर खींचकर, नथ की डोरी ठीक करने के बहाने उसने आँसू पौछ लिये □

चन्द्र ने एक गहरी साँस ली और बगल में बैठी हुई बुआजी से कहा, “बुआजी, अब तो बैठा नहीं जाता □ आँखों में जैसे किसी ने मिर्च भर दी हो □”

“जाओ...जाओ, सोय रहो ऊपर, खाट बिछी है □ कल सुबह दस बजे विदा करे को है □ कुछ खायो पियो नै, तो पढ़े रहबो!” बुआ ने बड़े र्णेछ से कहा □

चन्द्र ऊपर गया तो देखा एक खाट पर बिनती औंधी पड़ी सिसक रही है □ “बिनती! बिनती!” उसने बिनती को पकड़कर हिलाया □ बिनती फूट-फूटकर रो पड़ी □

“उठ पगली, हमें तो समझाती है, खुद अपने-आप पागलपन कर रही है □” चन्द्र ने रुधे गते से कहा □

बिनती उठकर एकदम चन्द्र की गोद में समा गयी और दर्दनाक स्वर में बोली, “हाय चन्द्र...अब...क्या...होगा?”

चन्द्र की आँखों में आँसू आ गये, वह फूट पड़ा और बिनती को एक झूबते हुए सहारे की तरह

पकड़कर उसकी माँग पर मुँह रखकर फूट-फूटकर ये पड़ा □ लेकिन फिर भी सँभल गया और बिनती का माथा सहलाते हुए और अपनी सिसकियों को योकते हुए कहा, “ये मत पगली!”

धीर-धीरे बिनती तुप हुई □ और खाट के पास नीचे छत पर बैठ गयी और चन्द्र के घुटनों पर हाथ रखकर बोली, “चन्द्र, तुम आना मत छोड़ना □ तुम इसी तरह आते रहना! जब तक दीदी ससुराल से लौट न आएँ □”

“अच्छा!” चन्द्र ने बिनती की पीठ पर हाथ रखकर कहा, “धबराते नहीं □ तुम तो बहादुर लड़की हो न! सब चीज बहादुरी से सहना चाहिए □ कैसी दीदी की बहन हो? क्यों?”

बिनती उठकर नीचे चली गयी □

चन्द्र लेट रहा □ उसकी पोर-पोर में दर्द हो रहा था □ नस-नस को जैसे कोई तोड़ रहा हो, खींच रहा हो □ हड्डियों के रेशे-रेशे में थकान मिल गयी थी लेकिन उसे नींद नहीं आयी □ आँगन में पुरोहितजी के मंत्र-पाठ का स्वर और बीच-बीच में आने वाले किसी बाराती या औरतों की आवाजें उसके मन को अस्त-व्यस्त कर देती थीं □ उसकी थकान और उसकी अशानित ही उसको बार-बार झटके से जगा देती थी □ वह करवट बदलता, कभी ऊपर देखता, कभी आँखें बन्द कर लेता कि शायद नींद आ जाए लेकिन नींद नहीं ही आयी □ धीर-धीरे नीचे का रव भी शान्त हो गया □ संस्कार भी समाप्त हुआ □ बाराती उठकर चलने लगे और वह आवाजों से यह पहचानने की कोशिश करने लगा कि अब कौन क्या कर रहा है □ धीर-धीरे सब शोर शान्त हो गया □

चन्द्र ने फिर करवट बदली और आँख बन्द कर ली □ धीर-धीरे एक कोहरा उसके मन पर छा गया □ वह इतना जागा कि अब अगर वह आँख भी बन्द करता तो जब पलकें पुतलियों से छा जातीं तो एक बहुत कड़ुआ दर्द होने लगा था □ जैसे-तैसे उसकी थोड़ी-सी आँख लगी...

किसी ने सहसा जगा दिया □ पलक बन्द करने में जितना दर्द हुआ था उतना ही पलकें खोलने में □ उसने पलकें खोलीं-देखा सामने सुधा खड़ी थी...

माँग और माथे में सिन्दूर, कलाई में कंगन, हाथ में अँगूठियाँ, कड़े, चूड़े, गले में गहने, बड़ी-सी नथुनी डौरे के सहारे कान में बँधी हुई, आँखें-जिनमें भादों की घटाओं की गरज खामोश हो रही बरसात-सी हो गयी थी □

वह क्षण-भर पैताने खड़ी रही □ चन्द्र उठकर बैठ गया! उसका दिल इस तरह धड़क रहा था जैसे किसी के सामने भाव्य का रठा हुआ देवता खड़ा हो □ सुधा कुछ बोली नहीं □ उसने दोनों हाथ जोड़े और झुककर चन्द्र के पैरों पर माथा टेक दिया □ चन्द्र ने उसके सिर पर हाथ रखकर कहा, “ईश्वर तुम्हारा सुहान अटल करे! तुम बहुत महान हो □ मुझे तुम पर आज से गर्व है □ आज तक तुम जो कुछ थी उससे कहीं ज्यादा हो मैं लिए, सुधा!”

सुधा कुछ बोली नहीं □ आँचल से आँसू पौछती हुई पायताने जमीन पर बैठ गयी □ और अपने गले से एक बेले का हार उतारा □ उसे तोड़ डाला और चन्द्र के पाँव खींचकर खाट के नीचे जमीन पर रख लिये □

“अे यह क्या कर रही हो, सुधा □” चन्द्र ने कहा □

“जो मैरे मन में आएगा!” बहुत मुश्किल से रुँधे गले से सुधा बोली, “मुझे किसी का डर नहीं, तुम जो कुछ दंड दे चुके हो, उससे बड़ा दंड तो अब भगवान भी नहीं दे सकेंगे?” सुधा ने चन्द्र के पाँवों पर फूल रखकर उन्हें चूम लिया और अपनी कलाई में बँधी हुई एक पुँडिया खोलकर उसमें से थोड़ा-सा सिन्दूर उन फूलों पर छिड़कर, चन्द्र के पाँवों पर सिर रखकर चुपचाप रोती रही □

थोड़ी देर बाद उठी और उन फूलों को समेटा □ अपने आँचल के छोर में उन्हें बाँध लिया और उठकर चली...धीमे-धीमे निःशब्द...

“कहाँ चली, सुधा?” चन्द्र ने सुधा का हाथ पकड़ लिया □

“कहीं नहीं!” अपना हाथ छुड़ाते हुए सुधा ने कहा □

“नहीं-नहीं, सुधा, ताओ ये छम रखेंगे!” चन्द्र ने सुधा को रोकते हुए कहा □

“बेकार हैं, चन्द्र! कल तक, परसों तक ये जूँठे हो जाएँगे, देवता मैरे!” और सुधा सिसकते हुए चली गयी □

एक चमकदार सितारा टूटा और पूरे आकाश पर फिसलते हुए जाने किस क्षितिज में खो गया □

21

दूसरे दिन आठ बजे तक सारा सामान रेसेन पहुँच गया था। शंकर बाबू और डॉक्टर साहब पहले ही रेसेन पहुँच गये थे। बाराती भी सब वहीं चले गये थे। कैलाश और सुधा को रेसेन तक लाने का जिम्मा चन्द्र पर था। बहुत जल्दी करते-करते भी सवा नौ बजे गये थे। उसने फिर जाकर कहा। कैलाश और सुधा खड़े हुए थे। पीछे से नाइन सुधा के सिर पर पंखा रखी थी और बुआजी शेवना कर रही थी। चन्द्र के जल्दी मचाने पर अन्त में उन्हें फुरसत मिली और वह आगे बढ़े। मोटर पर सुधा ने ज्यों ही पाँव रखा कि बिनती पाँव से लिपट गयी और शेने लगी। सुधा जोर से बिलख-बिलखकर ये पड़ी। चन्द्र ने बिनती को छुड़ाया। सुधा पीछे बैठकर खिड़की पर मुँह रखकर सिसकती रही। मोटर चल दी। सुधा मुड़कर अपने घर की ओर देख रही थी। बिनती ने हाथ जोड़े तो सुधा चीखकर ये पड़ी। फिर चुप हो गयी।

रेसेन पर भी सुधा बिल्कुल शान्त रही। सुधा और कैलाश के लिए सेफेंड वलास में एक बर्थ सुरक्षित थी। बाकी लोग ड्यूडों में थे। शंकर बाबू ने दोनों को उस डिब्बे में पहुँचाया और बोले, “कैलाश, तुम जरा हमारे साथ आओ। मिस्टर कपूर, जरा बहू के पास आप रहिए। मैं डॉक्टर साहब को यहाँ भेज रहा हूँ।”

चन्द्र खिड़की के पास खड़ा हो गया। शंकर बाबू का छोटा बच्चा आकर अपनी नयी चाची के पास बैठ गया और उनकी रेशमी चादर से खेलने लगा। चन्द्र चुपचाप खड़ा था।

सहसा सुधा ने उसके हाथों पर अपना मेहँदी लगा हाथ रख दिया और धीमे से कहा, “चन्द्र!” चन्द्र ने मुड़कर देखा तो बोली, “अब कुछ सोचो मत। इधर देखो!” और सुधा ने जाने कितने दुलार से चन्द्र से कहा, “देखो, बिनती का ध्यान रखना। उसे तुम्हारे ही भरोसे छोड़ रही हूँ और सुनो, पापा को रात को सोते वक्त दूध में ओवल्टीन जरूर दे देना। खाने-पीने में गड़बड़ी मत करना, यह मत समझना कि सुधा मर गयी तो फिर बिना दूध की चाय पीने लगो। हम जल्दी से आ जाएँगे। पर्मी का कोई खत आये तो हमें लिखना।”

इतने में डॉक्टर साहब और कैलाश आ गये। कैलाश कम्पार्टमेंट के बाथरूम में चला गया। डॉक्टर साहब आये और सुधा के सिर पर हाथ रखकर बोले, “बेटा! आज तेरी माँ होती तो कितना अच्छा होता। और देख, मठीने-भर में बुला लेंगे तुझे! वहाँ घबराना मत।”

गाड़ी ने सीटी दी।

पापा ने कहा, “बेटा, अब ठीक से रहना और भावुकता या बचपना मत करना। समझी!” पापा ने आँख से रुमाल लगा लिया। विवाह बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है। अब तुम्हारी नयी जिंदगी है। अब तक बेटी थी, अब बहू हो...।”

सुधा बोली, “पापा, तुम्हारा ओवल्टीन का डिब्बा शीशे वाली मेज पर है। उसे पी लिया करना और पापा, बिनती को गाँव मत भेजना। चन्द्र को अब घर पर ही बुला लो। तुम अकेले पड़

गये! और हमें जल्दी बुला लेना...”

गार्ड ने सीटी टी □ कैलाश ने जल्दी से डॉक्टर साहब के पैर छुए □ चन्द्र से हाथ मिला लिया □ सुधा बोली, “चन्द्र, ये पुर्जा बिनती को देना और देखो मेरा नतीजा निकले तो तार देना □” गाड़ी चल पड़ी □ “अच्छा पापा, अच्छा चन्द्र...” सुधा ने हाथ जोड़े और खिड़की पर टिककर योने लगी □ और बार-बार आँसू पोंछ-पोंछकर देखने लगी □...

गाड़ी प्लेटफार्म के बाहर चली गयी तब चन्द्र मुझा □ उसके बदन में पोर-पोर में ढर्द हो रहा था □ वह कैसे घर पर पहुँचा उसे मालूम नहीं □

ਤ੍ਰਿਤੀਂ ਖਣਡ

22

ਚਨਦਰ ਕੋ ਹੁਪਟੇ-ਮਹਾ ਤਕ ਛੋਸ਼ ਨਹੀਂ ਰਹਾ □ ਸ਼ਾਦੀ ਕੇ ਦਿਨਾਂ ਮੈਂ ਤਥੇ ਏਕ ਨਸ਼ਾ ਥਾ ਜਿਸਕੇ ਬਲ ਪਰ ਵਹ ਮਝੀਨ ਕੀ ਤਰਫ ਕਾਮ ਕਰਤਾ ਗਯਾ □ ਸ਼ਾਦੀ ਕੇ ਬਾਅਦ ਇਤਨੀ ਮਹਾਂਕਰ ਥਕਾਵਟ ਉਸਕੀ ਨਸ਼ੀਂ ਮੈਂ ਕਸਕ ਤਠੀ ਕਿ ਉਸਕਾ ਚਲਨਾ-ਫਿਰਨਾ ਮੁਖਿਕਲ ਹੋ ਗਯਾ ਥਾ □ ਵਹ ਅਪਨੇ ਘਰ ਸੇ ਹੋਟਲ ਤਕ ਖਾਨਾ ਖਾਨੇ ਨਹੀਂ ਜਾ ਪਾਤਾ ਥਾ □ ਬਥ ਪਡਾ-ਪਡਾ ਸੋਤਾ ਰਹਤਾ □ ਸੁਭਹ ਨੌ ਬਜੇ ਸੋਤਾ; ਪਾਂਚ ਬਜੇ ਤਠਤਾ; ਥੋੜੀ ਦੇਰ ਹੋਟਲ ਮੈਂ ਬੈਠਕਰ ਫਿਰ ਵਾਪਸ ਆ ਜਾਤਾ □ ਚੁਪਚਾਪ ਛਤ ਪਰ ਲੇਟਾ ਰਹਤਾ ਔਰ ਫਿਰ ਸੋ ਜਾਤਾ □ ਉਸਕਾ ਮਨ ਏਕ ਤਜਡੇ ਹੁਏ ਨੀਡੇ ਕੀ ਤਰਫ ਥਾ ਜਿਸਮੇਂ ਸੇ ਵਿਚਾਰ, ਅਨੁਮੂਲਤਿ, ਸਪਨਦਨ ਔਰ ਇਸ ਕੇ ਵਿਹੱਗਮ ਕਠੀਂ ਦੂਰ ਤੜ ਗਏ ਥੇ □ ਲਗਤਾ ਥਾ, ਜੈਂਦੇ ਵਹ ਸਥ ਕੁਛ ਮੂਲ ਗਿਆ ਹੈ □ ਸੁਧਾ, ਬਿਨਤੀ, ਪਮੀ, ਡੱਕਟਰ ਸਾਫ਼ਬ, ਰਿਸਰਚ, ਥੀਸਿਸ, ਸਭੀ ਕੁਛ! ਯੇ ਸਥ ਚੀਜ਼ਾਂ ਕਹੀ-ਕਹੀ ਉਸਕੇ ਮਨ ਮੈਂ ਨਾਚ ਜਾਤੀਂ ਲੋਕਿਨ ਚਨਦਰ ਕੋ ਐਸਾ ਲਗਤਾ ਕਿ ਯੇ ਕਿਸੀ ਐਸੀ ਦੁਨਿਆ ਕੀ ਚੀਜ਼ਾਂ ਹੈਂ ਜਿਸਕੋ ਵਹ ਮੂਲ ਗਿਆ ਹੈ, ਜੋ ਉਸਕੇ ਸਮੂਤਿ-ਪਟਲ ਸੇ ਮਿਟ ਹੁਕੀ ਹੈ, ਕੋਈ ਐਸੀ ਦੁਨਿਆ ਜੋ ਕਹੀ ਥੀ, ਕਠੀਂ ਥੀ, ਲੋਕਿਨ ਕਿਸੀ ਮਹਾਂਕਰ ਜਲਪ੍ਰਲਾਯ ਨੇ ਜਿਸਕਾ ਕਣ-ਕਣ ਧਵਸਤ ਕਰ ਦਿਯਾ ਥਾ □ ਉਸਕੀ ਦੁਨਿਆ ਅਪਨੀ ਛਤ ਤਕ ਸੀਮਿਤ ਥੀ, ਛਤ ਕੇ ਚਾਰੋਂ ਓਰ ਕੀ ਊੱਚੀ ਢੀਵਾਰੋਂ ਔਰ ਤਨ ਚਾਰਢੀਵਾਰੋਂ ਸੇ ਬੱਧੀ ਹੁਏ ਆਕਾਸ਼ ਕੇ ਚੌਕੋਰ ਟੁਕੜੇ ਤਕ ਹੀ ਉਸਕੇ ਮਨ ਕੀ ਤਡਾਨ ਬੱਧ ਗਿਆ ਥੀ □ ਉਜਾਲਾ ਪਾਖ ਥਾ □ ਪਛਲੇ ਵਹ ਤੁਬਧਕ ਤਾਰੇ ਕੀ ਰੋਣਨੀ ਦੇਖਤਾ ਫਿਰ ਧੀਰੀ-ਧੀਰੀ ਚੌਂਦ ਕੀ ਦ੍ਰਿਧਿਆ ਰੋਣਨੀ ਸਫੇਦ ਕਫਨ ਕੀ ਤਰਫ ਛਾ ਜਾਤੀ ਔਰ ਵਹ ਮਨ ਮੈਂ ਥਕੇ ਹੁਏ ਰਖ ਜੈਂਦੇ ਚੌਂਦਨੀ ਕੋ ਓਡੀਨਾ ਹੁਆ-ਸਾ ਕਹਤਾ, “ਸੋ ਜਾ ਮੁਖਦੇ...ਸੋ ਜਾ □”

ਛੇਂ ਦਿਨ ਉਸਕਾ ਮਨ ਕੁਛ ਠੀਕ ਹੁਆ □ ਥਕਾਵਟ, ਜੋ ਏਕ ਕੇਂਚੁਲ ਕੀ ਤਰਫ ਤਸ ਪਰ ਛਾਹੀ ਹੁੰਡੀ ਥੀ, ਧੀਰੀ-ਧੀਰੀ ਤਰ ਗਿਆ ਔਰ ਤਥੇ ਲਗਾ ਜੈਂਦੇ ਮਨ ਮੈਂ ਕੁਛ ਟੂਟਾ ਹੁਆ-ਸਾ ਦਰਦ ਕਸਕ ਰਹਾ ਹੈ □ ਯਹ ਦਰਦ ਕਿਥੋਂ ਹੈ, ਕੈਸਾ ਹੈ, ਯਹ ਉਸਕੇ ਕੁਛ ਸਮਝ ਮੈਂ ਨਹੀਂ ਆਤਾ ਥਾ □ ਪਾਂਚ ਬਜੇ ਥੇ ਲੋਕਿਨ ਧੂਪ ਬਿਲਕੁਲ ਨਹੀਂ ਥੀ □ ਪੀਲੇ ਤਦਾਸ ਬਾਦਲਾਂ ਕੀ ਏਕ ਝੀਨੀ ਤਹ ਨੇ ਫਲਾਤੇ ਹੁਏ ਆ਷ਾਫ ਕੇ ਸੂਰਜ ਕੋ ਢੱਕ ਲਿਆ ਥਾ □ ਹਵਾ ਮੈਂ ਏਕ ਠੰਡਕ ਆ ਗਿਆ ਥੀ; ਲਗਤਾ ਥਾ ਕਿ ਝੋਂਕੇ ਕਿਸੀ ਵਰ਷ਾ ਕੇ ਦੇਸ਼ ਸੇ ਆ ਰਹੇ ਹੈਂ □ ਵਹ ਤਠਾ, ਨਹਾਯਾ ਔਰ ਬਿਨਤੀ ਕੇ ਘਰ ਚਲ ਪਡਾ □

ਡੱਕਟਰ ਸ਼ੁਕਲਾ ਲੱਨ ਪਰ ਹਾਥ ਮੈਂ ਕਿਤਾਬ ਲਿਯੇ ਟਠਲ ਰਹੇ ਥੇ □ ਪਾਂਚ ਦਿਨਾਂ ਮੈਂ ਜੈਂਦੇ ਵਹ ਬਹੁਤ ਬੂਨੇ ਹੋ ਗਿਆ ਥੇ □ ਬਹੁਤ ਜੁਕੇ ਹੁਏ-ਸੇ ਨਿਸ਼ਤੋਜ ਚੇਹਰਾ, ਡਬਡਬਾਈ ਆੱਖੋਂ ਔਰ ਚਾਲ ਮੈਂ ਜੈਂਦੇ ਤਗ ਗਿਆ ਹੋ □ ਤਨਾਂਨੇ ਚਨਦਰ ਕਾ ਖਾਗਤ ਭੀ ਉਸ ਤਰਫ ਨਹੀਂ ਕਿਯਾ ਜੈਂਦੇ ਪਛਲੇ ਕਰਤੇ ਥੇ □ ਸਿਰਫ ਇਤਨਾ ਬੋਲੇ, “ਚਨਦਰ, ਤੋ ਫੇ ਡ੍ਰਾਇਵਰ ਕੋ ਮੇਜਕਰ ਬੁਲਾਯਾ ਤੋ ਮਾਲੂਮ ਹੁਆ ਤੁਮ ਸੋ ਰਹੇ ਹੋ □ ਅਥਾਂ ਅਪਨਾ ਸਾਮਾਨ

यहीं ले आओ॥” और वे बैठकर किताब उलट-पलट कर देखने लगे॥ अभी तक वे बूढ़े थे, उनका व्यक्तित्व तरुण था॥ आज लगता था जैसे उनके व्यक्तित्व पर झुरियाँ पड़ने लगी हैं, उनके व्यक्तित्व की कमर भी झुक गयी है॥ चन्द्र कुछ नहीं बोला॥ चुपचाप खड़ा रहा॥ सामने आकाश पर एक अजब-सी जर्दी छा रही थी॥ डॉक्टर साहब ने किताब बन्द की और बोले, “सुना है...कॉलेज के प्रिन्सिपल आ गये हैं॥ जाऊँ जरा उनसे तुम्हारे बारे में बात कर आऊँ॥ तुम जाओ, सुधा का खत आया है बिनती के पास॥”

“बुआजी हैं?” चन्द्र ने पूछा॥

“नहीं, आज ही सुबह तो गर्याँ॥ हम लोग कितना रोकते रहे लेकिन उन्हें कहीं और चैन ही नहीं पड़ता॥ बिनती को बड़ी मुश्किल से रोका मैंने॥” और डॉक्टर साहब गैरेज की ओर चल पड़े॥ चन्द्र भीतर गया॥ सारा घर इतना सुनसान था, इतना भयंकर सन्नाटा कि चन्द्र के रोएँ-रोएँ खड़े हो गये॥ शायद मौत के बाट का घर भी इतना नीरव और इतना भयानक न लगता होगा जितना यह शादी के बाट का घर॥ सिर्फ रसोई से कुछ खटपट की आवाज आ रही थी॥ “बिनती!” चन्द्र ने पुकारा॥ बिनती चौके में थी॥ वह निकल आयी॥ बिनती को देखते ही चन्द्र ढंग हो गया॥ वह लड़की इतनी दुबली हो गयी थी कि जैसे बीमार हो॥ रो-रोकर उसकी आँखें सूज गयी थीं और होठ मोटे पड़ गये थे॥ चन्द्र को देखते ही उसने कड़ाही उतारकर नीचे रख दी और बिखरी हुई लट्टे सुधारकर, आँचल ठीक कर बाहर निकल आयी॥ कमरे से खींचकर एक चौकी आँगन में डालकर चन्द्र से बहुत उदास रवर में बोली, “बैठिए!”

“घर कितना सूना लग रहा है बिनती, तुम अकेले कैसे रहती होगी?” चन्द्र ने कहा॥ बिनती की आँखों में आँसू छलछला आये॥

“बिनती, रोती क्यों हो? छिः! मुझे देखो॥ मैं कैसे पत्थर बन गया हूँ॥ क्यों? तुम तो इतनी अच्छी लड़की हो॥” चन्द्र ने बिनती के कन्धे पर हाथ रखकर कहा॥

बिनती ने आँसू भरी पलकें चन्द्र की ओर उठायीं और बड़े ही कातर रवर में कहा, “आप देवता हो सकते हैं, लेकिन हरेक तो देवता नहीं है॥ फिर आपने कहा था आप आँगे बराबर॥ पिछले हफते से आये भी नहीं॥ यह भी नहीं सोचा कि हमारा क्या हाल होगा! रोज सुबह-शाम कोई भी आता तो हम दौड़कर देखते कि आप आये हैं या नहीं॥ दीदी आपकी थीं! बस उन तक आपका रिश्ता था॥ हम तो आपके कोई नहीं हैं॥”

“नहीं बिनती! इतने थक गये थे कि हम कहीं आने-जाने की हिम्मत ही नहीं पड़ती थी॥ बुआजी को जाने क्यों दिया तुमने? उन्हें योक लेती!” चन्द्र ने कहा॥

“अे, वह थीं तो रोने भी नहीं देती थीं॥ मैं दो-तीन दिन तक रोयी तो मुझ पर बहुत बिगड़ीं और महराजिन से बोलीं, “हमने तो ऐसी लड़की ही नहीं देखी॥ बड़ी बठन का ब्याह हो गया तो मारे जलन के दिन-रात आँसू बहा-बहाकर अमंगल बनाती है॥ जब बखत आएगा तभी शादी करेंगे कि अभी ही किसी के साथ निकाल दूँ॥” बिनती ने एक गहरी साँस लेकर कहा, “आप समझ नहीं सकते कि जिंदगी कितनी खराब है॥ अब तो हमारी तबीयत होती है कि मर जाएँ॥ अभी तक दीदी थीं, सहारा दिये रहती थीं॥ हिम्मत बँधाये रहती थीं, अब तो कोई नहीं हमारा॥”

“छिः, ऐसी बातें नहीं करते, बिनती! महीने-भर में सुधा आ जाएगी॥ और माँ की बातों का क्या बुरा मानना?”

“आप लड़की होते तो समझते, चन्द्र बाबू!” बिनती बोली और जाकर एक तश्तरी में नाश्ता ले

आयी, “लो, दीदी कह गयी थीं कि चन्द्र के खाने-पीने का खाल रखना लेकिन यह किसको मालूम था कि दीदी के जाते ही चन्द्र नैर हो जाएँगे”

“नहीं बिनती, तुम गलत समझ रही हो। जाने क्यों एक अजीब-सी खिन्नता मन में आ गयी थी। कुछ करने की तबीयत ही नहीं होती थी। आज कुछ तबीयत ठीक हुई तो सबसे पहले तुम्हारे ही पास आया। बिनती! अब सुधा के बाट मेरा है ही कौन, सिवा तुम्हारे?” चन्द्र ने बहुत उदास रुपर में कहा।

“तभी न! उस दिन मैं बुलाती रह गयी और आप यह जये, वह जये और आँख से ओङ्गल! मैंने तो उसी दिन समझ लिया था कि अब पुराने चन्द्र बाबू बदल गये।” बिनती ने शोते हुए कहा। चन्द्र का मन भर आया था, गले में आँसू अटक रहे थे लेकिन आदमी की जिंदगी भी कैसी अजब होती है। वह ये भी नहीं सकता था, माथे पर दुख की रेखा भी झलकने नहीं दे सकता था, इसलिए कि सामने कोई ऐसा था, जो खुद दुखी था और सुधा की थाती होने के जाते बिनती को समझाना उसका पहला कर्तव्य था। बिनती के आँसू शोकने के लिए वह खुद अपने आँसू पी गया और बिनती से बोला, “लो, कुछ तुम भी खाओ।” बिनती ने मना किया तो उसने अपने हाथ से बिनती को खिला दिया। बिनती चुपचाप खाती रही और रह-रहकर आँसू पोंछती रही। इतने में महराजिन आयी। बिनती ने चौके के काम समझा दिये और चन्द्र से बोली, “चलिए, ऊपर चलें।” चन्द्र ने चारों ओर देखा। घर का सन्नाटा वैसा ही था। सहसा उसके मन में एक अजीब-सी बात आयी। सुधा के साथ कभी भी कहीं भी वह जा सकता था, लेकिन बिनती के साथ छत पर अकेले जाने में क्यों उसके अन्तःकरण ने गवाही नहीं दी। वह चुपचाप बैठा रहा। बिनती कुछ भी हो, कितनी ही समीप क्यों न हो, बिनती सुधा नहीं थी, सुधा नहीं हो सकती थी। “नहीं, यहीं ठीक है।” चन्द्र बोला।

बिनती गयी। सुधा का पत्र ले आयी। चन्द्र का मन जाने कैसा होने लगा। लगता था जैसे अब आँसू नहीं रुकेंगे। उसके मन में सिर्फ इतना आया कि अभी बहतर घंटे पहले सुधा यहीं थी, इस घर की प्राण थी; आज लगता है जैसे इस घर में सुधा थी ही नहीं...

आँगन में अँधेरा होने लगा था। वह उठकर सुधा के कमरे के सामने पड़ी हुई कोच पर बैठ गया और बिनती ने बती जला दी। खत छोटा-सा था-

“डॉक्टर चन्द्र बाबू,

क्या तुम कभी सोचते थे कि तुम इतनी दूर होगे और मैं तुम्हें खत लिखूँगी। लेकिन यैर! अब तो घर में चैन की बंसी बजाते होंगे। एक अकेले मैं ही कॉटे-जैसी खटक रही थी, उसे भी तुमने निकाल फेका। अब तुम्हें न कोई परेशान करता होगा, न तुम्हारे पढ़ने-लिखने में बाधा पहुँचती होगी। अब तो तुम एक मठीने में दस-बारह थीसिस लिख डालोगे।

जहाँ दिन में चौबीस घंटे तुम आँख के सामने रहते थे, वहाँ अब तुम्हारे बारे में एक शब्द सुनने के लिए तड़प उठती हूँ। कई दफे तबीयत आती है कि जैसे बिनती से तुम्हारे बारे में बातें करती थी वैसे ही इनसे (तुम्हारे मित्र से) तुम्हारे बारे में बातें कह लेकिन ये तो जाने कैसी-कैसी बातें करते हैं।

और सब ठीक है। यहाँ बहुत आजादी है मुझे। माँजी भी बहुत अच्छी है। परदा बिल्कुल नहीं करती। अपने पूजा के सारे बरतन पहले ही दिन हमसे मँजवाये।

देखो, पापा का ध्यान रखना। और बिनती को जैसे मैं छोड़ आयी हूँ उतनी ही मोटी रहे। मैं

महीने-भर बाद आकर तुम्हीं से बिनती को वापस लूँगी, समझे? यह न करना कि मैं न रहूँ तो मेरे बजाय बिनती को रुला-रुलाकर, कुढ़ा-कुढ़ाकर मार डालो, जैसी तुम्हारी आदत है।
चाय ज्यादा मत पीना-खत का जवाब फौरन!

तुम्हारी-सुधा॥”

चन्द्र ने चिट्ठी एक बार फिर पढ़ी, दो बार पढ़ी, और बार-बार पढ़ता गया॥ हलफे हरे कान्ज पर छोटे-छोटे काले अक्षर जाने कैसे लग रहे थे॥ जाने क्या कह रहे थे, छोटे-छोटे अर्थात् कुछ उनमें अर्थ था जो शब्द से भी ज्यादा गम्भीर था॥ युगों पहले वैयाकरणों ने उन शब्दों के जो अर्थ निश्चित किये थे, सुधा की कलम से जैसे उन शब्दों को एक नया अर्थ मिल गया था॥ चन्द्र बेसुध-सा तन्मय होकर उस खत को बार-बार पढ़ता गया और किस समय वे छोटे-छोटे नादान अक्षर उसके हृदय के चारों ओर कवच-जैसे बौद्धिकता और सन्तुलन के लौह पत्र को चीरकर अन्दर बिंध गये और हृदय की धड़कनों को मरोड़ना शुरू कर दिया, यह चन्द्र को खुद नहीं मालूम हुआ जब तक कि उसकी पलकों से एक गरम आँसू खत पर नहीं टपक पड़ा॥ लेकिन उसने बिनती से वह आँसू छिपा लिया और खत मोड़कर बिनती को दे दिया॥ बिनती ने खत लेकर रख लिया और बोली, “अब चलिए खाना खा लीजिए!” चन्द्र इनकार नहीं कर सका॥ महराजिन ने थाली लगायी और बोली, “भइया, नीचे अबहिन आँगन धोवा जाई, आप जाय के ऊपर खाय लेव॥”

चन्द्र को मजबूरन ऊपर जाना पड़ा॥ बिनती ने खाट बिछा दी॥ एक स्टूल डाल दिया॥ पानी रख दिया और नीचे थाली लाने चली गयी॥ चन्द्र का मन आरी हो गया था॥ यह वही जगह है, वही खाट है जिस पर शादी की रात वह सोया था॥ इसी के पैताने सुधा आकर बैठी थी अपने नये सुहाने में लिपटी हुई-सी॥ यही पर सुधा के आँसू गिरे थे...॥

बिनती थाली लेकर आयी और नीचे बैठकर पंखा करने लगी॥

“हमारी तबीयत तो है ही नहीं खाने की, बिनती!” चन्द्र ने भर्ये हुए स्वर में कहा॥

“अऐ, बिना खाये-पीये कैसे काम चलेगा? और फिर आप ऐसा करेंगे तो हमारी क्या हालत होगी? दीदी के बाद और कौन सहाय है! खाइए!” और बिनती ने अपने हाथ से एक कौर बनाकर चन्द्र को खिला दिया! चन्द्र खाने लगा॥ चन्द्र चुप था, वह जाने क्या सोच रहा था॥ बिनती चुपचाप बैठी पंखा झल रही थी॥

“क्या सोच रहे हैं आप?” बिनती ने पूछा॥

“कुछ नहीं!” चन्द्र ने उतनी ही उदासी से कहा॥

“नहीं बताइएगा?” बिनती ने बड़े कातर स्वर से कहा॥

चन्द्र एक फीकी मुसकान के साथ बोला, “बिनती! अब तुम इतना ध्यान न रखा करो! तुम समझती नहीं, बाद में कितनी तकलीफ होती है॥ सुधा ने क्या कर दिया है यह वह खुद नहीं समझती!”

“कौन नहीं समझता!” बिनती एक गहरी साँस लेकर बोली, “दीदी नहीं समझती या हम नहीं समझते! सब समझते हैं लेकिन जाने मन कैसा पागल है कि सब कुछ समझकर धोखा खाता है॥ अरे दही तो आपने खाया ही नहीं॥” वह पूँड़ी लाने चली गयी॥

23

और इस तरह दिन कटने लगे। जब आदमी अपने हाथ से आँखू मोल लेता है, अपने-आप दर्द का सौंदा करता है, तब दर्द और आँखू तकलीफ-देह नहीं लगते। और जब कोई ऐसा हो जो आपके दर्द के आधार पर आपको देवता बनाने के लिए तैयार हो और आपके एक-एक आँखू पर अपने सौंदा आँखू बिखेर दे, तब तो कभी-कभी तकलीफ भी भली मात्रा देने लगती है। लेकिन फिर भी चन्दर के दिन कैसे कट रहे थे यह वही जानता था। लेकिन अकबर के महल में जलते हुए दीपक को देखकर अगर किसी ने जाड़े की रात जमुना के घुटनों-घुटनों पानी में खड़े होकर काट दी, तो चन्दर अगर सुधा के प्यारे-प्यारे खतों के सहारे समय काट रहा था तो कोई ताज्जुब नहीं। अपने अध्ययन में प्रौढ़, अपने विचारों में उदार होने के बावजूद चन्दर अपने स्वभाव में बद्धा था, जिससे जिंदगी कुछ भी करवा सकती थी बशर्ते जिंदगी को यह आता हो कि इस भोले-भाले बच्चे को कैसे बहलावा दिया जाये।

बहलावे के लिए मुसकानें ही जरूरी नहीं होती हैं, शायद आँखुओं से मन जल्दी बहल जाता है। बिनती के आँखुओं में चन्दर सुधा की तसवीर देखता था और बहल जाता था। वह रोज शाम को आता और बिनती से सुधा की बातें करता, जाने कितनी बातें, जाने कैसी बातें और बिनती के माध्यम से सुधा में ढूबकर चला आता था। चूँकि सुधा के बिना उसका दिन कटना मुश्किल था, एक क्षण कटना मुश्किल था इसलिए बिनती उसकी एक जरूरत बन गयी थी। वह जब तक बिनती से सुधा की बात नहीं कर लेता था, तब तक जैसे वह बेचैन रहता था, तब तक उसकी किसी काम में तबीयत नहीं लगती थी।

जब तक सुधा सामने रही, कभी भी उसे यह नहीं मात्रा हुआ कि सुधा का क्या महत्व है उसकी जिंदगी में। आज जब सुधा दूर थी तो उसने देखा कि सुधा उसकी साँसों से भी ज्यादा आवश्यक थी उसकी जिंदगी के लिए। लगता था वह एक क्षण सुधा के बिना जिन्दा नहीं रह सकता। सुधा के अभाव में बिनती के माध्यम से वह सुधा को ढूँढ़ता था और जैसे सूरज के ढूब जाने पर चाँद सूरज की रोशनी उधार लेकर रात को उजियारा कर देता है उसी तरह बिनती सुधा की याद से चन्दर के प्राणों पर उजियारी बिखेरती रही। चन्दर बिनती को इस तरह अपनी साँसों की छाँट में ढुबकाये रहा जैसे बिनती सुधा का स्पर्श हो, सुधा का प्यार हो।

बिनती भी चन्दर के माथे पर उदासी के बादल देखते ही तड़प उठती थी। लेकिन फिर भी बिनती चन्दर को हँसा नहीं पायी। चन्दर का पुराना उल्लास लौटा नहीं। साँप का काटा हुआ जैसे लहरे लेता है वैसे ही चन्दर की नसों में फैला हुआ उदासी का जहर रह-रहकर चन्दर को झकझोर देता था। उन दिनों दो-दो तीन-तीन दिन तक चन्दर कुछ नहीं करता था, बिनती के पास भी नहीं जाता था, बिनती के आँखुओं की भी परवाह नहीं करता था। खाना नहीं खाता था, और अपने को जितनी तकलीफ हो सकती थी, देता था। फिर ज्यों ही सुधा का कोई खत

आता था, वह उसे धूम लेता और फिर स्वरथ हो जाता था □ बिनती चाहे जितना करे लेकिन चन्द्र की इन भयंकर उदासी की लहरों को चन्द्र से छीन नहीं पायी थी □ चाँद कितनी कोशिश कर्यों न करे, वह रात को दिन नहीं बना सकता □

लेकिन आदमी हँसता है, दुख-दर्द सभी में आदमी हँसता है □ जैसे हँसते-हँसते आदमी की प्रसन्नता थक जाती है वैसे ही कभी-कभी रोते-रोते आदमी की उदासी थक जाती है और आदमी करवट बदलता है □ ताकि हँसी की छाँह में कुछ विश्वाम कर फिर वह अँसुओं की कड़ी धूप में चल सके □

ऐसी ही एक सुबह थी जबकि चन्द्र के उदास मन में आ रहा था कि वह थोड़ी देर हँस भी ले □ बात याँ हुई थी कि उसे शेली की एक कविता बहुत पसन्द आयी थी जिसमें शैली ने भारतीय मलयज को सम्बोधित किया है □ उसने अपना शेली-कीट्स का ग्रन्थ उठाया और उसे खोला तो वही आम के अचार के दान सामने पड़ गये जो सुधा ने शरारतन डाल दिये थे □ बस वह शेली की कविता तो भूल गया और उसे याद आ गयी आम की फाँक और सुधा की शरारत से भरी शोख आँखें □ फिर तो एक के बाद दूसरी शरारत प्राणों में उठ-उठकर चन्द्र की नसों को गुदगुदाने लगी और चन्द्र उस दिन जाने क्यों हँसने के लिए व्याकुल हो उठा □ उसे ऐसा लगा जैसे सुधा की यह दूरी, यह अलगाव सभी कुछ झूँठ है □ सच तो वे सुनहले दिन थे जो सुधा की शरारतों से मुस्कराते थे, सुधा के दुलार में जगमगाते थे □ और कुछ भी हो जाये, सुधा उसके जीवन का एक ऐसा अमर सत्य है जो कभी भी डगमगा नहीं सकता □ अगर वह उदास होता है, दुःखी होता है तो वह गलत है □ वह अपने ही आर्द्ध को झूँठा बना रहा है, अपने ही सपने का अपमान कर रहा है □ और उसी दिन सुधा का खत भी आया जिसमें सुधा ने साफ-साफ तो नहीं पर इशारे से लिखा था कि वह चन्द्र के भरोसे ही किसी तरह दिन काट रही थी □ उसने सुधा को एक पत्र लिखा, जिसमें वही शरारत, वही खिलाने की बातें थीं जो वह हमेशा सुधा से करता था लेकिन जिसे वह पिछले तीन महीने में भूल गया था □

उसके बाद वह बिनती के यहाँ गया □

बिनती अपनी धोती में क्रोशिया की बेल टाँक रही थी □ “ले गिलहरी, तेरी दीदी का खत! लाओ, मिठाई खिलाओ □”

“हम काहे को खिलाएँ! आप खिलाइए जो खिले पड़े हैं आज!” बिनती बोली □

“हम! हम क्यों खिलाएँगे! यहाँ तो सुधा का नाम सुनते ही तबीयत कुढ़ जाती है!”

“अरे चलिए, आपका घर मेरा देखा है □ मुझसे नहीं बन सकते आप!” बिनती ने मुँह चिढ़ाकर कहा, “आज बड़े खुश हैं!”

“हाँ, बिनती...” एक गहरी साँस लेकर चन्द्र चुप हो गया, “कभी-कभी उदासी भी थक जाती है!” और मुँह झुकाकर बैठ गया □

“क्यों, क्या हुआ?” बिनती ने चन्द्र की बाँह में सुई चुभो दी-चन्द्र चौंक उठा □ “हमारी शक्ति देखते ही आपके घेरे पर मुर्हरम छा जाता है!”

“अजी नहीं, आपका मुख-मंडल देखकर तो आकाश में चन्द्रमा भी लज्जित हो जाता होगा, श्रीमती बिनती विदुषी!” चन्द्र ने हँसकर कहा □ आज चन्द्र बहुत खुश था □

बिनती लजा गयी और फिर उसके गालों में फूल के कटोरे खिल गये और उसने चन्द्र के कन्धे से फिर सूई चुभोकर कहा, “आपको एक बड़े मजे की बात बतानी है आज!”

“क्या?”

“फिर हँसिएगा मत! और चिढ़ाइएगा नहीं!” बिनती बोली □

“कुछ तैर ब्याह की बात होगी!” चन्द्र ने कहा □

“नहीं, ब्याह की नहीं, प्रेम की!” बिनती ने हँसकर कहा और झौंप गयी □

“अच्छा, गिलधरी को यह योग कब से?” चन्द्र ने हँसकर पूछा, “अपनी माँजी की शक्ति देखी है न, काटकर कुएँ में फेंक देंगी तुझे!”

“अब क्या करें, कोई सिर पर प्रेम मढ़ ही दे तो!” बिनती ने बड़े आत्मविश्वास से कहा □ थी बड़ी खुले स्वभाव की लड़की □

“आखिर कौन अभागा है वह! जरा नाम तो सुनें □” चन्द्र बोला □

“हमारे महाकवि मास्टर साहब □” बिनती ने हँसकर कहा □

“अच्छा, यह कब से? तूने पढ़ते तो कभी बताया नहीं □”

“अब तो जाकर हमें मालूम हुआ □ पढ़ले सोचा दीदी को लिख दें □ फिर कहा वहाँ जाने किसके हाथ में चिन्ही पढ़े □ तो सोचा तुम्हें बता दें!”

“हुआ क्या आखिर?” चन्द्र ने पूछा □

“बात यह हुई कि पढ़ते तो हम दीदी के साथ पढ़ते थे तब तो मास्टर साहब कुछ नहीं बोलते थे, इधर जबसे हम अकेले पढ़ने लगे तब से कविताएँ समझाने के बहाने दुनिया-भर की बातें करते रहे □ एक बार स्कन्दगुप्त पढ़ाते-पढ़ाते बड़ी ठंडी साँस लेकर बोले, काश कि आप भी देवसेना बन सकतीं □ बड़ा गुस्सा आया मुझे □ मन में आया कह दूँ कि मैं तो देवसेना बन जाती लोकिन आप अपना कवि सम्मेलन का पेशा छोड़कर स्कन्दगुप्त कैसे बन पाएँगे □ लोकिन फिर मैंने कुछ कहा नहीं □ दीदी से सब बात कह दी □ दीदी तो हैं ही लापरवाह □ कुछ कहा ही नहीं उन्होंने □ और मास्टर साहब वैसे अच्छे हैं, पढ़ाते भी अच्छा हैं, लोकिन यह फितूर जाने कैसे उनके दिमान में चढ़ गया □” बिनती बड़े सहज स्वभाव से बोली □

“लोकिन इधर क्या हुआ?” चन्द्र ने पूछा □

“अभी कल आये, एक हाथ में उनके एक मोटी-सी कॉपी थी □ दे गये तो देखा वह उनकी कविताओं का संग्रह है और उसका नाम उन्होंने रखा है 'बिनती' □ अभी आते होंगे □ क्या करें कुछ समझ में नहीं आता □ अभी तक दीदी के भरोसे हमने सब छोड़ दिया था □ वह पता नहीं कब आएँगी □”

“अच्छा लाओ, वह संग्रह हमें दे दो □” चन्द्र ने कहा, “और बिसरिया से कह देना वह चन्द्र के हाथ पड़ गया □ फिर कल सुबह तुम्हें मजा दिखलाएँगे □ लोकिन हाँ, यह पढ़ले बता दो कि तुम्हारा तो कुछ झुकाव नहीं है उधर, वरना बाद में हमें कोसो?” चन्द्र ने छेड़ते हुए कहा □

“अरे हाँ, मुसलमान भी हो तो बेहना के संग! कवियों से प्यार लगाकर कौन बवालत पाले!”

बिनती ने झौंपते हुए कहा □

दूसरे दिन सुबह पहुँचा तो बिसरिया साहब पढ़ा रहे थे □ बिसरिया की शवल पर कुछ मायूसी, कुछ परेशानी, कुछ बिनती थी □ उसको बिनती ने बता दिया कि संग्रह चन्द्र के पास पहुँच गया है □ चन्द्र को देखते ही वह बोला, “अरे कपूर, क्या हाल है?” और उसके बाद अपने को निर्दोष बताने के लिए फौरन बोला, “कहो, हमारा संग्रह देखा है?”

“हाँ देखा है, जरा आप इन्हें पढ़ा लीजिए □ आपसे कुछ जरूरी बातें करनी हैं □” चन्द्र ने इतने कठोर रवर में कहा कि बिसरिया के दिल की धड़कनें ढूबने-सी लर्णी □ वह काँपती हुई आवाज में बहुत मुश्किल से अपने को सम्भालते हुए बोला, “कैसी बातें? कपूर, तुम कुछ गलत समझ रहे हो □”

कपूर एक उपेक्षा की हँसी हँसा और चला गया □ डॉक्टर साहब पूँजा करके उठे थे □ दोनों में बातें होती रहीं □ उनसे मालूम हुआ कि अगले महीने में सम्भवतः चन्द्र की नियुक्ति हो जाएगी और तीन दिन बाद डॉक्टर साहब खुद सुधा को लाने के लिए शाहजहाँपुर जाएँगे □ उन्होंने बुआजी को पत्र लिखा है कि यदि वह आ जाए तो अच्छा है, वरना चन्द्र को दो-तीन दिन बाद यहाँ रहना पड़ेगा क्योंकि बिनती अफेली है □ चन्द्र की बात दूसरी है लेकिन और लोगों के भयोंसे डॉक्टर साहब बिनती को अफेले नहीं छोड़ सकते □

अविश्वास आदमी की प्रवृत्तियों को जितना बिगड़ता है, विश्वास आदमी को उतना ही बनाता है □ डॉक्टर साहब चन्द्र पर जितना विश्वास करते थे, सुधा चन्द्र पर जितना विश्वास करती थी और इधर बिनती उस पर जितना विश्वास करने लर्नी थी उसके कारण चन्द्र के चरित्र में इतनी दृढ़ता आ गयी थी कि वह फौलाद बन गया था □ ऐसे अवसरों पर जब मनुष्य को गम्भीरतम उत्तरदायित्व सौंपा जाता है तब ख्वभावतः आदमी के चरित्र में एक विचित्र-सा निखार आ जाता है □ यह निखार चन्द्र के चरित्र में बहुत उभरकर आया था और यहाँ तक कि बुआजी अपनी लड़की पर अविश्वास कर सकती थीं, वह भी चन्द्र को देवता ही मानती थीं, बिनती पर और चाहे जो बन्धन हो लेकिन चन्द्र के हाथ में बिनती को छोड़कर वे निश्चिन्त थीं □

डॉक्टर साहब और चन्द्र बैठे बातें कर ही रहे थे कि बिनती ने आकर कहा, “चलिए, मास्टर साहब आपका इन्तजार कर रहे हैं!” चन्द्र उठ खड़ा हुआ □ रस्ते में बिनती बोली, “हमसे बहुत नाराज हैं □ कहते हैं तुम्हें हम ऐसा नहीं समझते थे!” चन्द्र कुछ नहीं बोला □ जाकर बिसरिया के सामने कुर्सी पर बैठ गया □ “तुम जाओ, बिनती!” बिनती चली गयी तो चन्द्र ने कहा, बहुत गम्भीर रवरों में, “बिसरिया साहब, आपका संग्रह देखकर बहुत खुशी हुई लेकिन मेरे मन में सिर्फ एक शंका है □ यह 'बिनती' नाम के क्या माने हैं?”

बिसरिया ने अपने गले की टाई ठीक की, वह गरमी में भी टाई लगाता था, और दिन में नाइट कैप पहनता था □ टाई ठीक कर, खँखारकर बोला, “मैं भी यही समझता था कि आपको यह गलत-

फहमी होनी □ लेकिन वास्तविक बात यह है कि मुझे मध्यकाल की कविता बहुत पसंद है, खासतौर में उसमें बिनती (प्रार्थना) शब्द बड़ा मधुर है □ मैंने यह संग्रह तो बहुत पहले तैयार किया था □ मुझे बड़ा ताजजुब हुआ जब मैं बिनती से मिला □ मैंने उनसे कहा कि यह संग्रह भी बिनती नाम का है □ फिर मैंने उन्हें लाकर दिखाला दिया □”

चन्द्र मुसकराया और मन-ही-मन कहा, ‘है बिसरिया बहुत चालाक □ लेकिन ऐरे मैं हार नहीं मान सकता □’ और बहुत गम्भीर होकर बैठ गया □

“तो यह संग्रह इस लड़की के नाम पर नहीं है?”

“बिल्कुल नहीं □”

“और बिनती के लिए आपके मन में कहीं कोई आकर्षण नहीं?”

“बिल्कुल नहीं □ छिः, आप मुझे क्या समझते हैं □” बिसरिया बोला □

“छिः, मैं भी कैसा आदमी हूँ, माफ करना बिसरिया! मैंने व्यर्थ में शक किया □”

बिसरिया यह नहीं जानता था कि यह दाँव इतना सफल होगा □ वह खुशी से फूल उठा □ सहसा चन्द्र ने एक गहरी साँस ली □

“क्या बात है चन्द्र बाबू?” बिसरिया ने पूछा □

“कुछ नहीं बिसरिया, आज तक मुझे तुम्हारी प्रतिभा, तुम्हारी भावना, तुम्हारी कला पर विश्वास था, आज से उठ गया □”

“क्यों?”

“क्यों क्या? अगर बिनती-जैसी लड़की के साथ रहकर भी तुम उसके आनंदर्य से अपनी कला को अभिसिंचित न कर सके तो तुम्हारे मन में कलात्मकता है; यह मैं विश्वास नहीं कर पाता □ तुम जानते हो, मैं पुराने विचारों का संकीर्ण, बड़ा बुजुर्ग तो हूँ नहीं, मैं भी भावनाओं को समझता हूँ □ मैं सौन्दर्य-पूजा या प्यार को पाप नहीं समझता और मुझे तो बहुत खुशी होती यह जानकर कि तुमने ये कविताएँ बिनती पर लिखी हैं, उसकी प्रेरणा से लिखी हैं □ यह मत समझना कि मुझे इससे जरा भी बुरा लगता □ यह तो कला का सत्य है □ पाश्चात्य देशों में तो लोग हर कवि को प्रेरणा देने वाली लड़कियों की खोज में वर्षों बिता देते हैं, उसकी कविता से ज्यादा महत्व उसकी कविता के पीछे रहने वाले व्यक्तित्व को देते हैं □ हिन्दोस्तान में पता नहीं क्यों हम नारी को इतना महत्वहीन समझते हैं, या डरते हैं, या हमें इतना नौंतिक साफ़स नहीं है □ तुम्हारा स्वभाव, तुम्हारी प्रतिभा किसी छालत में मुझे विदेश के किसी कवि से कम नहीं लगती □ मैंने सोचा था, जब तुम अपनी कविताओं के प्रेरणात्मक व्यक्तित्व का नाम घोषित करोगे तो सारी दुनिया बिनती को और हमारे परिवार को जान जाएगी □ लेकिन खैर, मैंने गलत समझा था कि बिनती तुम्हारी प्रेरणा-बिन्दु थी □” और चन्द्र चुपचाप गम्भीरता से बिसरिया के संग्रह के पृष्ठ उलटने लगा □

बिसरिया के मन में कितनी उथल-पुथल मची हुई थी □ चन्द्र का मन इतना विशाल है, यह उसे कभी नहीं मालूम था □ यहाँ तो कुछ छिपाने की जरूरत ही नहीं और जब चन्द्र इतनी स्पष्ट बातें कर रहा है तो बिसरिया क्यों छिपाये □

“कपूर, मैं तुमसे कुछ नहीं छिपाऊँगा □ मैं कह नहीं सकता कि बिनती जी मेरे लिए क्या है □ शेवसपियर की मिराण्डा, प्रसाद की देवसेना, दाँते की बीएनिस, कीट्स की फैनी और सूर की राधा से बढ़कर माधुर्य अगर मुझे कहीं मिला है तो बिनती मैं □ इतना, इतना डूब गया मैं बिनती

में कि एक कविता भी नहीं लिख पाया। मेरा संग्रह छपने जा रहा था तो मैंने सोचा कि इसका नाम ही क्यों न 'बिनती' रखूँ।"

चन्द्र ने बड़ी मुश्किल से अपनी हँसी रोकी। दरवाजे के पास छिपी खड़ी हुई बिनती खिलखिलाकर हँस पड़ी। चन्द्र बोला, "नाम तो 'बिनती' बहुत अच्छा सोचा तुमने, लेकिन सिर्फ एक बात है। मेरे जैसे विचार के लोग सभी नहीं होते। अगर घर के और लोगों को यह मालूम हो जया, मसलन डॉक्टर साहब को, तो वह न जाने क्या कर डालेंगे। इन लोगों को कविता और उसकी प्रेरणा का महत्व ही नहीं मालूम। उस हालत में अगर तुम्हारी बहुत बेइज्जती हुई तो न हम कुछ बोल पाएँगे न बिनती। डॉक्टर साहब पुलिस को सौंप दें, यह अच्छा नहीं लगता। वैसे मेरी राय है कि तुम बिनती ही नाम रखो; बड़ा जया नाम है; लेकिन यह समझ लो कि डॉक्टर साहब बहुत सख्त हैं इस मामले में।"

बिसरिया की समझ में नहीं आता था कि वह क्या करे। थोड़ी देर तक सिर खुजलाता रहा, फिर बोला, "क्या राय है कपूर, तुम्हारी? अगर मैं कोई दूसरा नाम रख दूँ तो कैसा रहेगा?"

"बहुत अच्छा रहेगा और सुरक्षित रहेगा। अभी अगर तुम बदनाम हो जये तो आगे तुम्हारी उन्नति के सभी मार्ग बन्द हो जाएँगे। आदमी प्रेम करे मगर जरा सोच-समझकर; मैं तो इस पक्ष में हूँ।"

"आवना को कोई नहीं समझता इस दुनिया में। कोई नहीं समझता, हम कलाकारों की कितनी मुसीबत है।" एक गहरी साँस लेकर बिसरिया बोला, "लेकिन ऐसे! अच्छा तो कपूर, क्या राय है तुम्हारी? मैं क्या नाम रखूँ इसका?"

चन्द्र गम्भीरता से सिर झुकाये थोड़ी देर तक सोचता रहा। फिर बोला, "तुम्हारी कविताओं में बहुत ऐसे हैं कैसा रहे अगर तुम इसका नाम 'गड़ेरियाँ' रखो!"

"क्या?" बिसरिया ताज्जुब से बोला।

"हाँ-हाँ गड़ेरियाँ, मेरा मतलब है गन्ने की गड़ेरियाँ!" दरवाजे के पीछे बिनती से न रहा जया और खिलखिलाकर हँस पड़ी और सामने आ गयी। चन्द्र भी अट्टाहास कर पड़ा।

बिसरिया क्षण-भर आँख फाड़े दोनों की ओर देखता रहा। उसके बाद वह ज्यों ही मजाक समझा, उसका चेहरा लाल हो गया। हैट उठाकर बोला, "अच्छा, आप लोग मजाक बना रहे थे मेरा।

कोई बात नहीं, मैं देखूँगा। मिस्टर कपूर, आप अपने को क्या समझते हैं?" वह चल दिया।

"अऐ, सुनो बिसरिया!" चन्द्र ने पुकारा, वह हँसी नहीं रोक पा रहा था। बिसरिया मुड़ा। मुड़कर बोला, "कल से मैं पढ़ाने नहीं आ सकता। मैं आपकी शक्ति भी नहीं देखना चाहता।"

उसने बिनती से कहा।

"तो मुँह फेरकर पढ़ा दीजिएगा।" चन्द्र बोला। बिनती फिर हँस पड़ी। बिसरिया ने मुड़कर बड़े गुरसे से देखा और पैर पटकते हुए चला गया।

"बैचारे कवि, कलाकार आज की दुनिया में प्यार भी नहीं कर पाते।" चन्द्र ने कहा और दोनों की हँसी बहुत देर तक गूँजती रही।

25

अगस्त की उदास शाम थी, पानी रिमझिमा रहा था और डॉक्टर शुकला के सूने बँगले में बरामदे में कुर्सी डाले, लॉन पर छोटे-छोटे गड्ढों में पंख धोती और कुलते करती हुई गौरेयों की तरफ अपलक देखता हुआ चन्द्र जाने किन खयालों में डूबा हुआ था। डॉक्टर साहब सुधा को लिवाने के लिए शाहजहाँपुर गये थे। बिनती भी जिद करके उनके साथ गयी थी। वहाँ से ये लोग दिल्ली घूमने के लिए चले गये थे लेकिन आज पन्द्रह रोज हो गये उन लोगों का कोई भी खत नहीं आया था। डॉक्टर साहब ने ब्यूरो को मठज एक अर्जी भेज दी थी। चन्द्र को डॉक्टर साहब के जाने के पहले ही कॉलेज में जगह मिल गयी थी और उसने वलास लेने शुरू कर दिये थे। वह अब इसी बँगले में आ गया था। सुबह तो वलास के पाठ की तैयारी करने और नोट्स बनाने में कट जाती थी, दोपहर कॉलेज में कट जाती थी लेकिन शामें बड़ी उदास गुजरती थीं और फिर पन्द्रह दिन से सुधा का कोई भी खत नहीं आया। वह उदास बैठा सोच रहा था।

लेकिन यह उदासी थी, दुख नहीं था। और वह भी उदासी, एक देवता की उदासी जो दुख भरी न होकर सुन्दर और सुकुमार अधिक होती है। एक बात जरूर थी। जब कभी वह उदास होता था तो जाने क्यों वह यह छमेशा सोचने लगता था कि उसके जीवन में जो कुछ हो गया है उस पर उसे गर्व करना चाहिए जैसे वह अपनी उदासी को अपने गर्व से मिटाने का प्रयास करता था। लेकिन इस वक्त एक बात रह-रहकर उभर आती थी उसके मन में, 'सुधा ने खत क्यों नहीं लिखा?'

पानी बिल्कुल बन्द हो गया था। पश्चिम के दो-एक बादल खुल गये थे। और पके जामुन के रंग के एक बहुत बड़े बादल के पीछे से डूबते सूरज की उदास किरणें झाँक रही थीं। इधर की ओर एक इन्द्रधनुष खिल गया था जो मोटर गैरेज की छत से उठकर दूर पर युविलिएट्स की लम्बी शाखों में उलझ गया था।

इतने में छाता लगाये पोस्टमैन आया, उसने पोर्टिको में अपने जूतों में लगी कीचड़ झाड़ी, पैर पटके और किरमिच के झोले से खत निकाले और सीढ़ी पर फैला दिये। उनमें से ढँढँकर तीन लिफाफे निकाले और चन्द्र को दे दिये। चन्द्र ने लपककर लिफाफे ले लिये। पहला लिफाफा बुआ का था बिनती के नाम, दूसरा था ओरियंटल इन्ड्योरेन्स का लिफाफा डॉक्टर साहब के नाम और तीसरा एक सुन्दर-सा नीला लिफाफा। यह सुधा का होगा। पोस्टमैन जा चुका था। उसने इतने प्यार से लिफाफे को चूमा जितने प्यार से डूबता हुआ सूरज नीली घटाओं को चूम रहा था। "पगली कहीं की! परेशान कर डालती है। यहाँ थी तो वही आदत, वहाँ है तो वही आदत!" चन्द्र ने मन में कहा और लिफाफा खोल डाला।

लिफाफा पम्मी का था, मसूरी से आया। उसने झल्लाकर लिफाफा फेंक दिया। सुधा कितनी लापरवाह है। वह जानती है कि चन्द्र को यहाँ कैसा लग रहा होगा। बिनती ने बता दिया होगा फिर भी वही लापरवाही! मारे गुस्से के...

थोड़ी देर बाद उसने पम्मी का खत पढ़ा □ छोटा-सा खत था □ पम्मी अभी मसूरी में ही है, अवृत्तबार तक आएगी □ लगभग सभी यात्री जा चुके हैं लेकिन उसे पहाड़ों की बरसात बहुत अच्छी लग रही है □ बर्टी इलाहाबाद चला गया है □ उसके साथ वहाँ से एक पहाड़ी ईसाई लड़की भी गयी है □ बर्टी कहता है कि वह उसके साथ शादी करेगा □ बर्टी अब बहुत स्वस्थ है □ चन्द्र चाहे तो जाकर बर्टी से मिल ले □

सुधा के खत के न आने से चन्द्र के मन में बहुत बेचैनी थी □ उसे ठीक से मालूम भी नहीं हो पा रहा था कि ये लोग हैं कहाँ? बर्टी के आने की खबर मिलने पर उसे सन्तोष हुआ, चलो एक दिन बर्टी से ही मिल आएँगे, अब देखें कैसे हैं वह?

तीसरे या चौथे दिन जब अकस्मात पानी बन्द था तो वह कार लेकर बर्टी के यहाँ गया □ बरसात में इलाहाबाद की सिविल लाइन्स का सौन्दर्य और भी निखर आता है □ रुखे-सूखे फुटपाथों और मैदानों पर धास जम जाती है; बँगले की उजाड़ चहारदीवारियों तक हरी-भरी हो जाती है □ लम्बे और घने पेड़ और झाड़ियाँ निखरकर, धुलकर हरे मखमली रंग की हो जाती हैं और कोलतार की सड़कों पर थोड़ी-थोड़ी पानी की चादर-सी लहरा उठती है जिसमें पेड़ों की हरी छायाएँ बिछ जाती हैं □ बँगले में पली हुई बतखों के दल सङ्क पर चलती हुई मोटरों को रोक लेते हैं और हर बँगले में से रेडियो या ग्रामोफोन के संगीत की लहरें मचलती हुई वातावरण पर छा जाती हैं □

कॉलेज से लौटकर, एक प्याला चाय पीकर, कार लेकर चन्द्र बर्टी के यहाँ चल दिया □ वह बहुत दिन बाद बर्टी को देखने जा रहा है □ जिन व्यक्तियों को उसने अपने जीवन में देखा था, बर्टी शायद उन सभी से निराला था, अद्भुत था □ लेकिन कितना अभागा था □ नहीं, अभागा नहीं कमजोर था बर्टी □ और वही क्या कमजोर था यह सारी दुनिया कितनी कमजोर है □

बर्टी का बँगला आ गया था □ वह उतरकर अन्दर गया □ बाहर कोई नहीं था □ बरामदे में एक पिंजरा टैंगा हुआ था जिसमें एक बहुत छोटा तोते का बच्चा टैंगा था □ चन्द्र भीतर जाने में हिचक रहा था क्योंकि एक तो पम्मी नहीं थी और दूसरे कोई और लड़की भी बर्टी के साथ आयी थी, बर्टी की भावी पत्नी □ चन्द्र ने आवाज दी □ अन्दर कोई बहुत भारी पुरुष-स्वर में एक साधारण गीत गा रहा था □ चन्द्र ने फिर आवाज दी □ बर्टी बाहर आया □ चन्द्र उसे देखकर दंग रह गया, बर्टी का चेहरा भर गया था, जवानी लौट आयी थी, पीलेपन की बजाय चेहरे पर खून ढौड़ गया था, सीना अभर आया था □ बर्टी खाकी रंग का कोट, बहुत मोटा खाकी हैट, खाकी ब्रिवेज, शिकारी बूट पहने हुए था और कन्धे पर बन्दूक लटक रही थी □ वह आया ड्राइंगरूम के दरवाजे पर पीठ झुकाकर एक हाथ से बन्दूक पकड़कर और एक हाथ आँखों के आगे रखकर उसने इस तरह देखा जैसे वह शिकार हूँढ़ रहा हो □ चन्द्र के प्राण सूख गये □ उसने मन-ही-मन सोचा, पहली बार तो वह कुश्ती में बर्टी से जीत गया था, लेकिन अबकी बार जीतना मुश्किल है □ कहाँ बेकार फँसा आकर □ उसने घबरायी हुई आवाज में कहा-

“यह मैं हूँ मिस्टर बर्टी, चन्द्र कपूर, पम्मी का मित्र!”

“हाँ-हाँ, मैं जानता हूँ □” बर्टी तनकर खड़ा हो गया और हँसकर बोला, “मैं आपको भूला नहीं; मैं तो आपको यह दिखला रहा था कि मैं पागल नहीं हूँ, शिकारी हो गया हूँ □” और उसने चन्द्र के कन्धे पकड़कर इतना जोर से झकझोर दिया कि चन्द्र की पसलियाँ चरमरा उठीं □ “आओ!” उसने चन्द्र के कन्धे ढबाकर बरामदे की ही कोच पर बिठा दिया और सामने कुर्सी पर बैठता हुआ बोला, “मैं तुम्हें अन्दर ले चलता, लेकिन अन्दर जेनी है और एक मेरा मित्र □ दोनों बातें कर

रहे हैं□ आज जेनी की सालगिरह है□ तुम जेनी को जानते हो न? वह तर्हाई के कर्खे में रहती थी□ मुझे मिल गयी□ बहुत खराब औरत है! मैं तन्दुरुस्त हो गया हूँ न!”

“बहुत, मुझे ताज्जुब है कि तन्दुरुस्ती के लिए तुमने क्या किया तीन महीने तक!”

“नफरत, मिस्टर कपूर! औरतों से नफरत□ उससे ज्यादा अच्छा टॉनिक तन्दुरुस्ती के लिए कोई नहीं है□”

“तोकिन तुम तो शादी करने जा रहे हो, लड़की ते आये हो वहाँ से□”

“अकेली लड़की नहीं, मिस्टर! मैं वहाँ से दो चीज लाया हूँ□ एक तो यह तोते का बच्चा और एक जेनी, वही लड़की□ तोते को मैं बहुत प्यार करता हूँ, यह बड़ा हो जाएगा, बोलने लगेगा तो इसे गोली मार दूँगा और लड़की से मैं बहुत नफरत करता हूँ, इससे शादी कर लूँगा! क्यों, है न ठीक? इसको शिकार का चाव कहते हैं और अब मैं शिकारी हूँ न!”

चन्द्र हाँ कहे या न कहे□ अभी बर्टी का दिमाग बिल्कुल वैसा ही है, इसमें कोई शक नहीं□ वह क्या बात करे? अन्त में बोला-

“यह बन्दूक तो उतारकर रखिए□ हमेशा बाँधे रहते हैं!”

“हाँ, और क्या? शिकार का पहला सिद्धान्त है कि जहाँ खतरा हो, जंगली जानवर हाँ वहाँ कभी बिना बन्दूक के नहीं जाना चाहिए?” और बहुत धीमे से चन्द्र के कान में बर्टी बोला, “तुम जानते हो चन्द्र, एक औरत है जो चौबीस घंटे घर में रहती है□ मैं तो एक क्षण को बन्दूक अलग नहीं रखता□”

सहसा अन्दर से कुछ गिरने की आवाज आयी, कोई चीखा और लगा जैसे कोई चीज पियानो पर गिरी और परदों को तोड़ती हुई नीचे आ गयी□ फिर कुछ झगड़ों की आवाज आयी□

चन्द्र चौंक उठा, “क्या बात है बर्टी, देखो तो!”

बर्टी ने हाथ पकड़कर चन्द्र को खींच लिया-”बैठो, बैठो! अन्दर मेरे मित्र और जेनी सालगिरह मना रहे हैं, अन्दर मत जाना!”

“तोकिन यह आवाजें कैसी हैं?” चन्द्र ने चिन्ता से पूछा□

“शायद वे लोग प्रेम कर रहे होंगे!” बर्टी बोला और निश्चिन्तता से बैठ गया□

और क्षण-भर बाद उसने अजब-सा वृश्य देखा□ एक बर्टी का ही हमउम्र आदमी हाथ से माथे का खून पौछता हुआ आया□ वह नशे में चूर था□ और बहुत भट्टी गालियाँ देता हुआ चला जा रहा था□ वह गिरता-पड़ता आया और उसने बर्टी को देखते ही धूँसा ताना-”तुमने मुझे धोखा दिया□ मुझसे पचास रुपये उपहार ले लिया...मैं अभी तुम्हें बताता हूँ□” चन्द्र स्वाध था□ क्या करे क्या न करे? इतने में अन्दर से जेनी निकली□ लम्बी-तगड़ी, कम-से-कम तीस वर्ष की औरत□ उसने आते ही पीछे से उस आदमी की कमीज पकड़ी और उसे सीढ़ी से नीचे कीचड़ में ढकेल दिया और सैकड़ों गाली देते हुए बोली, “जा सीधे, वरना हड्डी नहीं बचेगी यहाँ□” वह फिर उठा तो खुद भी नीचे कूद पड़ी और घसीटती हुई दरवाजे के बाहर ढकेल आयी□

बर्टी साँस रोके अपराधी-सा खड़ा था□ वह लौटी और बर्टी का कालर पकड़ लिया-”मैं निर्दोष हूँ! मैं कुछ नहीं जानता!” सहसा जेनी ने चन्द्र की ओर देखा-”हूँ, यह भी तुम्हारा दोस्त है□ अभी बताती हूँ!” और जो वह चन्द्र की ओर बढ़ी तो चन्द्र ने मन-ही-मन पम्मी का स्मरण किया□ कहाँ फँसाया उस कम्बख्त ने खत लिखकर□ ज्यों ही जेनी ने चन्द्र का कालर पकड़ा कि बर्टी बड़े कातर स्वर में बोला, “उसे छोड़ दो! वह मेरा नहीं पम्मी का मित्र है!” जेनी रुक गयी□ “तुम

पम्मी के मित्र हो? अच्छा बैठ जाओ, बैठ जाओ, तुम शरीफ आदमी मालूम पड़ते हो□ मगर आगे से तुम्हारा कोई मित्र आया तो मैं उसकी हृत्या कर डालूँगी□ समझे कि नहीं, बर्टी?”

बर्टी ने सिर हिलाया, “हाँ, समझ गये!” जेनी अन्दर चल दी, फिर सहसा बाहर आयी और बर्टी को पकड़कर घसीटती हुई बोली, “पानी बरस रहा है, इतनी सर्दी बढ़ रही है और तुमने खेटर नहीं पढ़ना, चलो पढ़नो, मरने की ठानी है□ मैं साफ बताये देती हूँ चाहे दुनिया इधर की उधर हो जाये, मैं बिना शारी किये मरने नहीं ढूँगी तुम्हें□” और वह बकरे की तरह बर्टी का कान पकड़कर अन्दर घसीट ले गयी□

चन्द्र ने मन में कहा, यह कुछ इस रहस्यमय बँगले का असर है कि हरेक का दिमान खराब ही मालूम देता है□ दो मिनट बाद जब बर्टी लौटा तो उसके गले में गुलबजंद, ऊनी खेटर, ऊनी मोजे थे□ वह हाँफता हुआ आकर बैठ गया□

“मिस्टर कपूर! तुम्हें मानना होगा कि यह लड़की, यह डाइन जेनी बहुत क्रूर है□”

“मानता हूँ, बर्टी! सोलहों आने मानता हूँ□” चन्द्र ने मुसकराहट रोककर कहा, “लेकिन यह झगड़ा क्या है?”

“झगड़ा क्या होता है? औरतों को समझना बहुत मुश्किल है□”

“इस औरत के फन्डे में फँसे कैसे तुम?” चन्द्र ने पूछा□

“श्री! श्री!” होठ पर हाथ रखकर धीरे बोलने का इशारा करते हुए बर्टी ने कहा, “धीरे बोलो□ बात ऐसी हुई कि जब मैं तराई में शिकार खेल रहा था तो एक बार अकेले छूट गया! यह एक पैशनर फॉरेस्ट गार्ड की अनब्याही लड़की थी□ शिकार में बहुत होशियार□ मैं भटकते हुए पहुँचा तो इसका बाप बीमार था□ मैं रुक गया□ तीसरे दिन वह मर गया□ उसे जाने कौन-सा शेन था कि उसका चेहरा बहुत डरावना हो गया था और पेट फूल गया था□ शत को इसे बहुत डर लगा तो यह मैरे पास आकर लेट गयी□ बीच में बन्दूक रखकर हम लोग सो गये□ शत को इसने बीच से बन्दूक हटा दी और अब वह कहती है कि मुझसे ब्याह करेगी और नहीं करेगा तो मार डालेगी□ पम्मी भी मुझसे बोली-तुम्हें अब ब्याह करना ही होगा□ अब मजबूरी है, मिस्टर कपूर!”

चन्द्र चुप बैठा सोच रहा था, कैसी विवित्र जिंदगी है इस अभागे की! मानो प्रकृति ने सारे आश्वर्य इसी की किस्मत के लिए छोड़ रखे थे□ फिर बोला-

“यह आज क्या झगड़ा था?”

“कुछ नहीं□ आज इसकी सालगिरह थी□ यह बोली, “मुझे कुछ उपहार दो□” मैं बहुत देर तक सोचता रहा□ क्या दूँ इसे? कुछ समझ ही मैं नहीं आया□ बहुत देर सोचने के बाद मैंने सोचा-मैं तो इसका पति होने जा रहा हूँ□ इसे एक प्रेमी उपहार में दे दूँ□ मैंने एक मित्र से कहा कि तुम मेरी भावी पत्नी से आज शाम को प्रेम कर सकते हो? वह राजी हो गया, मैं ले आया□”

चन्द्र जोर से हँस पड़ा□

“हँसो मत, हँसो मत, मिस्टर कपूर!” बर्टी बहुत गम्भीर बनकर बोला, “इसका मतलब यह है कि तुम औरतों को समझते नहीं□ देखो, एक औरत उसी चीज को ज्यादा पसन्द करती है, उसी के प्रति समर्पण करती है जो उसकी जिंदगी में नहीं होता□ मसलन एक औरत है जिसका ब्याह हो गया है, या होने वाला है, उसे यदि एक नया प्रेमी मिल जाये तो उसकी प्रसन्नता का ठिकाना नहीं रहता□ वह अपने पति की बहुत कम परवा करेगी अपने प्रेमी के सामने□ और अगर वर्वाँसी

लड़की है तो वह अपने प्रेमी की भावनाओं की पूरी तौर से हत्या कर सकती है यदि उसे एक पति मिल जाये तो! मैं तो समझता हूँ कि कोई भी पति अपनी पत्नी को यदि कोई अच्छा उपहार दे सकता है तो वह है एक नया प्रेमी और कोई भी प्रेमी अपनी रानी को यदि कोई अच्छा उपहार दे सकता है तो वह यह कि उसे एक पति प्रदान कर दें। तुम्हारी अभी शादी तो नहीं हुई?”

“न!”

“तो तुम प्रेम तो जखर करते होंगे... न, सिर मत हिलाओ... मैं यकीन नहीं कर सकता...। मैं इतनी सलाह तुम्हें दे रहा हूँ, कि अबर तुम किसी लड़की से प्यार करते हो तो ईश्वर के बास्ते उससे शादी मत करना-तुम मेरा किस्सा सुन चुके हो। अबर टिल से प्यार करना चाहते हो और चाहते हो कि वह लड़की जीवन-भर तुम्हारी कृतज्ञ रहे तो तुम उसकी शादी करा देना... यह लड़कियों के सेक्स जीवन का अनितम सत्य है...। हाँ! हाँ! हाँ!” बर्टी हँस पड़ा।

चन्द्र को लगा जैसे आग की लपट उसे तपा रही है। उसने भी तो यही किया है सुधा के साथ जिसे बर्टी कितने विवित्र खरों में कह रहा है। उसे लगा जैसे इस प्रेत-लोक में सारा जीवन विकृत दिखाई देता है। वहाँ साधना की पवित्रता भी कीचड़ और पागलपन में उलझकर गंदी हो जाती है। छिः, कठाँ बर्टी की बातें और कठाँ उसकी सुधा...

वह उठ खड़ा हुआ। जल्दी से विदा माँगकर इस तरह भागा जैसे उसके पैरों के नीचे अंगारे छिपे हों।

फिर उसे नींद नहीं आयी। चैन नहीं आया। यत को सोया तो वह बार-बार चौंक-सा उठा। उसने सपना देखा, एक बहुत बड़ा कपूर का पटाड़ है। बहुत बड़ा। मुलायम कपूर की बड़ी-बड़ी चट्ठानें और इतनी पवित्र खुशबू कि आदमी की आत्मा बेले का फूल बन जाये। वह और सुधा उन सौरभ की चट्ठानों के बीच चढ़ रहे हैं। केवल वह है और सुधा... सुधा सफेद बादलों की साड़ी पहने हैं और चन्द्र किरनों की चादर लपेटे हैं। जहाँ-जहाँ चन्द्र जाता है, कपूर की चट्ठानों पर इन्द्रधनुष खिल जाते हैं और सुधा अपने बादलों के आँचल में इन्द्रधनुष के फूल बटोरती चलती है।

सहसा एक चट्ठान हिली और उसमें से एक भयंकर प्रेत निकाला। एक सफेद कंकाल-जिसके हाथ में अपनी खोपड़ी और एक हाथ में जलती मशाल और उस मुंडहीन कंकाल ने खोपड़ी हाथ में लेकर चन्द्र को दिखायी। खोपड़ी हँसी और बोली, “देखो, जिंदगी का अनितम सत्य यह है। यह!” और उसने अपने हाथ की मशाल ऊँची कर दी। “यह कपूर का पटाड़, यह बादलों की साड़ी, यह किरनों का परिधान, यह इन्द्रधनुष के फूल, यह सब झूँठे हैं। और यह मशाल, जो अपने एक स्पर्श में इस सबको पिघला देगी।”

और उसने अपनी मशाल एक ऊँचे शिखर से छुआ दी। वह शिखर धधक उठा। पिघलती हुई आग की एक धार बरसाती नदी की तरह उमड़कर बहने लगी।

“भागो, सुधा!” चन्द्र ने चीखकर कहा, “भागो!”

सुधा भागी, चन्द्र भागा और वह पिघली हुई आग की महानदी लहराते हुए अजगर की तरह उन्हें अपनी गुंजलिका में लपेटने के लिए चल पड़ी। शैतान हँस पड़ा, “हाँ! हाँ! हाँ!” चन्द्र ने देखा, सुधा शैतान की गोद में थी।

चन्द्र चौंककर जाग गया। पानी बंद था लैकिन घनघोर अँधेरा था। और पिशाचनी की तरह पागल हवा पेड़ों को झकझोर रही थी जैसे युग के जगे हुए विश्वासों को उखाड़ फेंकना चाहती

हो□ चन्द्र काँप रहा था, उसका माथा पसीने से तर था□
वह उठकर नीचे आया□ उसके कदम ठीक नहीं पड़ रहे थे□ बरामदे की बती जलायी□
महराजिन उठी-”का है भइया!” उसने पूछा□
“कुछ नहीं, अन्दर सोऊँगा□” चन्द्र ने कहा और सुधा के कमरे में जाकर बती जलायी□ सुधा
की चारपाई पर लेट गया□ फिर उठा, चारों ओर के दरवाजे बन्द कर दिये कि कहीं कोई फिर
ऐसा सपना बाहर के भयंकर अँधेरे में से न चला आये□

26

लेकिन बर्टी की बातों से अन्दर-ही-अन्दर उसके मन में जाने कहाँ क्या टूट गया जो फिर बन नहीं पाया ॥ अभी तक उसे अपने पर गर्व था, विश्वास था, अब कभी-कभी वह अपने व्यक्तित्व का विश्लेषण करने लगा था ॥ अब वह कभी-कभी अपने विश्वासों पर सिर ॐचा करने के बजाय उन्हें सामने फेंक देता और एक निरपेक्ष वैज्ञानिक की तरह उनकी चीर-फाड़ करता, उनकी शत-परीक्षा किया करता ॥ अभी तक उसके विश्वास का सम्बल था, अब किसी ने उसे तर्क का अस्त्र-शस्त्र दे दिया था ॥ जाने किस रक्षासी प्रेरणा से उसने अपनी आत्मा को चीरना शुरू किया ॥ और इस तर्क-वितर्क और आविश्वास के भयंकर जल-प्रलय की एक लहर ने उसे एक दिन नरक के किनारे ले जा पटका ॥

सुधा का खत आया था ॥ दिल्ली में पापा अपने कुछ काम से रुके थे और सुधा की तबीयत खराब हो गयी थी ॥ अब वह दो-तीन रोज में आ जाएगी ॥

लेकिन चन्द्र के मन पर एक अजब-सा असर हुआ था इस खत का ॥ सुधा का पत्र नहीं आया था, सुधा दूर थी तब वह खुश था, वह उल्लसित था ॥ सुधा का पत्र आते ही सहसा वह उदास हो गया ॥ उदास तो क्या उसे उबकाई-सी आने लगी ॥ उसे यह सब सहसा, पता नहीं एक नाटक-सा लगने लगा था, एक बहुत सस्ता, नीचे स्तर का नाटक ॥ उसे लगता था-ये सब चारों ओर का त्याग, साधन, सौन्दर्य, यह सब झूठ है ॥ सुधा भी अन्ततोन्त्रा वही साधारण लड़की है जो कवौरे जीवन में पति और विवाहित जीवन में प्रेमी की भूखी होती है ॥

वह भी शैतान से पूर्णतया हारा नहीं था ॥ वह लड़ने की कोशिश करता था ॥ लेकिन वह हार रहा था, यह भी उसे मालूम था ॥ और चन्द्र के जिस गर्व ने उसकी जीत में साथ दिया था, वही गर्व उसकी हार में साथ दे रहा था ॥ उसने मन में सोच लिया कि वह सुधा से, सभी लड़कियों से, इस सारे नाटक से नफरत करता है ॥ सुधा का विवाह होना ही था, सुधा को विवाह करना था, सुधा के आँशु झूठे थे, अगर चन्द्र सुधा को न भी समझाता तो घूम-फिर सुधा विवाह करती ही ॥ तब फिर विश्वास काहे का? त्याग काहे का?

विश्वास टूट चुका था, गर्व जिंदा था, गर्व घमंड में बदल गया था, घमंड नफरत में, और नफरत नसों को चूर-चूर कर देने वाली उदासी में ॥

सुधा जब आयी तो उसने चन्द्र को बिल्कुल बदला हुआ पाया ॥ एक बात और हुई जिसने और भी आग सुलगा दी ॥ यह लोग दोपहर को एक बजे के लगभग आये जबकि चन्द्र कॉलेज गया था ॥ पापा तो आते ही नहा-धोकर सोने चले गये ॥ सुधा और बिनती ने आते ही अपने कमरे की सफाई शुरू की; कमरे की सारी किताबों झाड़ीं, कपड़े ठीक किये, मेजें साफ कीं और उसके बाद कमरा धोने में लग गयीं ॥ बिनती बाल्टी में पानी भर-भर लाने लगी और सुधा झाड़ से फर्श धोने लगी ॥ हाथों में चूड़े अब भी थे, पाँव में बिछिया और माँग में सिन्दूर-चेहरा बहुत पीला पड़ गया था

सुधा का; घोड़े की हड्डियाँ निकल आयी थीं और आँखों की शेशनी भी मैली पड़ गयी थी □ वह जाने क्यों कमजोर भी हो गयी थी □

झाड़ लगाते-लगाते सुधा बिनती से बोली, “आज मालूम पड़ता है कि मैं आदमी हूँ! कल तक तो हैवान थी □ पापा को भी जाने क्या सूझा कि इन्हें भी साथ ढिल्ली ले गये □ मैं तो शर्म से मरी जाती थी □”

थोड़ी देर बाद चन्द्र आया □ बाहर ही उसे मालूम हो गया था कि सब लोग आ गये हैं □ उसे जाने क्यों ऐसा लग रहा था कि वह उलटे लौट जाये, वह अगर इस घर में गया तो जाने उससे क्या अनर्थ हो जाएगा, लेकिन वह बढ़ता ही गया □ स्टडी-रूम में डॉक्टर साहब सो रहे थे □ वह लौटा और अपने कपड़े उतारने के लिए ड्राइंग-रूम की ओर चला □ सुधा ने ज्यों ही आठृष्ट पारी, वह फैरैन झाड़ फेंककर भागी, सिर खुला, धोती कमर में खुँसी हुई, हाथ गन्दे, बाल बिखरे और बेतहाशा ठौँड़कर चन्द्र से लिपट गयी और बच्चों की भोली हँसी हँसकर बोली, “चन्द्र, चन्द्र! हम आ गये, अब बताओ!” और चन्द्र को इस तरह क्स लिया कि अब कभी छोड़नी नहीं □

“छि:, दूर हटो, सुधा! यह क्या नाटक करती हो! आज तुम बच्ची नहीं हो!” और सुधा को बड़ी रुखाई से पेरे हटाकर अपने कोट पर से सुधा के हाथ से लगी हुई मिट्टी झाड़ते हुए चन्द्र चुपचाप अपने कमरे में चला गया □

सुधा पर जैसे बिजली गिर पड़ी हो □ वह पत्थर की तरह खड़ी रही □ फिर जैसे लड़खड़ाती हुई अपने कमरे में गयी और चारपाई पर लेटकर फूट-फूटकर रोने लगी □ चन्द्र सुधा से नहीं ही बोला □ डॉक्टर साहब के जगते ही उनसे बातें करने लगा, शाम को वह साइकिल लेकर घूमने निकल गया □ लौटकर ऊपर छत पर चला गया और बिनती को पुकारकर कहा, “अगर तकलीफ न हो तो जरा ऊपर खाना दे जाओ □” बिनती ने थाली लगायी और सुधा से कहा, “लो दीदी! दे आओ!” सुधा ने सिर हिलाकर कहा, “तू ही दे आ! मैं अब कौन रह गयी उनकी □” बिनती के बहुत समझाने पर सुधा ऊपर खाना ले गयी □ चन्द्र लेटा था गुमसुम □ सुधा ने रस्ते खींचकर खाना रखा □ चन्द्र कुछ नहीं बोला □ उसने पानी रखा □ चन्द्र कुछ नहीं बोला □ “खाओ न!” सुधा ने कहा और एक कौर बनाकर चन्द्र को देने लगी □

“तुम जाओ!” चन्द्र ने बड़े रुखे स्वर में कहा, “मैं खा लूँगा!”

सुधा ने कौर थाली में रख दिया और चन्द्र के पायताने बैठकर बोली, “चन्द्र, तुम क्यों नाराज हो, बताओ हमसे क्या पाप हो गया है? पिछले डेढ़ महीने हमने एक-एक क्षण गिन-गिनकर काटे हैं कि कब तुम्हारे पास आएँ □ हमें क्या मालूम था कि तुम ऐसे हो गये हो □ मुझे जो चाहे सजा दे लो लेकिन ऐसा न करो □ तुम तो कुछ भी नहीं समझते □” और सुधा ने चन्द्र के पैरों पर सिर रख दिया □ चन्द्र ने पैर झटक दिये, “सुधा, इन सब बातों से फायदा नहीं है □ अब इस तरह की बातें करना और सुनना मैं भूल गया हूँ □ कभी इस तरह की बातें करते अच्छा लगता था □ अब तो किसी सोहागिन के मुँह से यह शोभा नहीं देता!”

सुधा तिलमिला उठी, “तो यह बात है तुम्हारे मन में! मैं पहले से समझती थी □ लेकिन तुम्हीं ने तो कहा था, चन्द्र! अब तुम्हीं ऐसे कह रहे हो? शर्म नहीं आती तुम्हें □” और सुधा ने हाथ से ब्याह वाले चूड़े उतारकर छत पर फेंक दिये, बिछिया उतारने लगी-और पागलों की तरह फटी आवाज में बोली, “जो तुमने कहा, मैंने किया, अब जो कहोगे वह करँगी □ यहीं चाहते हो न!” और अन्त में उसने अपनी बिछिया उतारकर छत पर फेंक दी □

चन्द्र काँप गया □ उसने इस हऱ्य की कल्पना भी नहीं की थी □ “बिनती! बिनती!” उसने घबराकर पुकारा और सुधा से बोला, “अरे, यह क्या कर रही हो! कोई देखेगा तो क्या सोचेगा! पहनो जल्दी से □”

“मुझे किसी की परवा नहीं □ तुम्हारा तो जी ठंडा पढ़ जाएगा!”

चन्द्र उठा □ उसने जबरदस्ती सुधा के हाथ पकड़ लिये □ बिनती आ गयी थी □

“तो, इन्हें चूड़े तो पहना दो!” बिनती ने चुपचाप चूड़े और बिछिया पहना दी □ सुधा चुपचाप उठी और नीचे चली गयी □

चन्द्र अपनी खाट पर सिर झुकाये लजिजत-सा बैठा था □

“तीजिए, खाना खा लीजिए □” बिनती बोली □

“मैं नहीं खाऊँगा □” चन्द्र ने रुद्धे गले से कहा □

“खाइए, वरना अच्छी बात नहीं होगी □ आप ठोनों मिलकर मुझे मार डालिए बस किस्सा खत्म हो जाए □ न आप सीधे मुँह से बोलते हैं, न दीदी □ पता नहीं आप लोगों को क्या हो गया है?”

चन्द्र कुछ नहीं बोला □

“खाइए, आपको हमारी कसम है □ वरना दीदी खाना नहीं खाएँगी! आपको मालूम नहीं, दीदी की तबीयत इधर बहुत खराब है □ उन्हें सुबह-शाम बुखार रहता है □ दिल्ली में तबीयत बहुत खराब हो गयी थी □ आप ऐसे कर रहे हैं □ बताइए, उनका क्या हाल होगा □ आप समझते होगे यह बहुत सुखी होंगी लेकिन आपको क्या मालूम!... पहले आप दीदी के एक आँसू पर पागल हो उठते थे, अब आपको क्या हो गया है?”

चन्द्र ने सिर उठाया-और गहरी साँस लेकर बोला, “जाने क्या हो गया है, बिनती! मैं कभी नहीं सोचता था कि सुधा को मैं इतना दुःख दे सकूँगा □ इतना अभाग हूँ कि मैं खुद भी इधर घुलता रहा और सुधा को भी इतना दुखी कर दिया □ और सचमुच चन्द्र की आँखों में आँसू भर आये □ बिनती चन्द्र के पीछे खड़ी थी □ चन्द्र का सिर अपनी छाती में लगाकर आँसू पोंछती हुई बोली, “छिः, अब और दुःखी होइएगा तो दीदी और भी शोएँगी □ लीजिए, खाइए!”

“जाओ, दीदी को बुला लो और उन्हें भी रिखला दो!” चन्द्र ने कहा □ बिनती गयी □ फिर लौटकर बोली, “बहुत ये रही हैं □ अब आज उनका नशा उतर जाने दीजिए, तब कल बात कीजिएगा □”

“फिर सुधा ने न खाया तो?”

“नहीं, आप खा लीजिएगा तो वे खा लेंगी □ उनको खिलाए बिना मैं नहीं खाऊँगी □” बिनती बोली और अपने हाथ से कौर बनाकर चन्द्र को देने लगी □ चन्द्र ने खाना शुरू किया और धीरे-से गहरी साँस-लेकर बोला, “बिनती! तुम हमारी और सुधा की उस जनम की कौन हो?”

सुबह के वक्त चन्द्र जब नाश्ता करने बैठा तो डॉक्टर साहब के साथ ही बैठा □ सुधा आयी और प्याला रखकर चली गयी □ वह बहुत उदास थी □ चन्द्र का मन भर आया □ सुधा की उदासी उसे कितना लजिजत कर रही थी, कितना दुखी कर रही थी □ दिन-भर किसी काम में उसकी तबीयत नहीं लगी □ उसने वलास छोड़ दिये □ लाइब्रेरी में भी जाकर किताबें उलट-पलटकर चला आया □ उसके बाद प्रेस गया जहाँ उसे अपनी थीसिस छपने को देनी थी, उसके बाद ठाकुर साहब के यहाँ गया □ लेकिन कहीं भी वह टिक नहीं पाया □ जब तक वह सुधा को हँसा न ले, सुधा के आँसू सुखा न दे; उसे चैन नहीं मिलेगा □

शाम को वह लौटा तो खाना तैयार था ॥ बिनती से उसने पूछा, “कहाँ हैं सुधा?” “अपनी छत पर ॥” बिनती ने कहा ॥ चन्द्र ऊपर गया ॥ पानी परसों से बंद था और बादल भी खुले हुए थे लेकिन तेज पुरवैया चल रही थी ॥ तीज का चाँद शरमीली दुल्हन-सा बादलों में मुँह छिपा रहा था ॥ हवा के तेज झकोरों पर बादल उड़ रहे थे और कचनार बादलों में तीज का धनुषाकार चाँद आँखमिचौली खेल रहा था ॥ सुधा ने अपनी खाट बरसाती के बाहर खींच ली थी ॥ छत पर धूँधला अँधेरा था और रह-रहकर सुधा पर चाँदनी के फूल बरस जाते थे ॥ सुधा चुपचाप लेटी हुई बादलों को देखती हुई जाने क्या सोच रही थी ॥

चन्द्र गया ॥ चन्द्र को देखते ही सुधा उठ खड़ी हुई और उसने बिजती जला दी और चुपचाप बैठ गयी ॥ चन्द्र बैठ गया ॥ वह कुछ भी नहीं बोली ॥ बगल में बिछी हुई बिनती की खाट पर सुधा बैठ गयी ॥

चन्द्र को समझ नहीं आता था कि वह क्या कहे ॥ सुधा को इतना दुःख दिया उसने ॥ सुधा उससे कल शाम से बोली तक नहीं ॥

“सुधा, तुम नाराज हो गयी! मुझे जाने क्या हो गया था ॥ लेकिन माफ नहीं करोगी?” चन्द्र ने बहुत काँपती हुई आवाज में कहा ॥ सुधा कुछ नहीं बोली-चुपचाप बादलों की ओर देखती रही ॥ “सुधा?” चन्द्र ने सुधा के ठोकबूतरों जैसे उजले मासूम पैरों को लेकर अपनी गोद में रख लिया और भेरे हुए गले से बोला, “सुधा, मुझे जाने क्या हो जाता है कभी-कभी! लगता है वह पहले वाली ताकत टूट गयी ॥ मैं बिखर रहा हूँ ॥ तुम आयी और तुम्हारे सामने मन का जाने कौन-सा तूफान फूट पड़ा! तुमने उसका इतना बुरा मान लिया ॥ बताओ, अगर तुम ही ऐसा करोगी तो मुझे सँभालने वाला फिर कौन है, सुधा?” और चन्द्र की आँखों से एक बूँद आँसू सुधा के पाँवों पर चूपड़ा ॥ सुधा ने चौंककर अपने पाँव खींच लिये ॥ और उठकर चन्द्र की खाट पर बैठ गयी और चन्द्र के कन्धे पर सिर रखकर फूट-फूटकर ये पड़ी ॥ बहुत योगी...बहुत योगी ॥ उसके बाद उठी और सामने बैठ गयी ॥

“चन्द्र! तुमने गलत नहीं किया ॥ मैं सचमुच कितनी अपराधिन हूँ ॥ मैंने तुम्हारी जिंदगी चौपट कर दी है ॥ लेकिन मैं क्या करूँ? किसी ने तो मुझे कोई रास्ता नहीं बताया था ॥ अब हो ही क्या सकता है, चन्द्र! तुम भी बर्दाष्ट करो और हम भी करें ॥” चन्द्र नहीं बोला ॥ उसने सुधा के हाथ अपने होठों से लगा लिये ॥ “लेकिन मैं तुम्हें इस तरह बिखरने नहीं दूँगी! तुमने अब अगर इस तरह किया तो अच्छी बात नहीं होगी ॥ फिर हम तो बराबर हर पल तुम्हारे ही बारे में सोचते रहे और तुम्हारी ही बातें सोच-सोचकर अपने को धीरज देते रहे और तुम इस तरह करोगे तो...” “नहीं सुधा, मैं अपने को टूटने नहीं दूँगा ॥ तुम्हारा प्यार मेरे साथ है ॥ लेकिन इधर मुझे जाने क्या हो गया था!”

“हाँ, समझ लो, चन्द्र! तुम्हें हमारे सुहाने की लाज है, हम कितने दुखी हैं, तुम समझ नहीं सकते ॥ एक तुम्हीं को देखकर हम थोड़ा-सा दुख-दर्द भूल जाते हैं, सो तुम भी इस तरह करने लगे! हम लोग कितने अभागे हैं!” और वह फिर चुपचाप लेटकर ऊपर देखती हुई जाने क्या सोचने लगी ॥ चन्द्र ने एक बार धूँधली रेशमी चाँदनी में मुरझाये हुए सोनजुही के फूल-जैसे मुँह की ओर देखा और सुधा के नरम गुलाबी होठों पर ऊँगलियाँ रख दीं ॥ थोड़ी देर वह आँसू में भीगे हुए गुलाब की दुख-भरी पंखरियों से ऊँगलियाँ उलझाये रहा और फिर बोला-

“क्या सोच रही थीं?” चन्द्र ने बहुत दुलार से सुधा के माथे पर हाथ फेरकर कहा ॥ सुधा एक

फीकी हँसी हँसकर बोली-

“जैसे आज लेटी हुई बादलों को देख रही हूँ और पास तुम बैठे हो, उसी तरह एक दिन कॉलेज में दोपहर को मैं और गेसू लेटे हुए बादलों को देख रहे थे॥ उस दिन उसने एक शेर सुनाया था॥ ‘कैफ बरदोश बादलों को न देख, बेखबर तू कुचल न जाए कहीं॥’ उसका कठना कितना सच निकला! भाव्य ने कहाँ ले जा पटका मुझे!”

“क्यों, वहाँ तुम्हें कोई तकलीफ तो नहीं?” चन्द्र ने पूछा॥

“हाँ, समझते तो सब यही हैं, लेकिन जो तकलीफ है वह मैं जानती हूँ या बिनती जानती है॥” सुधा ने गहरी साँस लेकर कहा, “वहाँ आदमी भी बने रहने का अधिकार नहीं॥”

“क्यों?” चन्द्र ने पूछा॥

“क्या बताएँ तुम्हें चन्द्र! कभी-कभी मन में आता है कि डूब मर्ह॥ ऐसा भी जीवन होगा मेरा, यह कभी मैं नहीं सोचती थी॥” सुधा ने कहा॥

“क्या बात है? बताओ न!” चन्द्र ने पूछा॥

“बता दूँगी, देवता! तुमसे भला क्या छिपाऊँगी लेकिन आज नहीं, फिर कभी!”

सुधा ने कहा, “तुम परेशान मत हो॥ कहाँ तुम, कहाँ दुनिया! काश कि कभी तुम्हारी गोद से अलग न होती मैं!” और सुधा ने अपना मुँह चन्द्र की गोद में छिपा लिया॥ चाँदनी की पंखरियाँ बरस पड़ीं॥

उल्लास और योशनी का मलय पवन फिर लौट आया था, फिर एक बार चन्द्र, सुधा और बिनती के प्राणों को विभोर कर गया था कि सुधा को मठीने-भर बाट ही जाना है और सुधा भूल गयी थी कि शाहजहाँपुर से भी उसका कोई नाता है। बिनती का इमतठान हो गया था और अकसर चन्द्र और सुधा बिनती के ब्याह के लिए गहने और कपड़े खरीदने जाते। जिंदगी फिर खुशी के हिल्कोरों पर झूलने लगी थी। बिनती का ब्याह उतरते अगहन में होने वाला था। अब दो-ढाई मठीने रह गये थे। सुधा और चन्द्र जाकर कपड़े खरीदते और लौटकर बिनती को जबरदस्ती पहनाते और गुडिया की तरह उसे सजाकर खूब हँसते। दोनों के बड़े-बड़े हौसले थे बिनती के लिए। सुधा बिनती को सलवार और चुन्नी का एक सेट और गराया और कुरते का एक सेट देना चाहती थी। चन्द्र बिनती को एक हीरे की अँगूठी देना चाहता था। चन्द्र बिनती को बहुत रनेह करने लगा था। वह बिनती के ब्याह में भी जाना चाहता था लेकिन गाँव का मामला, कान्यकुब्जों की बारत। शहर में सुधा, बिनती और चन्द्र को जितनी आजादी थी उतनी वहाँ भला क्योंकर हो सकती थी! फिर कहने वालों की जबान, कोई क्या कह बैठे! यही सब सोचकर सुधा ने चन्द्र को मना कर दिया था। इसीलिए चन्द्र यहीं बिनती को जितने उपहार और आशीर्वाद देना चाहता था, दे रहा था। सुधा का बवपन लौट आया था और दिन-भर उसकी शरारतों और किलकारियों से घर हिलता था। सुधा ने चन्द्र को इतनी ममता में डुबो लिया था कि एक क्षण वह चन्द्र को अपने से अलग नहीं रहने देती थी। जितनी देर चन्द्र घर में रहता, सुधा उसे अपने दुलार में, अपनी साँसों की गरमाई में समेटे रहती थी, चन्द्र के माथे पर हर क्षण वह जाने कितना रनेह बिखेरती रहती थी!

एक दिन चन्द्र आया तो देखा कि बिनती कहीं गयी है और सुधा चुपचाप बैठी हुई बहुत-से पुराने खतों को सँभाल रही है। एक गम्भीर उदासी का बादल घर में छाया हुआ है। चन्द्र आया। देखा, सुधा आँख में आँसू भरे बैठी है।

“क्या बात है, सुधा?”

“रुखसती की चिठ्ठी आ गयी चन्द्र, परसों शंकर बाबू आ रहे हैं।”

चन्द्र के हृदय की धड़कनों पर जैसे किसी ने हथौड़ा मार दिया। वह चुपचाप बैठ गया। “अब सब खत्म हुआ, चन्द्र!” सुधा ने बड़ी ही करण मुरकान से कहा, “अब साल-भर के लिए विदा और उसके बाद जाने क्या होगा?”

चन्द्र कुछ नहीं बोला। वहीं लेट गया और बोला, “सुधा, दुःखी मत हो। आखिर कैलाश इतना अच्छा है, शंकर बाबू इतने अच्छे हैं। दुख किस बात का? रहा मैं तो अब मैं सशक्त रहूँगा। तुम मेरे लिए मत घबराओ!”

सुधा एकटक चन्द्र की ओर देखती रही। फिर बोली, “चन्द्र! तुम्हारे जैसे सब क्यों नहीं होते?

तुम सचमुच इस दुनिया के योन्य नहीं हो! ऐसे ही बने रहना, चन्द्र मैरे! तुम्हारी पवित्रता ही मुझे जिन्दा रख सकेगी वर्ना मैं तो जिस नरक में जा रही हूँ...”

“तुम उसे नरक क्यों कहती हो! मेरी समझ में नहीं आता!”

“तुम नहीं समझ सकते□ तुम अभी बहुत दूर हो इन सब बातों से, लेकिन...” सुधा बड़ी देर तक चुप रही□ फिर खत सब एक ओर रिसका दिये और बोली, “चन्द्र, उनमें सबकुछ है□ वे बहुत अच्छे हैं, बहुत खुले विचार के हैं, मुझे बहुत चाहते हैं, मुझ पर कहीं से कोई बन्धन नहीं, लेकिन इस सारे र्वर्ण का मोल जो देकर चुकाना पड़ता है उससे मेरी आत्मा का कण-कण विद्रोह कर उठता है□” और सहसा घुटनों में मुँह छिपाकर ये पड़ी□

चन्द्र उठा और सुधा के माथे पर हाथ रखकर बोला, “छि:, येओ मत सुधा! अब तो जैसा है, जो कुछ भी है, बर्दाश्त करना पड़ेगा□”

“कैसे करूँ, चन्द्र! वह इतने अच्छे हैं और इसके अलावा इतना अच्छा व्यवहार करते हैं कि मैं उनसे क्या कहूँ? कैसे कहूँ?” सुधा बोली□

“जाने दो सुधी, जैसी जिंदगी हो वैसा निबाह करना चाहिए, इसी में सुन्दरता है□ और जहाँ तक मेरा खयाल है वैवाहिक जीवन के प्रथम चरण में ही यह नशा रहता है, फिर किसको यह सूझता है□ आओ, चलो चाय पीएँ! उठो, पागलपन नहीं करते□ परसों चली जाओगी, रलाकर नहीं जाना होता□ उठो!” चन्द्र ने अपने मन की जुगुप्या पीकर ऊपर से बहुत झोह से कहा□

सुधा उठी और चाय ले आयी□ चन्द्र ने अपने हाथ से एक कप में चाय बनायी और सुधा को पिलाकर उसी में पीने लगा□ चाय पीते-पीते सुधा बोली-

“चन्द्र, तुम ब्याह मत करना! तुम इसके लिए नहीं बने हो□”

चन्द्र सुधा को हँसाना चाहता था-”चल खार्थी कहीं की! क्यों न करूँ ब्याह? जरूर करूँगा! और जनाब, दो-दो करूँगा! अपने आप तो कर लिया और मुझे उपदेश दे रही हैं!”

सुधा हँस पड़ी□ चन्द्र ने कहा-

“बस ऐसे ही हँसती रहना हमेशा, हमारी याद करके और अगर योद्धी तो समझ लो हम उसी तरह फिर अशान्त हो उठेंगे जैसे अभी तक थे!...” फिर प्याला सुधा के होठों से लगाकर बोला, “अच्छा सुधी, कभी तुम सुनो कि मैं उतना पवित्र नहीं रहा जितना कि हूँ तो तुम क्या करोगी? कभी मेरा व्यक्तित्व अगर बिगड़ गया, तब क्या होगा?”

“होगा क्या? मैं योकने वाली कौन होती हूँ! मैं खुद ही क्या योक पायी अपने को! लेकिन चन्द्र, तुम ऐसे ही रहना□ तुम्हें मेरे प्राणों की सौगन्ध है, तुम अपने को बिगाड़ा मत□”

चन्द्र हँसा, “नहीं सुधा, तुम्हारा प्यार मेरी ताकत है□ मैं कभी गिर नहीं सकता जब तक तुम मेरी आत्मा में गुँथी हुई हो□”

तीसरे दिन शंकर बाबू आये और सुधा चन्द्र के पैरों की धूल माथे पर लगाकर चली गयी...इस बार वह योद्धी नहीं, शान्त थी जैसे वधस्थल पर जाता हुआ बेबस अपराधी□

28

जब तक आसमान में बादल रहते हैं तब तक झील में बादलों की छाँह रहती है॥ बादलों के खुल जाने के बाद कोई भी झील उनकी छाँह को सुरक्षित नहीं रख पाती॥ जब तक सुधा थी, चन्द्र की जिंदगी का फिर एक बार उल्लास और उसकी ताकत लौट आयी थी, सुधा के जाते ही वह फिर सबकुछ खो बैठा॥ उसके मन में कोई स्थायित्व नहीं रहा॥ लगता था जैसे वह एक जलागार है जो बहुत गहरा है, लेकिन जिसमें हर चाँद, सूरज, सितारे और बादल की छाँह पड़ती है और उनके चले जाने के बाद फिर वह उनका प्रतिबिम्ब धो डालता है और बदलकर फिर वैसा ही हो जाता है॥ कोई भी चीज पानी को रँग नहीं पाती, उसे छू नहीं पाती, हाँ, लहरों में उनकी छाया का रूप विकृत हो जाता है॥

चन्द्र को चारों ओर की दुनिया सहज गुजरते हुए बादलों का निरसार नमाशा-सी लग रही थी॥ कॉलेज की चहल-पहल, ढलती हुई बरसात का पानी, थीसिस और डिग्री, बर्टी का पानलपन और पम्पी के खत-ये सभी उसके सामने आते और सपनों की तरह गुजर जाते॥ कोई चीज उसके हृदय को छू न पाती॥ ऐसा लगता था कि चन्द्र एक खोखला व्यक्ति है जिसमें सिर्फ एक सापेक्ष अन्तःकरण मात्र है, कोई निरपेक्ष आत्मा नहीं और हृदय भी जैसे समाप्त हो गया था॥ एक जलहीन हल्के बादल की तरह वह हवा के हर झोंके पर तैर रहा था॥ लेकिन टिकता कभी भी नहीं था॥ उसकी आवनाएँ, उसका मन, उसकी आत्मा, उसके प्राण, उसका सबकुछ सो गया था और वह जैसे नींद में चल-फिर रहा था, नींद में सबकुछ कर रहा था॥ जाने के आठ-नौ रोज बाद सुधा का खत आया-

“मेरे भान्य!

मैं इस बार तुम्हें जिस तरह छोड़ आयी हूँ उससे मुझे पल-भर को चैन नहीं मिलता॥ अपने को तो बेच चुकी, अपने मन के मोती को कीचड़ में फेंक चुकी, तुम्हारी योशनी को ही देखकर कुछ सन्तोष है॥ मेरे दीपक, तुम बुझना मत॥ तुम्हें मेरे रनेह की लाज है॥

मेरी जिंदगी का नरक फिर मेरे अंगों में भिटना शुरू हो गया है॥ तुम कहते हो कि जैसे हो निबाह करना चाहिए॥ तुम कहते हो कि अगर मैंने उनसे निबाह नहीं किया तो यह तुम्हारे प्यार का अपमान होगा॥ ठीक है, मैं अपने लिए नहीं, तुम्हारे लिए निबाह करेंगी, लेकिन मैं कैसे संभालूँ अपने को? दिल और दिमाग बेबस हो रहे हैं, नफरत से मेरा खून उबला जा रहा है॥ कभी-कभी जब तुम्हारी सूखत सामने होती है तो जैसे अपना सुख-दुख भूल जाती हूँ, लेकिन अब तो जिंदगी का तूफान जाने कितना तेज होता जा रहा है कि लगता है तुम्हें भी मुझसे खींचकर अलग कर देगा॥

लेकिन तुम्हें अपने देवत्व की कसम है, तुम मुझे अब अपने हृदय से दूर न करना॥ तुम नहीं जानते कि तुम्हारी याद के ही सहारे मैं यह नरक झेलने में समर्थ हूँ॥ तुम मुझे कहीं छिपा लो-मै

क्या करूँ, मेरा अंग-अंग मुझ पर व्यंज्य कर रहा है, आँखों की नींद खत्म है॥ पाँवों में इतना तीखा दर्द है कि कुछ कह नहीं सकती॥ उठते-बैठते चककर आने लगा है॥ कभी-कभी बदन काँपने लगता है॥ आज वह बेरेली गये हैं तो लगता है मैं आदमी हूँ॥ तभी तुम्हें लिख भी रही हूँ॥ तुम दुखी मत होना॥ चाहती थी कि तुम्हें न लिखूँ लेकिन बिना लिखे मन नहीं मानता॥ मेरे अपने! तुमने तो यहीं सोचकर यहाँ भेजा था कि इससे अच्छा लड़का नहीं मिलेगा॥ लेकिन कौन जानता था कि फूल में कीड़े भी होंगे॥

अच्छा, अब माँजी नीचे बुला रही हैं... चलती हूँ... देखो अपने किसी खत में इन सब बातों का जिक्र मत करना! और इसे फाड़कर फेंक देना॥

तुम्हारी अभागिन-सुधी॥”

चन्द्र को खत मिला तो एक बार जैसे उसकी मूर्छा टूट गयी॥ उसने खत लिया और बिनती को बुलाया॥ बिनती हाथ में साग और डलिया लिये आयी और पास बैठ गयी॥ चन्द्र ने वह खत बिनती को दे दिया॥ बिनती ने पढ़ा और चन्द्र को वापस दे दिया और चुपचाप तरकारी काटने लगी॥

वह उठा और चुपचाप अपने कमरे में चला गया॥ थोड़ी देर बाद बिनती चाय लेकर आयी और चाय रखकर बोली, “आप दीदी को कब खत लिख रहे हैं?”

“मैं नहीं लिखूँगा!” चन्द्र बोला॥

“क्यों?”

“क्या लिखूँ बिनती, कुछ समझा में नहीं आता!” कुछ झल्लाकर चन्द्र ने कहा॥ बिनती चुपचाप बैठ गयी॥ थोड़ी देर बाद चन्द्र बड़े मुलायम रुख में बोला, “बिनती, एक दिन तुमने कहा था कि मैं देवता हूँ, तुम्हें मुझ पर गर्व है॥ आज भी तुम्हें मुझ पर गर्व है?”

“पहले से ज्यादा!” बिनती बोली॥

“अच्छा, ताज्जुब है!” चन्द्र बोला, “अगर तुम जानती कि आजकल कभी-कभी मैं क्या सोचता हूँ तो तुम्हें ताज्जुब होता! तुम जानती तो, सुधा के इस खत से मुझे जरा-सा भी दुख नहीं हुआ, सिर्फ़ झल्लाहट ही हुई है॥ मैं सोच रहा था कि क्यों सुधा इतना स्वँग भरती है दुख और अंतर्दृढ़ का! किस लड़की को यह सब पसन्द नहीं? किस लड़की के प्यार में शरीर का अंश नहीं होता? लाख प्रतिभाशालिनी लड़कियाँ हीं लेकिन अगर वे किसी को प्यार करेंगी तो उसे अपनी प्रतिभा नहीं देंगी, अपना शरीर ही देंगी और यदि वह अस्वीकार कर लिया जाय तो शायद प्रतिहिंसा से तड़प भी उठेंगी॥ अब तो मुझे ऐसा लगने लगा कि सेवक ही प्यार है, प्यार का मुख्य अंश है, बाकी सभी कुछ उसकी तैयारी है, उसके लिए एक समुचित वातावरण और विश्वास का निर्माण करना है... जाने क्यों मुझे इस सबसे बहुत नफरत होती जाती है॥ अभी तक मैं सेवक और प्यार को दो चीजें समझता था, प्यार पर विश्वास करता था, सेवक से नफरत, अब मुझे दोनों ही एक चीजें लगती हैं और जाने कैसे अरुचि-सी हो गयी है इस जिंदगी से॥ तुम्हारी क्या यह है, बिनती?”

“मेरी? अे, हम बे-पढ़े-लिखे आदमी, हम क्या आपसे बात करेंगे! लेकिन एक बात है॥ ज्यादा पढ़ना-लिखना अच्छा नहीं होता॥”

“क्यों?” चन्द्र ने पूछा॥

“पढ़ने-लिखने से ही आप और दीदी जाने क्या-क्या सोचते हैं! हमने देहात में देखा है कि वहाँ

लड़कियाँ समझती हैं कि उन्हें क्या करना है। इसलिए कभी इन सब बातों पर अपना मन नहीं बिगड़ती। बल्कि मैंने तो देखा है सभी शादी के बाद मोटी होकर आती हैं। और दीदी अब छोटी-सी नहीं कि ऐसी उनकी तबीयत खराब हो जाय। यह सब मन में घुटने का नतीजा है। जब यह होना ही है तो क्यों दीदी दुःखी होती है? उन्हें तो और मोटी होना चाहिए।” बिनती बोली।

इस समस्या का इतना सरल समाधान सुनकर चन्द्र को हँसी आ गयी।

“अब तुम ससुराल जा रही हो। मोटी होकर आना!”

“धृत् आप तो मजाक करने लगे!”

“तोकिन बिनती, तुम इस मामले में बड़ी विद्वान मालूम देती हो। अभी तक यह विद्वता कहाँ छिपा रखी थी?”

“जहीं, आप मजाक न बनाइए तो मैं सच बताऊँ कि देहाती लड़कियाँ शहर की लड़कियों से ज्यादा होशियार होती हैं इन सब मामलों में।”

“सच?” चन्द्र ने पूछा। वह गाँव की जिंदगी को बेहद निरीह समझता था।

“हाँ और क्या? वहाँ इतना दुराव, इतना गोपन नहीं है। सभी कुछ उनके जीवन का उन्मुक्त है। और ब्याघ के पहले ही वहाँ लड़कियाँ सबकुछ...”

“ओर नहीं!” चन्द्र ने बेहद ताज्जुब से कहा।

“तो यकीन नहीं होता आपको? मुझे कैसे मालूम हुआ इतना। मैं आपसे कुछ नहीं छिपाती, वहाँ तो सब लोग इसे इतना स्वाभाविक समझते हैं जितना खाना-पीना, हँसना-बोलना। बस लड़कियाँ इस बात में सचेत रहती हैं कि किसी मुसीबत में न फँसें।”

चन्द्र चुपचाप बैठ चाय पीता रहा। आज तक वह जिंदगी को कितना पवित्र मानता रहा था लेकिन जिंदगी कुछ और ही है। जिंदगी अब भी वह है जो सृष्टि के आरम्भ में थी... और दुनिया कितनी चालाक है! कितनी भुलावा देती है! अन्दर से मन में जहर छिपाकर भी होठों पर कैसी अमृतमयी मुसकान झलकाती रहती है! यह बिनती जो इतनी शान्त, संयत और भोली लगती थी, इसमें भी सभी गुन भरे हैं। इस दुनिया में? चन्द्र ने जिंदगी को परखने में कितना बड़ा धोखा खाया है।... जिंदगी यह है-मांसलता और प्यास और उसके साथ-साथ अपने को छिपाने की कला।

वह बैठा-बैठा सोचता रहा। सहसा उसने पूछा-

“बिनती, तुम भी देहात में रही हो और सुधा भी। तुम लोगों की जिंदगी में वह सब कभी आया?”

बिनती क्षण-भर चुप रही, फिर बोली, “क्यों, क्या नफरत करोगे सुनकर!”

“नहीं बिनती, जितनी नफरत और अरुचि दिल में आ गयी है उससे ज्यादा आ सकती है भला! बताना चाहो तो बता दो। अब मैं जिंदगी को समझाना चाहता हूँ, वास्तविकता के स्तर पर!”

चन्द्र ने गम्भीरता से पूछा।

“मैंने आपसे कुछ नहीं छिपाया, न अब छिपाऊँगी। पता नहीं क्यों दीदी से भी ज्यादा आप पर विश्वास जमता जा रहा है। सुधा दीदी की जिंदगी में तो यह सब नहीं आ पाया। वे बड़ी विचित्र-सी थीं। सबसे अलग रहती थीं और पढ़तीं और कमल के पोखरे में फूल तोड़ती थीं, बस! मेरी जिंदगी में...”

चन्द्र ने चाय का प्याला खिसका दिया। जाने किस भाव से उसने बिनती के चेहरे की ओर

देखा □ वह शान्त थी, निर्विकार थी और बिना किसी छिचक के कहती जा रही थी □
चन्द्र चुप था □ बिनती ने अपने पाँवों से चन्द्र के पाँवों की उँगलियाँ ढबाते हुए पूछा, “क्या सोच रहे हैं आप? सुन रहे हैं आप?”

“जाने दो, मैं नहीं सुनूँगा □ लेकिन तुम मुझ पर इतना विश्वास क्यों करती हो?” चन्द्र ने पूछा □

“जाने क्यों? यहाँ आकर मैंने दीदी के साथ आपका व्यवहार देखा □ फिर पम्मी वाली घटना हुई □ मेरे तन-मन में एक विचित्र-सी शृङ्खला आपके लिए छा गयी □ जाने कैसी अखंचि मेरे मन में दुनिया के लिए थी, आपको देखकर मैं फिर रवस्थ हो गयी □”

“ताज्जुब है! तुम्हारे मन की अखंचि दूर हो गयी दुनिया के प्रति और मेरे मन की अखंचि बढ़ गयी □ कैसे अन्तर्विशेष होते हैं मन की प्रतिक्रियाओं में! एक बात पूछूँ, बिनती! तुम मेरे इतने सभीप रही हो □ सैकड़ों बार ऐसा हुआ होगा जो मेरे विषय में तुम्हारे मन में शंका पैदा कर देता, तुम सैकड़ों बार मेरे सिर को अपने वक्ष पर रखकर मुझे सान्तवना दे चुकी हो □ तुम मुझे बहुत प्यारी हो, लेकिन तुम जानती हो मैं तुम्हें प्यार नहीं करता हूँ, फिर यह सब क्या है, क्यों है?”

बिनती चुप रही- “पता नहीं क्यों है? मुझे इसमें कभी कोई पाप नहीं दिखा और कभी दिखा भी तो मन ने कहा कि आप इतने पवित्र हैं, आपका चरित्र इतना ऊँचा है कि मेरा पाप भी आपको छूकर पवित्र हो जाएगा □”

“लेकिन बिनती...”

“बस?” बिनती ने चन्द्र को टोककर कहा, “इससे अधिक आप कुछ मत पूछिए, मैं हाथ जोड़ती हूँ!”

चन्द्र चुप हो गया □

चन्द्र जितना सुलझाने का प्रयास कर रहा था, चीजें उतनी ही उलझती जा रही थीं। सुधा ने जिंदगी का एक पक्ष चन्द्र के सामने रखा था। बिनती उसे दूसरी दुनिया में खींच लायी। कौन सच है, कौन झूठ? वह किसका तिरस्कार करे, किसको स्वीकार करे। अगर सुधा गलती पर है तो चन्द्र का जिम्मा है, चन्द्र ने सुधा की हत्या की है...लेकिन कितनी भिन्न हैं दोनों बहनें! बिनती कितनी व्यावहारिक, कितनी यथार्थ, संयत और सुधा कितनी आदर्श, कितनी कल्पनामयी, कितनी सूक्ष्म, कितनी ऊँची, कितनी सुकुमार और पवित्र।

जीवन की समस्याओं के अन्तर्विरोधों में जब आदमी दोनों पक्षों को समझ लेता है तब उसके मन में एक ठहराव आ जाता है। वह भावना से ऊपर उठकर स्वच्छ बौद्धिक धरातल पर जिंदगी को समझाने की कोशिश करने लगता है। चन्द्र अब भावना से ढटकर जिंदगी को समझाने की कोशिश करने लगा था। वह अब भावना से डरता था। भावना के तूफान में इतनी ठोकरे खाकर अब उसने बुद्धि की शरण ली थी और एक पलायनवादी की तरह भावना से भाग कर बुद्धि की एकांगिता में छिप गया था। कभी भावुकता से नफरत करता था, अब वह भावना से ही नफरत करने लगा था। इस नफरत का भोग सुधा और बिनती दोनों को ही भुगतना पड़ा। सुधा को उसने एक भी खत नहीं लिखा और बिनती से एक दिन भी ठीक से बातें नहीं की। जब भावना और सौन्दर्य के उपासक को बुद्धि और वास्तविकता की ठेस लगती है तब वह सहसा कटुता और व्यंज्या से उबल उठता है। इस वक्त चन्द्र का मन भी कुछ ऐसा ही हो गया था। जाने कितने जहरीले कॉट उसकी वाणी में उग आये थे, जिन्हें वह कभी भी किसी को चुभाने से बाज नहीं आता था। एक निर्मम निरपेक्षता से वह अपने जीवन की सीमा में आने वाले हर व्यक्ति को कटुता के जहर से अभिषिक्त करता चलता था। सुधा को वह कुछ लिख नहीं सकता था। पर्मी यहाँ थी नहीं, ले-देकर बची अकेली बिनती जिसे इन जहरीले वाणों का शिकार होना पड़ रहा था। सितम्बर बीत रहा था और अब वह गाँव जाने की तैयारी कर रही थी। डॉक्टर साहब ने दिसम्बर तक की छुट्टी ली थी और वे भी गाँव जाने वाले थे। शादी के महीने-भर पहले से उनका जाना जरूरी था।

चन्द्र खुश नहीं था, नाराज नहीं था। एक स्वर्गभूष्ट देवदूत जिसे पिंशाचों ने खरीद लिया हो, उन्हीं की तरह वह जिंदगी के सुख-दुःख को ठोकर मारता हुआ किनारे खड़ा सभी पर हँस रहा था। खास तौर से नारी पर उसके मन का सारा जहर बिखरने लगा था और उसमें उसे यह भी अक्सर ध्यान नहीं रहता था कि वह किससे क्या बात कर रहा है। बिनती सबकुछ चुपचाप सहती जा रही थी, बिनती को सुधा की तरह रोना नहीं आता था; न उसकी चन्द्र इतनी परवा ही करता था जितनी सुधा की। दोनों में बातें भी बहुत कम होती थीं, लेकिन बिनती मन-ही-मन दुःखी थी। वह क्या करे! एक दिन उसने चन्द्र के पैर पकड़कर बहुत अनुबय से

कहा-”आपको यह क्या होता जा रहा है? अब आप ऐसे ही करेंगे तो हम दीदी को लिख देंगे!”
चन्द्र बड़ी भयावनी हँसी हँसा-”दीदी को क्या लिखोगी? मुझे अब उसकी परवा नहीं□ वह दिन गये, बिनती! बहुत बन लिये हम□”

“हाँ, चन्द्र बाबू, आप लड़की होते तो समझते!”

“सब समझता हूँ मैं, कैसा दोहरा नाटक खेलती हैं लड़कियाँ! इधर अपराध करना, उधर मुखबिरी करना□”

बिनती चुप हो गयी□ एक दिन जब चन्द्र कॉलेज से आया तो उसके सिर में दर्द हो रहा था□ वह आकर चुपचाप लेट गया□ बिनती ने आकर पूछा तो बोला, “क्यों, क्यों मैं बतलाऊँ कि क्या है, तुम मिटा दोगी?”

बिनती ने चन्द्र के सिर पर हाथ रखकर कहा, “चन्द्र, तुम्हें क्या होता जा रहा है? देखो कैसी हड्डियाँ निकल आयी हैं इधर□ इस तरह अपने को मिटाने से क्या फायदा?”

“मिटाने से?” चन्द्र उठकर बैठ गया-”मैं मिटाऊँगा अपने को लड़कियों के लिए? छिः, तुम लोग अपने को क्या समझती हो? क्या है तुम लोगों में सिवा एक नशीली मांसलता के? इसके लिए मैं अपने को मिटाऊँगा?”

बिनती ने चन्द्र को फिर लिटा दिया□

“इस तरह अपने को धोखा देने से क्या फायदा, चन्द्र बाबू? मैं जानती हूँ दीदी के न होने से आपकी जिंदगी में कितना बड़ा अभाव है□ लेकिन...”

“दीदी के न होने पर? क्या मतलब है तुम्हारा?”

“मेरा मतलब आप खूब समझते हैं□ मैं जानती हूँ, दीदी होतीं तो आप इस तरह न मिटाते अपने को□ मैं जानती हूँ दीदी के लिए आपके मन में क्या था?” बिनती ने सिर में तेल डालते हुए कहा□

“दीदी के लिए क्या था?” चन्द्र हँसा, बड़ी विचित्र हँसी-”दीदी के लिए मेरे मन में एक आदर्शवादी भावुकता थी जो अधकचरे मन की उपज थी, एक ऐसी भावना थी जिसके औचित्य पर ही मुझे विश्वास नहीं, वह एक सनक थी□”

“सनक!” बिनती थोड़ी देर तक चुपचाप सिर में तेल ठोकती रही□ फिर बोली, “अपनी साँसों से बनायी देवमूर्ति पर इस तरह लात तो न मारिए□ आपको शोभा नहीं देता!” बिनती की आँख में आँसू आ गये, “किंतनी अभागी हैं दीदी!”

चन्द्र एकटक बिनती की ओर देखता रहा और फिर बोला, “मैं अब पागल हो जाऊँगा, बिनती!”

“मैं आपको पागल नहीं होने दूँगी□ मैं आपको छोड़कर नहीं जाऊँगी□”

“मुझे छोड़कर नहीं जाओगी!” चन्द्र फिर हँसा-”जाइए आप! अब आप श्रीमती बिनती होने वाली हैं□ आपका ब्याह होगा□ मैं पागल हो रहा हूँ, इससे क्या हुआ? इन सब बातों से दुनिया नहीं रुकती, शहनाइयाँ नहीं बंद होतीं, बन्दनवार नहीं तोड़े जाते!”

“मैं नहीं जाऊँगी चन्द्र अभी, तुम मुझे नहीं जानते□ तुम्हारी इतनी ताड़ना और व्यंब्य सहकर भी तुम्हारे पास रही, अब दुनिया-भर की लांछना और व्यंब्य सहकर तुम्हारे पास रह सकती हूँ□” बिनती ने तीखे स्वर में कहा□

“क्यों? तुम्हारे रहने से क्या होगा? तुम सुधा नहीं हो□ तुम सुधा नहीं हो सकती! जो सुधा है मेरी जिंदगी में, वह कोई नहीं हो सकता□ समझीं? और मुझ पर एहसान मत जताओ! मैं मर जाऊँ, मैं

पागल हो जाऊँ, किसी का साझा! क्यों तुम मुझ पर इतना अधिकार समझाने लगीं-अपनी सेवा के बल पर? मैं इसकी रटी-भर परवा नहीं करता। जाओ, यहाँ से!” और उसने बिनती को धकेल दिया, तेल की शीशी उठाकर बाहर फेंक दी।

बिनती रोती हुई चली गयी। चन्द्र उठा और कपड़े पठनकर बाहर चल दिया, “हूँ, ये लड़कियाँ समझाती हैं अहसान कर रही हैं मुझ पर!”

बिनती के जाने की तैयारी हो गयी थी और लिया-दिया जाने वाला साया सामान पैक हो रहा था। डॉक्टर साहब भी महीने-भर की छुट्ट लेकर साथ जा रहे थे। उस दिन की घटना के बाद फिर बिनती चन्द्र से बिल्कुल ही नहीं बोली थी। चन्द्र भी कभी नहीं बोला।

ये लोग कार पर जाने वाले थे। साया सामान पीछे-आगे लादा जाने वाला था। डॉक्टर साहब कार लेकर बाजार जाये थे। चन्द्र उनका होल्डॉल सँभाल रहा था। बिनती आयी और बोली, “मैं आपसे बातें कर सकती हूँ?”

“हाँ, हाँ! तुम उस दिन की बात का बुरा मान गयीं! अमूमन लड़कियाँ सत्वी बात का बुरा मान जाती हैं! बोलो, क्या बात है?” चन्द्र ने इस तरह कहा जैसे कुछ हुआ ही न हो।

बिनती की आँख में आँसू थे, “चन्द्र, आज मैं जा रही हूँ!”

“हाँ, यह तो मालूम है, उसी का इन्तजाम कर रहा हूँ!”

“पता नहीं मैंने क्या अपराध किया चन्द्र कि तुम्हारा र्नेह खो बैठी। ऐसा ही था चन्द्र तो आते ही आते इतना र्नेह तुमने दिया ही क्यों था?... मैं तुमसे कभी भी दीदी का स्थान नहीं माँग रही थी... तुमने मुझे गलत क्यों समझा?”

“नहीं, बिनती! मैं अब र्नेह इत्यादि पसन्द नहीं करता हूँ। पूर्ण परिपत्र मनुष्य हूँ और ये सब भावनाएँ अब अच्छी नहीं लगतीं मुझे। र्नेह वगैरह की दुनिया अब मुझे बड़ी उथली लगती है!”

“तभी चन्द्र! इतने दिन मैंने रोते-रोते बिताये। तुमने एक बार पूछा भी नहीं। जिंदगी में सिवा दीदी और तुम्हारे, कौन था? तुमने मैरे आँसुओं की परवा नहीं की। तुम्हें कस्तूर नहीं देती; कस्तूर मेरा ही होगा, चन्द्र!”

“नहीं, कस्तूर की बात नहीं बिनती! औरतों के योने की कठाँ तक परवा की जाए, वे कुते, बिल्ली तक के लिए उतने ही दुःख से योती हैं।”

“खैर, चन्द्र! ईश्वर करे तुम जीवन-भर इतने मजबूत रहो। मैंने अगर कभी तुम्हारे लिए कुछ किया, वैसे किया भी क्या, लेकिन अगर कुछ भी किया तो सिर्फ इसलिए कि मैरे मन की जाने कितनी ममता तुमने जीत ली, या मैं हमेशा इस बात के लिए पागल रहती थी कि तुम्हें जरा-सी भी ठेस न पहुँचे, मैं क्या कर डालूँ तुम्हारे लिए। तुमने, तुम्हारे व्यक्तित्व ने मुझे जादू में बाँध लिया था। तुम मुझसे कुछ भी करने के लिए कठते तो मैं हिंवक नहीं सकती थी। लेकिन खैर, तुम्हें मेरी जरूरत नहीं थी। तुम पर भार हो उठती थी मैं। मैंने अपने को खींच लिया, अब कभी तुम्हारे जीवन में आने का साहस नहीं करूँगी। यह भी कैसे कहूँ कि कभी तुम्हें मेरी जरूरत पड़ेगी। मैं जानती हूँ कि तुम्हारे तूफानी व्यक्तित्व के सामने मैं बहुत तुच्छ हूँ, तिनके से भी तुच्छ। लेकिन आज जा रही हूँ, अब कभी यहाँ आने का साहस न करूँगी। लेकिन क्या चलते वक्त आशीर्वाद भी न दोगे? कुछ आगे का रास्ता न बताओगे?”

बिनती ने झुककर चन्द्र के पैर पकड़ लिये और सिसक-सिसककर योने लगी। चन्द्र ने बिनती को उठाया और पास की कुर्सी पर बिठा दिया और सिर पर हाथ रखकर बोला, “आशीर्वाद

देवताओं से मँगा जाता है॥ मैं अब प्रेत हो चुका हूँ, बिनती!”

30

चन्द्र अब एकान्त चाहता था और वह चन्द्र को मिल गया था □ पूरा घर खाली, एक महराजिन, माली और नौकर □ और सारे घर में सिंफ सन्नाटा और उस सन्नाटे का प्रेत चन्द्र □ चन्द्र चाहे जितना टूट जाये, चाहे जितना बिखर जाये, लेकिन चन्द्र हारने वाला नहीं था □ वह हार भी जाये लेकिन हार स्वीकार करना उसे नहीं आता था □ उसके मन में अब सन्नाटा था, अपने मन के पूजागृह में रथापित सुधा की पावन, प्रांजल देवमूर्ति को उसने कठोरता से उठाकर बाहर फेंक दिया था □ मन्दिर की मूर्तिमयी पवित्रता, बिनती को अपमानित कर दिया था और मन्दिर के पूजा-उपकरणों को, अपने जीवन के आदर्शों और मानदंडों को उसने चूर-चूर कर डाला था, और बुतशिकन विजेता की तरह कूरता से हँसते हुए मन्दिर के भजनावशेषों पर कदम रखकर चल रहा था □ उसका मन टूटा हुआ खँडहर था जिसके उजाड़, बेछत कमरों में चमगाढ़ बसेरा करते हैं और जिसके धंसावशेषों पर गिरगिट पहरा देते हैं □ काश कि कोई उन खँडहरों की ईंटें उलटकर देखता तो हर पत्थर के नीचे पूजा-मन्त्र सिसकते हुए मिलते, हर धूल की पर्त में धंटियों की बेहोश धनियाँ मिलतीं, हर कदम पर मुरझाये हुए पूजा के फूल मिलते और हर शाम-सदैरे भन्न देवमूर्ति का करुण रुदन दीवारों पर सिर पटकता हुआ मिलता...लेकिन चन्द्र ऐसा-वैसा दुश्मन नहीं था □ उसने मन्दिर को चूर-चूर कर उस पर अपने गर्व का पहरा लगा दिया था कि कभी भी कोई उस पर खँडहर के अवशेष कुरेदकर पुराने विश्वास, पुरानी अनुभूतियाँ, पुरानी पूजाएँ फिर से न जगा दे □ बुतशिकन तो मन्दिर तोड़ने के बाद सारा शहर जला देता है, ताकि शहर वाले फिर उस मन्दिर को न बना पाएँ-ऐसा था चन्द्र □ अपने मन को सुनसान कर लेने के बाद उसने अपनी जिंदगी, अपना रठन-सठन, अपना मकान और अपना वातावरण भी सुनसान कर लिया था □ अगहन आ गया था, लेकिन उसके चारों ओर जेठ की दुपहरी से भी भयानक सन्नाटा था □

बिनती जब से गयी उसने कोई खत नहीं भेजा था □ सुधा के भी पत्र बन्द हो चुके थे □ पम्मी के दो खत आये □ पम्मी आजकल दिल्ली धूम रही थी, लेकिन चन्द्र ने पम्मी को कोई जवाब नहीं दिया □ अकेला...अकेला...बिल्कुल अकेला...सहारा मरुस्थल की नीरस भयावनी शानित और वह भी जब तक कि काँपता हुआ लाल सूरज बालू के क्षितिज पर अपनी आखिरी साँसें तोड़ रहा हो और बालू के टीलों की अधमरी हायाएँ लहरदार बालू पर धीरे-धीरे रेंग रही हों □

बिनती के ब्याह को पन्द्रह दिन रह गये थे कि सुधा का एक पत्र आया...

“मेरे देवता, मेरे नयन, मेरे पंथ, मेरे प्रकाश!

आज कितने दिनों बाद तुम्हें खत लिखने का मौका मिल रहा है □ सोचा था, बिनती के ब्याह के महीने-भर पहले गाँव आ जाऊँगी तो एक दिन के लिए तुम्हें आकर देख जाऊँगी □ लेकिन इसादे इसादे हैं और जिंदगी जिंदगी □ अब सुधा अपने जेठ और सास के लड़के की गुलाम हैं □ ब्याह के

दूसरे दिन ही चला जाना होगा ॥ तुम्हें यहाँ बुला लेती, लेकिन यहाँ बन्धन और परदा तो ससुराल से भी बदतर है॥

मैंने बिनती से तुम्हारे बारे में बहुत पूछा ॥ वह कुछ नहीं बतायी ॥ पापा से इतना मालूम हुआ कि तुम्हारी थीसिस छपने गयी है॥ कन्वोकेशन नजदीक है॥ तुम्हें याद है, वायदा था कि तुम्हारा गाउन पहनकर मैं फोटो खिंचवाऊँगी॥ वह दिन याद करती हूँ तो जाने कैसा होने लगता है! एक कन्वोकेशन की फोटो खिंचवाकर जरूर भेजना॥

क्या तुमने बिनती को कोई दुःख दिया था? बिनती हरदम तुम्हारी बात पर आँखू भर लाती है॥ मैंने तुम्हारे भरोसे बिनती को वहाँ छोड़ा था॥ मैं उससे दूर, माँ का सुख उसे मिला नहीं, पिता मर गये॥ क्या तुम उसे इतना भी प्यार नहीं दे सकते? मैंने तुम्हें बार-बार सहेज दिया था॥ मेरी तन्दुरुस्ती अब कुछ-कुछ ठीक है, लेकिन जाने कैसी है॥ कभी-कभी सिर में दर्द होने लगता है॥ जी मिचलाने लगता है॥ आजकल वह बहुत ध्यान ख्यते हैं॥ लेकिन वे मुझको समझ नहीं पाये॥ सारे सुख और आजादी के बीच मैं कितनी असन्तुष्ट हूँ॥ मैं कितनी परेशान हूँ॥ लगता है हजारों तूफान हमेशा नसों में घहराया करते हैं॥

चन्द्र, एक बात कहूँ अगर बुरा न मानो तो॥ आज शादी के छह महीने बाट भी मैं यही कहूँगी चन्द्र कि तुमने अच्छा नहीं किया॥ मेरी आत्मा सिर्फ तुम्हारे लिए बनी थी, उसके ऐशे में वे तत्व हैं जो तुम्हारी ही पूजा के लिए थे॥ तुमने मुझे दूर फेंक दिया, लेकिन इस दूरी के अंधेरे में भी जन्म-जन्मान्तर तक भटकती हुई सिर्फ तुम्हीं को ढूँढ़नी, इतना याद ख्यना और इस बार अगर तुम मिल गये तो जिंदगी की कोई ताकत, कोई आदर्श, कोई सिद्धान्त, कोई प्रवंचना मुझे तुमसे अलग नहीं कर सकेगी॥ लेकिन मालूम नहीं पुनर्जन्म सच है या झूँठ! अगर झूँठ है तो सोचो चन्द्र कि इस अनादिकाल के प्रवाह में सिर्फ एक बार...सिर्फ एक बार मैंने अपनी आत्मा का सत्य ढूँढ़ पाया था और अब अनन्तकाल के लिए उसे खो दिया॥ अगर पुनर्जन्म नहीं है तो बताओ मेरे देवता, क्या होगा? करोड़ों सृष्टियाँ होंगी, प्रलय होंगे और मैं अतृप्त चिनगारी की तरह असीम आकाश में तड़पती हुई अंधेरे की हर परत से टकराती रहूँगी, न जाने कब तक के लिए॥ ज्यों-ज्यों दूरी बढ़ती जा रही है, त्यों-त्यों पूजा की प्यास बढ़ती जा रही है! काश मैं सितारों के फूल और सूरज की आरती से तुम्हारी पूजा कर पाती! लेकिन जानते हो, मुझे क्या करना पड़ रहा है? मेरे छोटे भतीजे नीलू ने पहाड़ी चूँहे पाले हैं॥ उनके पिंजड़े के अन्दर एक पांडिया लगा है और ऊपर घंटियाँ लगी हैं॥ अगर कोई अभागा चूहा उस चक्र में उलझ जाता है तो ज्यों-ज्यों छूटने के लिए वह पैर चलाता है त्यों-त्यों चक्र घूमने लगता है; घंटियाँ बजने लगती हैं॥ नीलू बहुत खुश होता है लेकिन चूहा थककर बेदम होकर नीचे गिर पड़ता है॥ कुछ ऐसे ही चक्र में फँस गयी हूँ, चन्द्र! सन्तोष सिर्फ इतना है कि घंटियाँ बजती हैं तो शायद तुम उन्हें पूजा के मनिदर की घंटियाँ समझते होगे॥ लेकिन खैर! सिर्फ इतनी प्रार्थना है चन्द्र! कि अब थककर जल्दी ही गिर जाऊँ! मेरे भान्य! खत का जवाब जल्दी ही देना॥ परमी अभी आयी या नहीं?

तुम्हारी, जन्म-जन्म की प्यासी-सुधा॥”

चन्द्र ने खत पढ़ा और फौरन लिखा-

“प्रिय सुधा,

तुम्हारी पत्र बहुत दिनों के बाद मिला॥ तुम्हारी भाषा वहाँ जाकर बहुत निखर गयी है॥ मैं तो समझता हूँ कि अगर खत कहीं छुपा दिया जाये तो लोग इसे किसी रोमांटिक उपन्यास का अंश

समझें, क्योंकि उपन्यासों के ही पात्र ऐसे खत लिखते हैं, वास्तविक जीवन के नहीं। खैर, मैं अच्छा हूँ। हरेक आदमी जिंदगी से समझौता कर लेता है किन्तु मैंने जिंदगी से समर्पण कराकर उसके हथियार ख लिये हैं। अब किले के बाहर से आनेवाली आवाजें अच्छी नहीं लगतीं, न खतों के पाने की उत्सुकता, न जवाब लिखने का आग्रह। अगर मुझे अकेला छोड़ दो तो बहुत अच्छा होगा। मैं विनती करता हूँ, मुझे खत मत लिखना-आज विनती करता हूँ क्योंकि आज्ञा देने का अब साहस भी नहीं, अधिकार भी नहीं, व्यक्तित्व भी नहीं। खत तुम्हारा तुम्हें भेज रहा हूँ।

कभी जिंदगी में कोई जरूरत आ पड़े तो जरूर याद करना-बस, इसके अलावा कुछ नहीं।

अपने में सन्तुष्ट-चन्द्रकुमार कपूर।”

उसके बाद फिर वहीं सुनसान जिंदगी का ढर्या। खँडहर के सन्नाटे में भूलकर आयी हुई बाँसुरी की आवाज की तरह सुधा का पत्र, सुधा का ध्यान आया और चला गया। खँडहर का सन्नाटा, सन्नाटे के उल्लू गिरगिट और पत्थर काँपे और फिर मुस्तौदी से अपनी जगह पर जम गये और उसके बाद फिर वहीं उदास सन्नाटा, टूटता हुआ-सा अकेलापन और मूर्छित दोपहरी के फूल-सा चन्दर...

31

नवम्बर का एक खुशनुमा विहान; सोने के काँपते तारे सुबह की ठण्डी हवाओं में उलझे हुए थे। आकाश एक छोटे बच्चे के नीलम नयनों की तरह भोला और खच्छ लग रहा था। क्यारियाँ शरद के फूलों से भर गयी थीं और एक नयी ताजगी मौसम और मन में पुलक उठी थी। चन्द्र अपना पुराना कत्थई खेटर और पीले रंग के पश्मीने का लम्बा कोट पहने लॉन पर टहल रहा था। छोटे-छोटे पिल्ले दूब पर किलोल कर रहे थे। सहसा एक कार आकर रुकी और पम्मी उसमें से कूद पड़ी और कवाँसी हिरणी की तरह दौड़कर चन्द्र के पास पहुँच गयी- "हलो माई ब्वॉय, मैं आ गयी!"

चन्द्र कुछ नहीं बोला, "आओ, ड्राइंगरूम में बैठो!" उसने उसी मुर्दा-सी आवाज में कहा। उसे पम्मी के आने की कोई प्रसन्नता नहीं थी। पम्मी उसके उदास चेहरे को देखती रही, फिर उसके कंधे पर हाथ रखकर बोली, "क्यों कपूर, कुछ बीमार हो क्या?"

"नहीं तो, आजकल मुझे मिलना-जुलना अच्छा नहीं लगता। अकेला घर भी है!" उसने उसी फिकी आवाज में कहा।

"क्यों, मिस सुधा कहाँ है? और डॉक्टर शुक्ला!"

"वे लोग मिस बिनती की शादी में गये हैं।"

"अच्छा, उसकी शादी भी हो गयी, डैम इट। जैसे ये लोग पागल हो गये हैं, बर्टी, सुधा, बिनती!... क्यों, मिलते-जुलते क्यों नहीं तुम?"

"यों ही, मन नहीं होता।"

"समझ गयी, जो मुझे तीन-चार साल पहले हुआ था, कुछ निराशा हुई है तुम्हें!" पम्मी बोली।

"नहीं, ऐसी तो कोई बात नहीं।"

"कहना मत अपनी जबान से, खीकार कर लेने से पुरुष का गर्व टूट जाता है।... यहीं तो तुम्हारे चरित्र में मुझे प्यारा लगता है। खैर, यह ठीक हो जाएगा! मैं तुम्हें ऐसे नहीं रखने दूँगी।"

"मसूरी में इतने दिन क्या करती रहीं?" चन्द्र ने पूछा।

"योग-साधन!" पम्मी ने हँसकर कहा, "जानते हो, आजकल मसूरी में बर्फ पड़ रही है। मैंने कभी बर्फ के पहाड़ नहीं देखे थे। अँगेरेजी उपन्यासों में बर्फ पड़ने का जिक्र सुना बहुत था। सोचा, देखती आँऊ। क्या कपूर! तुम खत क्यों नहीं लिखते थे?"

"मन नहीं होता था। अच्छा बर्टी की शादी कब होगी?" चन्द्र ने बात टालने के लिए कहा।

"हो भी गयी। मैं आ भी नहीं पायी कि सुनते हैं जेनी एक दिन बर्टी को पकड़कर खींच ले गयी और पादरी से बोली, 'अभी शादी करा दो।' उसने शादी करा दी। लौटकर जेनी ने बर्टी का शिकारी सूट फाड़ डाला और अच्छा-सा सूट पहना दिया। बड़े विचित्र हैं दोनों। एक दिन सर्दी के बत्त बर्टी खेटर उतारकर जेनी के कमरे में गया तो मारे गुस्से के जेनी ने सिवा पतलून के

सारे कपड़े उतारकर बर्टी को कमरे से बाहर निकाल दिया। मैं तो जब से आयी हूँ, योज नाटक देखती हूँ। हाँ, देखो यह तो मैं भूल ही गयी थी..." और उसने अपनी जेब से पीतल की एक छोटी-सी मूर्ति निकालकर मेज पर रखी। "एक भौटिया औरत इसे बेच रही थी। मैंने इसे माँगा तो वह बोली-यह सिर्फ मर्दों के लिए है।" मैंने पूछा, 'क्यों?' तो बोली-'इसे अगर मर्द पहन ले तो उस पर किसी औरत का जादू नहीं चलता। वह औरत या तो मर जाती है या भाग जाती है या उसका ब्याह किसी दूसरे से हो जाता है।' तो मैंने सोचा, तुम्हारे लिए लेती चलूँ।"

चन्द्र ने देखा वह अवलोकितेश्वर की महायानी मूर्ति थी। उसने हँसकर उसे ले लिया फिर बोला, "और क्या लायी अपने लिए?"

"अपने लिए एक नया रहस्य लायी हूँ।"

"क्या?"

"इधर देखो, मेरी ओर, मैं सुन्दर लगती हूँ?"

चन्द्र ने देखा। पर्मी अठारह साल की लड़की-सी लगने लगी है। घेहरे के कोने भी जैसे गोल हो गये थे और मुँह पर बहुत ही भोलापन आ गया था, आँखों में वर्वारपन आ गया था, घेहरे पर सोना और केसर, चम्पा, हरसिंगार धुल-मिल गये थे।

"सचमुच पर्मी, लगता है जैसे कौमार्य लौट आया है तुम पर तो! परियों के कुंज से अपना बचपन फिर चुरा लायी वया?"

"नहीं कपूर, यहीं तो रहस्य लायी हूँ, हमेशा सुन्दर बने रहने का और परियों के कुंजों से नहीं, गुनाहों के कुंजों से। मैंने हिमालय की छाँह में एक नया संगीत सुना कपूर, मांसलता का संगीत। मसूरी के समाज में धुल-मिल गयी और मादक अनुभूतियाँ बटोरती रही-बिना किसी पश्चाताप के और मैंने देखा कि दिनों-दिन निखरती जा रही हूँ। कपूर, सेवस इतना बुरा नहीं जितना मैं समझती थी। तुम्हारी वया राय है?"

"हाँ, मैं देख रहा हूँ, सेवस लोगों को उतना बुरा नहीं लगता, जितना मैं समझता था।"

"नहीं चन्द्र, सिर्फ इतना ही नहीं, अच्छा मान लो जैसे तुम आजकल उदास हो और तुम्हारा सिर इस तरह अपनी गोद में रख लूँ तो कुछ सन्तोष नहीं होगा तुम्हें?" और पर्मी ने चन्द्र का सिर सचमुच अपने श्वासान्दोलित वक्ष से चिपका लिया। चन्द्र झल्लाकर अलग हट गया। कैसी अजब लड़की है! थोड़ी देर चुप बैठा रहा, फिर बोला-

"वयों पर्मी, तुम एक लड़की हो, मैं तुम्हीं से पूछता हूँ-वया लड़कियों के प्रेम में सेवस अनिवार्य है?"

"हाँ।" पर्मी ने स्पष्ट स्वरों में जोर देकर कहा।

"लेकिन पर्मी, मैं तुमसे नाम तो नहीं बताऊँगा लेकिन एक लड़की है जिसको मैंने प्यार किया है लेकिन शायद वह मुझसे शादी नहीं कर पाएगी। मैरे उसके कोई शारीरिक सम्बन्ध भी नहीं हैं। वया तुम इसे प्यार नहीं कहोगी?"

"कुछ दिन बाद जब उसकी शादी हो जाये तब पूछना, तुम्हारा सारा प्रेम मर जाएगा। पहले मैं भी तुमसे कहती थी-पुरुष और नारी के सम्बन्धों में एक अन्तर जरूरी है। अब लगता है यह सब एक भुलावा है।" अपने से पर्मी ने कहा।

"लेकिन दूसरी बात तो सुनो, उसी की एक सखी है। वह जानती है कि मैं उसकी सखी को प्यार करता हूँ, उसे नहीं कर सकता। कहीं सेवस की तृप्ति का सवाल नहीं फिर भी वह मुझे

प्यार करती हैं इसे तुम क्या कहोगी?” चन्द्र ने पूछा □

“यह और दूसरे ढंग की परिस्थिति हैं देखो कपूर, तुमने हिजोटिज के बारे में नहीं पढ़ा □ ऐसा होता है कि अब कोई हिजोटिस एक लड़की को हिजोटाइज कर रहा है और बगल में एक दूसरी लड़की बैठी है जो चुपचाप यह देख रही है तो वातावरण के प्रभाव से अकसर ऐसा देखा जाता है कि वह भी हिजोटाइज हो जाती है, लेकिन वह एक क्षणिक मानसिक मूर्छा होती है जो टूट जाती है □” पर्मी ने कहा □

चन्द्र को लगा जैसे बहुत कुछ सुलझ गया □ एक क्षण में उसके मन का बहुत-सा भार उतर गया □

“पर्मी, मुझे तुम्हीं एक लड़की मिली जो साफ बातें करती हो और एक शुद्ध तरफ और बुद्धि के धरातल से □ बस, मैं आजकल बुद्धि का उपासक हूँ, भगवान से विद्ध हैं □”

“बुद्धि और शरीर बस यहीं दो आदमी के मूल तत्व हैं □ हृदय तो दोनों के अन्तःसंघर्ष की उत्तमता का नाम है □” पर्मी ने कहा और सहसा घड़ी देखते हुए बोली, “नौ बज रहे हैं, चलो साढ़े नौ से मैटिनी हैं □ आओ, देख आएँ!”

“मुझे कॉलेज जाना है, मैं जाऊँगा नहीं कहीं!”

“आज इतवार है, प्रोफेसर कपूर?” पर्मी चन्द्र को उठाकर बोली, “मैं तुम्हें उदास नहीं होने दूँगी, मेरे मीठे सपने! तुमने भी मुझे इस उदासी के इन्द्रजाल से छुड़ाया था, याद है न?” और चन्द्र के माथे पर अपने गरम मुलायम होठ रख दिये □

माथे पर पर्मी के होठों की गुलाबी आग चन्द्र की नसों को गुदगुदा गयी □ वह क्षण-भर के लिए अपने को भूल गया...पर्मी के रेशमी फ्रॉक के गुदगुदाते हुए स्पर्श, उसके वक्ष की अलश्य गरमाई और उसके स्पर्श के जादू में खो गया □ उसके अंग-अंग में सुबह की शबनम ढलकने लगी □ पर्मी उसके बालों को अँगुलियों से सुलझाती रही □ फिर कपूर के गाल थपथपाकर बोली, “चलो!” कपूर जाकर बैठ गया □ “तुम ड्राइव करो □” पर्मी बोली □ चन्द्र ड्राइव करने लगा और पर्मी कभी उसके कॉलर, कभी उसके बाल, कभी उसके होठों से खेलती रही □

सात चाँद की रानी ने आखिर अपनी निगाहों के जादू से सन्नाटे के प्रेत को जीत लिया □ स्पर्शों के सुकुमार रेशमी तारों ने नगर की आग को शबनम से सींच दिया □ ऊबड़-खाबड़ खंडहर को अंगों के गुलाब की पाँखुरियों से ढेंक दिया और पीड़ा के औंधियारे को सीपिया पलकों से झरने वाली दूधिया चाँदनी से धो दिया □ एक संगीत की लय थी जिसमें रवर्गभृष्ट देवता खो गया, संगीत की लय थी या उदाम यौवन का भरा हुआ ज्वार था जो चन्द्र को एक मासूम फूल की तरह बहा ले गया...जहाँ पूजा-दीप बुझ गया था, वहाँ तरुणाई की सौंस की इन्द्रधनुषी समाँ झिलमिला उठी थी, जहाँ फूल मुरझाकर धूल में मिल गये थे वहाँ पुखराजी स्पर्शों के सुकुमार हरसिंगार झार पड़े....आकाश के चाँद के लिए जिंदगी के आँगन में मचलता हुआ कन्हैया, थाली के प्रतिबिम्ब में ही भूल गया...

चन्द्र की शामें पर्मी के अदम्य रूप की छाँह में मुस्करा उठीं □ ठीक चार बजे पर्मी आती, कार पर चन्द्र को ले जाती और चन्द्र आठ बजे लौटता □ प्यार के बिना कितने महीने कट गये, पर्मी के बिना एक शाम नहीं बीत पाती, लेकिन अब भी चन्द्र ने अपने को इतना दूर रखा था कि कभी पर्मी के होठों के गुलाबों ने चन्द्र के होठों के मँगो से बातें भी नहीं की थीं □

32

एक दिन रात को जब वह लौटा तो देखा कि अपनी कार आ गयी है। उसका मन फूल उठा। जैसे कोई अनाथ भटका हुआ बच्चा अपने संरक्षक की गोद के लिए तड़प उठता है, वैसे ही वह पिछले डेढ़ महीने से डॉक्टर साहब के लिए तरस गया था। जहाँ इस तरह उसके जीवन में सिर्फ नशा और नीरसता थी, वहाँ हृदय के एक कोने में सिर्फ एक सुकुमार भावना शेष रह गयी थी, वह थी डॉक्टर शुक्ला के प्रति। वह भावना कृतज्ञता की भावना नहीं थी, डॉक्टर शुक्ला इतने दूर नहीं थे कि अब वह उनके प्रति कृतज्ञ हो, इतने बड़े हो जाने पर भी वह जब कभी डॉक्टर को देखता था तो लगता था जैसे कोई नन्हा बच्चा अपने अभिभावक की गोद में आकर निश्चिन्त हो जाता हो।

उसने पास आकर देखा, डॉक्टर साहब बरामदे में टहल रहे थे। चन्द्र ठौड़कर उनके पाँव पर निर पड़ा। डॉक्टर साहब ने उसे उठाकर गते से लगा लिया और बड़े प्यार से उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए बोले—“कन्वोकेशन हो गया? डिग्री जीत लाये?”

“जी हाँ!” बड़ी विनम्रता से चन्द्र ने कहा।

“बहुत ठीक, अब डी. लिट्. की तैयारी करो। तुम्हें जल्दी ही सेंट्रल गवर्नरमेंट में जाना है।” डॉक्टर साहब बोले, “मैं तो पंद्रह जनवरी को दिल्ली जा रहा हूँ। कम-से-कम साल भर के लिए?”

“इतनी जल्दी; ऑफर कब आया?” चन्द्र ने अचरज से पूछा।

“मैं उन दिनों दिल्ली गया था न, तभी एजुकेशन मिनिस्टर से बात हुई थी!” डॉक्टर साहब ने चन्द्र को देखते हुए कहा, “अरे, तुम कुछ दुबले हो रहे हो! क्यों महराजिन ने ठीक से काम नहीं किया?”

“नहीं!” चन्द्र हँसकर बोला, “बिनती की शादी ठीक-ठाक हो गयी?”

“बिनती की शादी!” डॉक्टर साहब ने सिर झुकाये हुए, टहलते हुए एक बड़ी फीकी हँसकर कहा, “बिनती और तुम्हारी बुआजी दोनों अन्दर हैं।”

“अन्दर हैं!” चन्द्र को यह रहस्य कुछ समझ में ही नहीं आता था। “इतनी जल्दी बिनती लौट आयी?”

“बिनती गयी ही कहाँ?” डॉक्टर साहब ने बहुत चुपचाप सिर झुका कर कहा और बहुत करुण उदासी उनके मुँह पर छा गयी। वह बेचैनी से बरामदे में टहलने लगे। चन्द्र का साहस नहीं हुआ कुछ पूछने का। कुछ अमंगल अवश्य हुआ है।

वह अन्दर गया। बुआजी अपनी कोठरी में सामान रख रही थीं और बिनती बैठी सिल पर उरद की भीगी दाल पीस रही थी। बिनती ने चन्द्र को देखा, दाल में सने हुए हाथ जोड़कर प्रणाम किया, सिर को आँचल से ढँककर चुपचाप दाल पीसने लगी, कुछ बोली नहीं। चन्द्र ने प्रणाम

किया और जाकर बुआ के पैर हूँ लिये□

“अरे चन्द्र है, आओ बेटवा, हम तो लुट गये!” और बुआ वहीं देहरी पर सिर थामकर बैठ गयी□

“क्या हुआ, बुआजी?”

“होता का भइया! जौन बदा रहा भाग में ओ ही भवा□” और बुआ अपनी धोती से आँसू पौछकर बोलीं, “ई हमरी छाती पर मूँग दरै के लिए बढ़ी रही तौन जमी है□ भगवान कौनों को ऐसी कलंकिनी बिटिया न देइ तीन भाँवरी के बाद बायात उठ गयी, भइया! हमाया तो कुल डूब गया□” और बुआजी ने उच्च स्वर में रुदन शुरू किया□ बिनती ने चुपचाप हाथ धोये और उठकर छत पर चली गयी□

“चुप रहो होइ अब रोय-रोय के काहे जिउ हल्कान करत हुउ□ गुनवन्ती बिटिया बाय, हज्जारन आय के बिटिया के लिए गोडे गिरिहैं□ अपना एकान्त होई के बैठो!” महराजिन ने पूँडी उतारते हुए कहा□

“आखिर बात क्या हुई, महराजिन?” चन्द्र ने पूछा□

महराजिन ने जो बताया उससे पता लगा कि लड़के वाले बहुत ही संकीर्णमना और स्वार्थी थे□ पहले मालूम हुआ कि लड़काउन्होंने ब्रेजुएट बताया था□ वह था इंटर फेल□ फिर दरवाजे पर झगड़ा किया उन्होंने□ डॉक्टर साहब बहुत बिगड़ गये, अन्त में मड़वे में लोगों ने देखा कि लड़के के बायें हाथ की अँगुलियाँ गायब हैं□ डॉक्टर साहब इस बात पर बिगड़े और उन्होंने मड़वे से बिनती को उठवा दिया□ फिर बहुत लड़ाई हुई□ लाठी तक चलने की नौबत आ गयी□ जैसे-तैसे झगड़ा निपटा□ तीन भाँवरों के बाद ब्याह टूट गया□

“अब बताओ, भइया!” सहसा बुआ आँसू पौछकर गरज उठीं-“ई इन्हें का हुइ गवा रहा, इनकी मति मारी गयी□ गुरसे में आय के बिनती को उठवाय लिहिन□ अब हम एती बड़ी बिटिया लै के कहाँ जाई? अब हमरी बिरादरी में कौन पूँछी एका? एता पढ़-लिख के इन्हें का सूझा? और लड़की वाले हमेशा दब के चलै चाहीं□”

“अरे तो क्या आँख बन्द कर लेते? लँगड़े-लूले लड़के से कैसे ब्याह कर देते, बुआ! तुम भी गजब करती हो!” चन्द्र बोला□

“भइया, जेके भाग में लँगड़ा-तूला बदा होई ओका ओही मिली□ लड़कियन को निबाह करै चाही कि सकल देखै चाही□ अबहिन ब्याह के बाद कौनों के हाथ-गोड़ टूट जाये तो औरत अपने आदमी को छोड़ के गली-गली की हाँड़ी चाटै? हम रहे तो जब बिनती तीन बरस की हुई गयी, तब उनकी सकल उजेले में देखा रहा□ जैसा भाग में रहा तैसा होता!”

चन्द्र ने विवित्र हृदय-हीन तर्क को सुना और आश्वर्य से बुआ की ओर देखने लगा□....बुआजी बकती जा रही थीं-

“अब कहते हैं कि बिनती को पढ़उबै! ब्याह न करबै! रही-सही इज्जत भी बेच रहे हैं□ हमार तो किस्मत फूट गयी...” और वे फिर रोने लगीं, “पैदा होते काहे नहीं मर गयी कुलबोरनी...कुलच्छनी...अभागिन!”

सहसा बिनती छत से उतरी और आँगन में आकर खड़ी हो गयी, उसकी आँखों में आग भरी थी-“बस करो, माँजी!” वह चीखकर बोली, “बहुत सुन लिया मैंनैं□ अब और बर्दाशत नहीं होता□ तुम्हारे कोसने से अब तक नहीं मरी, न मर्ज़नी□ अब मैं सुनूँगी नहीं, मैं साफ कह देती हूँ□ तुम्हें मेरी शवल अच्छी नहीं लगती तो जाओ तीरथ-यात्रा में अपना परलोक सुधारो! भगवान

का भजन करो! समझी कि नहीं!”

चन्द्र ने ताज्जुब से बिनती की ओर देखा। वह वही बिनती है जो माँजी की जरा-जरा-सी बात से लिपटकर रोया करती थी। बिनती का चेहरा तमतमाया हुआ था और गुरसे से बदन काँप रहा था। बुआ उछलकर खड़ी हो गयीं और दुगुनी चीखकर बोलीं, “अब बहुत जबान चलै लगी है। कौन है तोर जे के बल पर ई चमक दिखावत है? हम काट के धर देकै, तोके बताय देइत हई। मुँहझाँसी! ऐसी न होती तो काहे ई दिन देखै पड़त। उन्हें तो खाय गयी, हमहूँ का खाय तेव!” अपना मुँह पीटकर बुआ बोलीं।

“तुम इतनी मीठी नहीं हो माँजी कि तुम्हें खा लूँ!” बिनती ने और तड़पकर जवाब दिया। चन्द्र रतब्ध हो गया। यह बिनती पागल हो गयी है। अपनी माँ को क्या कह रही है!

“छिः, बिनती! पागल हो गयी हो क्या? चलो उधर!” चन्द्र ने डॉटकर कहा।

“चुप रहो, चन्द्र! हम भी आठमी हैं, हमने जितना बर्दाशत किया है, हमीं जानते हैं। हम क्यों बर्दाशत करें! और तुमसे क्या मतलब? तुम कौन होते हो हमारे बीच में बोलने वाले?”

“क्या है यह सब? तुम लोग सब पागल हो गये हो क्या? बिनती, यह क्या हो रहा है?” सहसा डॉक्टर साहब ने आकर कहा।

बिनती दौड़कर डॉक्टर साहब से लिपट गयी और रोकर बोली, “मामाजी, मुझे ठीकी के पास भेज दीजिए! मैं यहाँ नहीं रहूँगी।”

“अच्छा बेटी! अच्छा! जाओ चन्द्र!” डॉक्टर साहब ने कहा। बिनती चली गयी तो बुआ जी से बोले, “तुम्हारा दिमांग खराब हो गया है। उस पर गुरसा उतारने से क्या फायदा? हमारे सामने ये सब बातें करेणी तो ठीक नहीं होगा।”

“अरे हम काहे बोलबै! हम तो मर जाई तो अच्छा है...” बुआजी पर जैसे देवी माँ आ गयी हों इस तरह से झूम-झूमकर ये रही थीं...” हम तो वृन्दावन जाय के डूब मरीं। अब हम तुम लोगन की सकल न देखबै। हम मर जाई तो चाहे बिनती को पढ़ायो चाहे नचायो-गवायो। हम अपनी आँख से न देखबै।”

उस रात को किसी ने खाना नहीं खाया। एक विचित्र-सा विषाद सारे घर पर छाया हुआ था। जाड़े की रात का गहन अँधेरा खामोश छाया हुआ था, महज एक अमंगल छाया की तरह कभी-कभी बुआजी का रुदन अँधेरे को झकझोर जाता था।

सभी चुपचाप भूखे सो गये...

दूसरे दिन बिनती उठी और महराजिन के आने के पहले ही उसने चूल्हा जलाकर चाय चढ़ा दी। थोड़ी देर में चाय बनाकर और टोस्ट भूनकर वह डॉक्टर साहब के सामने रख आयी। डॉक्टर साहब कल की बातों से बहुत ही व्याख्यित थे। रात को भी उन्होंने खाना नहीं खाया था, इस वक्त भी उन्होंने मना कर दिया। बिनती चन्द्र के कमरे में गयी, “चन्द्र, मामाजी ने कल यत को भी कुछ नहीं खाया, तुमने भी नहीं खाया, चलो चाय पी लो!”

चन्द्र ने भी मना किया तो बिनती बोली, “तुम पी लोगे तो मामाजी भी शायद पी लें।” चन्द्र चुपचाप गया। बिनती थोड़ी देर में गयी तो देखा दोनों चाय पी रहे हैं। वह आकर मेवा निकालने लगी।

चाय पीते-पीते डॉक्टर साहब ने कहा, “चन्द्र, यह पास-बुक लो। पाँच सौ निकाल लो और दो हजार का हिसाब अलग करवा दो।...अच्छा देखो, मैं तो चला जाऊँगा दिल्ली, बिनती को शाहजहाँपुर भेजना ठीक नहीं है। वहाँ चार रिश्तेदार हैं, बीस तरह की बातें होंगी। लेकिन मैं चाहता हूँ अब आगे जब तक यह चाहे, पढ़े! अगर कहो तो यहाँ छोड़ जाऊँ, तुम पढ़ाते रहना!”

बिनती आ गयी और तश्तरी में भुना मेवा रखकर उसमें नमक मिला रही थी। चन्द्र ने एक स्लाइस उठायी और उस पर नमक लगाते हुए बोला, “वैसे आप यहाँ छोड़ जाएं तो कोई बात नहीं है, लेकिन अकेले घर में अच्छा नहीं लगता। दो-एक रोज की बात दूसरी होती है। एकदम से साल-भर के लिए...आप समझ लें।”

“हाँ बेटा, कहते तो तुम ठीक हो! अच्छा, कॉलेज के होस्टल में अगर रख दिया जाए!” डॉक्टर साहब ने पूछा।

“मैं लड़कियों को होस्टल में रखना ठीक नहीं समझता हूँ।” चन्द्र बोला, “घर के वातावरण और वहाँ के वातावरण में बहुत अन्तर होता है।”

“हाँ, यह भी ठीक है। अच्छा तो इस साल मैं इसे दिल्ली लिये जा रहा हूँ। अगले साल देखा जाएगा।...चन्द्र, इस महीने-भर में मेरा सारा विश्वास हिल गया। सुधा का विवाह कितनी अच्छी जगह किया गया, मगर सुधा पीली पड़ गयी है। कितना दुःख हुआ देखकर! और बिनती के साथ यह हुआ! सबमुच यह जाति, विवाह सभी परम्पराएँ बहुत ही बुरी हैं। बुरी तरह सड़ गयी हैं। उन्हें तो काट फेंकना चाहिए। मेरा तो वैसे इस अनुभव के बाद सारा आदर्श ही बदल गया।”

चन्द्र बहुत अचरज से डॉक्टर साहब की ओर देखने लगा। यही जगह थी, इसी तरह बैठकर डॉक्टर साहब ने जाति-बिरादरी, विवाह आदि सामाजिक परम्पराओं की कितनी प्रशंसा की थी! जिंदगी की लहरों ने छर एक को दस महीने में कहाँ से कहाँ लाकर पटक दिया है। डॉक्टर साहब कहते गये...” हम लोग जिंदगी से दूर रहकर सोचते हैं कि हमारी सामाजिक संरथाएँ खर्ग

हैं, यह तो जब उनमें धँसो तब उनकी गंदगी मातृम होती है। चन्द्र, तुम कोई गैर जात का अच्छा-सा लड़काहूँढो। मैं बिनती की शादी दूसरी बिरादरी में कर दूँगा।”

बिनती, जो और चाय ला रही थी, फौरन बड़े वड़ स्वर में बोली, “मामाजी, आप जहर दे दीजिए लेकिन मैं शादी नहीं करूँगी। क्या आपको मेरी टङता पर विश्वास नहीं?”

“क्यों नहीं, बेटी! अच्छा, जब तक तेरी इच्छा हो, पढ़!”

दूसरे दिन डॉक्टर साहब ने बुआजी को बुलाया और रुपये दे दिये।

“तो, यह पाँच सौ पहले खर्चे के हैं और दो हजार में से तुम्हें धीर-धीर मिलता रहेगा।”

दो-तीन दिन के अन्दर बुआ ने जाने की सारी तैयारी कर ली, लेकिन तीन दिन तक बराबर रोती रहीं। उनके आँसू थमे नहीं। बिनती चुप थी। वह भी कुछ नहीं बोली, चौथे दिन जब वह सामान मोटर पर रखवा चुकीं तो उन्होंने चन्द्र से बिनती को बुलवाया। बिनती आयी तो उन्होंने उसे गले से लगा लिया-और बेहद रोयी। लेकिन डॉक्टर साहब को देखते ही फिर बोल उठी-“हमरी लड़की का दिमाग तुम ही बिगाड़े हो। दुनिया में भाइयों अपना नै होत। अपनी लड़की को बिया दियौ! हमरी लड़की...” फिर बिनती को चिपटाकर रोने लगीं।

चन्द्र चुपचाप खड़ा सोच रहा था, अभी तक बिनती खराब थी। अब डॉक्टर साहब खराब हो गये। बुआ ने रुपये सँभालकर रख लिये और मोटर पर बैठ गयी। समस्त लांछनों के बावजूद डॉक्टर साहब उन्हें पहुँचाने स्टेशन तक गये।

बिनती बहुत ही चुप-सी हो गयी थी। वह किसी से कुछ नहीं बोलती और चुपचाप काम किया करती थी। जब काम से फुरसत पा लेती तो सुधा के कमरे में जाकर लेट जाती और जाने क्या सोचा करती। चन्द्र को बड़ा ताज्जुब होता था बिनती को देखकर। जब बिनती खुश थी, बोलती-चालती थी तो चन्द्र बिनती से चिढ़ गया था, लेकिन बिनती के जीवन का यह नया रूप देखकर पहले की सभी बातें भूल गया। और उससे फिर बात करने की कोशिश करने लगा। लेकिन बिनती ज्यादा बोलती ही नहीं।

एक दिन दोपहर को चन्द्र यूनिवर्सिटी से लौटकर आया और उसने ऐडियो खोल दिया। बिनती एक तृतीय में अमर्जन काटकर ले आयी और रखकर जाने लगी। “मुझे बिनती, क्या तुमने मुझे माफ नहीं किया? मैं कितना व्यथित हूँ, बिनती! अगर तुमको भूल से कुछ कह दिया तो तुम उसका इतना बुरा मान गयीं कि दो-तीन महीने बाद भी नहीं भूलती!”

“नहीं, बुरा मानने की क्या बात है, चन्द्र!” बिनती एक फिकी हँसी-हँसकर बोली, “आखिर नारी का भी एक स्वाभिमान है, मुझे माँ बचपन से कुचलती रही, मैंने तुम्हें दीदी से बढ़कर माना। तुम भी ठोकरें लगाने से बाज नहीं आये, फिर भी मैं सब सहती गयी। उस दिन जब मंडप के नीचे मामाजी ने जबरदस्ती हाथ पकड़कर खड़ा कर दिया तो मुझे उसी क्षण लगा कि मुझमें भी कुछ सत्त्व है, मैं इसीलिए नहीं बनी हूँ कि दुनिया मुझे कुचलती ही रहे। अब मैं विरोध करना, विद्रोह करना भी सीख गयी हूँ। जिंदगी में स्नेह की जगह है, लेकिन स्वाभिमान भी कोई चीज है। और तुम्हें अपनी जिंदगी में किसी की जरूरत भी तो नहीं है!” कहकर बिनती धीर-धीर चली गयी।

अपमान से चन्द्र का चेहरा काला पड़ गया। उसने ऐडियो बन्द कर दिया और तृतीय उठाकर नीचे रख दी और बिना कपड़े बदले पम्मी के यहाँ चल दिया।

मनुष्य का एक स्वभाव होता है। जब वह दूसरे पर दया करता है तो वह चाहता है कि याचक

पूरी तरह विनग्र होकर उसे स्वीकार करें। अगर याचक दान लेने में कठीं भी स्वाभिमान दिखलाता है तो आदमी अपनी दानवृति और दयाभाव भूलकर नृशंसता से उसके स्वाभिमान को कुचलने में व्यरत हो जाता है। आज हफ्तों के बाद चन्द्र के मन में बिनती के लिए कुछ रनेह, कुछ दया जानी थी, बिनती को उदास मौन देखकर; लेकिन बिनती के इस स्वाभिमान-भरे उत्तर ने फिर उसके मन का सोया हुआ साँप जगा दिया था। वह इस स्वाभिमान को तोड़कर रहेगा, उसने सोचा।

पम्मी के यहाँ पहुँचा तो अभी धूप थी □ जेनी कहीं गयी थी, बर्टी अपने तोते को कुछ खिला रहा था □ कपूर को देखते ही हँसकर अभिवादन किया और बोला, “पम्मी अन्दर है!” वह सीधा अन्दर चला गया □ पम्मी अपने शयन-कक्ष में बैठी हुई थी □ कमरे में लम्बी-लम्बी खिड़कियाँ थीं जिनमें लकड़ी के चौखटों में रंग-बिरंगे शीशे लगे हुए थे □ खिड़कियाँ बन्द थीं और सूरज की किरणें इन शीशों पर पड़ रही थीं और पम्मी पर सातों रंग की छायाएँ खेल रही थीं □ वह झुकी हुई सोफे पर अधलेटी कोई किताब पढ़ रही थी □ चन्द्र ने पीछे से जाकर उसकी आँखें बन्द कर लीं और बगल में बैठ गया □

“कपूर!” अपनी सुकुमार अँगुलियों से चन्द्र के हाथ को आँखों पर से हटाते हुए पम्मी बोली और पतकों में बेहद नशा भरकर सोनजुही की मुरकान बिखेरकर चन्द्र को देखने लगी □ चन्द्र ने देखा, वह ब्राउनिंग की कविता पढ़ रही थी □ वह पास बैठ गया □

पम्मी ने उसे अपने वक्ष पर खींच लिया और उसके बालों से खेलने लगी □ चन्द्र थोड़ी देर चुप लेटा रहा, फिर पम्मी के गुलाबी होठों पर अँगुलियाँ रखकर बोला, “पम्मी, तुम्हारे वक्ष पर सिर रखकर मैं जाने क्यों सबकुछ भूल जाता हूँ? पम्मी, दुनिया वासना से इतना घबराती क्यों है? मैं ईमानदारी से कहता हूँ कि अगर किसी को वासनाहीन प्यार करके, किसी के लिए त्याग करके मुझे जितनी शानित मिलती है, पता नहीं क्यों मांसलता में भी उतनी ही शानित मिलती है □ ऐसा लगता है कि शरीर के विकार अगर आध्यात्मिक प्रेम में जाकर शान्त हो जाते हैं तो लगता है आध्यात्मिक प्रेम में प्यासे रह जाने वाले अभाव फिर किसी के मांसल-बन्धन में ही आकर बुझ पाते हैं □ कितना सुख है तुम्हारी ममता में!”

“शी!” चन्द्र के होठों को अपनी अँगुलियों से दबाती हुई पम्मी बोली, “चरम शानित के क्षणों को अनुभव किया करो □ बोलते क्यों हो?”

चन्द्र चुप हो गया □ चुपचाप लेट रहा □

पम्मी की केसर श्वासें उसके माथे को रह-रहकर चूम रही थीं और चन्द्र के बालों को पम्मी के वक्ष में धड़कता हुआ संगीत गुदगुदा रहा था □ चन्द्र का एक हाथ पम्मी के गले में पड़ी इमीटेशन हीरे की माला से खेलने लगा □ सारस के पंखों से भी ज्यादा मुलायम सुकुमार गरदन से छूटने पर अँगुलियाँ लाजवन्ती की पतियों की तरह सकुचा जाती थीं □ माला खोल ली और उसे उतारकर अपने हाथ में ले लिया □ पम्मी ने माला लेने के लिए हाथ बढ़ाया ही था कि गले के बटन टच-से टूट गये...बर्फानी चाँदनी उफनकर छलक पड़ी □ चन्द्र को लगा उसके बालों के नीचे बिजलियों के फूल सिंहर उठे हैं और एक मदमाता नशा टूटते हुए सितारों की तरह उसके शरीर को चीरता हुआ निकल गया □ वह काँप उठा, सचमुच काँप उठा □ नशे में चूर वह उठकर बैठ गया और उसने पम्मी को अपनी गोद में डाल लिया □ पम्मी अनंग के धनुष की प्रत्यंचा की

तरह दोहरी होकर उसकी गोद में पड़ रही □ तरुणाई का चाँद टूटकर दो टुकड़े हो गया था और वासना के तूफान ने झींगे बादल भी हटा दिये थे □ जहरीली चाँदनी ने नागिन बनकर चन्द्र को लपेट लिया □ चन्द्र ने पागल होकर पम्मी को अपनी बाँहों में कस लिया, इतनी प्यास से लगा कि पम्मी का दीपशिखा-सा तन चन्द्र के तन में समा जाएगा □ पम्मी निश्चेष्ट आँखें बन्द किये थीं लेकिन उसके गालों पर जाने क्या खिल उठा था! चन्द्र के गले में उसने मृणाल-सी बाँहें डाल दी थीं □ चन्द्र ने पम्मी के होठों को जैसे अपने होठों में समेट लेना चाहा... इतनी आग... इतनी आग... नशा...

“ठाँय!” सहसा बाहर बन्दूक की आवाज हुई □ चन्द्र चौंक उठा □ उसने अपने बाहुपाश ढीले कर दिये □ लेकिन पम्मी उसके गले में बाँहें डाले बेछोश पड़ी थीं □ चन्द्र ने क्षण-भर पम्मी के भरपूर रूप यौवन को आँखों से पी लेना चाहा □ पम्मी ने अपनी बाँहें हटा लीं और नशे में मखमूर-सी चन्द्र की गोद से एक ओर लुढ़क गयी □ उसे अपने तन-बदन का होश नहीं था □ चन्द्र ने उसके वज्र ठीक किये और फिर झुककर उसकी नशे में चूर पलकें चूम लीं □

“ठाँय!” बन्दूक की दूसरी आवाज हुई □ चन्द्र घबराकर उठा □

“यह क्या है, पम्मी?”

“होगा कुछ, जाओ मत □” अलसायी हुई नशीली आवाज में पम्मी ने कहा और उसे फिर खींचकर बिठा लिया □ और फिर बाँहों में उसे समेटकर उसका माथा चूम लिया □

“ठाँय!” फिर तीसरी आवाज हुई □

चन्द्र उठ खड़ा हुआ और जल्दी से बाहर दौड़ गया □ देखा बर्टी की बन्दूक बरामदे में पड़ी है, और वह पिंजड़े के पास मेरे हुए तोते का पंख पकड़कर उठाये हुए हैं □ उसके घावों से बर्टी के पतलून पर खून चू रहा था □ चन्द्र को देखते ही बर्टी हँस पड़ा, “देखा! तीन गोली में इसे बिलकुल मार डाला, वह तो कहो सिर्फ एक ही लगी वरना...” और पंख पकड़कर तोते की लाश को झुलाने लगा □

“छिः! फँको उसे; हत्यारे कहीं के! मार क्यों डाला उसे?” चन्द्र ने कहा □

“तुमसे मतलब! तुम कौन होते हो पूछने वाले? मैं प्यार करता था उसे, मैंने मार डाला!” बर्टी बोला और आहिस्ते से उसे एक पत्थर पर रख दिया □ रुमाल निकालकर फाड़ डाला □ आधा रुमाल उसके नीचे बिछा दिया और आधे से उसका खून पोंछने लगा □ फिर चन्द्र के पास आया □ चन्द्र के कन्धे पर हाथ रखकर बोला, “कपूर! तुम मेरे दोस्त हो न! जरा रुमाल दे दो □” और चन्द्र का रुमाल लेकर तोते के पास खड़ा हो गया □ बड़ी हसरत से उसकी ओर देखता रहा □ फिर झुककर उसे चूम लिया और उस पर रुमाल ओढ़ा दिया □ और बड़े मातम की मुद्रा में उसी के पास सिर झुकाकर बैठ गया □

“बर्टी, बर्टी, पागल हो गये क्या?” चन्द्र ने उसका कन्धा पकड़कर हिलाते हुए कहा, “यह क्या नाटक हो रहा है?”

बर्टी ने आँखें खोलीं और चन्द्र को भी हाथ पकड़कर वहीं बिठा लिया और बोला, “देखो कपूर, एक दिन तुम आये थे तो मैंने तोता और जेनी दोनों को दिखाकर कहा था कि जेनी से मैं नफरत करता हूँ, उससे शादी कर लूँगा और तोते से मैं प्यार करता हूँ, इसे मार डालूँगा □ कहा था कि नहीं? कहो हाँ □”

“हाँ, कहा था □” चन्द्र बोला, “लेकिन क्यों कहा था?”

“हाँ, अब पूछा तुमने! तुम पूछोगे 'मैंने क्यों मार डाला' तो मैं कहूँगा कि इसे अब मर जाना चाहिए था, इसलिए इसे मार डाला □ तुम पूछोगे, 'इसे क्यों मर जाना चाहिए?' तो मैं कहूँगा, 'जब कोई जीवन की पूर्णता पर पहुँचा जाता है तो उसे मर जाना चाहिए □ अगर वह अपनी जिंदगी का लक्ष्य पूरा कर चुका है और नहीं मरता तो यह उसका अन्याय है □ वह अपनी जिंदगी का लक्ष्य पूरा कर चुका था, फिर भी नहीं मरता था □ मैं इसे प्यार करता था लेकिन यह अन्याय नहीं सह सकता था, अतः मैंने इसे मार डाला!”

“अच्छा, तो तुम्हारे तोते की भी जिंदगी का कोई लक्ष्य था?”

“हरेक की जिंदगी का लक्ष्य होता है □ और वह लक्ष्य होता है सत्य को, चरम सत्य को जान जाना □ वह सत्य जान लेने के बाद आदमी अगर जिन्दा रहता है, तो उसकी यह असीम बेहयाई है □ मैंने इसे वह सत्य सिखा दिया □ फिर भी यह नहीं मरा तो मैंने मार डाला □ फिर तुम पूछोगे कि वह चरम सत्य क्या है? वह सत्य है कि मौत आदमी के शरीर की हत्या करती है □ और आदमी की हत्या गला घोंट देती है □ मसलन तुम अगर किसी औरत के पास जा रहे हो या किसी औरत के पास से आ रहे हो □ और सम्भव है उसने तुम्हारी आत्मा की हत्या कर डाली हो...”

“ऊँह! अब तुम जल्दी ही पूरे पागल हो जाओगे?” चन्द्र ने कहा और फिर वह पर्मी के पास लौट गया □ पर्मी उसी तरह मदहोश लेटी थी □ उसने जाते ही फिर बाँहें फैलाकर चन्द्र को समेट लिया और चन्द्र उसके वक्ष की रेशमी गरमाई में ढूब गया □

जब वह लौटा तो बर्टी हाथ में खुरणा लिये एक गड्ढां बन्द कर रहा था □ “सुनो, कपूर! यहाँ मैंने उसे गाड़ दिया □ यह उसकी समाधि है □ और देखो, आते-आते यहाँ सिर झुका देना □ वह बेचारा जीवन का सत्य जान चुका है □ समझ लो वह सेंट पैरेट (सन्त शुकदेव) हो गया है!”

“अच्छा, अच्छा!” चन्द्र सिर झुकाकर हँसते हुए आगे बढ़ा □

“सुनो, रुको कपूर!” फिर बर्टी ने पुकारा और पास आकर चन्द्र के कन्धे पर हाथ रखकर बोला, “कपूर, तुम मानते हो कि नहीं कि पहले मैं एक असाधारण आदमी था □”

“अब भी हो □” चन्द्र हँसते हुए बोला □

“नहीं, अब मैं असाधारण नहीं हूँ, कपूर! देखो, तुम्हें आज रहस्य बताऊँ □ वही आदमी असाधारण होता है जो किसी परिस्थिति में किसी भी तथ्य को स्वीकार नहीं करता, उनका निषेध करता चलता है □ जब वह किसी को भी स्वीकार कर लेता है, तब वह पराजित हो जाता है □ मैं तो कहूँगा असाधारण आदमी बनने के लिए सत्य को भी स्वीकार नहीं करना चाहिए □”

“क्या मतलब, बर्टी! तुम तो दर्शन की भाषा में बोल रहे हो □ मैं अर्थशास्त्र का विद्यार्थी हूँ, भाई!” चन्द्र ने कौतूहल से कहा □

“देखो, अब मैंने विवाह स्वीकार कर लिया □ जेनी को स्वीकार कर लिया □ चाहे यह जीवन का सत्य ही क्यों न हो पर महता तो निषेध में होती है □ सबसे बड़ा आदमी वह होता है जो अपना निषेध कर दे...लेकिन मैं अब साधारण आदमी हूँ □ सर्ती किस्म का अदना व्यक्ति □ मुझे कितना दुख है आज □ मेरा तोता भी मर गया और मेरी असाधारणता भी □” और बर्टी फिर तोते की कब्र के पास सिर झुकाकर बैठ गया □

35

वह घर पहुँचा तो उसके पाँव जमीन पर नहीं पड़ रहे थे। उसने उफनी हुई चाँदनी चूमी थी, उसने तरुणाई के चाँद को स्पर्शों से सिंहया दिया था, उसने नीली बिजलियाँ चूमी थीं। प्राणों की सिंहरन और गुदगुदी से खेलकर वह आ रहा था, वह पम्मी के होठों के गुलाबों को चूम-चूमकर गुलाबों के देश में पहुँच गया था और उसकी नसों में बहते हुए इस में गुलाब झूम उठे थे। वह सिर से पैर तक एक मदहोश प्यास बना हुआ था। घर पहुँचा तो जैसा उल्लास से उसका अंग-अंग नाच रहा हो। बिनती के प्रति दोपहर को जो आक्रोश उसके मन में उभर आया था, वह भी शान्त हो गया था।

बिनती ने आकर खाना रखा। चन्द्र ने बहुत हँसते हुए, बड़े मीठे स्वर में कहा, “बिनती, आज तुम भी खाओ।”

“नहीं, मैं नीचे खाऊँगी।”

“अरे चल बैठ, गिलहरी!” चन्द्र ने बहुत दिन पहले के स्वर में कहा और बिनती के पीठ में एक धूंसा मारकर उसे पास बिठा लिया। “आज तुम्हें नाराज नहीं रहने देंगे। तो खा, पगली।”

नफरत से नफरत बढ़ती है, प्यार से प्यार जागता है। बिनती के मन का सारा स्नेह सूख-सा गया था। वह विड़विड़ी, स्वाभिमानी, गमधीर और झखी हो गयी थी लेकिन औरत बहुत कमजोर होती है। ईश्वर न करे, कोई उसके हृदय की ममता को छू ले। वह सबकुछ बर्दाश्त कर लेती है लेकिन अगर कोई किसी तरह उसके मन के रस को जगा दे, तो वह फिर अपना सब अभिमान भूल जाती है। चन्द्र ने, जब वह यहाँ आयी थी, तभी से उसके हृदय की ममता जीत ली थी। इसलिए चन्द्र के सामने सदा झुकती आयी लेकिन पिछली बार से चन्द्र ने ठोकर मारकर सारा स्नेह बिखरे दिया था। उसके बाद उसके व्यक्तित्व का रस सूखता ही गया। क्रोध जैसे उसकी भौंहों पर रखा रहता था।

आज चन्द्र ने उसको इतने दुलार से बुलाया तो लगा वह जाने कितने दिनों का भूला स्वर सुन रही है। चाहे चन्द्र के प्रति उसके मन में कुछ भी आक्रोश क्यों न हो, लेकिन वह इस स्वर का आग्रह नहीं टाल सकती, यह वह भली प्रकार जानती थी। वह बैठ गयी। चन्द्र ने एक कौर बनाकर बिनती के मुँह में दे दिया। बिनती ने खा लिया। चन्द्र ने बिनती की बाँह में चुटकी काट कर कहा। “अब दिमाग ठीक हो गया पगली का! इतने दिनों से अकड़ी फिरती थी!”

“हूँ!” बिनती ने बहुत दिन के भूले हुए स्नेह के स्वर में कहा, “खुद ही तो अपना दिमाग बिगड़े रहते हैं और हमें इल्जाम लगाते हैं। तरकारी ठण्डी तो नहीं हैं?”

दोनों में सुलह हो गयी...जाड़ा अब काफी बढ़ गया था। खाना खा चुकने के बाद बिनती शाल ओढ़े चन्द्र के पास आयी और बोली, “लो, इलायची खाओगे?” चन्द्र ने ले ली। छीलकर आधे दाने खुद खा लिये, आधे बिनती के मुँह में दे दिये। बिनती ने धीरे से चन्द्र की अँगुली ढाँत से

दबा दी ॥ चन्द्र ने हाथ खींच लिया ॥ बिनती उसी के पलँग पर पास ही बैठ गयी और बोली, “याद हैं तुम्हें? इसी पलँग पर तुम्हारा सिर दबा रही थी तो तुमने शीशी फेंक दी थी ॥”

“हाँ, याद है! अब कहो तुम्हें उठाकर फेंक दूँ ॥” चन्द्र आज बहुत खुश था ॥

“मुझे क्या फेंकोगे!” बिनती ने शरारत से मुँह बनाकर कहा, “मैं तुमसे उर्ध्वंगी ही नहीं!”

जब अंगों का तूफान एक बार उठना सीख लेता है तो दूसरी बार उठते हुए उसे देर नहीं लगती ॥ अभी वह अपने तूफान में परमी को पीसकर आया था ॥ सिरहाने बैठी हुई बिनती, हल्का बादामी शाल ओढ़े, रह-रहकर मुस्कराती और गालों पर फूलों के कटोरे खिल जाते, आँख में एक नयी चमक ॥ चन्द्र थोड़ी देर देखता रहा, उसके बाद उसने बिनती को खींचकर कुछ हिचकते हुए बिनती के माथे पर अपने होठ रख दिये ॥ बिनती कुछ नहीं बोली ॥ चुपचाप अपने को छुड़ाकर सिर झुकाये बैठी रही और चन्द्र के हाथ को अपने हाथ में लेकर उसकी अँगुलियाँ चिटकाती रही ॥ सहसा बोली, “अे, तुम्हारे कफ का बटन टूट गया है, लाओ सिल दूँ ॥”

चन्द्र को पहले कुछ आश्वर्य हुआ, फिर कुछ ब्लानि ॥ बिनती कितना समर्पण करती है, उसके सामने वह...लेकिन उसने अच्छा नहीं किया ॥ परमी की बात दूसरी है, बिनती की बात दूसरी ॥ बिनती के साथ एक पवित्र अन्तर ही ठीक रहता-

बिनती आयी और उसके कफ में बटन सीने लगी...सीते-सीते बचे हुए डोरे को दाँत से तोड़ती हुई बोली, “चन्द्र, एक बात कहें मानोगे?”

“क्या?”

“परमी के यहाँ मत जाया करो ॥”

“क्यों?”

“परमी अच्छी औरत नहीं है ॥ वह तुम्हें प्यार नहीं करती, तुम्हें बिगाड़ती है ॥”

“यह बात गलत है, बिनती! तुम इसीलिए कह रही हो न कि उसमें वासना बहुत तीखी है!”

“नहीं, यह नहीं ॥ उसने तुम्हारी जिंदगी में सिर्फ एक नशा, एक वासना दी, कोई ऊँचाई, कोई पवित्रता नहीं ॥ कहाँ दीदी, कहाँ परमी? किस स्वर्ण से उतरकर तुम किस नरक में फँस गये!”

“पहले मैं भी यही सोचता था बिनती, लेकिन बाद मैं मैंने सोचा कि माना किसी लड़की के जीवन में वासना ही तीखी है, तो क्या इसी से वह निन्दनीय है? क्या वासना खत: में निन्दनीय है? गलत! यह तो खभाव और व्यक्तित्व का अन्तर है, बिनती! हरेक से हम कल्पना नहीं माँग सकते, हरेक से वासना नहीं पा सकते ॥ बादल है, उस पर किरण पड़ेगी, इन्द्रधनुष ही खिलेगा, फूल है, उस पर किरण पड़ेगी, तबस्सुम ही आएगा ॥ बादल से हम माँगने लगें तबस्सुम और फूल से माँगने लगें इन्द्रधनुष, तो यह तो हमारी एक कवित्वमयी भूल होगी ॥ माना एक लड़की के जीवन में प्यार आया, उसने अपने देवता के चरणों पर अपनी कल्पना चढ़ा दी ॥ दूसरी के जीवन में प्यार आया, उसने चुम्बन, आलिंगन और गुदगुदी की बिजलियाँ दीं ॥ एक बोली, ‘देवता मेरे! मेरा शरीर चाहे जिसका हो, मेरी पूजा-भावना, मेरी आत्मा तुम्हारी है और वह जन्म-जन्मान्तर तक तुम्हारी रहेगी...’ और दूसरी दीपशिखा-सी लहराकर बोली, ‘दुनिया कुछ कहे अब तो मेरा तन-मन तुम्हारा है ॥ मैं तो बेकाबू हूँ! मैं करूँ क्या? मेरे तो अंग-अंग जैसे अलसा कर चूर हो गये हैं तुम्हारी गोद में निर पड़ने के लिए, मेरी तरुणाई पुलक उठी है तुम्हारे आलिंगन में पिस जाने के लिए ॥ मेरे लाज के बन्धन जैसे शिथिल हुए जाते हैं? मैं करूँ तो क्या करूँ? कैसा नशा पिला दिया है तुमने, मैं सब कुछ भूल गयी हूँ ॥ तुम चाहे जिसे अपनी कल्पना दो, अपनी आत्मा दो,

लेकिन एक बार अपने जलते हुए होठों में मेरे नरम गुलाबी होठ समेट लो न!" बताओ बिनती, क्यों पहली की भावना ठीक है और दूसरी की प्यास गलत?"

बिनती कुछ देर तक चुप रही, फिर बोली, "चन्द्र, तुम बहुत गहराई से सोचते हो □ लेकिन मैं तो एक मोटी-सी बात जानती हूँ कि जिसके जीवन में वह प्यास जग जाती है वह फिर किसी भी सीमा तक निर सकता है □ लेकिन जिसने त्याग किया, जिसकी कल्पना जानी, वह किसी भी सीमा तक उठ सकता है □ मैंने तो तुम्हें उठते हुए देखा है □"

"गलत है, बिनती! तुमने गिरते हुए देखा है मुझे! तुम मानोगी कि सुधा से मुझे कल्पना ही मिली थी, त्याग ही मिला था, पवित्रता ही मिली थी □ पर वह कितनी दिन टिकी! और तुम यह कैसे कह सकती हो कि वासना आदमी को नीचे ही नियाती है □ तुम आज ही की घटना लो □ तुम यह तो मानोगी कि अभी तक मैंने तुम्हें अपमान और तिरस्कार ही दिया था □"

"खैर, उसकी बात जाने दो!" बिनती बोली □

"नहीं, बात आ गयी तो मैं साफ कहता हूँ कि आज मैंने तुम्हारा प्रतिदान देने की सोची, आज तुम्हारे लिए मन में बड़ा स्नेह उमड़ आया □ क्यों? जानती हो? परमी ने आज अपने बाहुपाश में कसकर जैसे मेरे मन की सारी कटुता, सारा विष खींच लिया □ मुझे लगा बहुत दिन बाद मैं फिर पिशाच नहीं, आदमी हूँ □ यह वासना का ही दान है □ तुम कैसे कहोगी कि वासना आदमी को नीचे ही ले जाती है!"

बिनती कुछ नहीं बोली, चन्द्र भी थोड़ी देर चुप रहा □ फिर बोला, "लेकिन एक बात पूछँ, बिनती?"

"क्या?"

"बहुत अजब-सी बात है □ सोच रहा हूँ पूछँ या न पूछँ!"

"पूछो न!"

"अभी मैंने तुम्हारे माथे पर होठ रख दिये, तुम कुछ भी नहीं बोलीं, और मैं जानता हूँ यह कुछ अनुचित-सा था □ तुम परमी नहीं हो! फिर भी तुमने कुछ भी विशेष नहीं किया...?"

बिनती थोड़ी देर तक चुपचाप अपने पाँव की ओर देखती रही □ फिर शाल के छोर से एक डोर खींचते हुए बोली, "चन्द्र, मैं अपने को कुछ समझ नहीं पाती □ सिर्फ इतना जानती हूँ कि मेरे मन में तुम जाने क्या हो; इतने महान हो, इतने महान हो कि मैं तुम्हें प्यार नहीं कर पाती, लेकिन तुम्हारे लिए कुछ भी करने से अपने को रोक नहीं सकती □ लगता है तुम्हारा व्यक्तिगत, उसकी शक्ति और उसकी दुर्बलताएँ, उसकी प्यास और उसका सन्तोष, इतना महान है, इतना गहरा है कि उसके सामने मेरा व्यक्तिगत कुछ भी नहीं है □ मेरी पवित्रता, मेरी अपवित्रता, इन सबसे ज्यादा महान तुम्हारी प्यास है □...लेकिन अगर तुम्हारे मन में मेरे लिए जरा भी स्नेह है तो तुम परमी से सम्बन्ध तोड़ लो □ दीदी से अगर मैं बताऊँगी तो जाने क्या हो जाएगा! और तुम जानते नहीं, दीदी अब कैसी हो गयी है? तुम देखो तो आँसू..."

"बस! बस!" चन्द्र ने अपने हाथ से बिनती का मुँह बन्द करते हुए कहा, "सुधा की बात मत करो, तुम्हें कसम है □ जिंदगी के जिस पछलू को हम भूल चुके हैं, उसे कुरेदने से क्या फायदा?"

"अच्छा, अच्छा!" चन्द्र का हाथ हटाकर बिनती बोली, "लेकिन परमी को अपनी जिंदगी से हटा दो □"

"यह नहीं हो सकता, बिनती?" चन्द्र बोला, "और जो कहो, वह मैं कर दूँगा □ हाँ, तुम्हारे प्रति

आज तक जो दुर्व्यवहार हुआ है, उसके लिए मैं तुमसे क्षमा माँगता हूँ॥”

“छि:, चन्द्र! मुझे शर्मिन्दा मत करो॥” काफी रात हो गयी थी॥ चन्द्र लेट गया॥ बिनती ने उसे र्जाई उड़ा दी और टेबल पर बिजली का स्टैंड रखकर बोली, “अब चुपचाप सो जाओ॥” बिनती चली गयी॥ चन्द्र पड़ा-पड़ा सोचने लगा, दुनिया गलत कहती है कि वासना पाप है॥ वासना से भी पवित्रता और क्षमाशीलता आती है॥ पर्मी से उसे जो कुछ मिला, वह अगर पाप है तो आज चन्द्र ने जो बिनती को दिया, उसमें इतनी क्षमा, इतनी उदारता और इतनी शान्ति क्यों थी?

उसके बाद बिनती को वह बहुत दुलार और पवित्रता से रखने लगा॥ कभी-कभी जब वह घूमने जाता तो बिनती को भी ले जाता था॥ न्यू ईयर्स डे के दिन पर्मी ने दोनों की दावत की॥ बिनती पर्मी के पीछे चाहे चन्द्र से पर्मी का विरोध कर ले पर पर्मी के सामने बहुत शिष्टता और र्जेह का बरताव करती थी॥

डॉक्टर साहब की दिल्ली जाने की तैयारी हो गयी॥ बिनती ने कार्यक्रम में कुछ परिवर्तन करा लिया था॥ अब वह पहले डॉक्टर साहब के साथ शाहजहाँपुर जाएगी और तब दिल्ली॥

निश्चय करते-करते अन्त में पहली फरवरी को वे लोग गये॥ स्टेशन पर बहुत-से विद्यार्थी और डॉक्टर साहब के मित्र उन्हें विदा देने के लिए आये थे॥ बिनती विद्यार्थियों की भीड़ से घबराकर इधर चली आयी और चन्द्र को बुलाकर कहने लगी- “चन्द्र! दीदी के लिए एक खत तो दे दो!”

“नहीं॥” चन्द्र ने बहुत रुखे और दृढ़ रुखर में कहा॥

बिनती कुछ क्षण तक एकटक चन्द्र की ओर देखती रही; फिर बोली, “चन्द्र, मन की श्रद्धा चाहे अब भी वैसी हो, लेकिन तुम पर अब विश्वास नहीं रहा॥”

चन्द्र ने कुछ जवाब नहीं दिया, सिर्फ हँस पड़ा॥ फिर बोली, “चन्द्र, अगर कभी कोई जरूरत हो तो जरूर लिखना, मैं चली आँँगी, समझो?” और फिर चुपचाप जाकर बैठ गयी॥

जब चन्द्र लौटा तो उसके साथ कई साथी प्रोफेसर थे॥ घर पहुँचकर वह कार लेकर पर्मी के यहाँ चल दिया॥ पता नहीं क्यों बिनती के जाने का चन्द्र को कुछ थोड़ा-सा दुःख था॥

गरमी का मौसम आ गया था □ चन्द्र सुबह कॉलेज जाता, दोपहर को सोता और शाम को वह नियमित रूप से पर्मी को लेकर धूमने जाता □ डॉक्टर साहब कार छोड़ गये थे □ कार पर्मी और चन्द्र को लेकर दूर-दूर का चक्कर लगाया करती थी □ इस बार उसने अपनी छुट्टियाँ दिल्ली में ही बिताने की सोची थीं □ पर्मी ने भी तय किया था कि मस्तूरी से लौटते समय जुलाई में वह एक हफ्ते आकर डॉक्टर शुक्ला की मेहमानी करेगी और दिल्ली के पूर्वपरिचितों से भी मिल लेगी □ यह नहीं कहा जा सकता कि चन्द्र के दिन अच्छी तरह नहीं बीत रहे थे □ उसने अपना अतीत भुला दिया था और वर्तमान को वह पर्मी की नशीली निगाहों में डुबो चुका था □ भविष्य की उसे कोई खास चिन्ता नहीं थी □ उसे लगता था कि यह पर्मी की निगाहों के बादलों और स्पर्शों के फूलों की जादू भी दुनिया अमर है, शाखत है □ इस जादू ने हमेशा के लिए उसकी आत्मा को अभिभूत कर लिया है, ये होठ कभी अलग न होंगे, यह बाहुपाश इसी तरह उसे घेरे रहेगा और पर्मी की गरम तरुण साँसें सदा इसी प्रकार उसके कपोतों को सिंहराती रहेंगी □ आदमी का विश्वास हमेशा सीमाएँ और अन्त भूल जाने का आदी होता है □ चन्द्र भी सबकुछ भूल चुका था □

अप्रैल की एक शाम □ दिन-भर लू चलकर अब थक गयी थी □ लेकिन दिन-भर की लू की वजह से आसमान में इतनी धूल भर गयी थी कि धूप भी हल्की पड़ गयी थी □ माली बाहर छिड़काव कर रहा था □ चन्द्र सोकर उठा था और सुर्खी मिटा रहा था □ थोड़ी देर बाद वह उठा, दिशाओं की ओर निरुद्देश्य देखने लगा □ बड़ी उदास-सी शाम थी □ सड़क भी बिल्कुल सूनी थी, सिर्फ दो-एक साइकिल-सवार लू से बचने के लिए कानों पर तौलिया लपेटे हुए चले जा रहे थे □ एक बर्फ का ठेला भी चला जा रहा था □ “जाओ, बर्फ ले आओ?” चन्द्र ने माली को पैसे देते हुए कहा □ माली ने ठेलावाले को बुलाया □ ठेलावाला आकर फाटक पर रुक गया □ माली बर्फ तुड़वा ही रहा था कि एक रिक्शा, जिस पर परदा बैंधा था, वह भी फाटक के पास मुड़ा और ठेले के पास आकर रुक गया □ ठेलावाले ने ठेला पीछे किया □ रिक्शा अन्दर आया □ रिक्शा में कोई परदानशीन औरत बैठी थी, लेकिन रिक्शा के साथ कोई नहीं था, चन्द्र को ताज्जुब हुआ, कौन परदानशीन यहाँ आ सकती है! रिक्शा से एक लड़की उतरी जिसे चन्द्र नहीं जानता था, लेकिन बाहर का परदा जितना गन्दा और पुराना था, लड़की की पोशाक उतनी ही साफ और चुस्त □ वह सफेद रेशम की सलवार, सफेद रेशम का चुस्त कुरता और उस पर बहुत हल्के शरबती फालसई रंग की चुन्नी ओढ़े हुई थी □ वह उतरी और रिक्शावाले से बोली, “अब घंटे भर में आकर मुझे ले जाना □” रिक्शावाला सिर हिलाकर चल दिया और वह सीधे अन्दर चल दी □ चन्द्र को बड़ा अचरज हुआ □ यह कौन हो सकती है जो इतनी बेतकल्तुफी से अन्दर चल दी □ उसने सोचा, शायद शरणार्थियों के लिए चन्दा माँगने वाली कोई लड़की हो □ मगर अन्दर तो

कोई है ढी नहीं! उसने चाहा कि रोक दे फिर उसने नहीं रोका। सोचा, खुद ही अन्दर खाली देखकर लौट आएगी।

माली बर्फ लेकर आया और अन्दर चला गया। वह लड़की लौटी। उसके चेहरे पर कुछ आश्चर्य और कुछ चिनता की रेखाएँ थीं। अब चन्द्र ने उसे देखा। एक साँवली लड़की थी, कुछ उदास, कुछ बीमार-सी लगती थी। आँखें बड़ी-बड़ी लगती थीं जो रोना भूल चुकी हैं और हँसने में भी अशक्त हैं। चेहरे पर एक पीली छाँह थी। ऐसा लगता था, देखने ही से कि लड़की दुःखी है पर अपने को सँभालना जानती है।

वह आयी और बड़ी फीकी मुरकान के साथ, बड़ी शिष्टता के स्वर में बोली, “चन्द्र भाई, सलाम! सुधा क्या ससुराल में है?”

चन्द्र का आश्चर्य और भी बढ़ गया। यह तो चन्द्र को जानती भी है!

“जी हाँ, वह ससुराल में है। आप...”

“और बिनती कहाँ है?” लड़की ने बात काटकर पूछा।

“बिनती दिल्ली में है।”

“क्या उसकी भी शादी हो गयी?”

“जी नहीं, डॉक्टर साहब आजकल दिल्ली में हैं। वह उन्हीं के पास पढ़ रही है। बैठ तो जाइए!”

चन्द्र ने कुर्सी रिसकाकर कहा।

“अच्छा, तो आप यहाँ रहते हैं अब? नौकर हो गये होंगे?”

“जी हाँ!” चन्द्र ने अचरज में डूबकर कहा, “लेकिन आप इतनी जानकारी और परिचय की बातें कर रही हैं, मैंने आपको पहचाना नहीं, क्षमा कीजिएगा...”

वह लड़की हँसी, जैसे अपनी किस्मत, जिंदगी, अपने इतिहास पर हँस रही थी।

“आप मुझको कैसे पहचान सकते हैं? मैं जरूर आपको देख चुकी थी। मैरे-आपके बीच में दरअसल एक रोशनदान था, मेरा मतलब सुधा से है!”

“ओह! मैं समझा, आप गेसू हैं!”

“जी हाँ!” और गेसू ने बहुत तमीज से अपनी चुन्नी ओढ़ ली।

“आप तो शादी के बाद जैसे बिल्कुल खो ही गयीं। अपनी सहेली को भी एक खत नहीं लिखा। अख्लार मियाँ मजे में हैं?”

“आपको यह सब कैसे मालूम?” बहुत आकुल होकर गेसू बोली और उसकी पीली आँखों में और भी मैलापन आ गया।

“मुझे सुधा से मालूम हुआ था। मैं तो उम्मीद कर रहा था कि आप हम लोगों को एक दावत जरूर देंगी। लेकिन कुछ मालूम ही नहीं हुआ। एक बार सुधाजी ने मुझे आपके यहाँ भेजा तो मालूम हुआ कि आप लोगों ने मकान ही छोड़ दिया है।”

“जी हाँ, मैं देहरादून में थी। अम्मीजान वगैरह सभी वहीं थीं। अभी हाल में वहाँ कुछ पनाहगीर पहुँचे...”

“पनाहगीर?”

“जी, पंजाब के सिख वगैरह। कुछ झगड़ा हो गया तो हम लोग चले आये। अब हम लोग यहाँ हैं।”

“अख्लार मियाँ कहाँ हैं?”

“मिरजापुर में पीतल का योजगार कर रहे हैं!”

“और उनकी बीवी देहयादून में थी □ यह सजा क्यों दी आपने उन्हें?”

“सजा की कोई बात नहीं □” गेसू का स्वर घुट्टा हुआ-सा मालूम दे रहा था □ “उनकी बीवी उनके साथ है □”

“क्या मतलब? आप तो अजब-सी बातें कर रही हैं □ अगर मैं भूल नहीं करता तो आपकी शादी...”

“जी हाँ!” बड़ी ही उदास हँसी हँसकर गेसू बोली, “आपसे चन्दर भाई, मैं क्या छिपाऊँगी, जैसे सुधा वैसे आप! मेरी शादी उनसे नहीं हुई!”

“अरे! गुरताखी माफ कीजिएगा, सुधा तो मुझसे कठ रही थी कि अख्तर...”

“मुझसे मुहब्बत करते हैं!” गेसू बात काटकर बोली और बड़ी गम्भीर हो गयी और अपनी चुन्नी के छोर में टैंके हुए सितारे को तोड़ती हुई बोली, “मैं सचमुच नहीं समझ पायी कि उनके मन में क्या था □ उनके घरवालों ने मेरे बजाय फूल को ज्यादा पसन्द किया □ उन्होंने फूल से ही शादी कर ली □ अब अच्छी तरह निभ रही है दोनों की □ फूल तो इतने अरसे में एक बार भी हम लोगों से मिलने नहीं आयी!”

“अच्छा...” चन्दर चुप ठोकर सोचने लगा □ कितनी बड़ी प्रवंचना हुई इस लड़की की जिंदगी में! और कितने दबे शब्दों में यह कहकर चुप हो गयी! एक भी आँख नहीं, एक भी सिसकी नहीं □ संयत स्वर और फीकी मुस्कान, बस □ चन्दर चुपचाप उठकर अन्दर गया □ महराजिन आ गयी थी □ कुछ जाश्ता और शरबत भेजने के लिए कहकर चन्दर बाहर आया □ गेसू चुपचाप लौंग की ओर देख रही थी, शून्य निंगाहों से □ चन्दर आकर बैठ गया और बोला- “बहुत धोखा दिया आपको!”

“छिः! ऐसी बात नहीं कहते, चन्दर भाई! कौन जानता है कि यह अख्तर की मजबूरी रही हो! जिसको मैंने अपना सरताज माना उसके लिए ऐसा खयाल भी दिल में लाना गुनाह है □ मैं इतनी गिरी हुई नहीं कि यह सोचूँ कि उन्होंने धोखा दिया!” गेसू दाँत तले जबान दबाकर बोली □ चन्दर दंग रह गया □ क्या गेसू अपने दिल से कठ रही है? इतना अखंड विश्वास है गेसू को अख्तर पर! शरबत आ गया था □ गेसू ने तकल्लुफ नहीं किया □ लेकिन बोली, “आप बड़े भाई हैं □ पहले आप शुरू कीजिए □”

“आपकी फिर कभी अख्तर से मुलाकात नहीं हुई?” चन्दर ने एक धूँट पीकर कहा □

“हुई क्यों नहीं? कई बार वह अम्मीजान के पास आये □”

“आपने कुछ नहीं कहा?”

“कहती क्या? यह सब बातें कठने-सुनने की होती हैं! और फिर फूल वहाँ आराम से है, अख्तर भी फूल को जान से ज्यादा प्यार से रखते हैं, यही मेरे लिए बहुत है □ और अब कहकर क्या करँगी! जब फूल से शादी तय हुई और वे राजी हो गये तभी मैंने कुछ नहीं कहा, अब तो फूल की माँग, फूल का सुहाना मेरे लिए सुबह की अजान से ज्यादा पाक है □” गेसू ने शरबत में निंगाहे डुबाये हुए कहा □ चन्दर क्षण-भर चुप रहा फिर बोला-

“अब आपकी शादी अम्मीजान कब कर रही हैं?”

“कभी नहीं! मैंने करद कर लिया है कि मैं शादी ताउम्र नहीं करँगी □ देहयादून के मैटर्निटी सेंटर में काम सीख रही थी □ कोर्स पूरा हो गया □ अब किसी अस्पताल में काम करँगी □”

“आप...!”

“क्यों, आपको ताजजुब क्यों हुआ? मैंने अमीजान को इस बात के लिए राजी कर लिया है□ मैं अपने पैरों पर खड़ी होना चाहती हूँ□”

चन्द्र ने शरबत से बर्फ निकालकर फेंकते हुए कहा-

“मैं आपकी जगह होता तो दूसरी शादी करता और अख्लार से भरसक बदला लेता!”

“बदला!” गेसू मुख्यकर बोली, “छि, चन्द्र भाई! बदला, गुरेज, नफरत इससे आदमी न कभी सुधरा है न सुधरेगा□ बदला और नफरत तो अपने मन की कमज़ोरी को जाहिर करते हैं□ और फिर बदला मैं तूँ किससे? उससे, दिल की तनहाइयों में मैं जिसके सजदे पड़ती हूँ□ यह कैसे हो सकता है?”

गेसू के माथे पर विश्वास का तेज ठमक उठा, उसकी बीमार आँखों में धूप लहलहा उठी और उसका कंचनलता-सा तन जगमगाने लगा□ कुछ ऐसी टढ़ता थी उसकी आवाज में, ऐसी गहराई थी उसकी ध्वनि में कि चन्द्र देखता ही रह गया□ वह जानता था कि गेसू के दिल में अख्लार के लिए कितना प्रेम था, वह यह भी जानता था कि गेसू अख्लार की शादी के लिए किस तरह पागल थी□ वह सारा सपना ताश के मठल की तरह गिर गया□ और परिस्थितियों ने नहीं, खुद अख्लार ने धोखा दिया, लेकिन गेसू है कि माथे पर शिकन नहीं, भौंठों में बल नहीं, होठों पर शिकायत नहीं□ नारी के जीवन का यह कैसा अमिट विश्वास था! यानी जिसे गेसू ने अपने प्रेम का स्वर्णमन्दिर समझा था, वह ज्वालामुखी बनकर फूट गया और उसने दर्द की पिघली आग की धारा में गेसू को डुबो देने की कोशिश की लेकिन गेसू है कि अटल चट्टान की तरह खड़ी है□

चन्द्र के मन में कहीं कोई टीस उठी□ उसके दिल की धड़कनों ने कहीं पर उससे पूछा□ ‘...और चन्द्र, तुमने क्या किया? तुम पुरुष थे□ तुम्हारे सबल कंधे किसी के प्यार का बोझ क्यों नहीं ढो पाये, चन्द्र?’ लेकिन चन्द्र ने अपनी अन्तःकरण की आवाज को अनसुनी करते हुए पूछा-“तो आपके मन में जरा भी दर्द नहीं अख्लार को न पाने का?”

“दर्द?” गेसू की आवाज डूबने लगी, निगाहों की जर्द पाँखुरियों पर हल्की पानी की लहर दौड़ गयी-”दर्द, यह तो सिर्फ सुधा समझ सकती है, चन्द्र भाई! बचपन से वह मेरे लिए क्या थे, यह वही जानती है□ मैं तो उनका सपना देखते-देखते उनका सपना ही बन गयी थी, लेकिन खैर दर्द इंसान के यकीदे को और मजबूत न कर दे, आदमी के कदमों को और ताकत न दे, आदमी के दिल को ऊँचाई न दे तो इंसान क्या? दर्द का हाल पूछते हैं आप! क्यामत के रोज तक मेरी मर्याद उन्हीं का आसरा देखेगी, चन्द्र भाई! लेकिन इसके लिए जिंदगी में तो खामोश ही रहना होगा□ बंद घर में जलते हुए चिराग की तरह धुलना होगा□ और अबर मैंने उनको अपना माना है तो वह मिलकर ही रहेंगे□ आज न सही क्यामत के बाद सही□ मुठब्बत की दुनिया में जैसे एक दिन उनके बिना कट जाता है वैसे एक जिंदगी उनके बिना कट जाएगी...लेकिन उसके बाद वे मेरे होकर रहेंगे□”

चन्द्र का दिल काँप उठा□ गेसू की आवाज में तारे बरस रहे थे...

“और आपसे क्या कहूँ, चन्द्र भाई! क्या आपकी बात मुझसे छिपी है? मैं जानती हूँ□ सबकुछ जानती हूँ□ सब पूछिए तो जब मैंने देखा कि आप कितनी खामोशी से अपनी दुनिया में आग लगते देख रहे हैं, और फिर भी हँस रहे हैं, तो मैंने आपसे सबक लिया□ हमें नहीं मालूम था कि हम और आप, दोनों भाई-बहनों की किस्मत एक-सी है□”

चन्द्र के मन में जाने कितने घाव कसक उठे? उसके मन में जाने कितना दर्द उमड़ने-सा लगा? गेसू उसे क्या समझ रही है मन में और वह कहाँ पहुँच चुका है! जिसने चन्द्र की जिंदगी से अपने मन का दीप जलाया, वह आज देवता के चरण तक पहुँच गया, लैकिन चन्द्र के मन की दीपशिखा? उसने अपने प्यार की विता जला डाली? चन्द्र के मुँह पर ब्लानि की कालिमा छा गयी? गेसू चुपचाप बैठी थी? सहसा बोली, “चन्द्र भाई, आपको याद है, पिछले साल इन्हीं दिनों में सुधा से मिलने आयी थी और हसरत आपको मेरा सलाम कहने गया था?”

“याद हैं!” चन्द्र ने बहुत भारी स्वर में कहा?

“इस एक साल में दुनिया कितनी बदल गयी!” गेसू ने एक गहरी साँस लेकर कहा, “एक बार ये दिन चले जाते हैं, फिर बेदर्द कभी नहीं लौटते! कभी-कभी सोचती हूँ कि सुधा होती तो फिर कॉलेज जाते, वलास में शेर मचाते, भागकर घास में लौटते, बादतों को देखते, शेर कहते और वह चन्द्र की और हम अरब्तर की बातें करते...” गेसू का गला भर आया और एक आँसू चू पड़ा... “सुधा और सुधा की ब्याठ-शादी का हाल बताइए? कैसे हैं उनके शौहर?”

चन्द्र के मन में आया कि वह कह दे, गेसू, क्यों लज्जित करती हो! मैं वह चन्द्र नहीं हूँ मैंने अपने विश्वास का मन्दिर श्रष्ट कर दिया...मैं प्रेत हूँ...मैंने सुधा के प्यार का गला घोंट दिया है...लैकिन पुरुष का गर्व! पुरुष का छल! उसे यह भी नहीं मालूम होने दिया कि उसका विश्वास चूर-चूर हो चुका है और पिछले कितने ही महीनों से उसने सुधा को खत लिखना भी बन्द कर दिया है और यह भी नहीं मालूम करने का प्रयास किया कि सुधा मरती है या जीती!

घंटा-भर तक दोनों सुधा के बारे में बातें करते रहे? इतने में रिक्षावाला लौट आया? गेसू ने उसे ठहरने का इशारा किया और बोली, “अच्छा, जरा सुधा का पता लिख दीजिए?” चन्द्र ने एक कान्ज पर पता लिख दिया? गेसू ने उठने का उपक्रम किया तो चन्द्र बोला, “बैठिए अभी, आपसे बातें करके आज जाने कितने दिनों की बातें याद आ रही हैं!”

गेसू हँसी और बैठ गयी? चन्द्र बोला, “आप अभी तक कविताएँ लिखती हैं?”

“कविताएँ...” गेसू फिर हँसी और बोली, “जिंदगी कितनी हमनीर है, कितनी पुरशोर, और इस शेर में नगमों की हकीकत कितनी! अब हड्डियाँ, नसें, प्रेशर-प्वाइंट, पट्टियाँ और मरहमों में दिन बीत जाता है? अच्छा चन्द्र भाई, सुधा अभी उतनी ही शोख है? उतनी ही शरारती है!”

“नहीं?” चन्द्र ने बहुत उदास स्वर में कहा, “जाओ, कभी देख आओ न!”

“नहीं, जब तक कहीं जगह नहीं मिल जाती, तब तक तो इतनी आजादी नहीं मिलेगी? अभी यहीं हूँ उसी को बुलवाऊँगी और उसके पति देवता को लिखूँगी? कितना सूना लग रहा है घर जैसे भूतों का बसेया हो? जैसे परेत रहते हों!”

“क्यों ‘परेत’ बना रही हैं आप? मैं रहता हूँ इसी घर में?” चन्द्र बोला?

“अे, मेरा मतलब यह नहीं था!” गेसू हँसते हुए बोली, “अच्छा, अब मुझे तो अम्मीजान नहीं भेजेंगी, आज जाने कैसे अकेले आने की इजाजत दे दी? आपको किसी दिन बुलवाऊँ तो आइएगा जरूर!”

“हाँ, आऊँगा गेसू, जरूर आऊँगा!” चन्द्र ने बहुत झोंक से कहा?

“अच्छा भाईजान, सलाम!”

“नमस्ते!”

गेसू जाकर रिक्षा पर बैठ गयी और परदा तन गया? रिक्षा चल दिया? चन्द्र एक अजीब-सी

निंगाह से देखता रहा जैसे अपने अतीत की कोई खोयी हुई चीज ढूँढ़ रहा हो, फिर धीरे-धीरे लौट आया। सूरज डूब गया था। वह गुसलखाना बन्द कर नहाने बैठ गया। जाने कहाँ-कहाँ मन भटक रहा था उसका। चन्द्र मन का अस्थिर था, मन का बुरा नहीं था। गेसू ने आज उसके सामने अचानक वह तस्वीर रख दी थी जिसमें वह रवर्ण की ऊँचाइयों पर मँडराया करता था। और जाने कैसा दर्द-सा उसके मन में उठ गया था, गेसू ने अपने अजाने में ही चन्द्र के अविश्वास, चन्द्र की प्रतिहिंसा को बहुत बड़ी हार दी थी। उसने सिर पर पानी डाला तो उसे लगा यह पानी नहीं है जिंदगी की धारा है, पिघले हुए अंगारों की धारा जिसमें पड़कर केवल वही जिन्दा बच पाया है, जिसके अंगों में प्यार का अमृत है। और चन्द्र के मन में क्या है? महज वासना का विष... वह सड़ा हुआ, गला हुआ शरीर मात्र जो केवल सन्निपात के जोर से चल रहा है। उसने अपने मन के अमृत को गली में फेंक दिया है... उसने क्या किया है?

वह नहाकर आया और शीशे के सामने खड़ा होकर बात काढ़ने लगा-फिर शीशे की ओर एकटक देखकर बोला, “मुझे क्या देख रहे हो, चन्द्र बाबू! मुझे तो तुमने बर्बाद कर डाला। आज कई महीने हो गये और तुमने एक चिट्ठी तक नहीं लिखी, छिः!” और उसने शीशा उलटकर रख दिया।

महराजिन खाना ले आयी। उसने खाना खाया और सुख्त-सा पड़ रहा। “भइया, आज घूमै न जाओ?”

“नहीं!” चन्द्र ने कहा और पड़ा-पड़ा सोचने लगा। परमी के यहाँ नहीं गया।

यह गेसू दूसरे कमरे में बैठी थी। इस कमरे में बिनती उसे कैलाश का चित्र दिखा रही थी।... चित्र उसके मन में घूमने लगे... चन्द्र, क्या इस दुनिया में तुम्हीं रह गये थे फोटो दिखाकर पसन्द करने के लिए... चन्द्र का हाथ उठा। तड़ से एक तमाचा... चन्द्र, घोट तो नहीं आयी... मान लिया कि मैरे मन ने मुझसे न कहा हो, तुमसे तो मेरा मन कोई बात नहीं छिपाता... तो चन्द्र, तुम शादी कर क्यों नहीं लेते? पापा लड़की देख आएँगे... हम भी देख लेंगे... तो फिर तुम बैठो तो हम पढ़ेंगे, वरना हमें शरम लगती है... चन्द्र, तुम शादी मत करना, तुम इस सबके लिए नहीं बने हो... नहीं सुधा, तुम्हारे वक्ष पर सिर रखकर कितना सन्तोष मिलता है...

आसमान में एक-एक करके तारे टूटते जा रहे थे।

वह पर्मी के यहाँ नहीं गया। एक दिन...दो दिन...तीन दिन...अन्त में चौथे दिन शाम को पर्मी खुद आयी। चन्द्र खाना खा चुका था और लॉन पर टहल रहा था। पर्मी आयी। उसने स्वागत किया लेकिन उसकी मुख्कराहट में उल्लास नहीं था।

“कहो कपूर, आये क्यों नहीं? मैं समझी, तुम बीमार हो गये!” पर्मी ने लॉन पर पड़ी एक कुर्सी पर बैठते हुए कहा, “आओ, बैठो न!” उसने चन्द्र की ओर कुर्सी खिसकायी।

“नहीं, तुम बैठो, मैं टहलता रहूँगा!” चन्द्र बोला और कहने लगा, “पता नहीं क्यों पर्मी, दो-तीन दिन से तबीयत बहुत उदास-सी है। तुम्हारे यहाँ आने को तबीयत नहीं हुई।”

“क्यों, क्या हुआ?” पर्मी ने पूछा और चन्द्र का हाथ पकड़ लिया। चन्द्र पर्मी की कुर्सी के पीछे खड़ा हो गया। पर्मी ने चन्द्र के ठोनों हाथ पकड़कर अपने गले में डाल लिये और अपना सिर चन्द्र से टिकाकर उसकी ओर देखने लगी। चन्द्र चुप था। न उसने पर्मी के गाल थपथपाये, न हाथ ढबाया, न अलंके बिखेरीं और न निगाहों में नशा ही बिखेरा।

औरत अपने प्रति आने वाले प्यार और आकर्षण को समझने में चाहे एक बार भूल कर जाये, लेकिन वह अपने प्रति आने वाली उदासी और उपेक्षा को पहचानने में कभी भूल नहीं करती। वह होठों पर होठों के स्पर्शों के गूँहतम अर्थ समझ सकती है, वह आपके स्पर्श में आपकी नसों से चलती हुई भावना पहचान सकती है, वह आपके वक्ष से सिर टिकाकर आपके दिल की धड़कनों की भाषा समझ सकती है, यदि उसे थोड़ा-सा भी अनुभव है और आप उसके हाथ पर हाथ रखते हैं तो स्पर्श की अनुभूति से ही जान जाएगी कि आप उससे कोई प्राण कर रहे हैं, कोई याचना कर रहे हैं, सान्त्वना दे रहे हैं या सान्त्वना माँग रहे हैं। क्षमा माँग रहे हैं या क्षमा दे रहे हैं, प्यार का प्रारम्भ कर रहे हैं या समाप्त कर रहे हैं। स्वागत कर रहे हैं या विदा दे रहे हैं। यह पुलक का स्पर्श है या उदासी का चाव और नशे का स्पर्श है या खिन्नता और बेमनी का।

पर्मी चन्द्र के हाथों को छूते ही जान गयी कि हाथ चाहे गरम हों, लेकिन स्पर्श बड़ा शीतल है, बड़ा नीरस। उसमें वह पिघली हुई आग की शराब नहीं है जो अभी तक चन्द्र के होठों पर धधकती थी, चन्द्र के स्पर्शों में बिखरती थी।

“कुछ तबीयत खराब है कपूर, बैठ जाओ!” पर्मी ने उठकर चन्द्र को जबरदस्ती बिठाल दिया, “आजकल बहुत मेहनत पड़ती है, क्यों? चलो, तुम हमारे यहाँ रहो।”

पर्मी में केवल शरीर की प्यास थी, यह कहना पर्मी के प्रति अन्याय होगा। पर्मी में एक बहुत गहरी हमदर्दी थी चन्द्र के लिए। चन्द्र अब शरीर की प्यास को जीत भी लेता तो उसकी हमदर्दी को वह नहीं ठुकरा पाता था। उस हमदर्दी का तिरस्कार होने से पर्मी दुखी होती थी और उसे वह तभी स्वीकृत समझती थी जब चन्द्र उसके रूप के आकर्षण में डूबा रहे। अब उसके पुरुषों के होठों में तीखी प्यास न हो, बाहुपाशों में जहर न हो तो वासना की इस शिथिलता से

नारी फौरेन समझ जाती है कि सम्बन्धों में दूरी आती जा रही है □ सम्बन्धों की घनिष्ठता को नापने का नारी के पास एक ही मापदंड है, चुम्बन का तीखापन!

चन्द्र के मन में ही नहीं वरन् स्पर्शों में भी इतनी बिखरती हुई उदासी थी, इतनी उपेक्षा थी कि पर्मी मर्माहत हो गयी □ उसके लिए यह पहली पराजय थी! आजकल पर्मी जान जाती थी कि चन्द्र का रोम-रोम इस वक्त पर्मी की साँसों में डूबा हुआ है □

लेकिन पर्मी ने देखा कि चन्द्र उसकी बाँहों में होते हुए भी दूर, बहुत दूर न जाने किन विचारों में उलझा हुआ है □ वह उससे दूर चला जा रहा है, बहुत दूर □ पर्मी की धड़कनें अस्त-व्यस्त हो गयीं □ उसकी समझ में नहीं, आया वह क्या करे! चन्द्र को क्या हो गया? क्या पर्मी का जाटू टूट रहा है? पर्मी ने अपनी पराजय से कुंठित होकर अपना हाथ हटा लिया और चुपचाप मुँह फेरकर उधर देखने लगी □ चन्द्र चाहे जितना उदास हो लेकिन पर्मी की उदासी वह नहीं सह सकता था □ बुरी या भली, पर्मी इस वक्त उसकी सूनी जिंदगी का अकेला सहारा थी और पर्मी की हमर्दी का वह बहुत कृतज्ञ था □ वह समझ गया, पर्मी क्यों उदास हैं! उसने पर्मी का हाथ खींच लिया और अपने होठ उसकी हृथेलियों पर रख दिये और खींचकर पर्मी का सिर अपने कंधे पर रख लिया...

पुरुष के जीवन में एक क्षण आता है जब वासना उसकी कमजोरी, उसकी प्यास, उसका नशा, उसका आवेश नहीं रह जाती □ जब वासना उसकी हमर्दी का, उसकी सान्त्वना का साधन बन जाती है □ जब वह नारी को इसलिए बाँहों में नहीं समेटा कि उसकी बाँहें प्यासी हैं, वह इसलिए उसे बाँहों में समेट लेता है कि नारी अपना दुख भूल जाए □ जिस वक्त वह नारी की सीपिया पलकों के नशे में नहीं वरन् उसकी आँखों के आँसू सुखाने के लिए उसकी पलकों पर होठ रख देता है, जीवन के उस क्षण में पुरुष जिस नारी से सहानुभूति रखता है, उसके मन की पराजय को भुलाने के लिए वह नारी को बाहुपाश के नशे में बहला देना चाहता है! लेकिन इन बाहुपाशों में प्यास जरा भी नहीं होती, आग जरा भी नहीं होती, सिर्फ नारी को बहलावा देने का प्रयास मात्र होता है □

इसमें कोई सन्देह नहीं कि चन्द्र के मन पर छाया हुआ पर्मी के रूप का गुलाबी बादल उचटता जा रहा था, नशा उखड़ा-सा रहा था □ लेकिन चन्द्र पर्मी को दुःखी नहीं करना चाहता था, वह भरसक पर्मी को बहलाये रखता था... लेकिन उसके मन में कहीं-न-कहीं फिर अंतर्दृढ़ का एक तूफान चलने लगा था...

गेसू ने उसके सामने उसकी साल-भर पहले की जिंदगी का वह चित्र रख दिया था, जिसकी एक झलक उस अभागे को पागल कर देने के लिए काफी थी □ चन्द्र जैसे-तैसे मन को पत्थर बनाकर, अपनी आत्मा को रूप की शराब में डुबोकर, अपने विश्वासों में छलकर उसको भुला पाया था □ उसे जीता पाया था □ लेकिन गेसू ने और गेसू की बातों ने जैसे उसके मन में मूर्छित पड़ी अभिशाप की छाया में फिर प्राण-प्रतिष्ठा कर दी थी और आधी रात के सन्नाटे में फिर चन्द्र को सुनाई देता था कि उसके मन में कोई काली छाया बार-बार सिसकने लगती है और चन्द्र के हृदय से टकराकर वह रुदन बार-बार कहता था, “देवता! तुमने मेरी हत्या कर डाली! मेरी हत्या, जिसे तुमने स्वर्ण और ईश्वर से बढ़कर माना था...” और चन्द्र इन आवाजों से घबरा उठता था □ विस्मरण की एक तरंग जहाँ चन्द्र को पर्मी के पास खींच लायी थी, वहाँ अतीत के स्मरण की दूसरी तरंग उसे वेग में उलझाकर जैसे फिर उसे दूर खींच ले जाने के लिए व्याकुल हो उठी □

उसको लगा कि पर्मी के लिए उसके मन में जो मारक नशा था, उस पर ब्लानि का कोहरा छाता जा रहा है और अभी तक उसने जो कुछ किया था, उसके लिए उसी के मन में कहीं-न-कहीं पर हल्की-सी अरुचि झलकने लगी थी □ फिर भी पर्मी का जातू बदस्तूर कायम था □ वह पर्मी के प्रति कृतज्ञ था और वह पर्मी को कहीं, किसी भी ठालत में दुखी नहीं करना चाहता था □ भले वह गुनाह करके अपनी कृतज्ञता जाहिर कर्यों न कर पाये, लेकिन जैसे बिनती के मन में चन्दर के प्रति जो श्रद्धा थी, वह नैतिकता-अनैतिकता के बन्धन से ऊपर उठकर थी, वैसे ही चन्दर के मन में पर्मी के प्रति कृतज्ञता पुण्य और पाप के बन्धन से ऊपर उठकर थी □ बिनती ने एक दिन चन्दर से कहा था कि यदि वह चन्दर को असन्तुष्ट करती है, तो वह उसे इतना बड़ा गुनाह लगता है कि उसके सामने उसे किसी भी पाप-पुण्य की परवा नहीं है □ उसी तरह चन्दर सोचता था कि सम्भव है कि उसका और पर्मी का यह सम्बन्ध पापमय हो, लेकिन इस सम्बन्ध को तोड़कर पर्मी को असन्तुष्ट और दुःखी करना इतना बड़ा पाप होगा जो अक्षम्य है □

लेकिन वह नशा टूट चुका था, वह साँस धीमी पड़ गयी थी...अपनी हर कोशिश के बावजूद वह पर्मी को उदास होने से बचा न पाता था □

एक दिन सुबह जब वह कॉलेज जा रहा था कि पर्मी की कार आयी □ पर्मी बहुत ही उदास थी □ चन्दर ने आते ही उसका स्वागत किया □ उसके कानों में एक नीले पत्थर का बुन्दा था, जिसकी हल्की छाँह गालों पर पड़ रही थी □ चन्दर ने झुककर वह नीली छाँह चूम ली □

पर्मी कुछ नहीं बोली □ वह बैठ गयी और फिर चन्दर से बोली, “मैं लखनऊ जा रही हूँ, कपूर!”

“कब? आजां?”

“हाँ, अभी कार से □”

“क्यों?”

“यों ही, मन ऊब गया! पता नहीं, कौन-सी छाँह मुझ पर छा गयी है □ मैं शायद लखनऊ से मसूरी चली जाऊँ □”

“मैं तुम्हें जाने नहीं दूँगा, पहले तो तुमने बताया नहीं!”

“तुम्हीं ने कहाँ पहले बताया था!”

“क्या?”

“कुछ भी नहीं! अच्छा, चल रही हूँ □”

“सुनो तो!”

“नहीं, अब योक नहीं सकते तुम...बहुत दूर जाना है चन्दर...” वह चल दी □ फिर वह लौटी और जैसे युगों-युगों की प्यास बुझा रही हो, चन्दर के गले में झूल गयी और कस लिया चन्दर को...पाँच मिनट बाद सहसा वह अलग हो गयी और फिर बिना कुछ बोले अपनी कार में बैठ गयी □ “पर्मी...तुम्हें हुआ क्या यह?”

“कुछ नहीं, कपूर □” पर्मी कार स्टार्ट करते हुए बोली, “मैं तुमसे जितनी ही दूर रहूँ उतना ही अच्छा है, मेरे लिए भी, तुम्हारे लिए भी! तुम्हारे इन दिनों के व्यवहार ने मुझे बहुत कुछ सिखा दिया है?”

चन्द्र सिर से पैर तक ज्लानि से कुंठित हो उठा □ सचमुच वह कितना अभागा है! वह किसी को भी सन्तुष्ट नहीं रख पाया □ उसके जीवन में सुधा भी आयी और पर्मी भी, एक को उसके पुण्य ने उससे छीन लिया, दूसरी को उसका गुनाह उससे छीने लिये जा रहा है □ जाने उसके ब्रह्मों का मालिक कितना क्रूर खिलाड़ी है कि हर कदम पर उसकी यह उलट देता है □ नहीं, वह पर्मी को नहीं खो सकता-उसने पर्मी का कॉलर पकड़ लिया, “पर्मी, तुम्हें हमारी कसम है-बुरा मत मानो! मैं तुम्हें जाने नहीं दूँगा □”

पर्मी हँसी-बड़ी ही करुण लेकिन सशक्त हँसी □ अपने कॉलर को धीमे-से छुड़ाकर चन्द्र की अँगुलियों को कपोलों से दबा दिया और फिर वक्ष के पास से एक लिफाफा निकालकर चन्द्र के हाथों में दे दिया और कार स्टार्ट कर दी...पीछे मुड़कर नहीं देखा...नहीं देखा □

कार कड़वे धुएँ का बादल चन्द्र की ओर उड़ाकर आगे चल दी □

जब कार ओझल हो गयी, तब चन्द्र को होश आया कि उसके हाथ में एक लिफाफा भी है □ उसने सोचा, फौरन कार लेकर जाये और पर्मी को रोक ले □ फिर सोचा, पहले पढ़ तो ले, यह है क्या चीज? उसने लिफाफा खोला और पढ़ने लगा-

“कपूर, एक दिन तुम्हारी आवाज और बर्टी की चीख सुनकर अपूर्ण वेश में ही अपने शृंगार-गृह से भाग आयी थी और तुम्हें फूलों के बीच में पाया था, आज तुम्हारी आवाज मेरे लिए मूक हो गयी है और असन्तोष और उदासी के काँटों के बीच में तुम्हें छोड़कर जा रही हूँ □

जा रही हूँ इसलिए कि अब तुम्हें मेरी जरूरत नहीं रही □ झूठ क्यों बोलूँ अब क्या, कभी भी तुम्हें मेरी जरूरत नहीं रही थी, लेकिन मैंने हमेशा तुम्हारा दुरुपयोग किया □ झूठ क्यों बोलें, तुम मेरे पति से भी अधिक समीप रहे हो □ तुमसे कुछ छिपाऊँगी नहीं □ मैं तुमसे मिली थी, जब मैं एकाकी थी, उदास थी, लगता था कि उस समय तुम मेरी सुनसान दुनिया में रोशनी के देवदूत की तरह आये थे □ तुम उस समय बहुत भोले, बहुत सुकुमार, बहुत ही पवित्र थे □ मेरे मन में उस दिन तुम्हारे लिए जाने कितना प्यार उमड़ आया! मैं पागल हो उठी □ मैंने तुम्हें उस दिन सेलामी की कहानी सुनायी थी, सिनेमा घर में, उसी अभागिन सेलामी की तरह मैं भी पैगम्बर को चूमने के लिए व्याकुल हो उठी □

देखा, तुम पवित्रता को प्यार करते हो □ सोचा, यदि तुमसे प्यार ही जीतना है, तो तुमसे पवित्रता की ही बातें करूँ □ मैं जानती थी कि सेवस प्यार का आवश्यक अंग है □ लेकिन मन में तीखी प्यास लेकर भी मैंने तुमसे सेवस-विरोधी बातें करनी शुरू कीं □ मुँह पर पवित्रता और अन्दर में भोग का सिद्धान्त रखते हुए भी मेरा अंग-अंग प्यासा हो उठा था...तुम्हें होठों तक खींच लायी थी, लेकिन फिर साफ़स नहीं हुआ □

फिर मैंने उस छोकरी को देखा, उस नितान्त प्रतिभाहीन दुर्बलमना छोकरी मिस सुधा को □ वह

कुछ भी नहीं थी, लेकिन मैं देखते ही जान गयी थी कि तुम्हारे भाव्य का नक्षत्र है, जाने क्यों उसे देखते ही मैं अपना आत्मविश्वास खो-सा बैठी ॥ उसके व्यक्तित्व में कुछ न होते हुए भी कम-से-कम अजब-सा जादू था, यह मैं भी स्वीकार करती हूँ, लेकिन थी वह छोकरी ही!

तुम्हें न पाने की निराशा और तुम्हें न पाने की असीम प्यास, दोनों के पीस डालने वाले संघर्ष से भागकर, मैं हिमालय में चली आयी ॥ जितना तीखा आकर्षण होता है कपूर कभी-कभी नारी उतनी ही दूर भागती है ॥ अगर कोई प्याला मुँह से न लगाकर दूर फेंक दे, तो समझ लो कि वह बेहद प्यासा है, इतना प्यासा कि तृप्ति की कल्पना से भी घबराता है ॥ दिन-रात उस पठाड़ी की धतल चोटियों में तुम्हारी निगाहें मुरक्कयाती थीं, पर मैं लौटने का साहस न कर पाती थी ॥

लौटी तो देखा कि तुम अकेले हो, निराश हो ॥ और थोड़ा-थोड़ा उलझे हुए भी हो ॥ पहले मैंने तुम पर पवित्रता की आड़ में विजय पानी चाही थी, अब तुम पर वासना का सहारा लेकर छा गयी ॥ तुम मुझे बुरा समझ सकते हो, लेकिन काश कि तुम मेरी प्यास को समझ पाते, कपूर! तुमने मुझे स्वीकार किया ॥ जैसे नहीं जैसे कोई फूल शबनम को स्वीकार करे ॥ तुमने मुझे उस तरह स्वीकार किया जैसे कोई बीमार आदमी माफिया (अफीम) के इन्जेक्शन को स्वीकार करे ॥ तुम्हारी प्यासी और बीमार प्रतृतियाँ बदली नहीं, सिर्फ बेहोश होकर सो गयीं ॥

लेकिन कपूर, पता नहीं किसके स्पर्श से वे एकाएक बिखर गयीं ॥ मैं जानती हूँ, इधर तुम्हें क्या परिवर्तन आ गया है ॥ मैं तुम्हें उसके लिए अपराधी नहीं ठहराती, कपूर! मैं जानती हूँ तुम मेरे प्रति अब भी कितने कृतज्ञ हो, कितने स्नेहशील हो लेकिन अब तुम्हें वह प्यास नहीं, वह नशा नहीं ॥ तुम्हारे मन की वासना अब मेरे लिए एक तरस में बदलती जा रही है ॥

मुझे वह दिन याद है, अच्छी तरह याद है चन्द्र, जब तुम्हारे जलते हुए होठों ने इतनी गहरी वासना से मेरे होठों को समेट लिया था कि मेरे लिए अपना व्यक्तित्व ही एक सपना बन गया था ॥ लगता था, सभी सितारों का तेज भी इसकी एक चिनगारी के सामने फीका है ॥ लेकिन आज होठ होठ हैं, आग के फूल नहीं रहे-पहले मेरी एक झलक से तुम्हारे रोम-रोम में सैकड़ों इच्छाओं की आँधियाँ गरज उठती थीं...आज तुम्हारी नसों का खून ठंडा है ॥ तुम्हारी निगाहें पथरायी हुई हैं और तुम इस तरह वासना मेरी ओर फेंक देते हो, जैसे तुम किसी पालतू बिल्ली को पावरोटी का टुकड़ा दे रहे हो ॥

मैं जानती हूँ कि हम दोनों के सम्बन्धों की उष्णता खत्म हो गयी है ॥ अब तुम्हारे मन में महज एक तरस है, एक कृतज्ञता है, और कपूर, वह मैं स्वीकार नहीं कर सकूँगी ॥ क्षमा करना, मेरा भी र्खाभिमान है ॥

लेकिन मैंने कह दिया कि मैं तुमसे छिपाऊँगी नहीं! तुम इस श्रम में कभी मत रहना कि मैंने तुम्हें प्यार किया था ॥ पहले मैं भी यहीं सोचती थी ॥ कल मुझे लगा कि मैंने अपने को आज तक धोखा दिया था ॥ मैंने इधर तुम्हारी रिवन्जता के बाद अपने जीवन पर बहुत सोचा, तो मुझे लगा कि प्यार जैसी स्थायी और गहरी भावना शायद मेरे जैसे रंगीन बहिर्मुख स्वभावशाली के लिए है ही नहीं ॥ प्यार जैसी गम्भीर और खतरनाक तूफानी भावना को अपने कन्धों पर ढोने का खतरा देवता या बुद्धिहीन ही उठा सकते हैं-तुम उसे वहन कर सकते हो (कर रहे हो ॥ प्यार की प्रतिक्रिया भी प्यार की ही परिचायक है कपूर), मेरे लिए आँसुओं की लहरों में डूब जाना समझ नहीं ॥ या तो प्यार आदमी को बादलों की ऊँचाई तक उठा ले जाता है, या स्वर्ण से पाताल में फेंक देता है ॥ लेकिन कुछ प्राणी हैं, जो न स्वर्ग के हैं न नरक के, वे दोनों लोकों के बीच में अन्धकार

की परतों में भटकते रहते हैं□ वे किसी को प्यार नहीं करते, छायाओं को पकड़ने का प्रयास करते हैं, या शायद प्यार करते हैं या निरन्तर नयी अनुभूतियों के पीछे दीवाने रहते हैं और प्यार बिल्कुल करते ही नहीं□ उनको न दुःख होता है न सुख, उनकी दुनिया में केवल संशय, अस्थिरता और प्यास होती है...कपूर, मैं उसी अभागे लोक की एक प्यासी आत्मा थी□ अपने एकान्त से घबराकर तुम्हें अपने बाहुपाश में बाँधकर तुम्हारे विश्वास को खर्ब से खींच लायी थी□ तुम खर्ब-भ्रष्ट देवता, भूतकर मेरे अभिशप्त लोक में आ गये थे□

आज मालूम होता है कि फिर तुम्हारे विश्वास ने तुम्हें पुकारा है□ मैं अपनी प्यास में खुद धधक उर्दू, लेकिन तुम्हें मैंने अपना मित्र माना था□ तुम पर मैं आँच नहीं आने देना चाहती□ तुम मेरे योन्य नहीं, तुम अपने विश्वासों के लोक में लौट जाओ□

मैं जानती हूँ तुम मेरे लिए चिनित हो□ लेकिन मैंने अपना गस्ता निश्चित कर लिया है□ श्री बिना पुरुष के आश्रय के नहीं रह सकती□ उस अभागी को जैसे प्रकृति ने कोई अभिशाप दे दिया है□...मैं थक गयी हूँ इस प्रेमलोक की भटकन से□...मैं अपने पति के पास जा रही हूँ□ वे क्षमा कर देंगे, मुझे विश्वास है□

उन्हीं के पास वयों जा रही हूँ? इसलिए मेरे मित्र, कि मैं अब सोच रही हूँ कि श्री स्वाधीन नहीं रह सकती□ उसके पास पत्नीत्व के सिवा कोई चारा नहीं□ जहाँ जरा स्वाधीन हुई कि बस उसी अन्धकूप में जा पड़ती है जहाँ मैं थी□ वह अपना शरीर भी खोकर तृप्ति नहीं पाती□ फिर प्यार से तो मेरा विश्वास जैसे उठा जा रहा है, प्यार स्थायी नहीं होता□ मैं ईसाई हूँ, पर सभी अनुभवों के बाद मुझे पता लगता है कि हिन्दुओं के यहाँ प्रेम नहीं वरन् धर्म और सामाजिक परिस्थितियों के आधार पर विवाह की शैति बहुत वैज्ञानिक और नारी के लिए सबसे ज्यादा लाभदायक है□ उसमें नारी को थोड़ा बन्धन चाहे वयों न हो लेकिन दायित्व रहता है, सन्तोष रहता है, वह अपने घर की यानी रहती है□ काश कि तुम समझ पाते कि खुले आकाश में इधर-उधर भटकने के बाद, तूफानों से लड़ने के बाद मैं कितनी आतुर हो उठी हूँ बन्धनों के लिए, और किसी सशक्त डाल पर बने हुए सुखद, सुकोमल नीङ में बसेंगे लेने के लिए□ जिस नीङ को मैं इतने दिनों पहले उजाड़ चुकी थी, आज वह फिर मुझे पुकार रहा है□ हर नारी के जीवन में यह क्षण आता है और शायद इसीलिए हिन्दू प्रेम के बजाय विवाह को अधिक महत्व देते हैं□

मैं तुम्हारे पास नहीं रुकी□ मैं जानती थी कि हम दोनों के सम्बन्धों में प्रारम्भ से इतनी विवित्रताएँ थीं कि हम दोनों का सम्बन्ध स्थायी नहीं रह सकता था, फिर भी जिन क्षणों में हम दोनों एक ही तूफान में फँस गये थे, वे क्षण मेरे लिए अमूल्य निधि रहेंगे□ तुम बुरा न मानना□ मैं तुमसे जरा भी नाराज नहीं हूँ□ मैं न अपने को गुनहगार मानती हूँ, न तुम्हें, फिर भी अबर तुम मेरी सलाह मान सको तो मान लेना□ किसी अच्छी-सी सीधी-सादी हिन्दू लड़की से अपना विवाह कर लेना□ किसी बहुत बौद्धिक लड़की, जो तुम्हें प्यार करने का दम भरती हो, उसके फँदे में न फँसना कपूर, मैं उम्र और अनुभव दोनों में तुमसे बड़ी हूँ□ विवाह में भावना या आकर्षण अकसर जहर बिखेर देता है□ ब्याह करने के बाद एक-आध महीने के लिए अपनी पत्नी सहित मेरे पास जरूर आना, कपूर□ मैं उसे देखकर वह सन्तोष पा लूँगी, जो हमारी सभ्यता ने हम अभागों से छीन लिया है□

अभी मैं साल भर तक तुमसे नहीं मिलूँगी□ मुझे तुमसे अब भी डर लगता है लेकिन इस बीच में तुम बर्टी का ख्याल रखना□ कभी-कभी उसे देख लेना□ रूपये की कमी तो उसे न होगी□

बीवी भी उसे ऐसी मिल गयी है, जिसने उसे ठीक कर दिया है...उस अभागे भाई से अलग होते हुए
मुझे कैसा लग रहा है, यह तुम जानते, अगर तुम बहन होते□

अगला पत्र तुम्हें तभी लिखूँगी जब मेरे पति से मेरा समझौता हो जाएगा...नाराज तो नहीं हो?
-प्रमिला डिक्रूज□”

चन्द्र पर्मी को लौटाने नहीं गया□ कॉलेज भी नहीं गया□ एक लम्बा-सा खत बिनती को
लिखता रहा और इसकी प्रतिलिपि कर दोनों नत्थी कर भेज दिये और उसके बाद थककर सो
गया...बिना खाना खाये!

तृतीय खण्ड

39

गर्भियों की छुट्टियाँ हो गयी थीं और चन्द्र छुट्टियाँ बिताने दिल्ली जया था □ सुधा भी आयी हुई थी □ लेकिन चन्द्र और सुधा में बोलचाल नहीं थी □ एक दिन शाम के वक्त डॉक्टर साहब ने चन्द्र से कहा, “चन्द्र, सुधा इधर बहुत अनमनी रहती है, जाओ इसे कहीं धुमा लाओ □” चन्द्र बड़ी मुश्किल से राजी हुआ □ दोनों पहले कनॉट प्लेस पहुँचे □ सुधा ने बहुत फीकी और टूटती हुई आवाज में कहा, “यहाँ बहुत भीड़ है, मेरी तबीयत घबराती है □” चन्द्र ने कार धुमा दी शहर से बाहर रोहतक की सड़क पर, दिल्ली से पन्द्रह मील दूर □ चन्द्र ने एक बहुत हरी-भरी जगह में कार रोक दी □ किसी बहुत पुराने पीर का टूटा-फूटा मजार था और कब्र के चबूतरे को फोड़कर एक नीम का पेड़ उगा आया था □ चबूतरे के दो-तीन पत्थर गिर गये थे □ चार-पाँच नीम के पेड़ लगे थे और कब्र के पत्थर के पास एक चिरान बुझा हुआ पड़ा था और कई एक सूखी हुई फूल-मालाएँ हवा से उड़कर नीचे गिर गयी थीं □ कब्र के आस-पास ढेरों नीम के तिनके और सूखे हुए नीम के फूल जमा थे □

सुधा जाकर चबूतरे पर बैठ गयी □ दूर-दूर तक सन्नाटा था □ न आदमी न आदमजाद □ सिर्फ गोधूलि के अलसाते हुए झोंकों में नीम चरमरा उठते थे □ चन्द्र आकर सुधा की दूसरी ओर बैठ गया □ चबूतरे पर इस ओर सुधा और उस ओर चन्द्र, बीच में चिर-नीरव कब्र...

सुधा थोड़ी देर बाद मुड़ी और चन्द्र की ओर देखा □ चन्द्र एकटक कब्र की ओर देख रहा था □ सुधा ने एक सूखा हार उठाया और चन्द्र पर फेंककर कहा, “चन्द्र, क्या हमेशा मुझे इसी भयानक नरक में रखोगे? क्या सचमुच हमेशा के लिए तुम्हारा प्यार खो दिया है मैंने?”

“मेरा प्यार?” चन्द्र हँसा, उसकी हँसी उस सन्नाटे से भी ज्यादा भयंकर थी... ”मेरा प्यार! अच्छी याद दिलायी तुमने! मैं आज प्यार में विश्वास नहीं करता □ या यह कहूँ कि प्यार के उस रूप में विश्वास नहीं करता!”

“फिर?”

“फिर क्या, उस समय मेरे मन में प्यार का मतलब था त्याग, कल्पना, आदर्श □ आज मैं समझ चुका हूँ कि यह सब झूठी बातें हैं, खोखले सपने हैं!”

“तब?”

“तब! आज मैं विश्वास करता हूँ कि प्यार के माने सिर्फ एक है; शरीर का सम्बन्ध! कम-से-कम

औरत के लिए औरत बड़ी बातें करेगी, आत्मा, पुनर्जन्म, परलोक का मिलन, लेकिन उसकी सिद्धि सिर्फ शरीर में है और वह अपने प्यार की मंजिलें पार कर पुरुष को अन्त में एक ही चीज देती है-अपना शरीर मैं तो अब यह विश्वास करता हूँ सुधा कि वही औरत मुझे प्यार करती है जो मुझे शरीर दे सकती है बस, इसके अलावा प्यार का कोई रूप अब मेरे भाव्य में नहीं” चन्द्र की आँख में कुछ धृष्ट रहा था...सुधा उठी, और चन्द्र के पास खड़ी हो गयी-”चन्द्र, तुम भी एक दिन ऐसे हो जाओगे, इसकी मुझे कभी उम्मीद नहीं थी काश कि तुम समझ पाते कि...” सुधा ने बहुत दर्द भेरे स्वर में कहा-

“रनेह है!” चन्द्र ठठाकर हँस पड़ा-और उसने सुधा की ओर मुड़कर कहा, “और अगर मैं उस झेठ का प्रमाण माँगूँ तो? सुधा!” दाँत पीसकर चन्द्र बोला, “अगर तुमसे तुम्हारा शरीर माँगूँ तो?”

“चन्द्र!” सुधा चीखकर पीछे हट गयी चन्द्र उठा और पागलों की तरह उसने सुधा को पकड़ लिया, “यहाँ कोई नहीं है-सिवा इस कब्र के तुम क्या कर सकती हो? बहुत दिन से मन में एक आग सुलग रही है आज तुम्हें बर्बाद कर दूँ तो मन की नारकीय वेदना बुझ जाए....बोलो!” उसने अपनी आँख की पिघली हुई आग सुधा की आँखों में भरकर कहा-

सुधा क्षण-भर सहमी-पथरायी टृष्णि से चन्द्र की ओर देखती रही फिर सहसा शिथिल पड़ गयी और बोली, “चन्द्र, मैं किसी की पत्नी हूँ यह जन्म उनका है यह माँग का सिन्दूर उनका है इस शरीर का शृंगार उनका है मुझ गला घोंटकर मार डालो मैंने तुम्हें बहुत तकलीफ दी है लेकिन...”

“लेकिन...” चन्द्र हँसा और सुधा को छोड़ दिया, “मैं तुम्हें रनेह करती हूँ, लेकिन यह जन्म उनका है यह शरीर उनका है-ठः! हः! क्या अन्दाज हैं प्रवंचना के जाओ सुधा...मैं तुमसे मजाक कर रहा था तुम्हारे इस जूठे तन में रखा क्या है?”

सुधा अलग हटकर खड़ी हो गयी उसकी आँखों से चिनगारियाँ झरने लगीं, “चन्द्र, तुम जानवर हो गये; मैं आज कितनी शर्मिन्दा हूँ इसमें मेरा कसूर है, चन्द्र! मैं अपने को दंड देनी, चन्द्र! मैं मर जाऊँगी! लेकिन तुम्हें इसान बनना पड़ेगा, चन्द्र!” और सुधा ने अपना सिर एक टूटे हुए खम्भे पर पटक दिया-

चन्द्र की आँख खुल गयी, वह थोड़ी देर तक सपने पर सोचता रहा फिर उठा बहुत अजब-सा मन था उसका बहुत पराजित, बहुत खोया हुआ-सा, बेहद रिखियाहट से भरा हुआ था उसके मन में एकाएक खायाल आया कि वह किसी मनोरंजन में जाकर अपने को डुबो दे-बहुत दिनों से उसने सिनेमा नहीं देखा था उन दिनों बर्नार्ड शॉ का 'सीजर एंड विलयोपेट्रा' लगा हुआ था, उसने सोचा कि पर्मी की मित्रता का परिपाक सिनेमा में हुआ था, उसका अन्त भी वह सिनेमा देखकर मनाएगा उसने कपड़े पहने, चार बजे से मैटिनी थी, और वक्त हो रहा था कपड़े पहनकर वह शीशे के सामने आकर बाल सँवारने लगा उसे लगा, शीशे में पड़ती हुई उसकी छाया उससे कुछ भिन्न है, उसने और गौर से देखा-छाया रहस्यमय ढंग से मुरक्का रही थी; वह सहसा बोली-

“क्या देख रहा है?” 'मुखड़ा क्या देखे दरपन में' एक लड़की से पराजित और दूसरी से सपने में प्रतिहिंसा लेने का कलंक नहीं दिख पड़ता तुझे? अपनी छवि निरख रहा है? पापी! पतित!” कमरे की दीवारों ने दोहराया-”पापी! पतित!”

चन्द्र तड़प उठा, पागल-सा हो उठा कंधा फेंककर बोला, “कौन है पापी? मैं हूँ पापी? मैं हूँ पतित? मुझे तुम नहीं समझते मैं चिर-पवित्र हूँ मुझे कोई नहीं जानता”

“कोई नहीं जानता! हा, हा!” प्रतिबिम्ब हँसा, “मैं तुम्हारी नस-नस जानता हूँ तुम वही हो न जिसने आज से डेढ़ साल पहले सपना देखा सुधा के हाथ से लेकर अमृत बाँटने का, दुनिया को नया सन्देश देकर पैगम्बर बनने का नया सन्देश! खूब नया सन्देश दिया मसीहा! पम्मी...बिनती...सुधा...कुछ और छोकरियाँ बटोर ले चरित्रहीन!”

“मैंने किसी को नहीं बटोरा! जो मेरी जिंदगी में आया, अपने-आप आया, जो चला गया, उसे मैंने शेका नहीं मेरे मन में कहीं भी अहम की प्यास नहीं थी, कभी भी स्वार्थ नहीं था क्या मैं चाहता तो सुधा को अपने एक इशारे से अपनी बाँहों में नहीं बाँध सकता था!”

“शाबाश! और नहीं बाँध पाये तो सुधा से भी जी भरकर बदला निकाल रहा है वह मर रही है और तू उस पर नमक छिड़कने से बाज नहीं आया और आज तो उसे एकान्त में श्रष्ट करने का सपना देख अपनी पलकों को देवमन्दिर की तरह पवित्र बना लिया तूने! कितनी उन्नति की है तेरी आत्मा ने! इधर आ, तेरा हाथ चूम लूँ”

“चुप रहो! पराजय की इस वेला में कोई भी व्यंग्य करने से बाज नहीं आता मैं पागल हो जाऊँगा”

“और अभी क्या पागलों से कम है तू? अहंकारी पशु! तू बर्टी से भी जया-गुजरा है बर्टी पागल था, लेकिन पागल कुतों की तरह काटना नहीं जानता था तू काटना भी जानता है और अपने भयानक पागलपन को साधना और त्याग भी साबित करता रहता है दम्भी!”

“बस करो, अब तुम सीमा लाँघ रहे हो” चन्द्र ने मुस्तियाँ कसकर जवाब दिया

“क्यों, गुरुसा हो गये, मेरे दोस्त! अहंवादी इतने बड़े हो और अपनी तखीर देखकर नाराज होते हो! आओ, तुम्हें आहिस्ते से समझाऊँ, अभागे! तू कहता है तूने स्वार्थ नहीं किया विकलांग देवता! वही स्वार्थी है जो अपने से ऊपर नहीं उठ पाता! तैर लिए अपनी एक साँस भी दूसरे के मन के तुफान से भी ज्यादा महत्वपूर्ण रही है तूने अपने मन की उपेक्षा के पीछे सुधा को भट्टी में झोंक दिया पम्मी के अस्वस्थ मन को पहचानकर भी उसके रूप का उपभोग करने में नहीं हिचका, बिनती को प्यार न करते हुए भी बिनती को तूने स्वीकार किया, फिर सबों का तिरस्कार करता गया... और कहता है तू स्वार्थी नहीं बर्टी पागल हो लेकिन स्वार्थी नहीं है”

“ठहरो, गालियाँ मत दो, मुझे समझाओ न कि मेरे जीवन-दर्शन में कहाँ पर गलती रही हैं! गालियों से मेरा कोई समझौता नहीं”

“अच्छा, समझो! देखो, मैं यह नहीं कहता कि तुम ईमानदार नहीं हो, तुम शक्तिशाली नहीं हो, लेकिन तुम अन्तर्मुखी रहे, घोर व्यक्तिवादी रहे, अहंकारग्रस्त रहे अपने मन की विकृतियों को भी तुमने अपनी ताकत समझने की कोशिश की कोई भी जीवन-दर्शन सफल नहीं होता अगर उसमें बाह्य यथार्थ और व्यापक सत्य धूप-छाँह की तरह न मिला हो मैं मानता हूँ कि तूने सुधा के साथ ऊँचाई निभायी, लेकिन अगर तैर व्यक्तित्व को, तैर मन को, जया-सी ठेस पहुँचती तो तू गुमराह हो गया होता तूने सुधा के झेंड का निषेध कर दिया तूने बिनती की श्रद्धा का तिरस्कार किया तूने पम्मी की पवित्रता श्रष्ट की... और इसे अपनी साधना समझता है? तू याद कर; कहाँ था तू एक वर्ष पहले और अब कहाँ हैं?”

चन्द्र ने बड़ी कातरता से प्रतिबिम्ब की ओर देखा और बोला, “मैं जानता हूँ, मैं गुमराह हूँ

लेकिन बेर्डमान नहीं! तुम मुझे क्यों धिवकार रहे हो! तुम कोई शस्ता बता दो न! एक बार उसे भी आजमा लूँ”

“शस्ता बताऊँ! जो शस्ता तुमने एक बार बनाया था, उसी पर तुम मजबूत रह पाये? फिर क्या एक के बाद दूसरे शस्ते पर चहलदमी करना चाहते हो? देखो कपूर, ध्यान से सुनो□ तुमसे शायद किसी ने कभी कहा था, शायद बर्टी ने कहा था कि आदमी तभी तक बड़ा रहता है जब तक वह निषेध करता चलता है□ पता नहीं किस मानसिक आवेश में एक के बाद दूसरे तत्व का विध्वंस और विनाश करता चलता है□ हर चट्ठान को उखाड़क फेंकता रहता है और तुमने यही जीवन-दर्शन अपना लिया था, भूल से या अपने अनजाने में ही□ तुम्हारी आत्मा में एक शक्ति थी, एक तूफान था□ लेकिन यह लक्ष्य भ्रष्ट था□ तुम्हारी जिंदगी में लहरें उठने लगीं लेकिन गहराई नहीं□ और याद रखो चन्द्र, सत्य उसे मिलता है जिसकी आत्मा शान्त और गहरी होती है समुद्र की गहराई की तरह□ समुद्र की ऊपरी सतह की तरह जो विक्षुब्ध और तूफानी होता है, उसके अंतर्दृढ़ में चाहे कितनी गरज हो लेकिन सत्य की शान्त अमृतमयी आवाज नहीं होती□”

“लेकिन वह गहराई मुझे मिली नहीं?”

“बताता हूँ-घबराते क्यों हो! देखो, तुम्में बहुत बड़ा अधैर्य रहा है□ शक्ति रही, पर धैर्य और दृढ़ता बिलकुल नहीं□ तुम गम्भीर समुद्रतल न बनकर एक सशक्त लेकिन अशान्त लहर बन गये जो हर किनारे से टकराकर उसे तोड़ने के लिए व्यग्र हो उठी□ तुम्में ठहराव नहीं था□ साधना नहीं थी! जानते हो क्यों? तुम्हें जहाँ से जरा भी तकलीफ मिली, अवरोध मिला वहीं से तुमने अपना हाथ खींच लिया! वहीं तुम आग खड़े हुए□ तुमने हमेशा उसका निषेध किया-पहले तुमने समाज का निषेध किया, व्यक्ति को साधना का केन्द्र बनाया; फिर व्यक्ति का भी निषेध किया□ अपने विचारों में, अन्तर्मुखी भावनाओं में ढूब गये, कर्म का निषेध किया□ फिर तो कर्म में ऐसी भागदौड़, ऐसी विमुखता शुरू हुई कि बस! न मानवता का प्यार जीवन में प्रतिफलित कर सका, न सुधा का□ पर्मी हो या बिनती, हेरेक से तू निष्क्रिय खिलौने की तरह खेलता गया□ काश कि तूने समाज के लिए कुछ किया होता! सुधा के लिए कुछ किया होता लेकिन तू कुछ न कर पाया□ जिसने तुझे जिधर चाहा उधर उत्प्रेरित कर दिया और तू अंधे और इच्छाविहीन परतंत्र अंधड़ की तरह उधर ही हूँ-हूँ करता हुआ दौड़ गया□ माना मैंने कि समाज के आधार पर बने जीवन-दर्शन में कुछ कमियाँ हैं: लेकिन अंशतः ही ये स्वीकार कर कुछ काम करता, माना कि सुधा के प्यार से तुझे तकलीफ हुई पर उसकी महत्ता के ही आधार पर तू कुछ निर्माण कर ले जाता□ लेकिन तू तो जरा-से अवरोध के बहाने सम्पूर्ण का निषेध करता गया□ तेरा जीवन निषेधों की निष्क्रियता की मानसिक प्रतिक्रियाओं की शृंखला रहा है□ अभागे, तूने हमेशा जिंदगी का निषेध किया है□ दुनिया को स्वीकार करता, यथार्थ को स्वीकार करता, जिंदगी को स्वीकार करता और उसके आधार पर अपने मन को, अपने मन के प्यार को, अपने जीवन को सन्तुलित करता, आगे बढ़ता लेकिन तूने अपनी मन की गंगा को व्यक्ति की छोटी-सी सीमा में बाँध लिया, उसे एक पोखरा बना दिया, पानी सड़ गया, उसमें गंध आने लगी, सुधा के प्यार की सीपी जिसमें सत्य और सफलता का मोती बन सकता था, वह मर गयी और रुके हुए पानी में विकृति और वासना के कीड़े कुलबुलाने लगे□ शाबाश! क्या अमृत पाया है तूने! धन्य है, अमृत-पुत्र!”

“बस करो! यह व्यंज्य मैं नहीं सह सकता! मैं क्या करता!”

“कैसी लाचारी का श्वर है! छिः, असफल पैगम्बर! साधना यथार्थ को स्वीकार करके चलती है, उसका निषेध करके नहीं। हमारे यहाँ ईश्वर को कहा गया है जेति जेति, इसका मतलब यह नहीं कि ईश्वर परम निषेध स्वरूप है। जलत, जेति में 'न' तो केवल एक वर्ण है। 'इति' दो वर्ण हैं। एक निषेध तो कम-से-कम दो स्वीकृतियाँ। इसी अनुपात में कल्पना और यथार्थ का समन्वय क्यों नहीं किया तूने?”

“मैं नहीं समझ पाता-यह दर्शन मेरी समझ में नहीं आता!”

“देखो, इसको ऐसे समझो। घबराओ मत! कैलाश ने अब नारी के व्यक्तित्व को नहीं समझा, सुधा की पवित्रता को तिरस्कृत किया, लेकिन उसने समाज के लिए कुछ तो किया। गेसू ने अपने विवाह का निषेध किया, लेकिन अख्लार के प्रति अपने प्यार का निषेध तो नहीं किया। अपने व्यक्तित्व का निर्माण किया। अपने चारित्र का निर्माण किया। यानी गेसू एक लड़की से तुम हार गये, छिः!”

“लेकिन मैं कितना थक गया था, यह तो सोचो। मन को कितनी ऊँची-नीची घाटियों से, मौत से भी भयानक रस्तों से गुजरने में और कोई होता तो मर गया होगा। मैं जिंदा तो हूँ!”

“वाह, क्या जिंदगी है!”

“तो क्या कर्छ, यह रस्ता छोड़ दूँ? यह व्यक्तित्व तोड़ डालूँ?”

“फिर वही निषेध और पिधवंस की बातें। छिः देखो, चलने को तो गाड़ी का बैल भी रस्ते पर चलता है! लेकिन सैकड़ों मील चलने के बाद भी वह गाड़ी का बैल ही बना रहता है। क्या तुम गाड़ी के बैल बनना चाहते हो? नहीं कपूर! आदमी जिंदगी का सफर तय करता है। यह कीठोकरे और मुसीबतें उसके व्यक्तित्व को पुरला बनाती चलती हैं, उसकी आत्मा को परिपक्व बनाती चलती है। क्या तुम्हें परिपक्वता आयी? नहीं। मैं जानता हूँ, तुम अब मेरा भी निषेध करना चाहते हो। तुम मेरी आवाज को भी चुप करना चाहते हो। आत्म-प्रवंचना तो तेरा पेशा हो गया है। कितना खतरनाक है तू अब...तू मेरा भी...तिरस्कार...करना...चाहता...है।” और छाया, धीरे-धीरे एक वह बिन्दु बनकर अट्ठय हो गयी।

चन्द्र चुपचाप शीशों के सामने खड़ा रहा।

फिर वह सिनेमा नहीं गया।

चन्द्र सहसा बहुत शान्त हो गया। एक ऐसे भोले बच्चे की तरह जिसने अपराध कम किया, जिससे नुकसान ज्यादा हो गया था, और जिस पर डॉट बहुत पड़ी थी। अपने अपराध की चेतना से वह बोल भी नहीं पाता था। अपना सारा दुख अपने ऊपर उतार लेना चाहता था। वहाँ एक ऐसा सज्जाटा था जो न किसी को आने के लिए आमन्त्रित कर सकता था, न किसी को जाने से रोक सकता था। वह एक ऐसा मैदान था जिस पर की सारी पगड़ंडियाँ तक मिट गयी हों; एक ऐसी डाल थी जिस पर के सारे फूल झर गये हों, सारे घोंसले उजड़ गये हों। मन में उसके असीम कुंठा और वेदना थी, ऐसा था कि कोई उसके बाव छू ले तो वह आँसुओं में बिखर पड़े। वह चाहता था, वह सबसे क्षमा माँग ले, बिनती से, पम्मी से, सुधा से और फिर हमेशा के लिए उनकी दुनिया से चला जाए। कितना दुख दिया था उसने सबको!

इसी मनःस्थिति में एक दिन गेसू ने उसे बुलाया। वह गया। गेसू की अमीजान तो सामने आरीं पर गेसू ने परदे में से ही बातें की। गेसू ने बताया कि सुधा का खत आया है कि वह जल्दी ही आएगी, गेसू से मिलने। गेसू को बहुत ताज़ज़ुब हुआ कि चन्द्र के पास कोई खबर क्यों नहीं आयी!

चन्द्र जब घर पहुँचा तो कैलाश का एक खत मिला-

“प्रिय चन्द्र,

बहुत दिन से तुम्हारा कोई खत नहीं आया, न मेरे पास न इनके पास। क्या नाराज हो हम दोनों से? अच्छा तो लो, तुम्हें एक खुशखबरी सुना दूँ। मैं सांस्कृतिक मिशन में शायद ऑस्ट्रेलिया जाऊँ। डॉक्टर साठब ने कोशिश कर दी है। आधा रुपया मेरा, आधा सरकार का।

तुम्हें भला वया फुरसत मिलेगी यहाँ आने की! मैं ही इन्हें लेकर दो रोज के लिए आँँगा। इनकी कोई मुसलमान सखी है वहाँ, उससे ये भी मिलना चाहती हैं। हमारी खातिर का इन्तजाम रखना-मैं 11 मई को सुबह की गाड़ी से पहुँचूँगा।

तुम्हारा-कैलाश।”

सुधा के आने के पहले चन्द्र ने घर की ओर नजर ढौँड़ायी। सिवा ड्राइंगरूम और लॉन के सचमुच बाकी घर इतना गन्दा पड़ा था कि गेसू सच ही कठ रही थी कि जैसे घर में प्रेत रहते हों। आदमी चाहे जितना सफाई-पसन्द और सुरुचिपूर्ण क्यों न हो, लेकिन औरत के हाथ में जाने क्या जादू है कि वह घर को छूकर ही चमका देती है। औरत के बिना घर की व्यवस्था सँभल ही नहीं सकती। सुधा और बिनती कोई भी नहीं थी और तीन ही महीने में बँगले का रूप बिंदू गया था।

उसने सारा बँगला साफ करया। हालाँकि दो ही दिन के लिए सुधा और कैलाश आ रहे थे, लेकिन उसने इस तरह बँगले की सफाई करायी जैसे कोई नया समारोह हो। सुधा का कमरा

बहुत सजा दिया था और सुधा की छत पर दो पलंग डलवा दिये थे □ लेकिन इन सब इंतजामों के पीछे उतनी ही निष्क्रिय भावहीनता थी जैसे कि वह एक होटल का मैनेजर हो और दो आगन्तुकों का इन्तजाम कर रहा हो □ बस □

मानसून के दिनों में अगर कभी किसी ने गौर किया हो तो बारिश होने के पहले ही छवा में एक नमी, पतियों पर एक हरियाली और मन में एक उमंग-सी छा जाती है □ आसमान का रंग बतला देता है कि बादल छानेवाले हैं, बूँदें रिमझिमाने वाली हैं □ जब बादल बहुत नजदीक आ जाते हैं, बूँदें पड़ने के पहले ही दूर पर गिरती हुई बूँदों की आवाज वातावरण पर छा जाती है, जिसे धुरवा कहते हैं □

ज्यों-ज्यों सुधा के आने का दिन नजदीक आ रहा था, चन्द्र के मन में छवाएँ करवटें बदलने लग गयी थीं □ मन में उदास सुनसान में धुरवा उमड़ने-घुमड़ने लगा था □ मन उदास सुनसान आकुत प्रतीक्षा में बेवैन हो उठा था □ चन्द्र अपने को समझ नहीं पा रहा था □ नसों में एक अजीब-सी घबराहट मचलने लगी थी, जिसका वह विल्लेषण नहीं करना चाहता था □ उसका व्यक्तित्व अब पता नहीं क्यों कुछ भयभीत-सा था □

इमतहान खत्म हो रहे थे, और जब मन की बेवैनी बहुत बढ़ जाती थी तो परीक्षकों की आदत के मुताबिक वह कापियाँ जाँचने बैठ जाता था □ जिस समय परीक्षकों के घर में पारिवारिक कलह हो, मन में अंतर्दृढ़ हो या दिमाग में फितूर हो, उस समय उन्हें कॉपियाँ जाँचने से अच्छा शरणस्थल नहीं मिलता □ अपने जीवन की परीक्षा में फेल हो जाने की खीझ उतारने के लिए लड़कों को फेल करने के अलावा कोई अच्छा गरस्ता ही नहीं है □ चन्द्र जब बेहद दुःखी होता तो वह कॉपियाँ जाँचता □

जिस दिन सुबह सुधा आ रही थी, उस रात को तो चन्द्र का मन बिल्कुल बेकाबू-सा हो गया □ लगता था जैसे उसने सोचने-विचाने से ही इनकार कर दिया हो □ उस दिन चन्द्र एक क्षण को भी अकेला न रहकर भीड़-भाड़ में खो जाना चाहता था □ सुबह वह गंगा नहाने गया, कार लेकर □ कॉलेज से लौटकर दोपहर को अपने एक मित्र के यहाँ चला गया □ लौटकर आया तो नहाकर एक किताब की दुकान पर चला गया और शाम होने तक वहीं खड़ा-खड़ा किताबें उलटता और खरीदता रहा □ वहाँ उसने बिसरिया का गीत-संग्रह देखा जो 'बिनती' नाम बदल उसने 'विष्टल' नाम से छपवा लिया था और प्रमुख प्रगतिशील कवि बन गया था □ उसने वह संग्रह भी खरीद लिया □

अब सुधा के आने में मुश्किल से बारह बांटे की देर थी □ उसकी तबीयत बहुत घबराने लगी थी और वह बिसरिया के काव्य-संग्रह में डूब गया □ उन सड़े हुए गीतों में ही अपने को भुलाने की कोशिश करने लगा और अन्त में उसने अपने को इतना थका डाला कि तीन बजे का अलार्म लगाकर वह सो गया □ सुधा की गाड़ी साढ़े चार बजे आती थी □

जब वह जागा तो रात अपने मखमली पंख पसारे नींद में डूबी हुई दुनिया पर शानित का आशीर्वाद बिखरे रही थी □ ठंडे झोंके लहरा रहे थे और उन झोंकों पर पवित्रता छायी हुई थी □ यह पछुआ के झोंके थे □ ब्राह्म मुर्हूर्त में प्राचीन आर्यों ने जो रहस्य पाया था, वह धीरि-धीरि चन्द्र की आँखों के सामने खुलने-सा लगा □ उसे लगा जैसे यह उसके व्यक्तित्व की नयी सुबह है □ एक बड़ा शान्त संगीत उसकी पलकों पर ओस की तरह थिरकने लगा □

क्षितिज के पास एक बड़ा-सा सितारा जगमगा रहा था! चन्द्र को लगा जैसे यह उसके प्यार का

सितारा है जो जाने किस अज्ञात पाताल में डूब गया था और आज से वह फिर उग गया है□ उसने एक अन्धविश्वासी भोले बच्चे की तरह उस सितारे को हाथ जोड़कर कहा, “मेरी कंचन जैसी सुधा यानी के प्यार, तुम कहाँ खो गये थे? तुम मैरे सामने नहीं रहे, मैं जाने किन तूफानों में उतजा गया था□ मेरी आत्मा में सारी गुरुता सुधा के प्यार की थी□ उसे मैंने खो दिया□ उसके बाद मेरी आत्मा पीले पत्ते की तरह तूफान में उड़कर जाने किस कीचड़ में फँस गयी थी□ तुम मेरी सुधा के प्यार हो न! मैंने तुम्हें सुधा की भोली आँखों में जगमगाते हुए देखा था□ वेदमंत्रों-जैसे इस पवित्र सुबह में आज फिर मैरे पाप में लिप्त तन को अमृत से धोने आये हो□ मैं विश्वास दिलाता हूँ कि आज सुधा के चरणों पर अपने जीवन के सारे गुनाहों को चढ़ाकर हमेशा के लिए क्षमा माँग लूँगा□ लेकिन मेरी साँसों की साँस सुधा! मुझे क्षमा कर दोगी न?” और विचित्र-से भावावेश और पुलक से उसकी आँख में आँसू आ गये□ उसे चाद आया कि एक दिन सुधा ने उसकी हथेतियों को होठों से लगाकर कहा था-जाओ, आज तुम सुधा के श्पर्श से पवित्र हो...काश कि आज भी सुधा अपने मिसरी-जैसे होठों से चन्दर की आत्मा को चूमकर कहे-जाओ चन्दर, अभी तक जिंदगी के तूफान ने तुम्हारी आत्मा को बीमार, अपवित्र कर दिया था...आज से तुम वही चन्दर हो□ अपनी सुधा के चन्दर□ हरिणी-जैसी भोली-भाली सुधा के महान पवित्र चन्दर...

तैयार होकर चन्द्र जब स्टेशन पहुँचा तो वह जैसे मोहाविष्ट-सा था □ जैसे वह किसी जातू या टोना पढ़ा-हुआ-सा धूम रहा था और वह जातू था सुधा के प्यार का पुनरावर्तन □

गाड़ी घंटा-भर लेट थी □ चन्द्र को एक पल काटना मुश्किल हो रहा था □ अन्त में सिगनल डाउन हुआ □ कुलियों में हलचल मची और चन्द्र पटरी पर झुककर देखने लगा □ सुबह हो गयी थी और इंजन दूर पर एक काले दाग-सा दिखाई पड़ रहा था, धीरे-धीरे वह दाग बड़ा होने लगा और लम्बी-सी हरी पूँछ की तरह लड़ाती हुई ट्रेन आती दिखाई पड़ी □ चन्द्र के मन में आया, वह पागल की तरह दौड़कर वहाँ पहुँच जाए □ जिस दिन एक घोर अविश्वासी में विश्वास जाग जाता है, उस दिन वह पागल-सा हो उठता है □ उसे लग रहा था जैसे इस गाड़ी में सभी डिब्बे खाली हैं □ सिर्फ एक डिब्बे में अकेली सुधा होगी □ जो आते ही चन्द्र को अपनी प्यार-भरी निंगाठों में समेट लेगी □

गाड़ी के प्लेटफार्म पर आते ही हलचल बढ़ गयी □ कुलियों की दौड़धूप, मुसाफियों की हड्डबड़ी, सामान की उठा-धरी से प्लेटफॉर्म भर गया □ चन्द्र पागलों-सा इस सब भीड़ को चीरकर डिब्बे देखने लगा □ एक दफे पूरी गाड़ी का चककर लगा गया □ कहीं भी सुधा नहीं दिखाई दी □ जैसे आँसू से उसका गला ऊँधने लगा □ क्या आये नहीं ये लोग! किस्मत कितना व्यंब्य करती है उससे! आज जब वह किसी के चरणों पर अपनी आत्मा उत्सर्ज कर फिर पवित्र होना चाहता था तो सुधा ही नहीं आयी □ उसने एक चककर और लगाया और निराश होकर लौट पड़ा □ सहसा सेंकेंड वलास के एक छोटे-से डिब्बे में से कैलाश ने झाँककर कहा, “कपूर!”

चन्द्र मुड़ा, देखा कि कैलाश झाँक रहा है □ एक कुली सामान उतारकर खड़ा है □ सुधा नहीं है □

जैसे किसी ने झोंके से उसके मन का दीप बुझा दिया □ सामान बहुत थोड़ा-सा था □ वह डिब्बे में चढ़कर बोला, “सुधा नहीं आयी?”

“आयी हैं, देखो न! कुछ तबीयत खराब हो गयी है □ जी मितला रहा है □” और उसने बाथरूम की ओर इशारा कर दिया □ सुधा बाथरूम में बगल में लोटा रखे सिर झुकाये बैठी थी- ”देखो! देखती हो?” कैलाश बोला, “देखो, कपूर आ गया □” सुधा ने देखा और मुश्किल से हाथ जोड़ पायी होगी कि उसे मितली आ गयी...कैलाश दौड़ा और उसकी पीठ पर हाथ फेरने लगा और चन्द्र से बोला- ”पंखा लाओ!” चन्द्र हृतप्रभ था □ उसके मन ने सपना देखा था...सुधा सितारों की तरह जगमगा रही होगी और अपनी शेशनी की बाँहों में चन्द्र के प्राणों को सुला देगी □ जादूगरनी की तरह अपने प्यार के पंखों से चन्द्र की आत्मा के दाग पौछ देगी □ लेकिन यथार्थ कुछ और था □ सुधा जादूगरनी, आत्मा की शनी, पवित्रता की साम्राज्ञी सुधा, बाथरूम में बैठी है और उसका पति उसे सान्तवना दे रहा था □

“क्या कर रहे हो, चन्द्र!... पंखा उठाओ जल्दी से!” कैलाश ने व्यव्रता से कहा □ चन्द्र चौंक उठा और जाकर पंखा झलने लगा □ थोड़ी देर बाद मुँह धोकर सुधा उठी और क्याहती हुई-सी जाकर सीट पर बैठ गयी □ कैलाश ने एक तकिया पीछे लगा दिया और वह आँख बन्द करके लेट गयी □

चन्द्र ने अब सुधा को देखा □ सुधा उज़़द चुकी थी □ उसका रस मर चुका था □ वह अपने यौवन और रूप, चंचलता और मिठास की एक जर्द छाया मात्र रह गयी थी □ चेहरा दुबला पड़ गया था और हड्डियाँ निकल आयी थीं □ चेहरा दुबला होने से लगता था आँखें फटी पड़ती हैं □ वह चुपचाप आँख बन्द किये पड़ी थी □ चन्द्र पंखा हाँक रहा था, कैलाश एक सूटकेस खोलकर दवा निकाल रहा था □ गाड़ी यहीं आकर रुक जाती है, इसलिए कोई जल्दी नहीं थी □ कैलाश ने दवा ढी □ सुधा ने दवा पी और फिर उदास, बहुत बारीक, बहुत बीमार रुक में बोली, “चन्द्र, अच्छे तो हो! इतने दुबले कैसे लगते हो? अब कौन तुम्हारे खाने-पीने की परवा करता होगा!” सुधा ने एक गहरी साँस ली □ कैलाश बिस्तर लपेट रहा था □

“तुम्हें क्या हो गया है, सुधा?”

“मुझे सुख-योग हो गया है!” सुधा बहुत क्षीण हँसी हँसकर बोली, “बहुत सुख में रहने से ऐसा ही हो जाता है □”

चन्द्र चुप हो गया □ कैलाश ने बिस्तर कुली को देते हुए कहा, “इन्होंने तो बीमारी के मारे हम लोगों को परेशान कर रखा है □ जाने बीमारियों को क्या मुहब्बत है इनसे! चलो उठो □” सुधा उठी □

कार पर सुधा के साथ पीछे सामान रख दिया गया और आगे कैलाश और चन्द्र बैठे □ कैलाश बोला, “चन्द्र, तुम बहुत धीमे ड्राइव करना वरना इन्हें चक्कर आने लगेगा...” कार चल ढी □ चन्द्र कैलाश की विदेश-यात्रा और कैलाश चन्द्र के कॉलेज के बारे में बात करते रहे □ मुश्किल से घर तक कार पहुँची होगी कि कैलाश बोला, “यार चन्द्र, तुम्हें तकलीफ तो होगी लेकिन एक दिन के लिए कार तुम मुझे दे सकते हो?”

“क्यों?”

“मुझे जरा रीवाँ तक बहुत जरूरी काम से जाना है, वहाँ कुछ लोगों से मिलना है, कल दोपहर तक मैं चला आँँगा □”

“इसके मतलब मेरे पास नहीं रहोगे एक दिन भी?”

“नहीं, इन्हें छोड़ जाऊँगा □ लौटकर दिन-भर रहूँगा □”

“इन्हें छोड़ जाओगे? नहीं भाई, तुम जानते हो कि आजकल घर में कोई नहीं है □” चन्द्र ने कुछ घबराकर कहा □

“तो क्या हुआ, तुम तो हो!” कैलाश बोला और चन्द्र के चेहरे की घबराहट देखकर हँसकर बोला, “अरे यार, अब तुम पर इतना अविश्वास नहीं है □ अविश्वास करना होता तो ब्याह के पहले ही कर लेते □”

चन्द्र मुस्करा उठा, कैलाश ने चन्द्र के कन्धे पर हाथ रखकर धीमे से कहा ताकि सुधा न सुन पाये- “वैसे चाहे मुझे कुछ भी असन्तोष क्यों न हो, लेकिन इनका चरित्र तो सोने का है, यह मैं खूब परख चुका हूँ □ इनका ऐसा चरित्र बनाने के लिए तो मैं तुम्हें बधाई दूँगा, चन्द्र! और फिर आज के युग में!”

चन्द्र ने कुछ जवाब नहीं दिया □

कार पोर्टिको में लगी □ सुधा, कैलाश, चन्द्र उतरे □ माली और नौकर दौड़ आये, सुधा ने उन सबसे उनका हाल पूछा □ अन्दर जाते ही महराजिन दौड़कर सुधा से लिपट गयी □ सुधा को बहुत दुलार किया □

कैलाश मुँह-हाथ धो चुका था, नहाने चला गया □ महराजिन चाय बनाने लगी □ सुधा भी मुँह-हाथ धोने और नहाने चली गयी □ कैलाश तौलिया लपेटे नहाकर आया और बैठ गया □ बोला, “आज और कल की छुट्टी ले लो, चन्द्र! इनकी तबीयत ठीक नहीं है और मुझे जाना जरूरी है!”

“अच्छा, लेकिन आज तो जाकर हाजिरी देना जरूरी होगा □ फिर लौट आँँगा!” महराजिन चाय और नाश्ता ले आयी □ कैलाश ने नाश्ता लौटा दिया तो महराजिन बोली, “वाह, दामाद हुइके अफेली चाय पीबो भइया, अबहिन डॉक्टर साहब सुनिहैं तो का कहिहैं □”

“नहीं माँजी, मेरा पेट ठीक नहीं है □ दो दिन के जागरण से आ रहा हूँ □ फिर लौटकर खाँगा □ लो चन्द्र, चाय पियो □”

“सुधा को आने दो!” चन्द्र बोला □

“वह पूजा-पाठ करके खाती हैं □”

“पूजा-पाठ!” चन्द्र दंग रह गया, “सुधा पूजा-पाठ करने लगी?”

“हाँ भाई, तभी तो हमारी माताजी अपनी बहू पर मरती हैं □ असल में वह पूजा-पाठ करती रही □ शुरुआत की इन्होंने पूजा के बरतन धोने से और अब तो उनसे भी ज्यादा पत्तकी पुजारिन बन गयी हैं □” कैलाश ने इधर-उधर देखा और बोला, “यार, यह मत समझाना मैं सुधा की शिकायत कर रहा हूँ, लेकिन तुम लोगों ने मुझे ठीक नहीं चुना!”

“क्यों?” चन्द्र कैलाश के व्यवहार पर मुश्य था □

“इन जैसी लड़कियों के लिए तुम कोई कवि या कलाकार या भावुक लड़काढ़ँक्लते तो ठीक था □ मेरे जैसा व्यावहारिक और नीरस राजनीतिक इनके उपयुक्त नहीं हैं □ घर भर इनसे बेहद खुश हैं □ जब से ये गयी हैं, माँ और शंकर भइया दोनों ने मुझे नालायक करार दे दिया है □ इन्हीं से पूछकर सब करते हैं, लेकिन मैंने जो सोच रखा था, वह मुझे नहीं मिल पाया!”

“क्यों, क्या बात है?” चन्द्र ने पूछा, “गलती बताओ तो हम इन्हें समझाएँ □”

“नहीं, देखो गलत मत समझो □ मैं यह नहीं कहता कि इनकी गलती है □ यह तो गलत चुनाव की बात है □” कैलाश बोला, “न इसमें मेरा कसूर, न इनका! मैं चाहता था कोई लड़की जो मेरे साथ राजनीति का काम करती, मेरी सबलता और दुर्बलता दोनों की संगिनी होती □ इसलिए इतनी पढ़ी-लिखी लड़की से शादी की □ लेकिन इन्हें धर्म और साहित्य में जितनी रुचि है, उतनी राजनीति से नहीं □ इसलिए मेरे व्यक्तित्व को ग्रहण भी नहीं कर पायी □ वैसे मेरी शारीरिक प्यास को इन्होंने चाहे समर्पण किया, वह भी एक बेमनी से, उससे तन की प्यास भले ही बुझ जाती हो कपूर, लेकिन मन तो प्यासा ही रहता है...बुरा न मानना □ मैं बहुत स्पष्ट बातें करता हूँ □ तुमसे छिपाना क्या?...और स्वास्थ्य के मामले में ये इतनी लापरवाह हैं कि मैं बहुत दुःखी रहता हूँ □” इतने में सुधा नहाकर आती हुई दिख पड़ी □ कैलाश चुप हो गया □ सुधा की ओर देखकर बोला, “मेरी अटैची भी ठीक कर दो □ मैं अभी चला जाऊँ वरना दोपहर में तपना होगा □” सुधा चली गयी □ सुधा के जाते ही कैलाश बोला, “भरसक मैं इन्हें दुःखी नहीं होने देता, हाँ, अकसर ये दुखी हो जाती हैं; लेकिन मैं क्या करूँ, यह मेरी मजबूरी है, वैसे मैं इन्हें

भरसक सुखी रखने का प्रयास करता हूँ...और ये भी जायज-नाजायज हर इच्छा के सामने झुक जाती हैं, लेकिन इनके दिल में मेरे लिए कोई जगह नहीं है, वह जो एक पत्नी के मन में होती है लेकिन खैर, जिंदगी चलती जा रही है अब तो जैसे हो निभाना ही है!”

इतने में सुधा आयी और बोली, “देखिए, अटैची सेंवार दी है, आप भी देख लीजिए...” कैलाश उठकर चला गया चन्दर बैठा-बैठा सोचने लगा-कैलाश कितना अच्छा है, कितना साफ और खव्वच दिल का है! लेकिन सुधा ने अपने को किस तरह मिटा डाला...

इतने में सुधा आयी और चन्दर से बोली, “चन्दर! चलो, वो बुला रहे हैं!”

चन्दर चुपचाप उठा और अन्दर गया कैलाश ने तब तक यात्रा के कपड़े पहन लिये थे देखते ही बोला, “अच्छा चन्दर, मैं चलता हूँ कल शाम तक आ जाने की कोशिश करूँगा हाँ देखो, ज्यादा बुमाना मत इनकी सखी को यहाँ बुलवा लो तो अच्छा” फिर बाहर निकलता हुआ बोला, “इनकी जिद थी आने की, वरना इनकी हालत आने लायक नहीं थी माताजी से मैं कह आया हूँ कि लखनऊ मेडिकल कॉलेज ले जा रहा हूँ”

कैलाश कार पर बैठ गया फिर बोला, “देखो चन्दर, दवा इन्हें दे देना याद से, वहीं रखी है कार स्टार्ट हो गयी

चन्दर लौटा बरामदे में सुधा खड़ी थी चुपचाप बुझी हुई-सी चन्दर ने उसकी ओर देखा, उसने चन्दर की ओर देखा, फिर दोनों ने निगाहें झुका लीं सुधा वहीं खड़ी रही चन्दर ड्राइंग-रूम में जाकर किताबें बैठे हुए उठा लाया और कॉलेज जाने के लिए निकला सुधा अब भी बरामदे में खड़ी थी गुमसुम...चन्दर कुछ कहना चाहता था...लेकिन क्या? कुछ था, जो न जाने कब से संचित होता आ रहा था, जो वह व्यक्त करना चाहता था, लेकिन सुधा कैसी हो गयी है! यह वह सुधा तो नहीं जिसके सामने वह अपने को सदा व्यक्त कर देता था कभी संकोच नहीं करता था, लेकिन यह सुधा कैसी है अपने में सिमटी-सकुची, अपने में बँधी-बँधायी, अपने में इतनी छिपी हुई कि लगता था दुनिया के प्रति इसमें कहीं कोई खुलाव ही नहीं चन्दर के मन में जाने कितनी आवाजें तड़प उठीं लेकिन...कुछ नहीं बोल पाया वह बरामदे में ठिठक गया, निरुद्धेश्य वहीं अपनी किताबें खोलकर देखने लगा, जैसे वह याद करना चाहता था कि कहीं भूल तो नहीं आया है कुछ लेकिन उसके अन्तर्मन में केवल एक ही बात थी सुधा कुछ तो बोले यह इतना गहरा, इतनी घुटनवाला मौन, यह तो जैसे चन्दर के प्राणों पर घुटन की तरह बैठता जा रहा था सुधा...निर्वात निवास में दीपशिखा-सी अचल, निर्घन्ट, थमे हुए तूफान की तरह मौन चन्दर ने अन्त में नोट्स लिए, घड़ी देखी और चल दिया जब वह सीढ़ी तक पहुँचा तो सहसा सुधा की छायामूर्ति में हरकत हुई सुधा ने पाँव के अँगूठे से फर्श पर एक लकीर खींचते हुए नीचे निगाह झुकाये हुए कहा, “कितनी देर में आओगे?” चन्दर रुक गया जैसे चन्दर को सितारों का राज मिल गया हो सुधा भला बोली तो! लेकिन, फिर भी अपने मन का उल्लास उसने जाहिर नहीं होने दिया, बोला, “कम-से-कम दो घंटे तो लगेंगे ही”

सुधा कुछ नहीं बोली, चुपचाप रह गयी चन्दर ने दो क्षण प्रतीक्षा की कि सुधा अब कुछ बोले लेकिन सुधा फिर भी चुप चन्दर फिर मुड़ा क्षण-भर बाद सुधा ने पूछा, “चन्दर, और जल्दी नहीं लौट सकते?”

जल्दी! सुधा अगर कहे तो चन्दर जाये भी न, चाहे उसे इस्तीफा देना पड़े क्या सुधा भूल गयी कि चन्दर के व्यक्तित्व पर अगर किसी का शासन है तो सुधा का! वह जो अपनी जिद से,

उछलकर, लड़कर, झठकर चन्द्र से हमेशा मनचाहा काम करवाती रही है...आज वह इतनी दीनता से, इतनी विनय से, इतने अन्तर और इतनी दूरी से क्यों कह रही है कि जल्दी नहीं लौट सकते? क्यों नहीं वह पहले की तरह दौड़कर चन्द्र का कॉलर पकड़ लेती और मवलकर कहती, 'ए, अगर जल्दी नहीं लौटे तो...' लैकिन अब तो सुधा बरामदे में खड़ी होकर गम्भीर-सी, डूबती हुई-सी आवाज में पूछ रही है-जल्दी नहीं लौट सकते! चन्द्र का मन टूट गया □ चन्द्र की उमंग चट्टान से टकराकर बिखर गयी...उसने बहुत भारी-सी आवाज में पूछा, "क्यों?"

"जल्दी लौट आते तो पूजा करके तुम्हारे साथ नाश्ता कर लेते! लैकिन अगर ज्यादा काम हो तो रहने दो, मेरी वजह से हरज मत करना!" उसने उसे ठण्डे, शिष्ट और भावहीन स्वर में कहा □ हाय सुधा! अगर तुम जानती होती कि महीनों उद्भानत चन्द्र का टूटा और प्यासा मन तुमसे पुराने स्नेह की एक बूँद के लिए तरस उठा है तो भी क्या तुम इसी दूरी से बातें करती! काश, कि तुम समझ पाती कि चन्द्र ने अगर तुमसे कुछ दूरी भी निभायी है तो उससे खुद चन्द्र कितना बिखर गया है □ चन्द्र ने अपना देवत्व खो दिया है, अपना सुख खो दिया है, अपने को बर्बाद कर दिया है और फिर भी चन्द्र के बाहर से शान्त और सुन्दरित दिखने वाले हृदय के अन्दर तुम्हारे प्यार की कितनी गहरी प्यास धधक रही है, उसके रोम-रोम में कितनी जहरीली तृष्णा की बिजलियाँ कौँध रही हैं, तुमसे अलग होने के बाद अतृप्ति का कितना बड़ा गरस्ता उसने आग की लपटों में झुलसते हुए बिताया है □ अगर तुम इसे समझ लेती तो तुम चन्द्र को एक बार दुलारकर उसके जलते हुए प्राणों पर अमृत की चाँदनी बिखेरने के लिए व्यव्र हो उठती; लैकिन सुधा, तुमने अपने बाह्य विद्रोह को ही समझा, तुमने उस गम्भीर प्यार को समझा ही नहीं जो इस बाहरी विद्रोह, इस बाहरी विधवंस के मूल में पर्याप्तिनी की पावन धारा की तरह बहता जा रहा है □ सुधा, अगर तुम एक क्षण के लिए इसे समझ लो...एक क्षण-भर के लिए चन्द्र को पहले की तरह दुलार लो, बहला लो, झठ लो, मना लो तो सुधा चन्द्र की जलती हुई आत्मा, नरक वित्ताओं में फिर से अपना गौरव पा ले, फिर से अपनी खोयी हुई पवित्रता जीत ले, फिर से अपना विरमृत देवत्व लौटा ले...लैकिन सुधा, तुम बरामदे में चुपचाप खड़ी इस तरह की बातें कर रही हो जैसे चन्द्र कोई अपरिचित हो □ सुधा, यह क्या हो गया है तुम्हें? चन्द्र, बिनती, पम्मी सभी की जिंदगी में जो भयंकर तूफान आ गया है, जिसने सभी को झकझोर कर थका डाला है, इसका समाधान सिर्फ तुम्हारे प्यार में था, सिर्फ तुम्हारी आत्मा में था, लैकिन अगर तुमने इनके चरित्रों का अन्तर्निहित सत्य न देखकर बाहरी विधवंस से ही अपना आगे का व्यवहार निश्चित कर लिया तो कौन इन्हें इस चक्रवात से खींच निकालेगा! क्या ये अभागे इसी चक्रवात में फँसकर चूर हो जाएँगे...सुधा... लैकिन सुधा और कुछ नहीं बोली □ चन्द्र चल दिया □ जाकर लगा जैसे कॉलेज के परीक्षा भवन में जाना भी भारी मालूम दे रहा था □ वह जल्दी ही भाग आया □ हालाँकि सुधा के व्यवहार ने उसका मन जैसे तोड़-सा दिया था, फिर भी जाने क्यों वह अब आज सुधा को एक प्रकाशवृत्त बनकर लपेट लेना चाहता था □

जब चन्द्र लौट आया तो उसने देखा-सुधा तो उसी के कमरे में है॥ उसने उसके कमरे के एक कोने में दरी हटा दी है, वहाँ पानी छिड़क दिया और एक कुश के आसन पर सामने चौकी पर कोई पोथी धरे बैठी है॥ चौकी पर एक श्वेत वस्त्र बिछाकर धूपदानी रख दी है जिसमें धूप सुलग रही है॥ लॉन से शायद कूछ फूल तोड़ लायी थी जो धूपदानी के पास रखे हुए थे॥ बगल में एक रुद्राक्ष की माला रखी थी॥ एक शुद्ध श्वेत ऐश्वर्य की धोती और केवल एक चोली पहने हुए पल्ले से बाँहों तक ढँके हुए वह एकाग्र मनोयोग से ग्रन्थ का पारायण कर रही थी॥ धूपदानी से धूम-रेखाएँ मचलती हुई, लहराती हुई, उसके कपोतों पर झूलती हुई सूखी-खखी अलकों से उलझ रही थी॥ उसने नहाकर केश बाँधे नहीं थे... चन्द्र ने जूते बाहर ही उतार दिये और चुपचाप पलँग पर बैठकर सुधा को देखने लगा॥ सुधा ने सिर्फ एक बार बहुत शान्त, बहुत गहरी आकाश-जैसी स्वच्छ निगाहों से चन्द्र को देखा और फिर पढ़ने लगी॥ सुधा के चारों ओर एक विवित्र-सा वातावरण था, एक अपार्थित स्वर्गिक ज्योति के रेशों से बुना हुआ झीना प्रकाश उस पर छाया हुआ था॥ गले में पड़ा हुआ आँचल, पीठ पर बिखरे हुए सुनहले बाल, अपना सबकुछ खोकर विरक्ति में खिन्न सुहाग पर छाये हुए वैद्यव्य की तरह सुधा लग रही थी॥ मँग सूनी थी, माथे पर योली का एक बड़ा-सा टीका था और घेहरे पर स्वर्ण के मुख्जाये हुए फूलों की घुलती हुई उदासी, जैसे किसी ने चाँदनी पर हरसिंगार के पीते फूल छीटे दे दिये हों॥

थोड़ी देर तक सुधा स्पष्ट स्वरों में पढ़ती रही॥ उसके बाद उसने पोथी बन्द कर रख दी॥ उसके बाद आँख बन्द कर जाने किस अज्ञात देवता को हाथ जोड़कर नमस्कार किया... फिर उठ खड़ी हुई और फर्श पर चन्द्र के पास बैठ गयी॥ आँचल कमर में खोंस लिया और बिना सिर उठाये गोली, “चलो, नाश्ता कर लो!”

“यहीं ले आओ!” चन्द्र बोला॥ सुधा उठी और नाश्ता ले आयी॥ चन्द्र ने उठाकर एक टुकड़ा मुँह में रख लिया॥ लेकिन जब सुधा उसी तरह फर्श पर चुपचाप बैठी रही तो चन्द्र ने कहा, “तुम भी खाओ!”

“मैं!” वह एक फीकी हँसी हँसकर गोली, “मैं खा लूँ तो अभी कै हो जाये॥ मैं सिवा नींबू के शरबत और खिचड़ी के अब कुछ नहीं खाती॥ और वह भी एक वर्त!”

“क्यों?”

“असल में पहले मैंने एक व्रत किया, पन्द्रह दिन तक केवल प्रातःकाल खाने का, तब से कुछ ऐसा हो गया कि शाम को खाते ही मन बिगड़ जाता है॥ इधर और कई रोग हो गये हैं॥”

चन्द्र का मन ये आया॥ सुधा, तुम चुपचाप इस तरह अपने को मिटाती रहीं! मान लिया चन्द्र ने एक खत में तुम्हें लिख ही दिया था कि अब पत्र-व्यवहार बन्द कर दो! लेकिन क्या अगर तुम पत्र भेजतीं तो चन्द्र की हिम्मत थी कि वह उत्तर न देता! अगर तुम समझ पातीं कि चन्द्र के

मन में कितना दुख है!

चन्द्र चाहता था कि सुधा की गोद में अपने मन की सभी बातें बिखेर दे...लेकिन सुधा कहे, कुछ शिकायत करे तो चन्द्र अपनी सफाई दे...लेकिन सुधा तो है कि शिकायत ही नहीं करती, सफाई देने का मौका ही नहीं देती...यह देवता की मूर्ति-सी पथरीली सुधा! यह चन्द्र की सुधा तो नहीं! चन्द्र का मन बहुत भर आया □ उसके लंबे गले से पूछा, “सुधा, तुम बहुत बदल गयी हो □ खैर और तो जो कुछ है उसके लिए अब मैं क्या कहूँ, लेकिन अपनी तन्दुरुस्ती बिनाइकर क्यों तुम मुझे दुख दे रही हो! अब यों भी मेरी जिंदगी में क्या रहा है! लेकिन एक ही सन्तोष था कि तुम सुखी हो □ लेकिन तुमने मुझसे वह सहारा छीन लिया...पूजा किसकी करती हो?”

“पूजा कहाँ, पाठ करती हूँ, चन्द्र! गीता का और भागवत का, कभी-कभी सूर सागर का! पूजा अब भला किसकी करँगी? मुझ जैसी अभागिनी की पूजा भला स्वीकार कौन करेगा?”

“तब यह एक वर्ता का भोजन क्यों?”

“यह तो प्रायश्चित्त है, चन्द्र!” सुधा ने एक गहरी शाँस लेकर कहा □

“प्रायश्चित्त...?” चन्द्र ने अचरज से कहा □

“हाँ, प्रायश्चित्त...” सुधा ने अपने पाँव के बिछियों को धोती के छोर से रगड़ते हुए कहा, “हिन्दू नृह तो एक ऐसा जेल होता है जहाँ कैदी को उपवास करके प्राण छोड़ने की भी इजाजत नहीं रहती, अगर धर्म का बहाना न हो! धर्म के बहाने उपवास करके कुछ सुख मिल जाता है □”

एक क्षण आता है कि आदमी प्यार से विद्रोह कर चुका है, अपने जीवन की प्रेरणा-मूर्ति की गोद से बहुत दिन तक निर्वासित रह चुका है, उसका मन पागल हो उठता है फिर से प्यार करने को, बेहद प्यार करने को, अपने मन का दुलार फूलों की तरह बिखरा देने को □ आज विद्रोह का तूफान उतर जाने के बाद अपनी उजड़ी हुई जिंदगी में बीमार सुधा को पाकर चन्द्र का मन तड़प उठा □ सुधा की पीठ पर लहराती हुई सूखी अलंकृत हाथ में ले लीं □ उन्हें गूँथने का असफल प्रयास करते हुए बोला-

“सुधा, यह तो सच है कि मैंने तुम्हारे मन को बहुत दुखाया है, लेकिन तुम तो हमारी हर बात को, हमारे हर क्रोध को क्षमा करती रही हो, इस बात का तुम इतना बुरा मान गयी?”

“किस बात का, चन्द्र!” सुधा ने चन्द्र की ओर देखकर कहा, “मैं किस बात का बुरा मान गयी!”

“किस बात का प्रायश्चित्त कर रही हो तुम, इस तरह अपने को मिटाकर!”

“प्रायश्चित्त तो मैं अपनी दुर्बलता का कर रही हूँ, चन्द्र!”

“दुर्बलता?” चन्द्र ने सुधा की अलंकृत हाथों की तरह छिटकाकर कहा □

“दुर्बलता-चन्द्र! तुम्हें ध्यान होगा, एक दिन हम लोगों ने निश्चय किया था कि हमारे प्यार की कस्तौती यह रहेगी चन्द्र, दूर रहकर भी हम लोग ऊँचे उठेंगे, परित्र रहेंगे □ दूर हो जाने के बाद चन्द्र, तुम्हारा प्यार तो मुझमें एक दृढ़ आत्मा और विश्वास भरता रहा, उसी के सहारे मैं अपने जीवन के तूफानों को पार कर ले गयी; लेकिन पता नहीं मैरे प्यार में कौन-सी दुर्बलता रही कि तुम उसे ग्रहण नहीं कर पाये...मैं तुमसे कुछ नहीं कहती □ मनर अपने मन में कितनी कुंठित हूँ कि कह नहीं सकती □ पता नहीं दूसरा जन्म होता है या नहीं; लेकिन इस जन्म में तुम्हें पाकर तुम्हारे चरणों पर अपने को न चढ़ा पायी □ तुम्हें अपने मन की पूजा में यकीन न दिला पायी, इससे बढ़कर और दुर्भाग्य क्या होगा? मैं अपने व्यक्तित्व को कितना गर्हित, कितना छिला

समझने लगी हूँ, चन्द्र!”

चन्द्र ने नाश्ता खिसका दिया □ अपनी आँख में झलकते हुए आँसू को छिपाते हुए चुपचाप बैठ गया □

“नाश्ता कर लो, चन्द्र! इस तरह तुम्हें अपने पास बिठाकर खिलाने का सुख अब कहाँ नसीब होगा! लो □” और सुधा ने अपने हाथ से उसे एक नमकीन सेव खिला दिया □ चन्द्र के भरे आँसू सुधा के हाथों पर चू पड़े □

“छि:, यह क्या, चन्द्र!”

“कुछ नहीं...” चन्द्र ने आँसू पोंछ डाले □

इतने में महराजिन आयी और सुधा से बोली, “बिटिया रानी! लेव ई नानखटाई हम कल्है से बनाय के रख दिया रहा कि तोके खिलाइबे!”

“अच्छा! हम भी महराजिन, इतने दिन से तुम्हारे हाथ का खाने के लिए तरस गये, तुम चलो हमारे साथ!”

“हियाँ चन्द्र भइया के कौन देखी? अब बिटिया इनहूँ के ब्याह कर देव, तो हम चली तोहरे साथ!”

सुधा हूँस पड़ी, चन्द्र चुपचाप बैठा रहा □ महराजिन खिचड़ी डालने चली गयी □ सुधा ने चुपचाप नानखटाई की तश्तरी उठाकर एक ओर रख दी-चन्द्र चुप, अब क्या बात करे! पहले वह दोनों घंटों क्या बात करते थे! उसे बड़ा ताज्जुब हुआ □ इस वक्त कोई बात ही नहीं सूझाती है □ पहले जाने कितना वक्त गुजर जाता था, दोनों की बातों का खात्मा ही नहीं होता था □ सुधा भी चुप थी □ थोड़ी देर बाद चन्द्र बोला, “सुधी, तुम सचमुच पूजा-पाठ में विश्वास रखती हो...”

“क्यों, करती तो हूँ, चन्द्र! हाँ, मूर्ति जरूर नहीं पूजती, पर कृष्ण को जरूर पूजती हूँ □ अब सभी सहारे टूट गये, तुमने भी मुझे छोड़ दिया, तब मुझे गीता और रामायण में बहुत सन्तोष मिला □ पहले मैं खुद ताज्जुब करती थी कि औरतें इतना पूजा-पाठ क्यों करती हैं, फिर मैंने सोचा-हिन्दू नारी इतनी असहाय होती है, उसे पति से, पुत्र से, सभी से इतना लांछन, अपमान और तिरस्कार मिलता है कि पूजा-पाठ न हो तो पशु बन जाये □ पूजा-पाठ ही ने हिन्दू नारी का चित्र अभी तक इतना ऊँचा रखा है □”

“मैं तो समझता हूँ यह अपने को भुलावा देना है □”

“मानती हूँ चन्द्र, लेकिन अगर कोई हिन्दू धर्म की इन किताबों को ध्यान से पढ़े तब वह जाने, क्या है इनमें! जाने कितनी ताकत देती हैं ये! अभी तक जिंदगी में मैंने यह सोचा है कि पुरुष हो या नारी, सभी के जीवन का एकमात्र सम्बल विश्वास है, और इन ग्रन्थों में सभी संशयों को मिटाकर विश्वास का इतना गहन उपदेश है कि मन पुलक उठता है... मैं तुमसे कुछ नहीं छिपाती □ चन्द्र, जब बिनती के ब्याह में तुमने मेरा पत्र लौटा दिया तो मैं तड़प उठी □ एक अविश्वास मेरी नस-नस में गुँथ गया □ मैंने समझ लिया कि तुम्हारी सारी बातें झूठी थीं □ एक जाने कैसी आग मुझे हरदम झुलसाती रहती थी! मेरा स्वभाव बहुत बिगड़ गया था □ मुझे हरेक से नफरत हो गयी थी □ हरेक पर झल्ला उठती थी... किसी बात में मुझे चैन नहीं मिलता था □ धीरे-धीरे मैंने इन किताबों को पढ़ना शुरू किया □ मुझे लगने लगा कि शान्ति धीरे-धीरे मेरी आत्मा पर उतर रही है □ मुझे लगा कि यह सभी ग्रन्थ पुकार-पुकारकर कह रहे हैं-'संशयात्मा

विनश्यति!" धीरे-धीरे मैंने इन बातों को अपने जीवन पर घटाना शुरू किया, तो मैंने देखा कि सारी भक्ति की किताबें और उनका दर्शन बड़ा मनोहर रूपक है, चन्द्र! कृष्ण प्यार के देवता हैं। वंशी की धनि विश्वास की पुकार है। धीरे-धीरे तुम्हारे प्रति मेरे मन में जगा हुआ अविश्वास मिट गया, मैंने कहा, तुम मुझसे अलग ही कहाँ हो, मैं तो तुम्हारी आत्मा का एक टुकड़ा हूँ जो एक जन्म के लिए अलग हो गयी। लेकिन हमेशा तुम्हारे चारों ओर चन्द्रमा की तरह चक्कर लगाती रहूँगी, जिस दिन मैंने पढ़ा-

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।

अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षायिष्यामि मा शुचः।

तो मुझे लगा कि तुम्हारा खोया हुआ प्यार मुझे पुकारकर कह रहा है-मेरी शरण में चले आओ, और सिवा तुम्हारे प्यार के मेरा भगवान और है ही क्या...उसके बाद से चन्द्र, मेरे मन में विश्वास और प्रेम झलक आया, अपने जीवन की परिधि में आने वाले हर व्यक्ति के लिए। सभी मुझे बहुत चाहने लगे...लेकिन चन्द्र, जब बिनती यहाँ से दिल्ली जाते वक्त मेरे साथ गयी और उसने सब हाल बताया तो मुझे कितना दुःख हुआ। कितनी ज्ञानि हुई। तुम्हारे ऊपर नहीं, अपने ऊपर।"

बातें भावनात्मक स्तर से उठकर बौद्धिक स्तर पर आ चुकी थीं। चन्द्र फौरन बोला, "सुधा, ज्ञानि की तो कोई बात नहीं, कम-से-कम मैंने जो कुछ किया है उस पर मुझे जगा-सी भी शर्म नहीं!" चन्द्र के स्वर में फिर एक बार गर्व और कड़वाहट-सी आ गयी थी।" मैंने जो कुछ किया है उसे मैं पाप नहीं मानता। तुम्हारे भगवान ने तुम्हें जो कुछ रस्ता दिखलाया, वह तुमने किया। मेरे भगवान ने जो रस्ता मुझे दिखलाया, वह मैंने किया। तुम जानती ही हो मेरी जिंदगी की पवित्रता तुम थी, तुम्हारी भोली निष्पाप साँसें मेरे सभी गुनाह, मेरी सभी कमजोरियाँ सुलाती रही हैं। जिस दिन तुम मेरी जिंदगी से चली गयीं, कुछ दिन तक मैंने अपने को सँभाला। इसके बाद मेरी आत्मा का कण-कण ढोह कर उठा। मैंने कहा, स्वर्ण के मालिक साफ-साफ सुनो। तुमने मेरी जिंदगी की पवित्रता को छीन लिया है, मैं तुम्हारे र्घर्ण में वासना की आग धधकाकर उसे नरक से बदतर बना दूँगा। और मैंने होठों के किनारे चुम्बन की लपटें सुलगानी शुरू कर दीं। धीरे-धीरे महाश्मशान के सन्नाटे में करोड़ों वासना की लपटें जहरीले साँपों की तरह फुँफकारने लगीं। मेरे मन को इसमें बहुत सन्तोष मिला, बहुत शान्ति मिली। यहाँ तक कि बिनती के लिए मैं अपने मन की सारी कटुता भूल गया। मैं कैसे कह दूँ कि यह सब गुनाह था। सुधा, अगर ठीक से देखो, गम्भीरता से समझो तो जो कुछ तुम्हारे लिए मेरे मन में था, उसी की प्रतिक्रिया वह है जो मेरे मन में पर्मी के लिए है। तुम्हारा दुलार और पर्मी की वासना दोनों एक सिवके के दो पठलू हैं। अपने पठलू को सठी और दूसरे पठलू को गलत क्यों कहती हो? देवता की आरती में जलता हुआ दीपक पवित्र है और उससे निकला हुआ धुआँ अपवित्र! दीप-शिखा नौतिक है और धूम-रेखा अनौतिक? ज्ञानि किस बात की, सुधा?" चन्द्र ने बहुत आवेश में कहा।

"छि, चन्द्र! तुम मुझे समझो नहीं! मैं नौतिक-अनौतिक की बात ही नहीं करती। मेरे भगवान ने, मेरे प्यार ने मुझे अब उस दुनिया में पहुँचा दिया है जो नौतिक-अनौतिक से उठकर है। तुमने अपने भगवान से विद्रोह किया, लेकिन उन्होंने तुम्हारी बात पर कोई फैसला भी तो दिया होता। वे इतने दयातु हैं कि कभी मानव के कार्यों पर फैसला ही नहीं देते। दं तो दूर की बात, वे तो

केवल आदमी को समझाकर, उसकी कमजोरियाँ समझाकर उसे क्षमा करने और उसे प्यार करने की बात कहते हैं, चन्द्र! वहाँ नौतिकता-अनौतिकता का प्रश्न ही नहीं।”

“तब? यह ज्ञानि किस बात की तुम्हें!” चन्द्र ने पूछा।

“ज्ञानि तो मुझे अपने पर थी, चन्द्र! यहा तुम्हारा पर्माणी से सम्बन्ध तो मैं बिनती की तरह नहीं सोचती, इतना विश्वास रखो। मेरी पाप और पुण्य की तराजू ही दूसरी है। फिर कम-से-कम अब इतना देख-सुनकर मैं यह नहीं मानती कि शरीर की प्यास ही पाप है! नहीं चन्द्र, शरीर की प्यास भी उतनी ही पवित्र और स्वाभाविक है जितनी आत्मा की पूजा। आत्मा की पूजा और शरीर की प्यास दोनों अभिन्न हैं। आत्मा की अभिव्यक्ति शरीर से है, शरीर का संरक्षक, शरीर का सन्तुलन आत्मा से है। जो आत्मा और शरीर को अलग कर देता है, वही मन के भयंकर तूफानों में उलझकर घूर-घूर हो जाता है। चन्द्र, मैं तुम्हारी आत्मा थी। तुम मेरे शरीर थे। पता नहीं कैसे हम लोग अलग हो गये! तुम्हारे बिना मैं केवल सूक्ष्म आत्मा रह गयी। शरीर की प्यास, शरीर की रंगीनियाँ मेरे लिए अपरिचित हो गयीं। पति को शरीर देकर भी मैं सन्तोष न दे पायी... और मेरे बिना तुम केवल शरीर रह गये। शरीर में डूब गये... पाप का जितना हिस्सा तुम्हारा उतना ही मेरा... पाप की वैतरणी के इस किनारे जब तक तुम तड़पोगे, तभी तक मैं भी तड़पूँगी... दोनों में से किसी को भी छैन नहीं और कभी छैन नहीं मिलेगा...”

“लौकिन फिर...”

“हटाओ इन सब बातों को, चन्द्र! तुमने व्यर्थ यह बात उठायी। मैं अब बात करना भूलती जा रही हूँ। मैं तो आयी थी तुम्हें देखकर कुछ मन का ताप मिटाने। उठो, खाना खाएँ!” सुधा बोली।

“नहीं, मैं चाहता हूँ, बातें सुलझ जाएँ, सुधा!” चन्द्र ने सुधा के हाथ पर अपना सिर रखकर कहा, “मेरी तकलीफ अब बेछढ़ बढ़ती जा रही है। मैं पागल न हो जाऊँ!”

“छिः, ऐसी बात नहीं सोचते। उठो!” चन्द्र को उठाकर सुधा बोली। दोनों ने खाना खाया। महराजिन बड़े दुलार से परस्ती रहीं और सुधा से बातें करती रहीं। खाना खाकर चन्द्र लेट गया और सोचने लगा, अब क्या सचमुच उसके और सुधा के बीच में कोई इतना भयंकर अन्तर आ गया है कि दोनों पहले जैसे नहीं हो सकते?

लगभग चार बजे वह जागा तो उसने देखा कि उसके पाँवों के पास सिर रखकर सुधा सो रही है। पंखे की हवा वहाँ तक नहीं पहुँचती। वह पर्सीने से तर-बतर हो रही है। चन्द्र उठा, उसे नींद में ऐसा लगा कि जैसे इधर कुछ हुआ ही नहीं है। सुधा वही सुधा है, चन्द्र वही चन्द्र है। उसने सुधा के पल्ले से सुधा के माथे और गले का पर्सीना पोंछ दिया और हाथ बढ़ाकर पंखा उसकी ओर धुमा दिया। सुधा ने आँखें खोलीं, एक अजीब-सी निगाह से चन्द्र की ओर देखा और चन्द्र के पाँव को खींचकर वक्ष से लगा फिर आँख बन्द करके लेट गयी। चन्द्र ने अपना एक हाथ सुधा के माथे पर रख लिया और वह चुपचाप बैठा सोचने लगा, आज से लगभग साल-भर पहले की बात, जब उसने पहले-पहल सुधा को कैलाश का वित्र दिखाया था, और सुधा यो-धोकर उसके पाँवों में इसी तरह मुँह छिपाकर सो गयी थी... और आज... सुधा साल-भर में कहाँ से कहाँ जा पहुँची है! चन्द्र कहाँ से कहाँ पहुँच गया है! काश कि कोई उनकी जिंदगी की स्लेट से इस वर्ष-भर में खींची हुए मानसिक रेखाओं को मिटा सके तो कितने सुखी हो जाएँ दोनों! चन्द्र ने सुधा को हिलाया और बोला-

“सुधा, सो रही हो?”

“नहीं।”

“उठो।”

“नहीं चन्द्र, पड़ी रहने दो। तुम्हारे चरणों में सबकुछ भूलकर एक क्षण के लिए भी सो सकूँगी, मुझे इसका विश्वास नहीं था। सबकुछ छीन लिया है तुमने, एक क्षण की आत्म-प्रवंचना क्यों छीनते हो?” सुधा ने उसी तरह पड़े हुए जवाब दिया।

“अरी, उठ पगली!” चन्द्र के मन में जाने कहाँ मरा पड़ा हुआ उल्लास फिर से जिन्दा हो उठा था। उसने सुधा की बाँह में जोर से चुटकी काटते हुए कहा, “उठती है या नहीं, आलसी कहीं की!”

सुधा उठकर बैठ गयी। क्षण-भर चन्द्र की ओर पथरायी हुई निगाह से देखती रही और बोली, “चन्द्र, मैं जाग रही हूँ। तुम्हीं ने उठाया है मुझे... चन्द्र। कहीं सपना तो नहीं है कि फिर टूट जाए!” और सुधा सिसक-सिसक कर ये पड़ी। चन्द्र की आँखों में आँसू आ गये। थोड़ी देर बाद वह बोला, “सुधा, कोई जादूगर अगर हम लोगों के मन से यह काँटा निकाल देता तो मैं कितना सुखी होता! लेकिन सुधा, अब मैं तुम्हें दुखी नहीं करूँगा।”

“यह तो तुमने पहले भी कहा था, चन्द्र! लेकिन इधर जाने कैसे हो गये? लगता है तुम्हारे चरित्र में कहीं स्थायित्व नहीं... इसी का तो मुझे दुख है, चन्द्र!”

“अब रहेगा, सुधा! तुम्हें खोकर, तुम्हारे प्यार को खोकर मैं देख चुका हूँ कि मैं आदमी नहीं रह पाता, जानवर बन जाता हूँ। सुधा, अगर तुम आज से महीनों पहले मिल जातीं तो जो जहर मेरे

मन में घुट रहा है, वह तुम्हारे सामने व्यक्त करके मैं बिल्कुल निश्चिन्त हो जाता □ अच्छा सुधा, यहाँ आओ □ चुपचाप लेट जाओ, मैं तुमसे सबकुछ कह डालूँ फिर सब भूल जाऊँ □ बोलो, सुनोगी?”

सुधा चुपचाप लेट गयी और बोली, “चन्द्र! या तो मत बताओ या फिर सभी स्पष्ट बता दो...”

“हाँ, बिल्कुल स्पष्ट सुधी; तुमसे कुछ छिपा सकता हूँ भला!” चन्द्र ने हल्की-सी चपत मारकर कहा, “आज मन जैसे पागल हो रहा है तुम्हारे चरणों पर बिखर जाने के लिए...जादूगरनी कहीं की! देखो सुधा-पिछली दफे तुमने मुझे बहुत कुछ बताया था, कैलाश के बारे में!”

“हाँ □”

“बस, उसके बाद से एक अजीब-सी अरुचि मैरे मन में तुम्हारे लिए होने लगी थी; मैं तुमसे कुछ छिपाऊँगा नहीं □ तुम्हारे जाने के बाद बर्टी आया □ उसने मुझसे कहा कि औरत केवल नयी संवेदना, नया खाद चाहती है और कुछ नहीं, अविवाहित लड़कियाँ विवाह, और विवाहित लड़कियाँ नये प्रेमी...बस यही उनका चरम लक्ष्य है □ लड़कियाँ शरीर की प्यास के अलावा और कुछ नहीं चाहतीं...जैसे अराजकता के दिनों में किसी देश में कोई भी चालाक नेता शक्ति छीन लेता है, वैसे ही मानसिक शून्यता के क्षणों में बर्टी जैसे मेरा दार्शनिक गुरु हो गया □ उसके बाद आयी पर्मी □ उससे मैंने कहा कि क्या आवश्यक है कि पुरुष और नारी के सम्बन्धों में सेक्स हो ही? उसने कहा, 'हाँ, और यदि नहीं है तो प्लेटानिक (आदर्शवादी) प्यार की प्रतिक्रिया सेक्स की ही प्यास में होती है □' अब मैं तुम्हें अपने मन का चोर बतला दूँ □ मैंने सोचा कि तुम भी अपने वैवाहिक जीवन में इस गयी हो □ शरीर की प्यास ने तुम्हें अपने में डुबा दिया है और जो अरुचि तुम मैरे सामने व्यक्त करती हो वह केवल दिखावा है □ इसलिए मन-ही-मन मुझे तुमसे चिढ़-सी हो गयी □ पता नहीं क्यों यह संस्कार मुझमें ठढ़-सा हो गया और इसी के पीछे मैं तुम्हीं को नहीं, पर्मी को छोड़कर सभी लड़कियों से नफरत-सी करने लगा □ बिनती को भी मैंने बहुत दुख दिया □ व्याह में जाने के पहले ही बहुत दुखी होकर गयी □ रही पर्मी की बात तो मैं उस पर इसलिए खुश था कि उसने बड़ी यथार्थ-सी बात कही थी □ लेकिन उसने मुझसे कहा कि आदर्शवादी प्यार की प्रतिक्रिया शारीरिक प्यास में होती है □ तुमको इसका अपराधी मानकर तुमसे तो नाराज हो गया लेकिन अन्दर-ही-अन्दर वह संस्कार मेरा व्यक्तित्व बदलने लगा □ सुधा, पता नहीं, तुम्हारे जीवन में प्रतिक्रिया के रूप में शारीरिक प्यास जानी या नहीं पर मैरे मन के गुनाह तो तूफान की तरह लहरा उठे □ लेकिन तुमसे एक बात नहीं छिपाऊँगा □ वह यह कि ऐसे भी क्षण आये हैं जब पर्मी के समर्पण ने मैरे मन की सारी कटुता धो दी है....बोलो, तुम कुछ तो बोलो, सुधा!”

“तुम कहते चलो, चन्द्र! मैं सुन रही हूँ □”

“हाँ...लेकिन उस दिन गेसू आयी □ उसने मुझे फिर पुराने दिनों की याद दिला दी और फिर जैसे पर्मी के लिए आकर्षण उखड़-सा गया □ अच्छा सुधा, एक बात बताओ □ तुम यह मानती हो कि कभी-कभी एक व्यक्ति के माध्यम से दूसरे व्यक्ति की आवनाओं की अनुभूति होने लगती है?”

“क्या मतलब?”

“मेरा मतलब जैसे मुझे गेसू की बातों में उस दिन ऐसा लगा, जैसे तुम बोल रही हो □ और दूसरी बात तुम्हें बताऊँ □ तुम्हारे पीछे बिनती रही मैरे पास □ सारे अँधेरे में वही एक शेशनी थी, बड़ी क्षीण, टिमिटिमाती हुई, सारहीन-सी □ बल्कि मुझे तो लगता था कि वह शेशन ही इसलिए थी कि

उसमें रोशनी तुम्हारी थी □ मैंने कुछ दिन बिनती को बहुत प्यार किया □ मुझे ऐसा लगता था कि अभी तक तुम मेरे सामने थीं, अब तुम उसके माध्यम से आती हो □ लगता था जैसे वह एक व्यक्तित्व नहीं है, तुम्हारे व्यक्तित्व का ही अंश है □ उस लड़की में जिस अंश तक तुम थीं वह अंश बार-बार मेरे मन में ऐसे उभार देता था □ क्यों सुधा! मन की यह भी कैसी अजब-सी गति है!”

सुधा थोड़ी देर चुप रही, फिर बोली, “भागवत में एक जगह एक टीका में हमने पढ़ा था चन्द्र कि जिसको भगवान बहुत प्यार करते हैं, उसमें उनकी अंशाभिव्यक्ति होती है □ बहुत बड़ा वैज्ञानिक सत्य है यह! मैं बिनती को बहुत प्यार करती हूँ, चन्द्र!”

“समझ गया मैं □” चन्द्र बोला, “अब मैं समझा, मेरे मन में इतने गुनाह कहाँ से आये □ तुमने मुझे बहुत प्यार किया और वही तुम्हारे व्यक्तित्व के गुनाह मेरे व्यक्तित्व में उतर आये!”

सुधा खिलखिलाकर हँस पड़ी □ चन्द्र के कन्धे पर हाथ रखकर बोली, “इसी तरह हँसते-बोलते रहते तो क्यों यह ढाल होता? मनमौजी हो □ जब चाहो खुश हो जये, जब चाहो नाराज हो जये!”

उसके बाद वह उठी और बाहर से एक तश्तरी में कुछ फल काटकर लायी □ चन्द्र ने देखा-आम □ “अरे आम! अभी कहाँ से आम ले आयीं? कौन लाया?”

“तखनऊ उतरी थी? वहाँ से तुम्हारे लिए लेती आयी □”

चन्द्र ने एक आम की फाँक उठाकर खायी और किसी पुरानी घटना की याद दिलाने के लिए आँचल से हाथ पौछ दिये □ सुधा हँस पड़ी और बड़ी दुलार-भरी ताड़ना के स्वर में बोली, “बोलो, अब तो दिमाग नहीं बिगाड़ोगे अपना?”

“कभी नहीं सुधी, लोकिन पर्मी का क्या होगा? पर्मी से मैं सम्बन्ध नहीं तोड़ सकता □ व्यवहार चाहे जितना सीमित कर दूँ □”

“मैं कब कहती हूँ, मैं तुम्हें कहीं से कभी बाँधना ही नहीं चाहती □ जानती हूँ कि अगर चाहूँ भी तो कभी अपने मन के बाहुपाश ढीले कर तुम्हें विरमुक्ति तो मैं न दे पाऊँगी, तो भला बन्धन ही क्यों बाँधूँ! पर्मी शाम को आएगी?”

“शायद...”

दरवाजा खटका और गेसू ने प्रवेश किया □ आकर, दौड़कर सुधा से लिपट गयी □ चन्द्र उठकर चला आया □ “चले कहाँ भाईजान, बैठिए न □”

“नहा लूँ तब आता हूँ...” चन्द्र चल दिया □ वह इतना खुश था, इतना खुश कि बाथ-रूम में खूब गाता रहा और नहा चुकने के बाद उसे खयाल आया कि उसने बनियाइन उतारी ही नहीं थी □ नहाकर कपड़े बदलकर वह आया तब भी गुनगुना रहा था □ कमरे में आया तब देखा गेसू अफेली बैठी है □

“सुधा कहाँ गयी?” चन्द्र ने नाचते हुए स्वर में कहा □

“गयी है शरबत बनाने □” गेसू ने चुन्नी से सिर ढँकते हुए और पाँवों को सलवार से ढँकते हुए कहा □ चन्द्र इधर-उधर बक्स में रमाल ढूँढ़ने लगा □

“आज बड़े खुश हैं, चन्द्र भाई! कोई खायी हुई चीज मिल गयी है क्या? अरे, मैं बहन हूँ कुछ इनाम ही दे दीजिए □” गेसू ने चुटकी ली □

“इनाम की बात क्या, कहो तो वह चीज ही तुम्हें दे दूँ!”

“हाँ, कैलाश बाबू के दिल से पूछिए □” गेसू बोली □

“उनके दिल से तुम्हीं बात कर सकती हो!”

गेसू ने झोंपकर मुँह फेर लिया □

सुधा हाथ में दो गिलास लिए आयी □ “तो गेसू, पियो □” एक गिलास गेसू को देकर बोली,
“चन्द्र, तो □”

“तुम पियो न!”

“नहीं, मैं नहीं पिऊँगी □ बर्फ मुझे नुकसान करेगी!” सुधा ने चुपचाप कहा □ चन्द्र को याद आ गया □ पहले सुधा चिढ़-चिढ़कर अपने आप चार, शरबत पी जाती थी... और आज...

“क्या हूँढ़ रहे हो, चन्द्र?” सुधा बोली □

“रुमाल, कोई मिल ही नहीं रहा!”

“साल-भर में रुमाल खो दिये होंगे! मैं तो तुम्हारी आदत जानती हूँ □ आज कपड़ा ला दो, कल सुबह रुमाल सी दूँ तुम्हारे लिए □” और उठकर उसने फैलाश के बक्स से एक रुमाल निकालकर दे दिया □

उसके बाद चन्द्र बाजार गया और कैलाश के लिए तथा सुधा के लिए कुछ कपड़े खरीद लाया। इसके साथ ही कुछ नमकीन जो सुधा को पसन्द था, पेठा, एक तरबूज, एक बोतल गुलाब का शरबत, एक सुन्दर-सा पेन और जाने क्या-क्या खरीद लाया। सुधा ने देखकर कहा, “पापा नहीं हैं, फिर भी लगता है मैं मायके आयी हूँ!” लेकिन वह कुछ खा-पी नहीं सकी। चन्द्र खाना खाकर लॉन में बैठ गया, वहीं उसने अपनी चारपाई डलवा ली। सुधा के बिस्तर छत पर लगे थे। उसके पास महाराजिन सोनेवाली थीं। सुधा एक तश्तरी में तरबूज काटकर ले आयी और कुर्सी डालकर चन्द्र भी चारपाई के पास बैठ गया। चन्द्र तरबूज खाता रहा...थोड़ी देर बाद सुधा बोली-

“चन्द्र, बिनती के बारे में तुम्हारी क्या राय है?”

“राय? राय क्या होती? बहुत अच्छी लड़की है! तुमसे तो अच्छी ही है!” चन्द्र ने छेड़ा।

“अरे, मुझसे अच्छी तो दुनिया है, लेकिन एक बात पूछें? बहुत गम्भीर बात है!”

“क्या?”

“तुम बिनती से ब्याह कर लो।”

“बिनती से? कुछ दिमाग तो नहीं खराब हो गया है?”

“नहीं! इस बारे में पहले-पहले 'ये' बोले कि चन्द्र से बिनती का ब्याह क्यों नहीं करती, तो मैंने चुपचाप पापा से पूछा। पापा बिल्कुल राजी हैं, लेकिन बोले मुझसे कि तुम्हीं कहो चन्द्र से। कर लो; चन्द्र! बुआजी अब दखल नहीं देनी।”

चन्द्र हँस पड़ा, “अच्छी खुशफातें तुम्हारे दिमाग में उठती हैं! याद है, एक बार और तुमने ब्याह करने के लिए कहा था?”

सुधा के मुँह से एक हल्का निःश्वास निकल पड़ा—“हाँ, याद है! खैर, तब की बात दूसरी थी, अब तो तुम्हें कर लेना चाहिए।”

“नहीं सुधा, शादी तो मुझे नहीं ही करनी है। तुम कह क्यों रही हो? तुम मेरे-बिनती के सम्बन्धों को कुछ गलत तो नहीं समझ रही हो?”

“नहीं जी, लेकिन यह जानती हूँ कि बिनती तुम पर अनधिकार रखती है। उससे अच्छी लड़की तुम्हें मिलेगी नहीं। कम-से-कम जिंदगी तुम्हारी व्यवस्थित हो जाएगी।”

चन्द्र हँसा, “मेरी जिंदगी शादी से नहीं, प्यार से सुधेगी, सुधा! कोई ऐसी लड़की हूँ दो जो तुम्हारी जैसी हो और प्यार करे तो मैं समझूँ भी कि तुमने कुछ किया मेरे लिए। शादी-वादी बेकार है और कोई बात करनी है या नहीं?”

“नहीं चन्द्र, शादी तो तुम्हें करनी ही होगी। अब मैं ऐसे तुम्हें नहीं रहने दूँगी। बिनती से न करो तो दूसरी लड़की हूँ दूँगी। लेकिन शादी करनी होगी और मेरी पसन्द से करनी होगी।”

चन्द्र एक उपेक्षा की हँसी हँसकर रह गया □

सुधा उठ खड़ी हुई □

“क्यों, चल दीं?”

“हाँ, अब नींद आ रही होनी तुम्हें, सोओ □”

चन्द्र ने रोका नहीं □ उसने सोचा था, सुधा बैठेगी □ जाने कितनी बातें करेंगे! वह सुधा से उसका सब हाल पूछेगा, लेकिन सुधा तो जाने कैसी तत्स्थ, नियपेक्षा और अपने में सीमित-सी हो गयी है कि कुछ समझ में नहीं आता □ उसने चन्द्र से सबकुछ जान लिया लेकिन चन्द्र के सामने उसने अपने मन को कहीं जाहिर ही नहीं होने दिया, सुधा उसके पास होकर भी जाने कितनी दूर थी! सरोवर में ढूबकर पंछी प्यासा था □

करीब घंटा-भर बाद सुधा दूध का गिलास लेकर आयी □ चन्द्र को नींद आ गयी थी □ वह चन्द्र के सिरहाने बैठ गयी-“चन्द्र, सो गये क्या?”

“क्यों?” चन्द्र घबराकर उठ बैठा □

“तो, दूध पी लो □” सुधा बोली □

“दूध हम नहीं पिएँगे □”

“पी लो, देखो बर्फ और शरबत मिला दिया है, पीकर तो देखो!”

“नहीं, हम नहीं पिएँगे □ अब जाओ, हमें नींद लग रही है □” चन्द्र गुस्सा था □

“पी लो मेरे राजदुलारे, चमक रहे हैं चाँद-सितारे...” सुधा ने लोरी गाते हुए चन्द्र को अपनी गोद में खींचकर बच्चों की तरह गिलास चन्द्र के मुँह से लगा दिया □ चन्द्र ने चुपचाप दूध पी लिया □ सुधा ने गिलास नीचे रखकर कहा, “वाह, ऐसे तो मैं नीलू को दूध पिलाती हूँ □”

“नीलू कौन?”

“अरे मेरा भतीजा! शंकर बाबू का लड़का □”

“अच्छा!”

“चन्द्र, तुमने पंखा तो छत पर लगा दिया है □ तुम कैसे सोओगे?”

“मुझे नींद आ जाएगी □”

चन्द्र फिर लेट गया □ सुधा उठी नहीं □ वह दूसरी पाटी से हाथ टेककर चन्द्र के वक्ष के आर-पार फूलों के धनुष-सी झुककर बैठ गयी □ एकादशी का रिनब्ध पवित्र चन्द्रमा आसमान की नीली लहरों पर अधिखिले बेल के फूल की तरह काँप रहा था □ दूध में नहाये हुए झोंके चाँदनी से आँख-मिचौली खेल रहे थे □ चन्द्र आँखें बन्द किये पड़ा था और उसकी पलकों पर, उसके माथे पर, उसके होठों पर चाँदी की पाँखुरियाँ बरस रही थीं □ सुधा ने चन्द्र का कॉलर ठीक किया और बड़े ही मधुर स्वर में पूछा, “चन्द्र, नींद आ रही है?”

“नहीं, नींद उठत गयी!” चन्द्र ने आँख खोलकर देखा □ एकादशी का पवित्र चन्द्रमा आकाश में था और पूजा से आभिषिक्त एकादशी की उदास चाँदनी उसके वक्ष पर झुकी बैठी थी □ उसे लगा जैसे पवित्रता और अमृत का चम्पई बादल उसके प्राणों में लिप्त गया है □

उसने करवट बदलकर कहा, “सुधा, जिंदगी का एक पहलू खत्म हुआ □ दर्द की एक मंजिल खत्म हो गयी □ थकान भी दूर हो गयी, लेकिन अब आगे का रास्ता समझ में नहीं आता □ क्या करूँ?”

“करना बहुत है, चन्द्र! अपने अन्दर की बुराई से लड़ लिये, अब बाहर की बुराई से लड़ो □ मेरा

तो सपना था चन्द्र कि तुम बहुत बड़े आदमी बनोगे। अपने बारे में तो जो कुछ सोचा था वह सब नसीब ने तोड़ दिया। अब तुम्हीं को देखकर कुछ सन्तोष मिलता है। तुम जितने उँचे बनोगे, उतना ही चैन मिलेगा। वर्ना मैं तो नरक में भुज रही हूँ।”

“सुधा, तुम्हारी इसी बात से मेरी सारी छिमत, सारा बल टूट जाता है। अगर तुम अपने परिवार में सुखी होती तो मेरा भी साहस बँधा रहता। तुम्हारा यह हाल, तुम्हारा यह स्वास्थ्य, यह असमय वैराज्य और पूजा, यह घुटन देखकर लगता है क्या कर्ह? किसके लिए कर्ह?”

“मैं भी क्या कर्ह, चन्द्र! मैं यह जानती हूँ कि अब ये भी मेरा बहुत खयाल रखते हैं, लेकिन इस बात पर मुझे और भी दुख होता है। मैं इन्हें सन्तुलित नहीं कर पाती और उनकी खुलकर उपेक्षा भी नहीं कर पाती। यह अजब-सा नरक है मेरा जीवन भी, लेकिन यह जरूर है चन्द्र कि तुम्हें उँचा देखकर मैं यह नरक भी भोग ले जाऊँगी। तुम दिल मत छोटा करो। एक ही जिंदगी की तो बात है, उसके बाठ...”

“लेकिन मैं तो पुनर्जन्म में विश्वास ही नहीं करता।”

“तब तो और भी अच्छा है, इसी जन्म में जो सुख दे सकते हो, दे लो। जितना उँचे उठ सकते हो, उठ लो।”

“तुम जो रस्ता बताओ वह मैं अपनाने के लिए तैयार हूँ। मैं सोचता हूँ, अपने व्यक्तित्व से ऊपर उठँ...लेकिन मेरे साथ एक शर्त है। तुम्हारा प्यार मेरे साथ रहे!”

“तो वह अलग कब रहा, चन्द्र! तुम्हीं ने जब चाहा मुँह फेर लिया। लेकिन अब नहीं। काश कि तुम एक क्षण का भी अनुभव कर पाते कि तुमसे दूर वहाँ, वासना के कीचड़ में फँसी हुई मैं कितनी व्याकुल, कितनी व्यथित हूँ तो तुम ऐसा कभी न करते! मेरे जीवन में जो कुछ अपूर्णता रह गयी है चन्द्र, उसकी पूर्णता, उसकी सिद्धि तुम्हीं हो। तुम्हें मेरे जन्म-जन्मान्तर की शान्ति की सौन्दर्य है, तुम अब इस तरह न करना! बस ब्याह कर लो और टढ़ता से ऊँचाई की ओर चलो।”

“ब्याह के अलावा तुम्हारी सब बातें खीकार हैं। लेकिन फिर भी तुम अपना प्यार वापस नहीं लोगी कभी?”

“कभी नहीं।”

“और हम कभी नाराज भी हो जाएँ तो बुरा नहीं मानोगी?”

“नहीं।”

“और हम कभी फिसलें तो तुम तटस्थ होकर नहीं बैठोगी बल्कि बिना डरे हुए मुझे खींच लाओगी उस दलदल से?”

“यह कठिन है चन्द्र, आखिर मेरे भी बन्धन हैं। लेकिन खैर...अच्छा यह बताओ, तुम दिल्ली कब आओगे?”

“अब दिल्ली तो दशहरे में आऊँगा। गर्मियों में यहीं रहूँगा।...लेकिन हो सका तो लौटने के बाद शाहजहाँपुर आऊँगा।”

सुधा चुपचाप बैठी रही। चन्द्र भी चुपचाप लेटा रहा। थोड़ी देर बाद चन्द्र ने सुधा की हथेली अपने हाथों पर रख ली और आँखें बन्द कर लीं। जब वह सो गया तो सुधा ने धीरे-से हाथ उठाया, खड़ी हो गयी। थोड़ी देर अपलक उसे देखती रही और धीरे-धीरे चली आयी।

45

दूसरे दिन सुबहं सुधा ने आकर चन्द्र को जगाया ॥ चन्द्र उठ बैठा तो सुधा बोली-”जल्दी से नहा लो, आज तुम्हारे साथ पूजा करेंगे!”

चन्द्र उठ बैठा ॥ नहा-धोकर आया तो सुधा ने चौकी के सामने दो आसन बिछा रखे थे ॥ चौकी पर धूप सुलग रही थी और फूल गमक रहे थे ॥ डेर-के-डेर बेले और अगस्त के फूल ॥ चन्द्र को बिठाकर सुधा बैठी ॥ उसने फिर वही वेश धारण कर लिया था ॥ ऐश्वर्य की धोती और ऐश्वर्य का एक अन्तर्वासक, गीले बाल पीठ पर लहरा रहे थे ॥

“तेकिन मैं बैठा-बैठा क्या करूँगा?” उसने पूछा ॥

सुधा कुछ नहीं बोली ॥ चुपचाप अपना काम करती गयी ॥ थोड़ी देर बाद उसने भागवत खोली और बड़े मधुर रखयों में गोपिका-गीत पढ़ती रही ॥ चन्द्र संस्कृत नहीं समझता था, पूजा में विष्वास नहीं करता था, तेकिन वह क्षण जाने कैसा लग रहा था! चन्द्र की साँस में धूप की पावन सौरभ के डौरे गुंथ गये थे ॥ उसके घुटनों पर रह-रहकर सद्यःसनाता सुधा के भींगे केशों से गीले मोती चू पड़ते थे ॥ कृषकाय, उदास और पवित्र सुधा के पूजा के प्रसाद जैसे मधुर रखर में श्रीमद्भागवत के श्लोक उसकी आत्मा को अमृत से धो रहे थे ॥ लगता था, जैसे इस पूजा की श्रद्धान्वित बेला में उसके जीवन-भर की भूलें, कमजोरियाँ, गुनाह सभी धुलता जा रहा था ॥...जब सुधा ने भागवत बन्द करके रख दिया तो पता नहीं क्यों चन्द्र ने प्रणाम कर लिया-भागवत को या भागवत की पूजारिन को, यह नहीं मालूम ॥

थोड़ी देर बाद सुधा ने पूजा की थाली उठायी और उसने चन्द्र के माथे पर रोली लगा दी ॥ “अरे मैं!”

“हाँ तुम! और कौन...मैं तो दूसरा न करौं!” सुधा बोली और डेर-के-डेर फूल चन्द्र के चरणों पर चढ़ाकर, झुककर चन्द्र के चरणों को प्रणाम कर लिया ॥ चन्द्र ने घबराकर पाँव खींच लिए, “मैं इस योन्य नहीं हूँ, सुधा! क्यों लजिजत कर रही हो?”

सुधा कुछ नहीं बोली...अपने आँचल से एक छलकता हुआ आँसू पोंछकर नाश्ता लाने चली गयी ॥

जब वह यूनिवर्सिटी से लौटा तो देखा, सुधा मशीन रखे कुछ सिल रही है ॥ चन्द्र ने कपड़े बदलकर पूछा, “कहो, क्या सिल रही हो?”

“रमाल और बनियाइन! कैसे काम चलता था तुम्हारा? न सन्दूक में एक भी रमाल है, न एक भी बनियाइन ॥ लापरवाही की भी हृद है ॥ तभी कहती हूँ ब्याह कर लो!”

“हाँ, किसी दर्जी की लड़की से ब्याह करवा दो!” चन्द्र खाट पर बैठ गया और सुधा मशीन पर बैठी-बैठी सिलती रही ॥ थोड़ी देर बाद सहसा उसने मशीन रोक दी और एकदम से घबरा कर उठी ॥

“क्या हुआ, सुधा...”

“बहुत दर्द हो रहा है....” वह उठी और खाट पर बेहोश-सी पड़ रही □ चन्द्र दौड़कर पंखा उठा लाया □ और झलने लगा □ “डॉक्टर बुला लाँ?”

“नहीं, अभी ठीक हो जाँगी □ उबकाई आ रही है!” सुधा उठी □

“जाओ मत, मैं पीकदान उठा लाता हूँ □” चन्द्र ने पीकदान उठाकर रख दिया और सुधा की पीठ सहलाने लगा □ फिर सुधा हाँफती-सी लेट गयी □ चन्द्र दौड़कर इलायची और पानी ले आया □ सुधा ने इलायची खायी और फिर पड़ रही □ उसके माथे पर पसीना झलक आया □

“अब कैसी तबीयत है, सुधा?”

“बहुत दर्द है अंग-अंग में...मशीन चलाना नुकसान कर गया □” सुधा ने बहुत क्षीण श्वरों में कहा □

“जाँकि किसी डॉक्टर को बुला लाँ?”

“बेकार है, चन्द्र! मैं तो लखनऊ में दिखा आयी □ इस रोग का क्या इलाज है □ यह तो जिंदगी-भर का अभिशाप है!”

“क्या बीमारी बतायी तुम्हें?”

“कुछ नहीं □”

“बताओ न?”

“क्या बताऊँ, चन्द्र!” सुधा ने बड़ी कातर निगाहों से चन्द्र की ओर देखा और फूट-फूटकर ये पड़ी □ बुरी तरह सिसकने लगी □ सुधा चुपचाप पड़ी कराहती रही □ चन्द्र ने अटैची में से दवा निकालकर दी □ कॉलेज नहीं गया □ दो घंटे बाद सुधा कुछ ठीक हुई □ उसने एक गहरी साँस ली और तकिये के सहारे उठकर बैठ गयी □ चन्द्र ने और कई तकिये पीछे रख दिये □ दो ही घंटे में सुधा का चहेरा पीला पड़ा गया □ चन्द्र चुपचाप उदास बैठा रहा □

उस दिन सुधा ने खाना नहीं खाया □ सिर्फ फल लिये □ दोपहर को दो बजे भयंकर तू में कैलाश वापस आया और आते ही चन्द्र से पूछा, “सुधा की तबीयत तो ठीक रही?” यह जानकर कि सुबह खराब हो गयी थी, वह कपड़े उतारने के पहले सुधा के कमरे में गया और अपने हाथ से दवा देकर फिर कपड़े बदलकर सुधा के कमरे में जाकर सो गया □ बहुत थका मालूम पड़ता था □ चन्द्र आकर अपने कमरे में कॉपियाँ जाँचता रहा □ शाम को कामिनी, प्रभा तथा कई लड़कियाँ, जिन्हें गेसू ने खबर दे दी थी, आयीं और सुधा और कैलाश को घेरे रहीं □ चन्द्र उनकी खातिर-तवज्जो में लगा रहा □ यत को कैलाश ने उसे अपनी छत पर बुला लिया और चन्द्र के भविष्य के कार्यक्रम के बारे में बात करता रहा □ जब कैलाश को नींद आने लगी, तब वह उठकर तॉन पर लौट आया और लेट गया □

बहुत देर तक उसे नींद नहीं आयी □ वह सुधा की तकलीफों के बारे में सोचता रहा □ उधर सुधा बहुत देर तक करवटे बदलती रही □ यह दो दिन सपनों की तरह बीत गये और कल वह फिर चली जाएगी चन्द्र से दूर, न जाने कब तक के लिए!

सुबह से ही सुधा जैसे बुझ गयी थी □ कल तक जो उसमें उल्लास वापस आ गया था, वह जैसे कैलाश की छाँह ने ही ब्रस लिया था □ चन्द्र के कॉलेज का आखिरी दिन था □ चन्द्र कैलाश को ले गया और अपने मित्रों से, प्रोफेसरों से उसका परिचय करा लाया □ एक प्रोफेसर, जिनकी आदत थी कि वे कांग्रेस सरकार से सम्बन्धित हर व्यक्ति को दावत जखर देते थे, उन्होंने कैलाश

को भी दावत दी क्योंकि वह सांस्कृतिक मिशन में जा रहा था।

वापस जाने के लिए रात की गाड़ी तय रही। हफ्ते-भर बाद ही कैलाश को जाना था अतः वह ज्यादा नहीं रुक सकता था। दोपहर का खाना दोनों ने साथ खाया। सुधा महराजिन का लिहाज करती थी, अतः वह कैलाश के साथ खाने नहीं बैठी। निश्चय हुआ कि अभी से सामान बाँध लिया जाए ताकि पार्टी के बाद सीधे स्टेशन जा सकें।

जब सुधा ने चन्द्र के लाये हुए कपड़े कैलाश को दिखाये तो उसे बड़ा ताज्जुब हुआ। लेकिन उसने कुछ नहीं कहा, कपड़े रख लिये और चन्द्र से जाकर बोला, “अब जब तुमने लेने-देने का व्यवहार ही निभाया है तो यह बता दो, तुम बड़े हो या छोटे?”

“क्यों?” चन्द्र ने पूछा।

“इसलिए कि बड़े हो तो पैर छूकर जाऊँ, और छोटे हो तो रूपया देकर जाऊँ!” कैलाश बोला। चन्द्र हँस पड़ा।

घर में दोपहर से ही उदासी छा गयी। न चन्द्र दोपहर को सोया, न कैलाश और न सुधा। शाम की पार्टी में सब लोग गये। वहाँ से लौटकर आये तो सुधा को लगा कि उसका मन अभी ढूब जाएगा। उसे शादी में भी जाना इतना नहीं अखरा था जितना आज अखर रहा था। मोटर पर सामान रखा जा रहा था तो वह खम्भे से टिककर खड़ी रो रही थी। महराजिन एक टोकरी में खाने का सामान बाँध रही थी।

कैलाश ने देखा तो बोला, “रो क्यों रही हो? छोड़ जाएँ तुम्हें यहीं? चन्द्र से सँभलेगा!” सुधा ने आँसू पौछकर आँखों से डॉटा। “महराजिन सुन रही हैं कि नहीं।” मोटर तक पहुँचते-पहुँचते सुधा फूट-फूटकर रो पड़ी और महराजिन उसे गले से लगाकर आँसू पौछने लगी। फिर बोली, “रोवाँ न बिटिया! अब छोटे बाबू का बियाह कर देव तो दुई-तीन महीना आयके रह जाव। तोहार सास छोड़िहैं कि नैं?”

सुधा ने कुछ जवाब नहीं दिया और पाँच रुपये का नोट महराजिन के हाथ में थमाकर आ बैठी। ट्रेन प्लेटफार्म पर आ गयी थी। सेकेंड वलास में चन्द्र ने इन लोगों का बिस्तर लगवा दिया। सीट रिजर्व करवा दी। गाड़ी छूटने में अभी घंटा-भर देर थी। सुधा की आँखों में विचित्र-सा भाव था। कल तक की वहता, तेज, उल्लास बुझ गया था और अजब-सी कातरता आ गयी थी। वह चुप बैठी थी। चन्द्र से जब नहीं देखा गया तो वह उठकर प्लेटफार्म पर टहलने लगा। कैलाश भी उतर गया। दोनों बातें करने लगे। सहसा कैलाश ने चन्द्र के कन्धे पर हाथ रखकर कहा, “हाँ यार, एक बात बहुत जरूरी थी।”

“क्या?”

“इन्होंने तुमसे बिनती के बारे में कुछ कहा?”

“कहा था!”

“तो क्या सोचा तुमने?”

“मैं शादी-वारी नहीं करूँगा।”

“यह सब आदर्शवाद मुझे अच्छा नहीं लगा, और फिर उससे शादी करके सच पूछो तो बहुत बड़ी बात करोगे तुम! उस घटना के बाद अब ब्राह्मणों में तो वर उसे मिलने से रहा। और ये कह रही थीं कि वह तुम्हें मानती भी बहुत है।”

“हाँ, लेकिन इसके मतलब यह नहीं कि मैं शादी कर लूँ। मुझे बहुत कुछ करना है।”

“अरे जाओ यार, तुम सिवा बातों के कुछ नहीं कर सकते॥”

“हो सकता है॥” चन्द्र ने बात टाल दी॥ वह शादी तो नहीं ही करेगा॥

थोड़ी देर बाद चन्द्र ने पूछा, “इन्हें दिल्ली कब भेजोगे?”

“अभी तो जिस दिन मैं जाऊँगा, उस दिन ये दिल्ली मेरे साथ जाएँगी, लेकिन दूसरे दिन शाहजहाँपुर लौट जाएँगी॥”

“क्यों?”

“अभी माँ बहुत बिगड़ी हुई है॥ वह इन्हें आने थोड़े ही देती थी॥ वह तो लखनऊ के बहाने मैं इन्हें ले आया॥ तुम शंकर भइया से कभी जिक्र मत करना-अब दिल्ली तो इसलिए चली जाएँ कि मैं दो-तीन महीने बाद लौटूँगा...फिर शायद सितम्बर, अक्टूबर में ये तीन-चार महीने के लिए दिल्ली जाएँगी॥ यूं नो श्री इज कैरीझू!”

“हाँ, अच्छा!”

“हाँ, यहीं तो बात है, पहला मौका है॥”

दोनों लौटकर कम्पार्टमेंट में बैठ गये॥

सुधा बोली, “तो सितम्बर में आओगे न, चन्द्र?”

“हाँ-हाँ!”

“जरूर से? फिर वह कोई बहाना न बना देगा॥”

“जरूर आऊँगा!”

फैलाश उत्तरकर कुछ लेने गया तो सुधा ने अपनी आँखों से आँसू पौछकर झुककर चन्द्र के पाँव छू लिये और योकर बोली, “चन्द्र, अब बहुत टूट चुकी हूँ...अब हाथ न खींच लेना...” उसका गला रुँध गया॥

चन्द्र ने सुधा के हाथों को अपने हाथ में ले लिया और कुछ भी नहीं बोला॥ सुधा थोड़ी देर चुप रही, फिर बोली-

“चन्द्र, चुप क्यों हो? अब तो नफरत नहीं करेंगे? मैं बहुत अभागी हूँ, ठेवता! तुमने क्या बनाया था और अब क्या हो गयी!...देखो, अब चिढ़ी लिखते रहना॥ नहीं तो सहारा टूट जाता है...” और फिर वह ये पड़ी॥

फैलाश कुछ किताबें और पत्रिकाएँ खरीदकर वापस आ गया॥ दोनों बैठकर बातें करते रहे॥ यह निश्चय हुआ कि जब फैलाश लौटेगा तो बजाय बम्बई से सीधे दिल्ली जाने के, वह प्रयाग से होता हुआ जाएगा॥

गाड़ी चली तो चन्द्र ने फैलाश को बहुत प्यार से गले लगा लिया॥ जब तक गाड़ी प्लेटफॉर्म के अन्दर रही, सुधा सिर निकाले झाँकती रही॥ प्लेटफॉर्म के बाहर भी पीली चाँदनी में सुधा का फुराता हुआ आँचल दिखता रहा॥ धीरे-धीरे वह एक सफेद बिन्दु बनकर अदृश्य हो गया॥ गाड़ी एक विशाल अजगर की तरह चाँदनी में रेंगती चली जा रही थी॥

जब मन में प्यार जाग जाता है तो प्यार की किरण बादलों में छिप जाती है। अजब थी चन्द्र की किस्मत! इस बार तो, सुधा गयी थी तो उसके तन-मन को एक गुलाबी नशे में सराबोर कर गयी थी। चन्द्र उदास नहीं था। वह बेहद खुश था। खूब धूमता था और गरमी के बावजूद खूब काम करता था। अपने पुराने नोट्स निकाल लिये थे और एक नयी किताब की रूपरेखा सोच रहा था। उसे लगता था कि उसका पौरुष, उसकी शक्ति, उसका ओज, उसकी ढ़ढ़ता, सभी कुछ लौट आया है। उसे हरदम लगता कि गुलाबी पाँखुरियों की एक छाया उसकी आत्मा को चूमती रहती है। वह जब कभी लेटता तो उसेलगता कि सुधा फूलों के धनुष की तरह उसके पलँग के आर-पार पाटी पर हाथ टेके बैठी है। उसे लगता-कर्म में अब भी धूप की सौरभ तहरा रही है और छवाओं में सुधा के मधुर कंठ के ल्लोक गँज रहे हैं।

दो ही दिन में चन्द्र को लग रहा था कि उसकी जिंदगी में जहाँ जो कुछ टूट-फूट गया है, वह सब सँभल रहा है। वह सब अभाव धीरे-धीरे भर रहा है। उसके मन का पूजा-गृह खँडहर हो चुका था, सहसा उस पर जैसे किसी ने आँसू छिड़ककर जीवन के वरदान से अभिषित कर दिया था। पत्थर के बीच दबकर पिसे हुए पूजा-गीत फिर से सरवर हो उठे थे। मुरझाये हुए पूजा-फूलों की पाँखुरियों में फिर ऐसे छलक आया था और रंग घमक उठे थे। धीरे-धीरे मन्दिर का कँबूरा फिर सितारों से समझौता करने की तैयारी करने लगा था। चन्द्र की नसों में वेद-मन्त्रों की पवित्रता और ब्रज की वंशी की मधुराई पलकों में पलकें डालकर नाच उठी थी। सारा काम जैसे वह किसी अट्ट्य आत्मा की आत्मा की आज्ञा से करता था। वह आत्मा सिवा सुधा के और भला किसकी थी! वह सुधामय हो रहा था। उसके कदम-कदम में, बात-बात में, सौंस-सौंस में सुधा का प्यार फिर से लौट आया था।

तीसरे दिन बिनती का एक पत्र आया। बिनती ने उसे दिल्ली बुलाया था और मामाजी (डॉक्टर शुक्ला) भी चाहते थे कि चन्द्र कुछ दिन के लिए दिल्ली चला आये तो अच्छा है। चन्द्र के लिए कुछ कौशिश भी कर रहे थे। उसने लिख दिया कि वह मई के अन्त में या जून के प्रारम्भ में आएगा। और बिनती को बहुत, बहुत-सा सनेह। उसने सुधा के आने की बात नहीं लिखी क्योंकि कैलाश ने मना कर दिया था।

सुबह चन्द्र गंगा नहाता, नयी पुस्तकें पढ़ता, अपने नोट्स दोहराता। दोपहर को सोता और शेडियो बजाता, शाम को धूमता और सिनेमा देखता, सोते वक्त कविताएँ पढ़ता और सुधा के प्यार के बादलों में मुँह छिपाकर सो जाता। जिस दिन कैलाश जाने वाला था, उसी दिन उसका एक पत्र आया कि वह और सुधा दिल्ली आ गये हैं। शंकर भइया और नीलू उसे पहुँचाने बम्बई जाएँगे। चन्द्र सुधा के इलाहाबाद जाने का जिक्र किसी को भी न लिखे। यह उसके और चन्द्र के बीच की बात थी। खत के नीचे सुधा की कुछ लाइनें थीं।

“चन्द्र,

यम-राम□ तुमने मुझे जो साड़ी दी थी वह क्या अपनी भावी श्रीमती के नाप की थी? वह मेरे घुटनों तक आती है□ बूँदी होकर घिस जाऊँगी तो उसे पहना कर्णगी-अच्छा र्नेह□ और जो तुमसे कह आयी हूँ उन बातों का ध्यान रहेगा न? मेरी तन्दुरुस्ती ठीक है□ इधर मैंने गाँधीजी की आत्मकथा पढ़नी शुरू की है□

तुम्हारी-सुधा□

“...और हाँ, लालाजी! मिठाई खिलाओ, दिल्ली में बहुत खबर है कि शरणार्थी विभाग में प्रयाग के एक प्रोफेसर आने वाले हैं!”

कैलाश तो अब बम्बई चल दिया होगा□ बम्बई के पते से उसने बधाई का एक तार भेज दिया और सुधा को एयर मेल से उसने एक खत भेजा जिसमें उसने बहुत-सी मिठाइयों का चित्र बना दिया था□

लैकिन वह पसोपेश में पड़ गया□ दिल्ली जाए या न जाए□ वह अपने अन्तर्मन से सरकारी नौकरी का विरोधी था□ उसे तत्कालीन भारतीय सरकार और ब्रिटिश सरकार में ज्यादा अन्तर नहीं लगता था□ फिर हर टक्कियों से वह समाजवादियों के अधिक समीप था□ और अब वह सुधा से वायदा कर चुका था कि वह काम करेगा□ ऊँचा बनेगा□ प्रसिद्ध होगा, लैकिन पद स्वीकार कर ऊँचा बनना उसके चित्र के विरुद्ध था□ किन्तु डॉक्टर शुक्ला कोशिश कर कर रहे थे□ चन्द्र केन्द्रीय सरकार के किसी ऊँचे पद पर आए, यह उनका सपना था□ चन्द्र को कॉलेज की स्वच्छन्द और ढीली नौकरी पसन्द थी□ अन्त में उसने यह सोचा कि पहले नौकरी स्वीकार कर लेगा□ बाद में फिर कॉलेज चला आएगा-एक दिन यत को जब वह बिजली बुझाकर, किताब बन्द कर सीने पर रखकर सितारों को देख रहा था और सोच रहा था कि अब सुधा दिल्ली लौट गयी होगी, अगर दिल्ली रह गया तो बँगले में किसे टिकाया जाएगा...इतने में किसी व्यक्ति ने फाटक खोलकर बँगले में प्रवेश किया□ उसे ताज्जुब हुआ कि इतनी यत को कौन आ सकता है, और वह भी साइकिल लेकर! उसने बिजली जला दी□ तार वाला था□

साइकिल खड़ी कर, तार वाला लॉन पर चला गया और तार दे दिया□ दस्तखत करके उसने लिफाफा फाड़ा□ तार डॉक्टर साहब का था□ लिखा था कि “अगली ट्रेन से फौरन चले आओ□ स्टेशन पर सरकारी कार होगी सलेटी रंग की□” उसके मन ने फौरन कहा, चन्द्र, हो गये तुम केन्द्र में!

उसकी आँखों से नींद गायब हो गयी□ वह उठा, अगली ट्रेन सुबह तीन बजे जाती थी□ न्यारह बजे थे□ अभी चार घंटे थे□ उसने एक अटैची में कुछ अच्छे-से-अच्छे सूट रखे, किताबें रखीं, और माली को सहेजकर चल दिया□ मोटर को स्टेशन से वापस लाने की ठिकत होती, ड्राइवर अब था नहीं, अतः नौकर को अटैची देकर पैदल चल दिया□ राह में सिनेमा से लौटता हुआ रिवशा मिल गया□

चन्द्र ने सेकेंड वलास का टिकट लिया और ठाठ से चला□ कानपुर में उसने साढ़ी चाय पी और इटावा में रेस्तराँ-बार में जाकर खाना खाया□ उसके बगल में मारवाड़ी दम्पति बैठे थे जो सेकेंड वलास का किराया खर्च करके प्रायश्चित्तरूप एक आने की पकड़ी और दो आने की दालमोठ से उदर-पूर्ति कर रहे थे□ हाथरस स्टेशन पर एक मजेदार घटना घटी□ हाथरस में छोटी और बड़ी लाइनें क्रॉस करती हैं□ छोटी लाइन ऊपर पुल पर खड़ी होती है□ स्टेशन के पास जब ट्रेन

धीमी हुई तो सेठजी सो रहे थे। सेठानी ने बाहर झाँककर देखा और निस्संकोच उनके पूथुल उदर पर कर-प्रहार करके कहा, “हो! देखो रेलगाड़ी के सिर पर रेलगाड़ी!” सेठ एकदम चौंककर जागे और उछलकर बोले, “बाप रे बाप! उलट गयी रेलगाड़ी। जल्दी सामान उतार। लुट गये राम! ये तो जंगल है। कहते थे जेवर न ले चल।”

चन्दर खिलखिलाकर हँस पड़ा। सेठजी ने परिस्थिति समझी और चुपचाप बैठ गये। चन्दर करवट बदलकर फिर पढ़ने लगा।

इतने में ऊपर की गाड़ी से उतर कर कोई औरत हाथ में एक गर्भी लिये आयी और अन्दर ज्यों ही घुसी कि मारवाड़ी बोला, “बुड़नी, यह सेकेंड वलास है।”

“होई! सेकेण्ड-थर्ड तो सब गोविन्द की माया है, बत्वा!”

चन्दर का मुँह दूसरी ओर था, लेकिन उसने सोचा गोविन्दजी की माया का वर्णन और विश्लेषण करते हुए ऐल के डब्बों के वर्णकरण को भी मायाजाल बताना शायद भागवतकार की दिव्यहस्ति से सम्भव होगा। लेकिन यह भी मारवाड़ी कोई सुधा तो था नहीं कि वैष्णव साहित्य और गोविन्दजी की माया का भक्त होता। जब उसने कहा-गार्ड साहब को बुलाऊँ? तो बुढ़िया गरज उठी—“बस-बस, चल हुआँ से, गार्ड का तोर दमाद लगत है जौन बुलाइ है। मोटका कहूँ!”

चन्दर हँस पड़ा, कम-से-कम गाली की नवीनता पर। दूसरी बात; गाड़ी उस समय ब्रजक्षेत्र में थी, वहाँ यह अवधी का सफल वक्ता कौन है! उसने धूमकर देखा। एक बुढ़िया थी, सिर मुड़ाये। उसने कहीं देखा है इसे!

“कहाँ जाओगी, माई?”

“कानपुर जाबै।”

“लेकिन यह गाड़ी तो टिल्ली जाएगी?”

“तुहँ बोल्यो टुप्प से! हम ऐसे धमकावे में नै आइत। ई कानपुर जइ है!” उसने हाथ नचाकर चन्दर से कहा। और फिर जाने क्यों रुक गयी और चन्दर की ओर देखने लगी। फिर बोली, “अरे चन्दर बेटवा, कहाँ से आवत हौं तू!”

“ओह! बुआजी हैं। सिर मुड़ा लिया तो पहचान में ही नहीं आतीं।” चन्दर ने फौरन उठकर पाँव छुए। बुआजी वृद्धावन से आ रही थीं। वह बैठ गयीं, बोलीं, “ऊ नटिनियाँ मर गयी कि अबहिन हैं?”

“कौन?”

“ओही बिनती!”

“मेरी वयों?”

“भइया! सुकूल तो हमार कुल डुबोय दिछिन। लेकिन जैसे ऊ हमरी बिटिया के मड़वा तरे से उठाय लिछिन वैसे भगवान चाही तो उनहूं का लड़की से समझी!”

चन्दर कुछ नहीं बोला। थोड़ी देर बाद खुद बड़बड़ाती हुई बुआजी बोलीं, “अब हमें का करै को है। हम सब मोह-माया त्याग दिया। लेकिन हमेरे त्याग में कुछौं समरथ है तो सुकूल को बदला मिलिहै!”

कानपुर की गाड़ी आयी तो चन्दर खुद उन्हें बिठाल आया। विचित्र थीं बुआजी, बेचारी कभी समझ ही नहीं पायीं कि बिनती को उठाकर डॉक्टर साहब ने उपकार किया या अपकार और मजा तो यह है कि एक ही वाक्य के पूर्वार्द्ध में मायामोह से विरक्ति की घोषणा और उत्तरार्द्ध में दुर्वासा

का शाप...डिंडुस्तान के सिवा ऐसे नमूने कहीं भी मिलने मुश्किल हैं। इतने में चन्द्र की गाड़ी ने सीटी दी। वह भागा। बुआजी ने चन्द्र का ख्याल छोड़कर अपने बगल के मुसाफिर से लड़ना शुरू कर दिया।

वह दिल्ली पहुँचा। दो-तीन साल पहले भी वह दिल्ली आया था लेकिन अब दिल्ली स्टेशन की चहल-पहल ही दूसरी थी। गाड़ी घंटा-भर लेट थी। नौ बज चुके थे। अगर मोटर न मिली तो भी इतनी मशहूर सज़क पर डॉक्टर साहब का बँगला था कि चन्द्र को तिशेष दिक्कत न होती। लेकिन ज्यों ही वह प्लेटफॉर्म से बाहर निकला तो उसने देखा कि जहाँ मरकरी की बड़ी सर्वलाइट लगी है, ठीक उसी के नीचे सलेटी रँग की शानदार कार खड़ी थी जिसके आगे-पीछे क्राउन लगा था और सामने तिरंगा, आगे लाल वर्दी पहने एक खानसामा बैठा है। और पीछे एक सिख ड्राइवर खड़ा है। चन्द्र का सूट चाहे जितना अच्छा हो लेकिन इस शान के लायक तो नहीं ही था। फिर भी वह बड़े रोब से गया और ड्राइवर से बोला, “यह किसकी मोटर है?”

“सर्कारी गड्ढी हैजी।” सिख ने अपनी प्रतिभा का परिचय दिया।

“क्या यह डॉक्टर शुकला ने भेजी है?”

“जी हाँ, हुजूर!” एकदम उसका स्वर बदल गया। “आप ही उनके लड़के हैं-चन्द्र बहादुर साहब?” उसने उतरकर सलाम किया। दरवाजा खोला, चन्द्र बैठ गया। कुली को एक अटैची के लिए एक अठनी दी। मोटर उड़ चली।

चन्द्र बहुत उदार विचारों का था लेकिन आज तक वह डॉक्टर साहब की उन्नीसवीं सदी वाली पुरानी कार पर ही चढ़ा था। इस राजमुकुट और राष्ट्रीय धज से सुशोभित मोटर पर खानसामे के साथ चढ़ने का उसका पहला ही मौका था। उसे लगा जैसे इस समय तिरंगे का गौरव और महान ब्रिटिश साम्राज्य के इस क्राउन का शासनदम्भ उसके मन को उड़ाये लिये जा रहा है। चन्द्र तनकर बैठा लेकिन थोड़ी देर बाद स्वयं उसे अपने मन पर हँसी आ गयी। फिर वह सोचने लगा कि जिन लोगों के हाथ में आज शासन-सत्ता है; मोटरों और खानसामों ने उनके हृदयों को इस तरह बदल दिया है। वे भी तो बेचारे आदमी हैं, इतने दिनों से प्रभुता के प्यासे। बेकार हम लोग उन्हें गाली देते हैं। फिर चन्द्र उन लोगों का ख्याल करके हँस पड़ा।

दिल्ली में इलाहाबाद की अपेक्षा कम गरमी थी। कार एक बँगले के अन्दर मुड़ी और पोर्टिको में रुक गयी। बँगला नये साठे अमेरिकन ढंग का बना हुआ था। खानसामे ने उतरकर दरवाजा खोला। चन्द्र उतर पड़ा। ड्राइवर ने हँर्न दिया। दरवाजा खुला और बिनती निकली। उसका मुँह सूखा हुआ था, बाल अस्त-व्यस्त थे और आँखें जैसे रो-रोकर सूज गयी थीं। चन्द्र का दिल धक्क-से हो गया, राह-भर के सुनहरे सपने टूट गये।

“क्या बात है, बिनती? अच्छी तो हो?” चन्द्र ने पूछा।

“आओ, चन्द्र?” बिनती ने कहा और अन्दर जाते ही दरवाजा बन्द कर दिया और चन्द्र की बाँह पकड़कर सिसक-सिसककर रो पड़ी। चन्द्र घबरा गया। “क्या बात है? बताओ न! डॉक्टर साहब कहाँ हैं?”

“अन्दर हैं।”

“तब क्या हुआ? तुम इतनी दुःखी क्यों हो?” चन्द्र ने बिनती के सिर पर हाथ रखकर पूछा...उसे लगा जैसे इस समस्त वातावरण पर किसी बड़े भयानक मृत्यु-दूत के पंखों की काली छाया है...”क्या बात है? बताती क्यों नहीं?”

बिनती बड़ी मुश्किल से बोली, “दीदी...सुधा दीदी...”

चन्द्र को लगा जैसे उस पर बिजली टूट पड़ी- ”क्या हुआ सुधा को?” बिनती कुछ नहीं बोली, उसे ऊपर ले गयी और कमरे के पास जाकर बोली, “उसी में हैं दीदी!”

कमरे के अन्दर की रोशनी उदास, फीकी और बीमार थी। एक नर्स सफेद पोशाक पहने पलंग के सिरहाने खड़ी थी, और कुर्सी पर सिर झुकाये डॉक्टर साहब बैठे थे। पलंग पर चादर ओढ़े सुधा पड़ी थी। नर्स सामने थी, अतः सुधा का चेहरा नहीं दिखाई पड़ रहा था। चन्द्र के भीतर पाँव रखते ही नर्स ने आँख के इशारे से कहा, “बाहर जाइए।” चन्द्र ठिककर खड़ा हो गया, डॉक्टर साहब ने देखा और वे भी उठकर चले आये।

“क्या हुआ सुधा को?” चन्द्र ने बहुत व्याकुल, बहुत कातर स्वर में पूछा। डॉक्टर साहब कुछ नहीं बोले। चुपचाप चन्द्र के कन्धे पर हाथ रखे हुए अपने कमरे में आये और बहुत भारी स्वर में बोले, “हमारी बिटिया गयी, चन्द्र!” और आँसू छलक आये।

“क्या हुआ उसे?” चन्द्र ने फिर उतने ही दुःखी स्वर में पूछा।

डॉक्टर साहब क्षण-भर पथराई आँखों से चन्द्र की ओर देखते रहे, फिर सिर झुकाकर बोले, “एबॉर्शन!” थोड़ी देर बाद सिर उठाकर व्याकुल की तरह चन्द्र का कन्धा पकड़कर बोले, “चन्द्र, किसी तरह बचाओ सुधा को, क्या करें कुछ समझ में नहीं आता...अब बचेगी नहीं...परसों से होश नहीं आया। जाओ कपड़े बदलो, खाना खा लो, रात-भर जागरण होगा...” लैकिन चन्द्र उठा नहीं, कुर्सी पर सिर झुकाये बैठा रहा।

सहसा नर्स आकर बोली, “ब्लीडिंग फिर शुरू हो गयी और नाड़ी ड्रूब रही है। डॉक्टर को बुलाइए...फौरन!” और वह लौट गयी।

डॉक्टर साहब उठ खड़े हुए। उनकी आँखों में बड़ी निराशा थी। बड़ी उदासी से बोले, “जा रहा हूँ, चन्द्र! अभी आता हूँ!” चन्द्र ने देखा, कार बड़ी तेजी से जा रही है। बिनती आकर बोली, “खाना खा लो, चन्द्र!” चन्द्र ने सुना ही नहीं।

“यह क्या हुआ, बिनती!” उसने घबराई आवाज में पूछा।

“कुछ समझ में नहीं आता, उस दिन सुबह जीजाजी गये। दोपहर में पापा ऑफिस गये थे। मैं सो रही थी, सहसा जीजी चीखी। मैं जागी तो देखा दीदी बेहोश पड़ी है। मैंने जल्दी से फोन किया। पापा आये, डॉक्टर आये। उसके बाद से पापा और नर्स के अलावा किसी को नहीं जाने देते दीदी के पास मुझे भी नहीं।”

और बिनती ये पड़ी। चन्द्र कुछ नहीं बोला। चुपचाप पत्थर की मूर्ति-सा कुर्सी पर बैठा रहा। खिड़की से बाहर की ओर देख रहा था।

थोड़ी देर में डॉक्टर साहब वापस आये। उनके साथ तीन डॉक्टर थे और एक नर्स। डॉक्टरों ने करीब दस मिनट देखा, फिर अलग कमरे में जाकर सलाह करने लगे। जब लौटे तो डॉक्टर साहब ने बहुत विहँाल होकर कहा, “क्या उम्मीद है?”

“घबराइए मत, घबराइए मत-अब तो जब तक अन्दरूनी सब साफ नहीं हो जाएगा तब तक खून

जाएगा॥ नब्ज के लिए और होश के लिए एक इंजेक्शन देते हैं-अभी॥”

इंजेक्शन देने के बाद डॉक्टर चले गये॥ पापा वहीं जाकर बैठ गये॥ बिनती और चन्द्र चुपचाप बैठे रहे॥ करीब पाँच मिनट के बाद सुधा ने भयंकर रवर में कराहना शुरू किया॥ उन कराहों में जैसे उनका कलेजा उलटा आता हो॥ डॉक्टर साहब उठकर यहाँ चले आये और चन्द्र से बोले, “वेहीमेंट ब्लीडिंग...” और कुर्सी पर सिर झुकाकर बैठ गये॥ बगल के कमरे से सुधा की दर्दनाक कराहें उठती थीं और सन्नाटे में छटपटाने लगती थीं॥ अगर आपने किसी जिनदा मुर्म्मा के पंख और पूँछ नोचे जाते हुए देखा हो तभी आप उसका अनुमान कर सकते हैं; उस भयानकता का, जो उन कराहों में थी॥ थोड़ी देर बाद कराहें बन्द हो गयीं, फिर सहसा इस बुरी तरह से सुधा चीखी जैसे गाय डकार रही हो॥ पापा उठकर आगे-वह भयंकर चीख उठी और सन्नाटे में मँडराने लगी-बिनती ये रही थी-चन्द्र का चेहरा पीला पड़ गया था और पसीने से तर हो गया था वह॥

पापा लौटकर आये, “हम लोग देख सकते हैं?” चन्द्र ने पूछा॥

“अभी नहीं-अब ब्लीडिंग खत्म है॥...नर्स अभी कपड़े बदल दे तो चलेंगे॥”

थोड़ी देर में तीनों गये और जाकर खड़े हो गये। अब चन्द्र ने सुधा को देखा। उसका चेहरा सफेद पड़ गया था। जैसे जाड़े के दिनों में थोड़ी देर पानी में रहने के बाद अंगलियों का रंग रक्खीन थेत हो जाता है। गालों की छड़ियाँ निकल आयी थीं और होठ काले पड़ गये थे। पतलकों के चारों ओर कालापन गहरा गया था और आँखें जैसे बाहर निकली पड़ती थीं। खून इतना अधिक गया था कि लगता था बदन पर चमड़े की एक हल्की झिल्ली मढ़ दी गयी हो। यहाँ तक कि भीतर की छड़ी के उतार-चढ़ाव तक स्पष्ट दिख रहे थे। चन्द्र ने डरते-डरते माथे पर हाथ रखा। सुधा के होठों में कुछ हरकत हुई, उसने मुँह खोल दिया और आँखें बन्द किये हुए ही उसने करवट बदली, फिर कराही और सिर से पैर तक उसका बदन काँप उठा। नर्स ने नाड़ी देखी और कहा, अब ठीक है। कमजोरी बहुत है। थोड़ी देर बाद परीना निकलना शुरू हुआ। परीना पोंछते-पोंछते एक बज गया। बिनती बोली डॉक्टर साहब से-”मामाजी, अब आप सो जाइए। चन्द्र देख लेंगे आज। नर्स है ही।”

डॉक्टर साहब की आँखें लाल हो रही थीं। सबके कहने पर वह अपनी सीट पर लेट रहे। नर्स बोली, “मैं बाहर आगम कुर्सी पर थोड़ा बैठ लूँ। कोई जरूरत हो तो बुला लेना।” चन्द्र जाकर सुधा के सिरहाने बैठ गया। बिनती बोली, “तुम थके हुए आये हो। तलों तुम भी सो रहो। मैं देख रही हूँ।”

चन्द्र ने कुछ जवाब नहीं दिया। चुपचाप बैठा रहा। बिनती ने सभी खिड़कियाँ खोल दीं और चन्द्र के पास ही बैठ गयी। सुधा सो रही थी चुपचाप। थोड़ी देर बाद बिनती उठी, घड़ी देखी, मुँह खोलकर दवा दी। सहसा डॉक्टर साहब घबराये हुए-से आये-”वया बात है, सुधा क्यों चीखी!”

“कुछ नहीं, सुधा तो सो रही है चुपचाप!” बिनती बोली।

“अच्छा, मुझे नींद में लगा कि वह चीखी है।” फिर वह खड़े-खड़े सुधा का माथा सहलाते रहे और फिर लौट जये। नर्स अन्दर थी। बिनती चन्द्र को बाहर ले आयी और बोली, “देखो, तुम कल जीजाजी को एक तार दे देना!”

“लैकिन अब वह होंगे कहाँ?”

“विजगापटम या कोलम्बो में जहाजी कम्पनी के पते से दिलवा देना तार।”

दोनों फिर जाकर सुधा के पास बैठ जये। नर्स बाहर सो रही थी। साढ़े तीन बज गये थे। ठंडी हवा चल रही थी। बिनती चन्द्र के कन्धे पर सिर रखकर सो गयी। सहसा सुधा के होठ हिले और उसने कुछ अस्फुट स्वर में कहा। चन्द्र ने सुधा के माथे पर हाथ रखा। माथा सहसा जलने लगा था; चन्द्र घबरा उठा। उसने नर्स को जगाया। नर्स ने बगल में थर्मामीटर लगाया। तापक्रम एक सौ पाँच था। सारा बदन जल रहा था और रह-रहकर वह काँप उठती

थी□ चन्द्र ने फिर घबराकर नर्स की ओर देखा□ “घबराइए मत! डॉक्टर अभी आएगा□” लेकिन थोड़ी देर में हालत और बिगड़ गयी□ और फिर उसी तरह दर्दनाक कराहे सुबह की हवा में सिर पटकने लगी□ नर्स ने इन लोगों को बाहर भेज दिया और बदन अँगोचने लगी□ थोड़ी देर में सुधा ने चीखकर पुकारा- ”पापा...” इतनी भयानक आवाज थी कि जैसे सुधा को नरक के दूत पकड़े ले जा रहे हैं□ पापा गये□ सुधा का चेहरा लाल था और वह हाथ पटक रही थी□...पापा को देखते ही बोली, “पापा...चन्द्र को इलाहाबाद से बुलवा दो□”

“चन्द्र आ गया बेटा, अभी बुलाते हैं□” ज्यों ही पापा ने माथे पर हाथ रखा कि सुधा चीख उठी- ”तुम पापा नहीं हो...कौन हो तुम?...दूर हटो, छुओ मत...अे बिनती...”

डॉक्टर शुक्ला ने नर्स की ओर देखा□ नर्स बोली-

सुधा ने फिर करवट बदली और नर्स को देखकर बोली, “कौन गेसू...आओ बैठो□ चन्द्र नहा रहा है□ अभी बुलाती हूँ□ अे चन्द्र...” और फिर हाँफने लगी, आँखें बन्द कर लीं और शैकर बोली, “पापा, तुम कहाँ चले गये?”

नर्स ने चन्द्र और बिनती को बुलाया□ बिनती पास जाकर खड़ी हो गयी-आँसू पौछकर बोली, “दीदी, हम आ गये□” और सुधा की बाँह पर हाथ रख दिया□ सुधा ने आँखें नहीं खोलीं, बिनती के हाथ पर हाथ रखकर बोली, “बिनती, पापा कहाँ गये हैं?”

“खड़े तो हैं मामाजी!”

“झूठ मत बोल कम्बख्त...अच्छा ले, शरबत तैयार है, जा चन्द्र स्टडीरूम में पढ़ रहा है बुला ला, जा!”

बिनती फफककर ये पड़ी□

“रोती क्यों है?” सुधा ने कराहकर कहा, “मैं जाऊँगी तो चन्द्र को तैरे पास छोड़ जाऊँगी□ जा चन्द्र को बुला ला, नहीं बर्फ धुल जाएगी-शरबत छान लिया है?”

चन्द्र आगे आया□ झंधे गले से आँसू पीते हुए बोला, “सुधा, आँखें खोलो□ हम आ गये, सुधी!” डॉक्टर साहब कुर्सी पर पड़े सिसक रहे थे...सुधा ने आँखें खोलीं और चन्द्र को देखते ही फिर बहुत जोर से चीखी...”तुम...तुम ऑस्ट्रेलिया से लौट आये? झूठे! तुम चन्द्र हो? क्या मैं तुम्हें पहचानती नहीं? अब क्या चाहिए? इतना कहा, तुमसे हाथ जोड़ा, मेरी क्या हालत है? लेकिन तुम्हें क्या? जाओ यहाँ से वर्ना मैं अभी सिर पटक ढूँगी...” और सुधा ने सिर पटक दिया-”नहीं गये?” नर्स ने इशारा किया-चन्द्र कमरे के बाहर आया और कुर्सी पर सिर झुकाकर बैठ गया□ सुधा ने आँखें खोलीं और फटी-फटी आँखों से चारों ओर देखने लगी□ फिर नर्स से बोली- “गेसू, तुम बहुत बहादुर हो! तुमने अपने को बेचा नहीं; अपने पैर पर खड़ी हो□ किसी के आश्रय में नहीं हो□ कोई खाना-कपड़ा देकर तुम्हें खरीद नहीं सकता, गेसू□ बिनती कहाँ गयी...?”

“मैं खड़ी हूँ, दीदी?”

“हैं...अच्छा, पापा कहाँ हैं?” सुधा ने कराहकर पूछा□

डॉक्टर साहब उठकर आ गये-”बेटा!” बड़े दुलार से सुधा के माथे पर हाथ रखकर बोले□ सुधा ये पड़ी-”कहाँ थे पापा, अभी तक तुम? हमने इतना पुकारा, न तुम बोले न चन्द्र बोला...हमें तो डर लग रहा था, इतना सूना था...जाओ मध्याजिन ने शेटी सेंक ली है-खा लो□ हाँ, ऐसे बैठ जाओ□ लो पापा, हमने नानखटाई बनायी...”

डॉक्टर शुक्ला ये तो हुए चले गये-बिनती ने चन्द्र को बुलाया□ देखा चन्द्र कुर्सी पर ठथेली में

मुँछ छिपाये बैठा था □ बिनती गयी और चन्द्र के कन्धे पर हाथ रखा □ चन्द्र ने देखा और सिर झुका लिया, “चलो चन्द्र, दीदी फिर बेहोश हो गयीं □”

इतने में नर्स बोली □ “वह फिर होश में आयी हैं; आप तोग वहीं चलिए □”

सुधा ने आँखें खोल दी थीं-चन्द्र को देखते ही बोली, “चन्द्र आओ, कोई मास्टर ठीक किया तुमने? जो कुछ पढ़ा था वह भूल रही हूँ □ अब इमतहान में पास नहीं होऊँगी □”

“डेलीरियम अब भी है □” नर्स बोली □ सहसा सुधा ने चन्द्र का हाथ छोड़ दिया और झट से हथेलियाँ आँखों पर रख लीं और बोली, “ये कौन आ गया? यह चन्द्र नहीं है □ चन्द्र नहीं है □ चन्द्र होता तो मुझे डॉट्टा-क्यों बीमार पड़ीं? अब बताओ मैं चन्द्र को क्या जवाब दूँगी... चन्द्र को बुला दो, गेसू! जिंदगी में दुष्मनी निभायी, अब मौत में तो न निभाए □”

“उफ! मरीज के पास इतने आदमी? तभी डेलीरियम होता है □” सहसा डॉक्टर ने प्रवेश किया □ कोई दूसरा डॉक्टर था, अँग्रेज था □ बिनती और चन्द्र बाहर चले आये □ बिनती बोली, “ये सिविल सर्जन हैं □” उसने खून मँगवाया, देखा, फिर डॉक्टर शुक्ला को भी छाटा दिया □ सिर्फ नर्स रह गयी □ थोड़ी देर बाद वह निकला तो उसका चेहरा स्याह था □ “क्या यह प्रैनोज्सी पहली मर्तबा थी?”

“जी हूँ?”

डॉक्टर ने सिर छिलाया और कहा, “अब मामला हाथ से बाहर है □ इंजेक्शन लगेंगे □ अस्पताल ले चलिए □”

“डॉक्टर शुक्ला, मगाद आ रहा है, कल तक सारे बदन में फैल जाएगा, किस बेवकूफ डॉक्टर ने देखा था...”

चन्द्र ने फोन किया □ ऐम्बुलेन्स कार आ गयी □ सुधा को उठाया गया...

दिन बड़ी ही चिन्ता में बीता □ तीन-तीन घंटे पर इंजेक्शन लग रहे थे □ दोपहर को दो बजे इंजेक्शन खत्म कर डॉक्टर ने एक गहरी साँस ली और बोला, “कुछ उम्मीद हैं-अगर बारह घंटे तक हार्ट ठीक रहा तो मैं आपकी लड़की आपको वापस दूँगा □”

बड़ा भयानक दिन था ॥ बहुत ऊँची छत का कमरा, दालानों में टाट के परदे पड़े थे और बाहर गर्मी की भयानक लू हू-हू करती हुई दानवों की तरह मुँह फाड़े दौड़ रही थी ॥ डॉक्टर साहब सिरहाने बैठे थे, पथरीली निगाहों से सुधा के पीले मृतप्राय चेहरे की ओर देखते हुए... बिनती और चन्द्र बिना कुछ खाये-पीये चुपचाप बैठे थे-रह-रहकर बिनती सिसक उठती थी, लेकिन चन्द्र ने मन पर पत्थर रख लिया था ॥ वह एकटक एक ओर देख रहा था... कमरे में वातावरण शान्त था-रह-रहकर बिनती की सिसकियाँ, पापा की निःश्वासें तथा घड़ी की निरन्तर टिक-टिक सुनाई पड़ रही थी ॥

चन्द्र का हाथ बिनती की गोद में था ॥ एक मूँक संवेदना ने बिनती को सँभाल रखा था ॥ चन्द्र कभी बिनती की ओर देखता, कभी घड़ी की ओर ॥ सुधा की ओर नहीं देख पाता था ॥ दुख अपनी पूरी चोट करने के बक्त अकसर आदमी की आत्मा और मन को वलोरोफार्म सुँघा देता है ॥ चन्द्र कुछ भी सोच नहीं पा रहा था ॥ संज्ञा-हत, नीरव, निश्चेष्ट...

घड़ी की सुई अविराम गति से चल रही थी ॥ सर्जन कई दफे आये ॥ नर्स ने आकर टेम्परेचर लिया ॥ यात को ज्यारह बजे टेम्परेचर उतरने लगा ॥ डॉक्टर शुक्ला की आँखें चमक उठीं ॥ ठीक बाहर बजकर पाँच मिनट पर सुधा ने आँखें खोल दीं ॥ चन्द्र ने बिनती का हाथ मारे खुशी से दबा दिया ॥

“बिनती कहाँ है?” बड़े क्षीण स्वर में पूछा ॥

सुधा ने आँख धुमाकर देखा ॥ पापा को देखते ही मुरक्का पड़ी ॥

बिनती और चन्द्र उठकर आ गये ॥

“आहा, चन्द्र तुम आ गये? हमारे लिए क्या लाये?”

“पगली कहाँ की!” मारे खुशी के चन्द्र का गता भर गया ॥

“लेकिन तुम इतनी देर में क्यों आये, चन्द्र!”

“कल यात को ही आ गये थे हम ॥”

“चलो-चलो, झूँठ बोलना तो तुम्हारा धर्म बन गया ॥ कल यात को आ गये होते तो अभी तक हम अच्छे भी हो गये होते ॥” और वह हँफने लगी ॥

सर्जन आया, “बात मत करो...” उसने कहा ॥

उसने एक मिक्सचर दिया ॥ फिर आला लगाकर देखा, और डॉक्टर शुक्ला को अलग ले जाकर कहा, “अभी दो घंटे और खतरा है ॥ लेकिन परेशान मत होइए ॥ अब सतर प्रतिशत आशा है ॥ मरीज जो कहे, उसमें बाधा मत दीजिएगा ॥ उसे जरा भी परेशानी न हो ॥”

सुधा ने चन्द्र को बुलाया, “चन्द्र, पापा से मत कहना ॥ अब मैं बचूँगी नहीं ॥ अब कहीं मत जाना, यहाँ बैठो ॥”

“छिं पगली! डॉक्टर कह रहा है अब खतरा नहीं है” चन्द्र ने बहुत प्यार से कहा, “अभी तो तुम हमारे लिए जिन्दा रहोगी न!”

“कोशिश तो कर रही हूँ चन्द्र, मौत से लड़ रही हूँ! चन्द्र, उन्हें तार दे दो! पता नहीं देख पाऊँगी या नहीं”

“दे दिया, सुधा!” चन्द्र ने कहा और सिर झुकाकर सोचने लगा।

“क्या सोच रहे हो, चन्द्र! उन्हें इसीलिए देखना चाहती हूँ कि मरने के पहले उन्हें क्षमा कर दूँ उनसे क्षमा माँग लूँ!...चन्द्र, तुम तकलीफ का अन्दाजा नहीं कर सकते”

डॉक्टर शुक्ला आये। सुधा ने कहा, “पापा, आज तुम्हारी गोद में लेट लें” उन्होंने सुधा का सिर गोद में रख लिया। “पापा, चन्द्र को समझा दो, ये अब अपना ब्याह तो कर ले...हाँ पापा, हमारी भागवत मँगवा दो...”

“शाम को मँगवा देंगे बेटी, अब एक बज रहा है...”

“देखा...” सुधा ने कहा, “बिनती, यहाँ आओ!”

बिनती आयी। सुधा ने उसका माथा चूमकर कहा, “रानी, जो कुछ तुझे आज तक समझाया वैसा ही करना, अच्छा! पापा तैरे जिम्मे हैं”

बिनती रोकर बोली, “दीरी, ऐसी बातें क्यों करती हो...”

सुधा कुछ न बोली, गोद से हटाकर सिर तकिये पर रख लिया।

“जाओ पापा, अब सो रहो तुम”

“सो लूँगा, बेटी...”

“जाओ। नहीं फिर हम अच्छे नहीं होंगे! जाओ...”

सर्जन का आदेश था कि मरीज के मन के विरुद्ध कुछ नहीं होना चाहिए-डॉक्टर शुक्ला चुपचाप उठे और बाहर बिछे पलंग पर लेट रहे।

सुधा ने चन्द्र को बुलाया, बोली, “मैं झुक नहीं सकती-बिनती यहाँ आ-हाँ, चन्द्र के पैर छू...अरे अपने माथे में नहीं पगली मैरे माथे से लगा दे। मुझसे झुका नहीं जाता” बिनती ने शोते हुए सुधा के माथे में चरण-धूल लगा दी, “शोती क्यों है, पगली! मैं मर जाऊँ तो चन्द्र तो है ही। अब चन्द्र तुझे कभी नहीं रुलाएँगे...चाहे पूछ तो! इधर आओ, चन्द्र! बैठ जाओ, अपना हाथ मैरे होठों पर रख दो...ऐसे...अगर मैं मर जाऊँ तो शोना मत, चन्द्र! तुम ऊँचे बनोगे तो मुझे बहुत चैन मिलेगा। मैं जो कुछ नहीं पा सकी, वह शायद तुम्हारे ही माध्यम से मिलेगा मुझे। और देखो, पापा को अकेले दिल्ली में न छोड़ना...लेकिन मैं मँझी नहीं, चन्द्र...यह नरक भोगकर भी तुम्हें प्यार करँगी...मैं मरना नहीं चाहती, जाने फिर कभी तुम मिलो या न मिलो, चन्द्र...उफ कितनी तकलीफ है, चन्द्र! हम लोगों ने कभी ऐसा नहीं सोचा था...अरे हटो-हटो...चन्द्र!” सहसा सुधा की आँखों में फिर अँधेरा छा गया-“भागो, चन्द्र! तुम्हारे पीछे कौन खड़ा है?” चन्द्र घबराकर उठ गया-पीछे कोई नहीं था... “अरे चन्द्र, तुम्हें पकड़ रहा है। चन्द्र, तुम मैरे पास आओ” सुधा ने चन्द्र का हाथ पकड़ लिया-बिनती भागकर डॉक्टर साहब को बुलाने गयी। नर्स भी भागकर आयी। सुधा चीख रही थी-“तुम हो कौन? चन्द्र को नहीं ले जा सकते। मैं चल तो रही हूँ। चन्द्र, मैं जाती हूँ इसके साथ, घबराना मत। मैं अभी आती हूँ। तुम तब तक चार पी लो-नहीं, मैं तुम्हें उस नरक में नहीं जाने दूँगी, मैं जा तो रही हूँ-बिनती, मेरी चप्पल ले आ...अरे पापा कहाँ हैं...पापा...”

और सुधा का सिर चन्द्र की बाँह पर लुढ़क गया-बिनती को नर्स ने सँभाला और डॉक्टर शुक्ला
पागल की तरह सर्जन के बँगले की ओर दौड़े...घड़ी ने टन-टन दो बजाये...

जब एम्बुलेन्स कार पर सुधा का शव बँगले पहुँचा तो शंकर बाबू आ गये थे-बहू को विदा कराने...

उपसंहार

50

जिंदगी का यन्त्रणा-चक्र एक वृत्त पूरा कर चुका था □ सितारे एक क्षितिज से उठकर, आसमान पार कर दूसरे क्षितिज तक पहुँच चुके थे □ साल-डेढ़ साल पहले सहसा जिंदगी की लहरों में उथल-पुथल मच गयी थी और विक्षुब्ध महासागर की तरह भूखी लहरों की बाँहें पसारकर वह किसी को दबोच लेने के लिए हुंकार उठी थी □ अपनी भयानक लहरों के शिकंजे में सभी को झकझोरकर, सभी के विश्वासों और भावनाओं को चकनाचूर कर अन्त में सबसे प्यारे, सबसे मासूम और सबसे सुकुमार व्यक्तित्व को निगलकर अब धरातल शान्त हो गया-तूफान थम गया था, बादल खुल गये थे और सितारे फिर आसमान के घोसलों से भयभीत विहंग-शावकों की तरह झाँक रहे थे □

डॉक्टर शुक्ला छुट्टी लेकर प्रयाग चले आये थे □ उन्होंने पूजा-पाठ छोड़ दिया था □ उन्हें कभी किसी ने गाते हुए नहीं सुना था □ अब वह सुबह उठकर लौंग पर टहलते और एक भजन गाते थे □ बिनती, जो इतनी सुन्दर थी, अब केवल खामोश पीड़ा और अवशेष स्मृति की छाया मात्र थी □ चन्द्र शान्त था, पत्थर हो गया था, लेकिन उसके माथे का तेज बुझ गया था और वह बूढ़ा-सा लगने लगा था और यह सब केवल पन्द्रह दिनों में □

जोठ दशहरे के दिन डॉक्टर साहब बोले, “चन्द्र, आज जाओ, उसके फूल छोड़ आओ, लेकिन देखो, शाम को जाना जब वहाँ भीड़-भाड़ न हो, अच्छा!” और चुपचाप टहलकर गुनगुनाने लगे □

शाम को चन्द्र चला तो बिनती भी चुपचाप साथ हो ली; न बिनती ने आग्रह किया न चन्द्र ने स्वीकृति दी □ दोनों खामोश चल दिये □ कार पर चन्द्र ने बिनती की गोद में गठरी रख दी □ त्रिवेणी पर कार रुक गयी □ हल्की चाँदनी मैले कफन की तरह लहरों की लाश पर पड़ी हुई थी □ दिन-भर कमाकर मल्लाह थककर सो रहे थे □ एक बूढ़ा बैठा चिलम पी रहा था □ चुपचाप उसकी नाव पर चन्द्र बैठ गया □ बिनती उसकी बगल में बैठ गयी □ दोनों खामोश थे, सिर्फ पतवारों की छप-छप सुन पड़ती थी □ मल्लाह ने तरळ के पास नाव बाँध दी और बोला, “नहा लें बाबू!” वह समझता था बाबू सिर्फ धूमने आये हैं □

“जाओ!”

वह दूर तरळों की कतार के ऊपर जाकर खो गया □ फिर दूर-दूर तक फैला संगम...और सन्नाटा...चन्द्र सिर झुकाये बैठा रहा...बिनती सिर झुकाये बैठी रही □ थोड़ी देर बाद बिनती सिसक पड़ी □ चन्द्र ने सिर उठाया और फैलादी हाथों से बिनती का कंधा झकझोरकर बोला,

“बिनती, यदि योगी तो यहीं फेंक देंगे उठाकर कम्बखत, अभागी!”

बिनती चुप हो गयी □

चन्द्र चुपचाप बैठा तरळ के नीचे से गुजरती हुई लहरों को देखता रहा □ थोड़ी देर बाद उसने नठरी खोली...फिर रुक गया, शायद फेंकने का साफ़स नहीं हो रहा था...बिनती ने पीछे से आकर एक मुट्ठी राख उठा ली और अपने आँचल में बाँधने लगी □ चन्द्र ने चुपचाप उसकी ओर देखा, फिर झापटकर उसने बिनती का आँचल पकड़कर राख छीन ली और नुराता हुआ बोला, “बदतमीज कहीं की!...राख ते जाएगी-अभागी!” और झट से कपड़े सहित राख फेंक दी और आनेय टृष्णि से बिनती की ओर देखकर फिर सिर झुका लिया □ लहरों में राख एक जहरीले पनियाले साँप की तरह लहराती हुई चली जा रही थी □

बिनती चुपचाप सिसक रही थी □

“नहीं चुप होगी!” चन्द्र ने पागलों की तरह बिनती को ढकेला दिया, बिनती ने बाँस पकड़ लिया और चीख पड़ी □

चीख से चन्द्र जैसे होश में आ गया □ थोड़ी देर चुपचाप रहा फिर झुककर अंजलि में पानी लेकर मुँह धोया और बिनती के आँचल से पोंछकर बहुत मधुर स्वर में बोला, “बिनती, योओ मत! मेरी समझ में नहीं आता कुछ भी! योओ मत!” चन्द्र का गला भर आया और आँख में आँसू छलक आये-”चुप हो जाओ, गणी! मैं अब इस तरह कभी नहीं करँगा-उठो! अब हम दोनों को निभाना है, बिनती!” चन्द्र ने तरळ पर छीना-झापटी में बिखरी हुई राख चुटकी में उठायी और बिनती की माँग में भरकर माँग चूम ली □ उसके होठ राख में सन गये □

सितारे टूट चुके थे □ तूफान खत्म हो चुका था □

नाव किनारे पर आकर लग गयी थी-मल्लाह को चुपचाप रुपये देकर बिनती का हाथ थामकर चन्द्र ठोस धरती पर उतर पड़ा...मुर्दा चाँदनी में दोनों छायाएँ मिलती-जुलती हुई चल दीं □ गंगा की लहरों में बहता हुआ राख का साँप टूट-फूटकर बिखर चुका था और नदी फिर उसी तरह बहने लगी थी जैसे कभी कुछ हुआ ही न हो □

□ □ समाप्त □ □